ISSN 2277-5587
Indexed in ULRICH & IIJIF
Impact Factor 2.541

Shodh Shree

(International Referred Journal of Multidisciplinary Research)

शोध श्री

Volume-22 Issue - 1 January-March 2017 RNI No. RAJHIN/2011/40531

SHODH SHREE
ज्ञानं भार: क्रियां विना
ISSN 2277-5587
RNI RAJHIN/2011/40531

CHIEF EDITOR
Virendra Sharma

EDITOR
Dr. Ravindra Tailor

shodhshree@gmail.com
www.shodhshree.com

Shodh Shree Issue-1 Volume - 22 January-March 2017

Shodh Shree

(International Referred Journal of Multidisciplinary Research)

Virendra Sharma
Chief Editor
Government Girls P.G. College,
Ajmer

Dr. Ravindra Tailor
Editor
Shodh Shree,
Jaipur

Editorial Board

Prof. H.S. Sharma (Retd.)
University Of Rajasthan, **Jaipur**

Prof. T.K. Mathur (Retd.)
M.D.S. University, **Ajmer**

Prof. Ravindra Kumar Sharma
Kurukshetra University, Kurukshetra **(Haryana)**

Sarah Eloy
Museum The House of Alijn, **Belgium**

Prof. B.P. Saraswat
Dean of Commerce
M.D.S. University, **Ajmer**

Prof. Pushpa Sharma
Kurukshetra University, Kurukshetra **(Haryana)**

Dr. Rajesh Choudhary
Deputy Director (Research)
Indian Council of Historical Research, **NewDelhi**

Dr. Avdhesh Kumar Sharma
BBD Govt. PG College, Chimanpura

Dr. Pankaj Gupta
Government P.G. College, **Kotputli**

Advisory Board

Prof. S.N. Tailor (Retd.)
S.D. Government P.G. College, **Beawar**

Prof. S.P. Vyas
Jainarain Vyas University, **Jodhpur**

Dr. Mahesh Narayan
Archivist (Retd.)
National Archives of India, **NewDelhi**

Shodh Shree
(International Referred Journal of Multidisciplinary Research)

Contents

Volume-22 **Issue-1** **January - March 2017**

1. साहित्यिक जगत में अकबर के दरबारी कवियों का योगदान 1-7
डॉ. आलोक कुमार सिंह, चन्दौली (उत्तर प्रदेश)
2. शरद जोशी कृत ''जीप पर सवार इल्लियाँ'' में राजनीतिक चेतना 8-10
डॉ. ऋता दीक्षित, एटा (उत्तर प्रदेश)
3. महिला उत्पीड़न : समस्या व समाधान 11-14
डॉ. शालिनी चतुर्वेदी, जयपुर
4. दक्षिण एशिया में मानवाधिकार : बलूचिस्तान में मानवाधिकारों के हनन की समस्या 15-18
डॉ. विकास कुमार शर्मा, बून्दी
5. स्वप्रेरित कार्यसंपादन: कुशल लोकसेवा का मूल मंत्र 19-22
डॉ. कमल तिवाडी, अलवर
6. विदुरनीति में समाजदर्शन 23-25
संजीव कुमार लवानियाँ, बिलासपुर (छत्तीसगढ़)
7. जीन पियाजे का चिंतन और ज्ञानरचनावाद 26-29
गौरव सिंह एवं डॉ. सतीश चंद मंगल, जयपुर
8. राजनीति मे अपराधीकरण : समस्या एवं सुझाव 30-33
सांवल सेठ, जोधपुर
9. अर्वाचीन संस्कृत-गीत : एक सिंहावलोकन 34-37
डॉ. ऋतु दीक्षित, कासगंज (उत्तर प्रदेश)
10. राष्ट्रीय धरोहर (पुरा-सम्पदा) का संरक्षण 38-47
डॉ. चित्रा तंवर, जयपुर
11. प्राचीन भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी : वर्तमान प्रासंगिकता के विशेष सन्दर्भ में 48-51
हितेश शर्मा, अलवर
12. भारतीय समाज के ग्रामीण विकास में पंचायती राज की भूमिका का विश्लेषण 52-55
डॉ. संजय कुमार, चूरु
13. भारत-अमेरिका तथा आतंकवाद 56-62
डॉ. जहाँआरा, जयपुर
14. भक्तिकालीन संत कवयित्रियों के काव्य में स्त्री स्वातंत्र्य के स्वरें 63-66
डॉ. जगदीश गिरी, जयपुर
15. भारतीय महिला राजनीतिक सहभागिता: समस्या एवं सुझाव 67-70
सन्जूलता गहलोत, जोधपुर
16. जल प्रबंधन : समय की मांग (सकारात्मक सोच के आधार पर एकीकृत मानव शक्ति में क्षमता विकसित कर लक्ष्य प्राप्ति करना) 71-76
डॉ. ममता तिवाड़ी, जयपुर

17. अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर, शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि में सहसम्बन्ध: एक अध्ययन 77-81
डॉ. सीमा मीणा, बसवा (दौसा)

18. प्राचीन भारतीय चिन्तन में स्मृतियों में राज्य व समाज 82-87
डॉ. सुरेन्द्र मोहन शर्मा, जयपुर

19. नरेंद्र कोहली का 'महासमर' एक जातीय गौरव गाथा 88-90
डॉ. बसन्त कुमार बंसल, महेंद्रगढ (हरियाणा)

20. शासन में नैतिकता और नैतिक मूल्यों का सुदृढ़ीकरण 91-95
डॉ. जनक सिंह मीना, जोधपुर

21. बून्दी जिले में पर्यटन का स्थानिक प्रारुप : एक आर्थिक विश्लेषण 96-99
डॉ. तोता राम मीना, बून्दी

22. डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा के चित्रों में किशनगढ़ शैली का वर्तमान स्वरुप 100-102
शिवानी गुप्ता, आगरा (उत्तर प्रदेश)

23. बीकानेर रियासत में भूमि का विभाजन (18वीं शताब्दी के विशेष सन्दर्भ में) 103-106
डॉ. कैलाश चन्द गुर्जर, जयपुर

24. बीकानेर रियासत में छात्र आन्दोलन : छात्रों में राजनैतिक चेतना 107-112
डॉ. महेन्द्र राजपुरोहित, जोधपुर

25. कश्मीर समस्या एवं भारत-पाक संबंध 113-118
देशराज यादव, कोटपूतली

26. **Renewable Energy is Sustainable?** 119-122
Shubhra Tiwari, Nathdwara (Rajsamand)

27. **Economic Impact of MGNREGA : A Case Study of Nine Villages of Ajmer District** 123-127
Dr. Shiv Dayal Singh and Anant Phagna, Ajmer

28. **Life Skills Education: A Way to Prepare Teachers for Holistic Education and More Hopeful Future** 128-134
Bhawna and Dr. P. K. Joshi, Srinagar (Uttrakhand)

29. **Cultural Fairs Can Boost The Tourism Traffic in Marwar** 135-137
Dilip Panwar, Nagaur

30. **Rise and Growth of Life Insurance Industries in India & Effects on Indian Economy** 138-142
Abhishek Lodha, Jodhpur

31. **Child Labour in India: Issues and Concerns** 143-146
Dr. Bhavana Rani Agrawal and Anand Vardhan Agrawal, Alwar

32. **An Insight of Goods and Service Tax (GST) in India** 147-152
Dr. Hanuman Sahai Kumawat and Dr. Rajkumar Nagarwal, Ajmer

33. **Issues & Challenges of Financial Inclusion: Scenario in Public Private Sector Banks** 153-158
Latika Adaniya, Jodhpur

34. **Indian Textile Industry: Progresses and Challenges** 159-162
Dr. Sonia Tiwari, Jaipur

35. **Financial Inclusion for Inclusive Growth in India** 163-168
Dr. Lalit Kumar Nagora, Bamanwas (Sawai Madhopur)

36. **The Changing Facets of Corporate Social Responsibility in India** 169-175
Dr. V. D. Dave, Pali

साहित्यिक जगत में अकबर के दरबारी कवियों का योगदान

डॉ. आलोक कुमार सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर, माँ मंशादेवी महाविद्यालय, चन्दौली, (उत्तर प्रदेश)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

ईसा की चौदहवीं सत्रहवीं शताब्दी के मध्य भाग तक हिन्दी साहित्य में धार्मिक भावों की धारा विशेष प्रबलता के साथ प्रवाहित होती मिलती है, जिसका प्रसार मुख्यत: चार रुपों में हुआ : ज्ञान और योग की आध्यात्मिक अनुभूति का संत काव्य, सूफी फकीरों का प्रेम काव्य, राम भक्ति काव्य, कृष्ण भक्ति काव्य। इन चार उपधाराओं के प्रमुख प्रतिनिधि कवि क्रमश: सन्त कबीर, सूफी जायसी, लोक हितकारी महात्मा तुलसीदास और भक्त शिरोमणि सूरदास थे। ज्ञान और प्रेम-भक्ति का हिन्दी साहित्य में जो निवृत्ति परक धार्मिक प्रवाह प्रबल हुआ था वह देश की तत्कालीन परिस्थितियों से उद्दीप्त हुआ था। हिन्दी के चारण काल की राजाश्रय प्रवृत्ति उक्त युग में विदेशी शासन की कठोरता से ईश्वरोन्मुख हो गई थी। यह आन्दोलन राजाश्रय से मुक्त एक स्वतंत्र आंदोलन था। अकबर के राजत्वकाल में (1556 से 1605 ई0) देश ने बहुत समय के बाद सुख-शान्ति का समय देखा। अकबर ने हिन्दुओं का सहयोग प्राप्त करने के लिए उनकी संस्कृति, उनकी भाषा, उनके साहित्य और उनकी कला को अपनाया। अकबर के दरबार के संरक्षण ने भारतीय विद्या और कला को भारी प्रोत्साहन दिया। उस दरबार में जहाँ फारसी और अरबी का मान होता था, वहीं संस्कृत और हिन्दी का भी आदर हुआ। उसका हिन्दी से इतना प्रेम बढ़ा कि वह स्वयं हिन्दी में काव्य-रचना करने लगा। केन्द्रित राजशक्ति के कला और साहित्य प्रेम ने देशी राजाओं के साहित्य प्रेम को भी फिर से जागृत कर दिया और वे पूर्ववत अपने आश्रय में कविता और कलाविदों को सम्मान देने लगे।

संकेताक्षर : अकबरी दरबार, भक्तिकाल, साहित्य एवं संस्कृति, दोहा, सवैया, कवित्त और छप्पय छन्द।

जिस समय भक्ति के स्वतंत्र क्षेत्र में तुलसी, परमानन्द और मीरा जैसी महान विभूतियाँ उत्पन्न हुईं उसी समय अकबर की संरक्षण में नरहरि, गंग, रहीम आदि प्रतिभाशाली कवि हुए जिन्होंने लौकिक काव्य की रसधारा को पुनर्जीवित किया। इनमें रहीम, ब्रह्म, तानसेन शाही दरबार के नवरत्नों में थे। ये कवि संत अथवा भक्त नहीं थे। उन्होंने अपनी कविता के विषय लोक की अनुभूतियों से चुने थे। श्रृंगार भाव के अन्तर्गत नायक नायिकाओं को विविध प्रेम अवस्थाएँ, व्यावहारिक जीवन के अनुभवों से पूर्णनीति तथा वीर प्रशस्ति आदि की लोक भावनाएँ उनके काव्य में चित्रित हुईं। भाषा की दृष्टि से इन सभी कवियों ने बहुधा ब्रजभाषा को ही अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया और मुक्तक शैली में रचनाएँ कीं। दोहा, सवैया, कवित्त और छप्पय छन्दों का इन्होंने विशेष प्रयोग किया। नरहरि की रचनाओं की भाषा पुरानी अवधी है। अब्दुर्रहीम खानखाना ने ब्रजभाषा के साथ-साथ अवधी का भी प्रयोग अपने बरवा छन्दों में किया है। मुक्तक शैली में सवैया, कवित्त और बरवा छन्दों के प्रयोगकर्ताओं में अकबर दरबार के कवि अग्रगामी कहे जा सकते हैं। हिन्दी के धार्मिक युग में अध्यात्म की परमानंदमयी मन्दाकिनी के साथ लौकिक अनुभूति की रसधारा बहाने वाले ये कवि साहित्य जगत में एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। इन कवियों में रहीम का तो कुछ विद्वानों ने अध्ययन किया परन्तु अन्य कवियों के सम्बन्ध में केवल प्रकीर्णक विचार ही प्रकट हुए। विश्व में कभी-कभी ऐसी महान विभूतियाँ अवतरित होती हैं जो अपने युग को पूर्ण रुप से प्रभावित कर उसकी विभिन्न दिशाओं को बदल देती हैं। वे उस युग-विशेष की धारा में स्वयं प्रवाहित नहीं होती वरन अपने प्रवाह में युग को बहा देती हैं। इन महान विभूतियों की कार्य-प्रणाली आलोक स्तम्भ की भाँति आगामी युगों का मार्ग प्रकाशित करती रहती हैं और जनता उसे आदर्श स्वरुप मानकर उस पर चलने का प्रयास करती हैं। मध्य युग के महान व्यक्तियों में अकबर का नाम भी है। उसका व्यक्तित्व सफल कार्यो से गौरवान्वित है। धार्मिक अन्धविश्वास, कलह, विद्रोह, जातिगत संकीर्णता से ऊपर विश्व ने उसका दर्शन युग निर्माता के रुप में किया था। जबकि समकालीन अन्य राष्ट्रों में विद्रोह और वैमनस्य की अग्नि प्रज्वलित हो रही थी। भारत में अकबर धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, औद्योगिक और राष्ट्रीय क्षेत्रों में एकता की सफल योजनायें कार्य रुप में

परिणत कर रहा था। अकबर अपनी निरक्षरता से कभी लज्जित नहीं क्योंकि उसके पूर्व और उत्तरकालीन अनेक भारतीय शासक निरक्षर थे।[1] उस समय लिखने-पढने का कार्य केवल राज्य कर्मचारियों के लिए ही उपयुक्त समझा जाता था और वही पढ़-लिख कर वस्तुओं का बोध शासक को कराते थे। तुजुके-जहाँगीरी में जहाँगीर ने लिखा है कि, 'मेरे पिता सदैव प्रत्येक धर्म और विश्वास के विद्वानों विशेषकर भारत के प्रसिद्ध पंडितों का साथ करते थे। वह निरक्षर था किन्तु विद्वानों के सम्पर्क में आने पर उनकी उस निरक्षरता का बोध नहीं हो पाता था और वे कविता के प्रधान गुणों से इतने परिचित हो गए थे कि कोई व्यक्ति उनकी निरक्षरता का अनुमान भी नहीं कर सकता था।[2] 'अकबर ने कई कलाओं में दक्षता प्राप्त की थी। चित्रकला, संगीत-कला, काव्यकला, घोड़े की सवारी, शिकार, युद्ध, तैराकी आदि की विधाओं में भी वह कुशल था। 'अकबर यद्यपि उलेमा और शेखों के साथ धार्मिक बातचीत में संलग्न रहता, पण्डितों और साधुओं के प्रवचन सुनता परन्तु उसकी धार्मिक तुष्टि न हुई। उसने फिर एक नवीन मार्ग का अवलम्बन लिया'। शेख और उलेमा की असहिष्णुता और कट्टरता का अकबर पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। इस तथ्य ने प्रार्थना गृह का द्वार सभी मत-मतान्तरों के विद्वानों के लिए खोल दिया था। हिन्दू, सिख, जैन, पारसी, बौध, यहूदी, इसाई सब उसमें प्रवेश पा सकते थे।[3] अकबर धर्म जिज्ञासु था और उसने चालीस दिन तक निर्गुण पंथ के संत दादू दयाल से वार्तालाप और बहसें की थीं तथा उनकी भक्ति एवं ज्ञान से प्रभावित हुआ था। अकबर का मानना था कि गुण जहाँ भी दिखाई पड़े उसे परखना चाहिए। अकबर का विश्वास था कि प्रत्येक धर्म के व्यक्ति को गुणों के अनुसार यथा योग्य स्थान मिल सकता है। बीरबल, अबुल-फजल, तानसेन, फैजी आदि विद्वान् साधारण स्थिति से ही ऊपर उठकर दरबार में प्रतिष्ठा और ऐश्वर्य को प्राप्त कर सके थे। बीरबल ने ही अकबर को सूर्य तथा अन्य ग्रहों की उपासना के लिए प्रेरित किया था। अकबर की हिन्दू-रानी जोधाबाई के लिए फतेहपुर सीकरी में दीवाने-खास के पास अब भी एक विशाल महल मंदिर के साथ दृष्टव्य है। जोधाबाई के महल के समीप ही किसी हिन्दू योगी के लिए बना हुआ पूजागृह है। पास ही मंदिर के ढंग पर बना हुआ राजा बीरबल का महल भी अपनी भव्यता दिखा रहा है। इससे प्रकट होता है कि अकबर हिन्दू संस्कृति के प्रति विशेष उदार था।

अकबर ने राजनीतिक एकता के आधार पर धार्मिक एकता स्थापित करने के लिए एक नए प्रयोग का प्रयास किया। इसी आशय का एक लम्बा फरमान उसकी ओर से निकाला गया था। इस नवीन धर्म का नाम उसने दीन-ए-इलाही रखा। इसका संस्थापन सन 1582 ई0 के आरम्भ में हुआ। किन्तु उसके सिद्धान्तों की पूर्ण व्यख्या सन 1587 ई. के अंत तक संभव हो सकी। मोहसिन फानी ने अपने दबिस्ताने मजहब में इस धर्म के सिद्धान्तों का सुन्दर विवेचन किया है। उसने इस धर्म के मुख्य दस अंग दिए हैं-उदारता, धार्मिक वृत्ति, क्षमा, क्रोध शान्ति, सांसारिक वासनाओं से निवृत्ति, इस लोक की स्थिति से ऊपर उठने और परलोक प्राप्त करने की आकांक्षा, बुद्धिसम्मत और भक्तिपूर्वक चिंतन शक्ति का परिवर्धन तथा विकास, शुभ कार्यो को करने की दृढ़ शक्ति, विनम्र भावाभिव्यक्ति, सम और सुन्दर व्यवहार, संसार के मायामोह से विलगाव और ईश्वर से लगाव आत्मा का ईश्वर प्रेम में अभिभूत होना और उससे एकता स्थापित करना ये मुख्य बातें थीं जिन पर उस धर्म के अनुयायियों को चलना पड़ता था।[4] अकबर महान और गौरवशाली व्यक्ति था। एक यथार्थ नीतिज्ञ के सामान उसमें समन्वय की स्वाभाविक प्रवृत्ति थी। उसने निश्चय किया था कि उसका साम्राज्य किसी एक जाति अथवा सम्प्रदाय का न होकर एक सच्चा भारतीय साम्राज्य होगा। एक इतिहासकार ने तो यहाँ तक कह दिया है कि अकबर एक सेनापति के रुप में महान था, राजनीतिज्ञ के रुप में वह एक नए समाज का निर्माणकर्ता था और सच्चे मानव धर्म के एक क्रियात्मक व्याख्याता के रुप में आज तक कोई उससे बढ़कर नहीं हुआ।[5] अकबर की राष्ट्रीयता के सम्बन्ध में हिन्दी के सुप्रसिद्ध राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के निम्लिखित ह्रदयोदगार उल्लेखनीय हैं-

प्रकट त्रिवेणी तट के मन में एक और संगम की चाह
हिन्दू मुसलमान का मानस मिलन तीर्थ वह महाप्रवाह
राम रहीम धाम होगा तब वही दुर्ग संहत सन्नाह
उस मन्दिर का आदि पुजारी स्वयं सिद्ध तू अकबरशाह।।[6]

अकबर की उदारनीति का ही प्रभाव था कि अनेक व्यक्ति राज्यश्री को सुन्दरतम बनाने में संलग्न थे। उसकी राजनीतिक उदारता, धार्मिक सार्वभौमिकता एवं सदाशयता और सहिष्णुता द्वारा कला के सभी अंगों को एक नवीन प्रोत्साहन और स्फूर्ति मिली और बहुत ही शीघ्र उसका प्रभाव देश के एक छोर से दूसरे छोर तक व्याप्त हो गया। अकबर ही नहीं वरन उसके दरबार के 'नवरत्न' तथा प्राय: सभी धनी-मानी एवं गुणी व्यक्तियों में साहित्यिक अभिरुचि जागृत थी। यदि अब्दुर्रहीम प्रेम और करुण भावों की प्रतिमूर्ति थे और उत्साह के सम्पूर्ण अंग उनमें प्रस्फुटित थे, तो मानसिंह की कुशाग्र बुद्धि राजनीतिक कौशल से ओत-प्रोत थी और बीरबल की हास्योददीपक उक्तियाँ नीरस ह्रदय को भी प्रफुल्लित कर देने में समर्थ थीं। जिस प्रकार टोडरमल शान्त, शीलसंपन्न और अत्यन्त उदारशय थे, फैजी उतना ही गंभीर और बुद्धिमान था। कुछ विद्वानों के अनुसार उसने हिन्दी भाषा में भी कविता लिखी थीं। अकबर के दरबार के अधिकाँश कवियों में जो काव्यगत संगीतात्मकता मिलती है वह संगीत-प्रवर तानसेन का ही प्रभाव हो सकता है। दरबार के नवरत्नों में मानसिंह, बीरबल, खानखाना अपनी-अपनी सभाओं में अलग-अलग कवि थे। इन्हीं के द्वारा कुछ प्रमुख और प्रतिभाशाली कवि राज दरबार में भी स्थान पा जाते थे। दरबार के बाहर इसी काल में भक्त प्रवर सूरदास, महामना तुलसीदास आदि महाकवि अपनी रचनाओं द्वारा हिन्दी-कविता का मार्ग प्रदर्शन कर रहे थे। भारतीय तथा ईरानी ललित कलाओं के सम्मिश्रण का यही काल था, साथ ही साथ इस काल में विद्या, संगीत, काव्य, चित्र, वास्तु आदि कलाओं का एक निखरा रुप भी देखने में आया। भारतवर्ष में मुसलमान बादशाहों ने

ISSN 2277-5587

राज्यश्रय देने की प्रथा को अपनाया।भारतवर्ष में गुलाम वंश का अल्तमश बादशाह विद्वानों का आदर करता था। सुल्ताना रजिया बेगम स्वयं शिक्षित थीं और विद्वानों कि संरक्षिका थी। सुलतान नसीरुद्दीन बादशाह होते हुए भी विद्यार्थी और साधु जीवन व्यतीत करता था और अपनी लेखन कला के अर्जित धन से जीविका चलाता था। उसने बहुत से फारसी विद्वानों का समादर किया। बलबन और उसका शाहजादा मुहम्मद भी साहित्यिक व्यक्ति थे। मुहम्मद दूर-दूर से कवियों और विद्वानों को बुलाने के लिए राजदूत भेजता था। इस प्रकार मुहम्मद के समय में कवियों को विशेष प्रोत्साहन मिला। सुल्तान जलालुद्दीन खिल्जी के दरबार का वातावरण साहित्यिक था। उसके साथी अपनी हास्योददीपक उक्तियों और प्रत्युत्पन्न मति के लिए प्रसिद्ध थे। मुहम्मद तुगलक ने जो स्वयं सफल लेखक और कवि था, एक विद्वनमण्डली का आयोजन किया था। सुल्तान फिरोज ने तीन प्रसिद्ध महल बनवाये- अंगूर महल, लकड़ी का महल और साधारण जनता के लिए अलग-अलग महल थे। हिन्दू-स्मारकों के लिए उसके ह्रदय में श्रद्धा थी। सम्राट अशोक के दो स्तंभों को वह धन व्यय करके अपनी राजधानी में खिज्रबाद से जो फिरोजाबाद से 180 मील दूरी पर है लाया था और अनेक ब्राह्मणों को उस स्मारक की लिपि को स्पष्ट करने के लिए बुलवाया था। इससे स्पष्ट होता है कि प्राचीन साहित्य, धार्मिक विषयों तथा प्रसिद्ध वस्तुओं के प्रति उसके ह्रदय में श्रद्धा थी। सुलतान सिकन्दर स्वयं कवि था और विद्या प्रचारार्थ उसने कई विद्यालय खोले थे। अकबर के राज्य में जनता की ईश्वरोन्मुख प्रवृत्ति और वैष्णव आचार्यों के भक्ति प्रचार व्यापकता के कारण हिन्दी को विशेष उत्थान मिला। उस काल के अनेक श्रेष्ठ भक्त कवियों ने हिन्दीभाषा में ही अपने भाव व्यक्त किए। अकबर अपने पूर्वजों की साहित्यिक अभिरुचि से भली भाँति परिचित था। उस काल की जन-भाषा हिन्दी का अकबर पर बहुत प्रभाव पड़ा। फारसी दरबार की राजभाषा अवश्य थी किन्तु नित्य के कार्य व्यवहार और विचारों के आदान-प्रदान के लिए दरबारी तथा अन्य लोगों को जन-भाषा हिन्दी का ही आश्रय लेना पड़ता था। अकबर हिन्दी भाषा में केवल रुचि ही नहीं रखता था वरन उसने अपने भावों का प्रकाशन भी छन्दोबद्ध रुप में किया था।[7] बादशाह अकबर का समुन्नत ह्रदय हिन्दी और फारसी काव्य रचना की ओर आकृष्ट हुआ था और वह कविता की विशेषताओं को समझने में एक आलोचक की दृष्टि रखता था। उसने हिन्दी कविता में उच्च भावनाएँ व्यक्त की हैं जो अपने ढंग की अनूठी हैं।[8] अकबर द्वारा रचित कवितायें 'अकबरसाह' और 'साह अकबर' के नाम से हस्तलिखित तथा प्रकाशित संग्रह ग्रन्थों में उपलब्ध होती हैं। उसकी यह कविताएँ साधारण कोटि की ही हैं जिनमें नायिका के रुप सौन्दर्य वर्णन की प्रधानता है। यहाँ पर एक दो छन्द उदाहरण के लिए निम्न हैं। मनुष्य जीवन की सफलता तभी है जब उसका यश जगत में फैला हो और संसार भर के लोग उसकी प्रशंसा करें-

जाको जस है जगत में जगत सराहै जाहि
ताको जीवन सफल है कहत अकँबर साहि।।[9]

नये उपमानों के प्रयोग अकबर के उपलब्ध छन्दों की विशेषता है उदाहरण दृष्टव्य है :

साहि अकँबर एक समे चले कान्ह विनोद विलोकन बालहिं
आहट ते अबला निरख्यों चकि चौंकि चली करि आतुर चालहिं
सों बलि वेनी सुधारि धरी सुभई छबि यों ललना अरु लालहिं
चंपक चारु कमान चढ़ावत काम ज्यों हाथ लिए अहि बालहिं।।

नायिका ने आहट से ही कृष्ण को पहचान लिया और चौंक कर आतुरता के साथ चलने लगी किन्तु कृष्ण ने उसकी बेणी पकड़ ही ली। उस समय की छवि ऐसी ज्ञात हुई मानो कामदेव चंपक के कमान पर सर्प रुपी बाणों को चढ़ा रहा हो। नायिका के सुन्दर चंपकवर्ण शरीर की उपमा धनुष और बेणी की उपमा सर्प से दिखाकर कवि ने उपर्युक्त छन्द में अपनी अनूठी सूझ का परिचय दिया है।मानो कामदेव चंपक के कमान पर सर्व रुपी बाणों को चढ़ा रहा हो। नायिका के सुन्दर चंपकवर्ण शरीर की उपमा धनुष और बेणी की उपमा सर्प से दिखाकर कवि ने उपर्युक्त छन्द में अपनी अनूठी सूझ का परिचय दिया है।[10]

उपर्युक्त छन्दों से अकबर के भाव और भाषा का सुन्दर समन्वय भी स्पष्ट है। इससे अकबर की हिन्दी काव्य प्रतिभा का थोड़ा सा परिचय मिल जाता है। अकबर की हिन्दी कविता के कुछ उदाहरण हस्तलिखित प्रतियों और संग्रह ग्रन्थों में भी मिलते हैं। अत: जब शासक स्वयं हिन्दी कविता में इतनी रुचि रखता हो तो फिर दरबार के सामन्तों तथा साधारण व्यक्तियों का रुझान उस ओर होना स्वाभाविक ही था। 'अकबर के दरबार के वैभव की प्रशंसा सुनकर देश के कोने-कोने से कलाविद् अपनी-अपनी कला के समुचित सम्मानार्थ दरबार में उपस्थित हुए थे। हिन्दी के कवियों को भी दरबार में उचित सम्मान मिला था जिसका उल्लेख संग्रह-ग्रन्थों, वार्ता साहित्य, समकालीन कवियों की रचनाओं, ऐतिहासिक ग्रन्थों तथा हस्तलिखित प्रतियों में मिलता है। नित्य दरबार वृत्ति पाने वाले हिन्दी कवियों के अतिरिक्त कुछ अन्य कवि भी अकबर के दरबार द्वारा सम्मानित और पुरस्कृत हुए थे। इन सब हिन्दी कवियों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है। एक तो दरबार में स्थायी रुप से रहने वाले कवि थे, इनमें राजकीय वृत्ति में लगे हुए स्वान्त: सुखाय रुप में कविता करने वाले कई साधारण और उच्च पदाधिकारी भी थे। इनमें से चतुर्भुजदास ब्राह्मण, राजा आसकरण, राजा पृथ्वीराज, सूरदास, मदन मोहन, मनोहर कवि, राजा टोडरमल, नरहरि, ब्रह्म, तानसेन, गंग और रहीम विशेष रुप से उल्लेखनीय हैं। इन कवियों में कुछ तो अधिक प्रसिद्धि प्राप्त कवि थे किन्तु उससे सीधा सम्बन्ध नहीं था। इनमें चन्द्रभान व्यास करनेश कुंभनदास सूरदास मुख्य हैं।

करनेश का जन्म काल सम्बत् 1611 और रचना काल सम्बत् 1637 माना गया है। विनोदकार का कथन है कि ये अकबर के दरबार में नरहरि के साथ जाते थे और इन्होंने खड़ी बोली में भी कविता की थी। इनका काव्य साधारण श्रेणी का है।[11] दुरसा के बारे में लिखा है कि अकबर के दरबार में राजस्थान के चारण कवियों का भी प्रवेश हुआ था। इनमें से दुरसा नेवि उल्लेखनीय हैं। अकबर एक बार सोजत के मार्ग से होकर आगरे से अहमदाबाद जा रहा था। सोजत से गुंदोच तक का मार्ग प्रबन्ध दुरसा जी के संरक्षक नगरी के ठाकुर पर था किन्तु प्रबन्ध का भार दुरसा जी के सिर पर ही पड़ा। उन्होने उसका इतना उचित और सुन्दर प्रबन्ध किया कि अकबर ने प्रसन्न होकर इन्हें लाख पसाव और उनकी सेवा की, प्रशंसा का प्रमाण पत्र देकर उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाई। इस प्रथम परिचय के बाद दुरसा जी का प्रवेश अकबर के दरबार में हो गया।[12] होलराय ब्रह्मभट्ट को हरिवंशराय का राजाश्रय प्राप्त था किन्तु वे अकबर के दरबार में आते जाते थे। अकबर से इनको कुछ जमीन मिली थी जिसमें उन्होनें होलपुर नामक गाँव बसाया था। एक किवदन्ती है कि गोस्वामी तुलसीदास से भी इनका सम्पर्क हुआ था जिसकी पुष्टि में निम्नाँकित उक्ति प्रचलित है। गोस्वामी जी ने एक बार होलराय को अपना लोटा दिया जिस पर ये लोटा तुलसीदास को लाख टका को मोल। गोस्वामी जी ने तुरन्त उत्तर दिया **कछु है नहीं लेहु राय कवि होल।**[13] कवि होल की पुस्तक रुप में कोई रचना उपलब्ध नहीं होती। उनके केवल एक, दो राजाओं की प्रशंसा के इतिहास ग्रन्थों में मिलते हैं। अकबर के दरबार के सामन्तों तथा अकबर की प्रशंसा का निम्नलिखित कवित्त होलराय कवि का ही माना जाता है।

दिल्ली ते न तख्त ह्वै है वख्त ना मुगल कैसो, हवै है
ना नगर बढ़ि आगरा नगर ते
गंग ते न गुनी तानसेन ते न तानबाज, मानते राजा औ
न दाता बीरबर ते
खानखाना ते न नर नरहरि ते न, हवै है न दीवान कोउ वेडर टुडर ते
नबी खंड सात दीप सातहू समुद्र पार हवै है न
जलालुद्दीन साह अकबर ते।[14]

अकबर की भेंट अष्टछाप के भक्तकवि कुंभनदास से भी हुई थी। ये बादशाह अकबर से फतेहपुर सीकरी में मिले थे किन्तु उन्होनें इसे अपने समय का अपव्यय ही समझा जिसका उल्लेख निम्नाँकित पद में हुआ है-

भक्तन को कहा सीकरी सों काम
आवत जात पन्हैया टूटी। बिसरि गयो हरि नाम
जाको मुख देखे दुख लागै ताको करन परी परनाम
कुंभनदास लाल गिरधर बिन यह सब झूठी धाम।।[15]

महात्मा सूरदास भी अकबर के सम्पर्क में आए थे और उन्होंने अपनी भक्ति के आदेश में लौकिक पुरुष का यशगान अनुचित ही समझा जिसकी पुष्टि एक पद से होती है:-

नाहिन रह्यो मन में ठौर
नंद नंदन अछत कैसे आनिये उर और
चलत चितवत धौस जागत सुपन सोवत राति
ह्रदय ते वह मदनमूरति छिन न इत उत जाहि
कहत कथा अनेक ऊधौ लोक लोभ दिखाइ
कहा करुँ चित प्रेम पूरति घट न सिंधु समाइ
स्याम गात सरोज आनन ललित गति मृदु हास
सूर ऐसे दरस की ए मरत लोचन प्यास।।

कहा जाता है कि सूरदास के उपर्युक्त पद के अन्तिम चरण पर अकबर ने उनसे प्रश्न किया सूरदास तुम तो अन्धे हो, तुम्हारे नेत्र दर का प्यासे कैसे मरते हैं। सूर ने कहा ये नेत्र भगवान को दिखते हैं और उस स्वरुपानन्द का रसपान प्रत्येक श्रण करने पर भी अतृप्त बने रहते हैं। अकबर ने सूर को धन द्रव्य और जो वस्तु वे चाहें लेने को कहा। निर्भीक और त्यागी सूर ने उत्तर दिया ''**आज पाछे हमको कबहूँ फरि मत बुलाइयो कबहू मिलियो मती।** इस प्रसंग से ज्ञात होता है कि जो कथा सूरदास के दरबार से सम्बन्ध रखने की ओर उनके अकबर से सम्मानपूर्ण पद पाने की कही यह सूर के इस त्यागपूर्ण व्यवहार पर विचार करने से बिल्कुल बेमेल और असंगत प्रतीत होते हैं।[16] दरबार में अनेक कवि नित्य आकर सम्राट को आशीर्वाद देते थे किन्तु वे जनता में प्रसिद्ध न थे। इनमें से एक भी थे जिनका इस सम्बन्ध में निम्नाँकित पद अवलोकनीय है-

गाऊ राग सभा साहन साह की जाको अकबर नाऊ
जा नर नरेन्द्र इन्द्र समान चक्री वक्री सी होत
कबहु नहि निरखत अष्ट सिद्ध नवनिद्धि पाऊं
एक एक संगीत प्रति लक्ष लक्षन करे औ
एक निरत काली खंजरी समान गाऊ बजाऊं
विनवत व्यास कोउ जानत नाही
जलाल्दीन महम्मद को देन आशीर्वाद नित आऊं।।[17]

अकबर के दरबार के चन्द्र भान कवि साधारण कोटि के कवि ज्ञात होते हैं और अपने किसी गुरु के साथ अकबर के दरबार में जाते थे। उन्होंने अकबरी दरबार में अपने प्रवेश का आधार बताकर इससे अपना सम्पर्क निम्नलिखित छन्द द्वारा स्पष्ट किया है-

शाह अकबर को यश कीरत गाऊं रिझाऊं सकल सृष्टि के मन श्रवनन
चन्द्रभान कहे गुरु के प्रसाद ते सभा में आनन्द मनन।।[18]

ऊपर उन कवियों का संक्षिप्त विवरण दिया गया है जो अवसर अनवसर अकबर के सम्पर्क में आए थे। इनमें अष्टछापी भक्त कवियों तथा एक दो अन्य कवियों को छोड़कर शेष बहुत ही साधारण कोटि के कवि थे। कुछ कवि अकबर के दरबार में स्थायी रुप से रहते थे और ये या तो दरबार से कवि रुप में वृत्ति पाते थे अथवा दरबार के साधारण

ISSN 2277-5587

तथा उच्च पदों पर नियुक्त व्यक्ति थे। चतुर्भुजदास ब्राह्मण अकबर के दरबार से राजकीय वृत्ति पाते थे। इनका वेतन एक हजार रुपये महीने तक हो रखा था ये विद्वान पंडित तथा विद्यानुरागी थे। बीरबल की सभा में रहने पर अपने गुणों के कारण इनका प्रवेश अकबरी दरबार में भी हो गया था। दरबार में आने जाने वाले पंडितों के साथ इनका वाद विवाद होता था और अपनी विद्धता से ये उनको बहुधा परास्त भी कर देते थे। बाद में ये बल्लभ संप्रदाय में श्री गुसाईं विट्ठलनाथ के सेवक हुए और श्री गोवर्धन जी की सेवा में रहे। अकबर द्वारा पुन: निमंत्रित किये जाने पर उन्होंने निम्नलिखित पंक्तियाँ लिख कर भेज दीं थीं।

जाको मन नंद नन्दन सुं लाग्यो नीको।
सुख संपत को कहाँ लग बरनो सब जग लागत फीको।।[19]

राजा आसकरण नरवरगढ़ के राजा भीम सिंह के पुत्र थे और सम्वत् 1615 में उनका जन्म हुआ था तथा उन्होंने हिन्दी के बहुत से पद रचे थे।[20] आइने-अकबरी में अबुलफज्ल द्वारा दी गयी प्रभावशाली सामन्तो तथा राजाओं की सूची में राजा आसकरण का नाम आया है।' दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' तथा 'कीर्तन-संग्रह' ग्रन्थों में हुआ है। उदाहरण के लिए एक पद दृष्टव्य है, निम्नलिखित पदों में कृष्ण की बाल-लीलाओं का स्वाभाविक वर्णन हुआ है-

उठो मेरे लाल लाडिले रजनी बीती तिमिर गयो भयो भोर।
घर-घर दधि मथिनिया घूमे अरु द्विज करत वेद की घोर।।
करि कलेउ दधि ओदन मिश्री बांटि परोसी ओर।
आसकरण प्रभु मोहन नागर वारों तुम पर प्राण अंकोर।।[21]

पृथ्वीराज महाराजा जयसिंह के छोटे भाई और कल्यान सिंह के पुत्र थे। अकबर के प्रीतिपात्र होने के कारण ये अकबर के दरबार में ही रहते थे।[22] परन्तु वे एक स्वदेशाभिमानी और स्पष्ट वक्ता थे। भाषा के कवि होने के साथ ही वे संस्कृत-साहित्य, दर्शन, ज्योतिष, पिंगल और संगीत-शास्त्रों में भी पारंगत थे। इनके लिखे हुए कई ग्रन्थ कहे जाते हैं जिनमें 'बेलि क्रिसन रुक्मिणी री, श्यामलता, दशरथ-रावउत, वसुदेव-रावउत, गंगा-लहरी नामक ग्रन्थ तथा कुछ फुटकर गीत, दोहे, छप्पय आदि उपलब्ध हुए हैं।उपर्युक्त रचनाओं में 'बेलि क्रिसन रुक्मिणी री' ही सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थ है और जिसका प्रकाशन हिन्दुस्तानी-एकेडेमी, प्रयाग से हो चुका है। कहा जाता है कि 'अकबर ने जब राणा प्रताप सिंह की वश्यता स्वीकार करने पर प्रसन्नता प्रकट की तो पृथ्वीराज ने इस बात का खंडन करते हुए कहा-''जहाँपनाह, सागर मर्यादा, हिमालय गौरव और सूर्य अपने तेज को भले ही छोड़ दें परन्तु शरीर में बल, नसों में रक्त और हाथ में तलवार रहते तक प्रताप अपने प्राण को कभी भी न छोड़ेगें। मेरा दृढ़ विश्वास है कि मेवाड़ और भारत ही क्या समस्त संसार का राज्य भी यदि प्रताप के पावों तले रख दिया जाय तो वह उसे ठुकरा देगें। स्वतंत्रता के सामने प्रताप की दृष्टि में राज्य सम्मान, राज्य वैभव और राज्याधिकार का कोई मूल्य एवं महत्व नहीं है।[23] महाराणा प्रताप सिंह का यश वर्णन करते हुए इन्होंने वीरभाव के सुन्दर दोहे लिखे हैं। अकबर अथाह समुद्र है जिसमें वीरता रुपी जल भरा हुआ है परन्तु मेवाड़ का राणा प्रताप उसमें कमल के फूल के समान है। जिस प्रकार कमल पर जल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता उसी प्रकार प्रताप पर भी अकबर की वीरता कोई प्रभाव नहीं पड़ा-

अकबर समद अथाह सूरापण सजलि।
मेवाड़ों तिण मांह पोयण फूल प्रताप सी।।[24]

सूरदास मदनमोहन अकबर के दरबार की ओर से सण्डीले के अमीन-पद पर नियुक्त थे। भक्तमाल में इनका नाम सूरध्वज लिखा मिलता है परन्तु ऐसा ज्ञात होता है कि काव्य में सूरदास मदनमोहन की छाप रखने के कारण ये इसी नाम से विख्यात हो गए।[25] ये जाति के कायस्थ और सण्डीले के रहने वाले माने गए हैं। इनके विषय में यह प्रसिद्ध है कि जो कुछ इनके पास होता वह साधुओं की सेवा में लगा दिया करते थे। कहा जाता है कि एक बार सण्डीले तहसील की कई लाख मालगुजारी सरकारी खजाने में जमा होने के लिए आई। उन्होंने सब साधुओं को खिला दिया और शाही खजाने में निम्नलिखित दोहा लिखकर भेज दिया -

तेरह लाख सण्डीले उपजे सब साधुन मिलि गटके।
सूरदास मदनमोहन मिलि वृन्दावन को सटके।।[26]

सूरदास मदन मोहन का रचनाकाल सम्वत् 1565 के लगभग अनुमान किया जाता है। इनकी कोई प्रसिद्ध रचना उपलब्ध नहीं होती। कुछ फुटकर पद वैष्णव कीर्तन-संग्रहों तथा हिन्दी-साहित्य के इतिहास-ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं।[27]

राधा-कृष्ण की प्रेम-क्रीड़ा का वर्णन कवि ने निम्नलिखित पद में किया है-

नवल किसोर नवल नागरिया।
अपनी भुजा स्याम भुज ऊपर स्याम भुजा अपने उर धरिया।।
करत विनोद तरनि तनया तट स्यामा स्याम उमगि रस भरिया।
यों लपटाइ रहे उर अंतर मरकत मनि कंचन ज्यों जरिया।।
उपमा को घन दमिनि नाहीं कंदरप कोटि बारने करिया।
सूरदास मदनमोहन बलि जोरी नंद नंदन वृषभानु दुलरिया।।[28]

'मनोहर कवि सम्वत् 1562 में उत्पन्न हुए थे और अकबर शाह के मुसाहब फारसी और संस्कृत-भाषा के महाकवि थे। फारसी में अपना नाम 'तोसनी' लिखते थे।[29] तुजुक-ए-जहाँगीर में जहाँगीर ने राय मनोहर का परिचय देते हुए लिखा है कि ये कछवाहे सूरदास थे और इनके युवाकाल में अकबर की इन पर काफी कृपा दृष्टि रहती थी। इन्होंने फारसी-भाषा का अच्छा अध्ययन किया था। इनकी जाति में यद्यपि एक व्यक्ति भी साक्षर नहीं हुआ किन्तु मनोहर बुद्धि वैभव युक्त एक भावुक व्यक्ति थे। इनकी फारसी की कविताएँ प्रसिद्ध हैं।[30] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने मनोहर कवि के पांडित्य और काव्यगुणों की प्रशंसा की है। उनके श्रृंगार के दोहों में उच्च-कल्पना और भाव-

व्यंजना समान रुप में दृष्टिगत होती है। फारसी के कवि होने के कारण उस भाषा का पुट इनकी हिन्दी-रचनाओं में भी मिलता है। उसके कुछ उदाहरण निम्न है। मुख, नेत्र, बाल, हृदय और वचन के लिए सुन्दर उपमानों के प्रयोग कवि की अनूठी सूझ के द्योतक है-

इंदु बदन नरगिस नयन संबुलवारे बार
उर कुंकुम कोकिल बयन जेहि लखि लाजत मार।।[31]

नायिका के बालों के लिए भी कवि के भाव दृष्टव्य हैं-

बिथुरे सुथुरे चीकने घने-धने धुधुवार
रसिकन को जंजीर से बाला तेरे बार।।[32]

कवि के उपर्युक्त दोहों से उसकी श्रृंगारिक रचनाओं पर फारसी भाषा के शब्दों के प्रभाव का परिचय मिल जाता है। तत्कालीन धार्मिक वाद विवाद और समन्वय की वृत्ति का भी परिचय कवि के दोहों से मिलता है।

अचरज मोहि हिन्दू तुरुक बादि करत संग्राम
इक दीपति सी दीपियत काबा काशी धाम।।[33]

राजा टोडरमल अकबर के दरबार के प्रसिद्ध मन्त्री थे। इनका जन्म सम्वत् 1580 और मृत्यु काल 1646 था।[34] अकबर के यहाँ ये भूमिकर विभाग के मन्त्री थे।'अपनी कार्य कुशलता के कारण दरबार की आय इन्होंने काफी बढ़ा दी थी। जिसके कारण अकबर की दृष्टि में इनका मान बहुत हो गया था। ये पहले व्यक्ति थे जिन्होंने लोगों का ध्यान फारसी भाषा की ओर आकृष्ट किया था और सभी कार्यालयों में फारसी प्रचलित करा दी थी अन्यथा देशी भाषा हिन्दी का ही प्रचलन सब स्थानों पर हो रहा था। इन्हें अकबर द्वारा 'राजा' की उपाधि भी प्राप्त हुई। महाजनी के बही खाते का हिसाब, हुण्डी, चिट्ठी आदि के लिखने का ढंग जैसा आजकल प्रचलित है उसका श्रेय राजा टोडरमल को ही दिया जाता है।[35]टोडरमल कवि भी थे। उनके कुछ छन्द हिन्दी साहित्य इतिहास का प्राचीन हस्तलिखित संग्रह ग्रन्थों में मिलते हैं। इन छन्दों को देखने से ज्ञात होता है कि इन्होंने नीति और उपदेश सम्बन्धी रचनाएँ ही अधिक लिखी थीं। कवि का निम्नलिखित कवित्त प्रसिद्ध है-

जार को विचार कहा गनिका को लाज कहा गदहा को पान कहा आँधरे को आरसी

निर्गुणी को गुण कहा दान कहा दालिद्री को सेवा कहा सूम की अरंड की सी डारसी,

मद्यपि को सुचि कहाँ सांचु कहा लंपटी को नीच को बचन कहा स्यार की पुकार सी,

टोडर सुकवि ऐसे हठी तें न टार्‌यो टरै भावै कही सूधी बात भावै कही फारसी।।[36]

कवि ने अपने अनुभव की बातों को निम्नलिखित कवित्त में दिया है-

राजा वही जाको राज सराहिये काज उही सो उछाह सों कीजै।
धारा वही सो सदा रहै चंचल जोरा उही सो सुगंधि सों भीजै
बात वही सो सदानि बहै कवि टोडर मानि इही सिष लीजै
फौज वही सो रहै तैयार औ मौज उही सो मगाय कै दीजै।।[37]

राजा टोडरमल के छन्द :

हुण्डी

ऊपर लिखे निवास सब रखे मुद्दत होय, चलन निशां अंदाज धन हुण्डी कहिये सोय

हुण्डी खोये पैठ लिख पैठ गये पर पैठ, सनद एक के दाम दे रोकड़ खाता डेठ

जो हुण्डी सिकरे नहीं जिकरी लिखै बनाय, हुण्डी कोरी पीठ ले तब धन देय चुकाय।।

सर्राफ और व्यापारी के लक्षण

हुण्डी लिखै न हाथ से जमा न रखे भूल, लेय ब्याज देने नहीं सोई सर्राफी भूल

जग सर्राफ ताको कहे जमा समय पर देय, व्यापारी सो जानिये समय पै मुद्द लेय।।

चौधरी के लक्षण

धारा बाच्छे बांट हाकिम रैयत मानही
सो चौधरी का ठार ताके सकल अधीन हों।।

अढ़तिया के लक्षण

साफ हिसाव किताब हो रोब सिताबी काम
कर्म धर्म अरु मर्म हो संचित औ धाम।।

साहूकार के लक्षण

आधा ऊपर आधा तरे आधा देय साह के गरे
आधे में आधा निस्तर जुग टर जाय साह नहि टरै।।

सर्राफा के लक्षण

प्रथम बनारस आगरा दिल्ली औ गुजरात
अम्गर औ अजमेर से सिखै सराफी बात।।

बहीखाता के लक्षण

बाम जमा दच्छिन खरच सिर पेटा पर पेट
ऊपर नाम धनी लिखे हस्ते पुन री डेट।।

बहीखाता शीघ्रता से लिखा जा सके इसलिए कहा जाता है कि देवनागरी लिपि के सांकेतिक रुप मुड़िया का प्रचार संभवत: इन्होंने ही किया था-

देवनागरी अति कठिन स्वर व्यंजन व्यवहार
ताते जग के हित सुगम मुंडा कियो प्रचार।।

ISSN 2277-5587

उपर्युक्त कवित्तों में कवि की भाषा सरल तथा सर्व-जन-सुलभ है। वस्तु विशेष का यथा तथ्य निरुपण कवि ने सुन्दर शब्दावली में कर दिया है। इनकी रचना में कोई विशेष काव्य का आभास नहीं मिलता। इनमें उनके जीवन सम्बन्धी अनुभव का परिचय ही अधिक मिलता है। अंततः हम यह कह सकते हैं कि अकबर की साहित्यिक अभिरुचि के कारण, हिन्दी जगत को ऐसे अनेक रत्न मिले जिनके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है। ऐसा इसलिए संभव हुआ क्योंकि अकबर की मानसिकता संकीर्ण नहीं थी, वह कट्टर नहीं था, उसके पास एक कवि ह्रदय था। उसकी मानसिकता चहुँओर विकास की थी, अकबर के अन्दर मनुष्यता एवं राजत्व जन्मजात गुण होने के कारण, हिन्दी साहित्य को विकसित होने का अवसर मिल गया। अत: भक्तिकाल को अकबर के समय में विकसित होने का वातावरण मिला। जिसके कारण हिन्दी साहित्य को बहुत सी श्रेष्ठ रचनाएँ प्राप्त हुयीं। इसलिए हम नि:संकोच भाव से कह सकते हैं कि अकबर काल में हिन्दी का विकास हुआ।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *Smith Vincent Arthur, Akbar The Great Mogul, Clarendon Press, 1911 P. 330, 331*
2. *Jahangir, The Tuzuk I Jahangiri, Prabhat Publication Translated By Henery Beveridge & Alexander Roger 1909, 1994 P.33*
3. *Roychoudhury Makhanlal, The Din-I-Ilahi, University Of Calcutta 1941 P.74, 82*
4. *Smith Vincent Arthur, Akbar The Great Mogul, Clarendon Press, 1911 P. 174*
5. *Augustus Karl, Fredrick Christian, The Emperor Akbar, Academica Asiatica 1973 P.*
6. *अकबर-कविता पृ. 316*
7. *Chatterji Suniti Kumar, Indo Aryan And Hindi, Mukhopadhyay, 1960 P.180, 181*
8. *Abul Fazl, Akbar Nama, Vol-1, Low Price Publication, 1994 P.520*
9. *शुक्ल पं. रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नमन प्रकाशन, 2009 पृ.238*
10. *शुक्ल पं. रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नमन प्रकाशन, 2009 पृ.238*
11. *मिश्रबंधु-विनोद, भाग 1 मिश्रबंधु, सं0 1914 पृ. 323, 324*
12. *मिश्रबंधु-विनोद, भाग 1 मिश्रबंधु, सं0 1914 पृ. 352*
13. *शिवसिंह-सरोज, श्री शिवसिंह सेंगर, सं 1923 पृ. 508,509*
14. *शिवसिंह-सरोज, श्री शिवसिंह सेंगर, सं 1923 पृ. 369*
15. *चौरासी वैष्णवन की वार्ता, कुंभनदास की वार्ता पृ. 323*
16. *गुप्त डॉ. दीनदयालु, अष्टछाप और बल्लभ संप्रदाय भाग 1, हिन्दी साहित्य सम्मलेन, सं.2004 पृ. 207,208*
17. *संगीत राग कल्पद्रुम, भाग 2, कृष्णानन्द व्यास देव रामसागर सन 1842पृ. 108, 109*
18. *संगीत राग कल्पद्रुम, भाग 2, कृष्णानन्द व्यास देव रामसागर सन 1842 पृ. 108, 109*
19. *गोकुलनाथ, दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता पृ. 332*
20. *शिवसिंह-सरोज, श्री शिवसिंह सेंगर, सं 1923 पृ. 382*
21. *गोकुलनाथ, दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता, राजा आसकरण की वार्ता पृ. 206*
22. *मिश्रबंधु-विनोद, भाग 1 मिश्रबंधु, सं0 1914 पृ. 282*
23. *मेनारिया पं. मोतीलाल, डिंगल में वीर रस, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, सं. 1997 पृ0 44*
24. *मेनारिया पं. मोतीलाल, डिंगल में वीर रस, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, सं. 1997 पृ. 47*
25. *भक्तमाल नाभादास, टीका. प्रियादास, अभिनव भारती, सन 1937 पृ. 752, 753*
26. *भक्तमाल नाभादास, टीका. प्रियादास, अभिनव भारती, सन 1937 पृ. 753, 754*
27. *मिश्रबंधु-विनोद, भाग 1 मिश्रबंधु, सं. 1914 पृ.296*
28. *शुक्ल पं. रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नमन प्रकाशन, 2009पृ. 227*
29. *शिवसिंह-सरोज, श्री शिवसिंह सेंगर, सं 1923 पृ. 472,473*
30. *Jahangir, The Tuzuk I Jahangiri, Prabhat Publication Translated By Henery Beveridge & Alexander Roger 1909, 1994 P.16*
31. *शुक्ल पं. रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नमन प्रकाशन, 2009पृ. 248*
32. *शुक्ल पं. रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नमन प्रकाशन, 2009पृ. 248*
33. *शुक्ल पं. रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नमन प्रकाशन, 2009 पृ. 248*
34. *शिवसिंह-सरोज, श्री शिवसिंह सेंगर, सं 1923 पृ.425*
35. *आजाद मुहम्मद हुसैन, अकबरी दरबार भाग 1, 2, 3, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, अनु. रामचन्द्र वर्मा, सं. 1981, 1985, 1993 क्रमश: अकबरी दरबार, भाग-3पृ. 142*
36. *हस्तलिखित प्रति नागरी प्रचारिणी सभा काशी ग्रन्थ संख्या 62 छन्द संख्या-3*
37. *हस्तलिखित प्रति नागरी प्रचारिणी सभा काशी ग्रन्थ संख्या 62 छन्द संख्या-4*

शरद जोशी कृत ''जीप पर सवार इल्लियाँ'' में राजनीतिक चेतना

डॉ. ऋता दीक्षित
प्रवक्ता, एल. एम. एस. डिग्री कॉलेज,
इशारा नगर, सकीट, एटा, (उत्तर प्रदेश)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

शरदजोशी हिन्दी व्यंग्य साहित्य के समर्थ हस्ताक्षर हैं। उन्होंने मानव, समाज एवं राष्ट्र जीवन की सभी विसंगतियों पर प्रबल प्रहार किये हैं। राजनीतिक विद्रूपताओं पर उन्होंने सभी कृतियों में प्रमुखता से व्यंग्य किये हैं। इस दृष्टि से ''जीप पर सवार इल्लियाँ'' उनकी उल्लेखनीय एवं कालजयी कृति है। वस्तुत: स्वातन्त्र्योत्तर भारत में जितनी तीव्रगति से राजनीतिक मूल्यों का ह्रास हुआ है, उतना अन्य किसी क्षेत्र में नहीं। इसीलिए साहित्य की सभी विधाओं की विषयवस्तु के रुप में ग्राह्य रहा है। किन्तु, व्यंग्यकारों के लिए तो यह क्षेत्र अथाह सामग्री उपलब्ध कराता है। ''जीप पर सवार इल्लियाँ'' जोशी जी की मनमोहक कृति है। इसमें संग्रहीत लेखों में राजनीतिक परिदृश्य का जीवन्त रुप विद्यमान है। नेताओं की वेशभूषा, भाषा, व्याख्यानमालायें, चुनावी मौसम, प्रलोभन, चुनाव प्रचार के हथकण्डे बडे़ प्रभावशाली रुप में चित्रित हुए हैं। जोशीजी की शैली तो अद्‌भुत है ही, कथ्य भी उतना ही प्रभावोत्पादक है। कृति का शीर्षक स्वत: ही सशक्त 'प्रतीक योजना' का परिचायक है, जिसमें रानीतिक चेतना के सभी आयाम समाहित हैं ।

संकेताक्षर : *शरद जोशी, व्यंग्य, राजनीति।*

व्यंग्य मानव जीवन में बहुविध रुपों में प्रवेश पाता है। कहीं यह आघातक है, कही वह चिकोटी है और कहीं हास्य के साथ मिलकर जीवन के तनाव को दूर करता है। एक व्यंग्य साहित्यकार के लिए एक पैनी दृष्टि आवश्यक होती है, जिससे वह जीवन में व्यंग्य व्यंग्यकों के आधारतत्व खोज सकें।

व्यंग्य के माध्यम से समाज का पर्यवेक्षण करके साहित्यकार साहित्य के माध्यम से शोधन करता है। समाज के स्वरुप को निखारता है तथा उसे शुद्ध करता है। व्यंग्य के माध्यम से शरद जोशी की रचनाओं में मानवीय दुर्बलताओं पर विजय प्राप्त की गयी है तथा मूलों एवं अनाचारों के विषैले कलेवर को समाज के ऊपर से उताकर अलग फेंक दिया गया है। आज के व्यंग्य लेखकों ने अपने परिवेश को सम्पूर्ण स्थितियों और जीवन सन्दर्भो को अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है। व्यंग्य का आधार ग्रहण कर उन्होंने जीवन जगत् से जुड़ी समस्याओं के समाधान का भी प्रयत्न किया है। आजादी के पश्चात् जन-जीवन में एक परिवर्तन और बदलाव की स्थिति देखी गयी, इसका प्रभाव साहित्याकारों पर भी पड़ा। उन्होंने देखा कि आज की जीवन ही एक व्यंग्य के रुप में अवस्थित है। व्यंग्य से उसका सीधा सम्बन्ध स्थापित हो गया है। फलत: उसने व्यंग्य को लेखन के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया। आज व्यंग्य एक स्वतन्त्र साहित्यिक विधा के रुप में स्थापित है, जो युग की बहुत बड़ी माँग थी।

हिन्दी व्यंग्य यात्रा में शरद जोशी मील के पत्थर है। 21 मई 1931 को 'उज्जैन में जन्में शरद जोशी ने अपनी कृतियों के माध्यम से जन जीवन की स्थितियों और उसकी सम्पूर्ण पीड़ाओं को चित्रित किया है। जोशी जी ने अपने जीवनगत सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक, साहित्यिक परिस्थितियों और परिवेश से जुड़ी हुई समस्याओं का आकलन अपनी कृतियों में किया है। इन सबके अभिव्यंजन के निमित्त उन्होंने हास्य व्यंग्य को आधार रुप में ग्रहण किया है। इनके निबन्धों एवं लेखों ने जीवन की जड़ता की जड़े खादी है। आक्रमण मूलक चेतना के कारण ये कोरे, उपदेशक, मूकदर्शक न होकर बौद्धिक सहकर्मी हो गये है।

शरद जोशी ने अपनी कृतियों 'परिक्रमा, किसी बहाने, जीप पर सवार इल्लियाँ, रहा किनारे बैठ, यथासम्भव, हम भ्रष्टन के भ्रष्ट हमारे, तिलस्म' आदि कालजयी रचनाओं के माध्यम से जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित किया है। शरद जोशी केवल हँसाते ही नहीं है, उन्हें राष्ट्रीय समस्याओं सामाजिक विकृतियों और हर तरह की नेतागिरी की विद्रूपताओं से परिचित कराके उसमें लोकतांत्रिक एवं मानवीय चेतना का बडे़ ही प्रभावी ढ्ग

ISSN 2277-5587

से संचार करते है। विस्तार से यहाँ केवल उनकी कृति 'जीप पर सवार इल्लियाँ' में अभिव्यक्त राजनीतिक चेतना पर ध्यान केन्द्रित करना ही आभिप्रेत है।

इस रचना के अन्तर्गत एक भूतपूर्व मंत्री से मुलाकात, एक मिनी भ्रष्टचार, ख्यालीरामजी का दल बदलना, सेवकराम 'निर्भय के तीन पत्र, वर्माजी, चुनाव और टू-टू, चुनाव गीतिका: सरलार्थ, आदि निबन्धों में जोशी जी ने अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से गहरा राजनीतिक प्रहार किया है। 'जीप पर सवार इल्लियाँ शीर्षक' निबन्ध में लेखक ने इल्लियों के माध्यम से यह बताया है, किस प्रकार हमारे चारों तरफ वातावरण कुत्सित होता जा रहा है। भ्रष्टाचार रुपी सैकड़ों इल्लियाँ हमें तथा हमारे समाज को निगलती जा रही है और हम सिर्फ उन्हें देख पा रहे हैं। हम निरन्तर उनके मकड़जाल में फँसते जा रहे हैं। धर्म, राजनीतिक, सामाजिक जीवन, व्यक्तिगत आचरण कुछ भी यहाँ लेखक की पैनी नजरों से बच नहीं पाया है और विसंगतियों का ऐसा मार्मिक उद्‌घाटन हुआ है कि पढ़ने वाला चकित होकर सोचने लगता है अच्छा, इस मामूली सी दिखने वाली बात की असलियत यह है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व भारतीय राजनीति महनीय आदर्शों, मानदण्डो और मूल्यों से सम्पृक्त थी। राजनीति में दुराचार, दुश्चरित्रता जैसी कोई भी विकृति नहीं थी। राजनीति के अन्तर्गत जो भी नेता संक्रित थे उनके जीवन में त्याग, बलिदान, जनसेवा, मानव-कल्याण स्वतन्त्रता-समानता, परदु:खकारता जैसे गुण कूट-कूट कर भरे हुए थे। अत: वे सभी आदर्श चरित्र वाले नेता थे जिनसे देश की असंख्य जनता प्रेरणा प्राप्त किया करती थी। कभी हमारी राजनीति मनु के राजनीजिक विचार, आचार्य चाणक्य के राजनीतिक विचार, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस, लाल बहादुर शास्त्री, जैसे महापुरुषों से सम्पन्न भी परन्तु स्वातन्त्र्योत्तर राजनीतिक परिवेश और परिस्थितियों ने राजनीति-जीवन में अनेकानेक विसंगतियों को जन्म दिया। किसी भी देश की राजनीति वहाँ के नेताओं के चरित्र पर पूरी तरह निर्भर करती है।

जोशी जी ने स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् देश की विकृत होती हुई राजनीति और राजनीति में तेजी से बढ़ती हुई विसंगतियों पर बड़े तीखे और मार्मिक प्रहार किये है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के कुछ वर्षो के पश्चात् ही चारों तरफ स्वार्थ ही दिखायी देने लगा और इसी स्वार्थ भावना ने जन्म दिया एक नये युग को ''भ्रष्टाचार का युग''। आज हम सब इसी युग में जी रहे हैं।

आज राजनीति का अपराधीकरण हो चुका है। राजनीति में तेजी से बढ़ते अनाचार, अत्याचार, हिंसा, रिश्वतखोरी, भाईभतीजावाद, जातिवाद, गुण्डागर्दी, चालबाजी, इन सबके कारण राजनीति राजनीति नहीं, अनीति बन जाती है और इसी के साथ शुरुहोता है राजनीतिक विसंगतियों का भयंकर दौर। उनके लेख, 'सेवकराम निर्भय के तीन पत्र का' सेवकराम अपने नेता का चुनाव जीतने के जातिगत गुणाभाग का लेखा जोखा प्रस्तुत करता है-

''सगरपुर में ब्राह्मण वोट ज्यादा हैं- कुम्हारों और नाइयों के वोट पक्के हैं, कुछ रुपया खर्च होगा, मुसलमानों की दोरें सदा कांग्रेस को जाती हैं। कायस्थ वोटें नहीं मिलेगी। कुल मिलाकर स्थिति यह है कि यों हम आदर्शवाद से चलेंगे, पर जातिवाद भी चलाना होगा''।[1] आज साक्षात् भगवान् भी यदि चुनाव के महासागर में कूदे तो उन्हें भी जातिवादी राजनीति के समीकरण बैठाने ही पड़ेंगे। चुनाव गीतिका: सरलार्थ में शरद जोशी ने राजनीतिक परिवार में किस प्रकार नेता अपनी स्वाभाविक कमाजोरियों पर भी काबू पा लेता है करारा व्यंग्य किया है। वे नेता को नट की संज्ञा देते है-''सुन सखी, जाज मुझे वह फिर दिखाई दिया जो पिछली बेर गलियों में आकर भाषण दे गया?[2] मीठी मीठी बातों का धनी वह चतुर नट जिसने फुसलाकर हमारा वोट हर लिया कवि कहते हैं कि वर्तमान समय में जातिवाद का दीमक हमारे सम्पूर्ण समाज को शनै: शनै: नष्ट कर रहा है। साम्प्रदायिकता तथा जातिवाद की समस्या ने आज विकराल रुप धारण कर लिया है। एक अन्य निबन्ध 'एक भूतपूर्व मंत्री से मुलाकात में जोशी जी ने मंत्रियों और नेताओं की स्वार्थसिद्धि ना होने पर अपने दल का परित्याग करके दूसरे दल में शामिल हो जाने प्रवृत्ति की निन्दा करते है। ''वर्मा जी चुनाव और टू-टू'' लेख में वे कहते हैं- ''वर्मा जी से उनका कुत्ता कहता है'- मैं मौहल्ले का कुत्ता हूँ समाज का, इस देश का ''वर्मा जी हँसे, यह बात तो नेता भी कहता है, मैं समाज का हूँ। मगर सवाल एक और है, तुम कब समाज और देश के हो और कब महज अपने। तुम भौंकते और भाषण देते हो देश के लिए, जनता के लिए। मगर जब तुम खाते हो तब तुम सिर्फ अपने लिए खाते हो।''[3]

शरद जोशी के पास व्यंग्य उथला नहीं है, उनके पास भावों की गम्भीरता है। काव्यात्मक शैली है। कटु से कटु बात भी वे काव्यात्मक शैली में, गाम्भीर्ययुक्त शब्दावली का प्रयोग करते हुए कहते हैं- ''राजनीति एक स्त्री है, जो ऐसे सुकोमल बच्चों को जन्म देती है, जो आगे चलकर विषैले साँप और भुजंग बन जाते हैं। इस राजनीति को एक खूसट माँ की तरह देखते है, जो अपने इन भुजंगो के सिर पर हाथ फेरती रहती है। राजनीति एक वैश्या है, जिसे हर ग्राहक पवित्रता समझता है। राजनीति निष्ठावानों और ईमानदारों की मालकिन और बेइमानों और धोखेबाजों की दासी है''।[4] सरकारी कार्यालयों में व्याप्त भ्रष्टाचार का स्पष्ट चित्र आपके लेखों में देखा जा सकता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि स्वतन्त्रता के पश्चात् इस देश में बढ़ती हुई राजनीतिक विसंगतियों को जोशी जी ने बड़ी गहराई से पकड़ा है। जोशी जी ने राजनीतिक क्षेत्र में अपने आस-पास और समाज में जो भी देखा है, उस पर बड़ी बेबाक चोटें की हैं।

उपर्युक्त राजनीतिक परिवेश की अभिव्यक्ति के अतिरिक्त भारतीय राजनीति से सम्बन्धित अनेकानेक विंसगतियों को भी प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष अभिव्यक्ति अनेक निबंन्धों में उपन्यस्त है। नेताओं और मंत्रियों द्वारा फैलाये जा रहे भाईभतीजावाद, जातिवाद उनकी

पक्षपात पूर्ण नीति, राजनीतिक हथकण्डों, स्वतन्त्रता से सम्बन्धित उनके दृष्टिकोण, आधुनिक प्रजातांत्रिक अव्यवस्था के साथ ही न्यायापालिका की स्थिति, तज्जन्य विसंगतियाँ भी उनकी तीक्ष्ण दृष्टि से बच नहीं पायी है। कहने का आशय यह है कि सम्पूर्ण राजनीतिक परिवेश की बड़ी ही पैनी और स्पष्ट अभिव्यक्ति उनकी प्रस्तुत रचना में दिखायी देती है। शरद जोशी नहीं रहे, व्यंग्य का एक बहुत बड़ा मजबूत स्तम्भ टूट गया। उन्होंने व्यंग्य लेखन का कार्य एक व्रत की तरह निभाया। हिन्दी व्यंग्य को समृद्ध करने में उनके योगदान को नहीं भुलाया जा सकता है। शरद जी मनुष्य की चिंता के लेखक थे, उनकी वास्तविक चिंता थी मनुष्य की हर समस्याओं से टकराने एंव जूझने का साहस वे इनसे जूझने का संकल्प प्रदान करते है और अन्त में श्रद्धांजलि रुप में उन्हीं के दो दृष्टान्त–''सिद्धान्तवादी मूर्ख की स्थिति उस वानर के समान है, जिसके हाथों में उस्तरा है। दूसरा सिद्धान्तहीन व्यवहारवादी है, जो पल-पल दलबदलता है।[5] तथा ''धिक्कार है, हम दिशा जानने के लिए भी यान्त्रिकता के गुलाम हो गए। दिशाऐं जो चिरकाल से अटल है और सदा रहेंगी, परन्तु हम उन्हें भूल गये ।हम सब कुछ भूल गये।''[6] किमधिकम् !!

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *जोशी, शरद : जीप पर सवार इल्लियाँ पृ. 121*
2. *जोशी, शरद : जीप पर सवार इल्लियाँ पृ. 151*
3. *जोशी, शरद : जीप पर सवार इल्लियाँ पृ. 141*
4. *जोशी, शरद : यथा सम्भव पृ. 21*
5. *जोशी शरद : चुनाव गीतिका सरलार्थ, पृ. 16*
6. *जोशी शरद : एक शंख बिन कुतुबनुमा, पृ. 28*

ISSN 2277-5587

महिला उत्पीड़न : समस्या व समाधान

डॉ शालिनी चतुर्वेदी
सहायक आचार्य, कानोड़िया पी.जी. महिला महाविद्यालय,जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

प्रस्तुत पत्र में प्राचीन काल, वैदिक काल, उच्चतर वैदिक काल, मध्यकाल से आधुनिक समय में समाज में महिलाओं की स्थिती पर प्रकाश डाला गया है। स्त्रियों से सम्बन्धित विविध समस्याओं पर चिन्तन करते हुए महिला उत्पीडन के कारणों व स्थिती पर विचार व्यक्त किए हैं। महिला उत्पीडन की प्रकृति, आधार व स्वरुप पर भी विचार प्रस्तुत किए गए हैं।

विविध संस्थाएँ जो महिलाओं के उत्थान के लिए प्रयासरत हैं का संक्षिप्त विवरण देते हुए इस गम्भीर समस्या का निराकरण किस प्रकार किया जाए इस पर प्रकाश डाला गया है। प्राथमिक व द्वितीयक स्त्रोतों के माध्यम में उपलब्ध व अर्जित सामग्री से पत्र में विचार व्यक्त करने व समस्या समाधान हेतु सुझाव प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

***संकेताक्षर:** उत्पीड़न, यौन कुत्सितायें, स्वछन्दता, अपराध, उन्मुक्त, बुद्धिजीवी, वैवाहिक, रुढ़ियाँ, मीडिया।*

प्राचीन काल में प्राय: समस्त विश्व में नारी की स्थिति सम्मानप्रद और सुदृढ़ थी क्योंकि समाज नारी सत्ता प्रधान था, परिवार की प्रमुख नारी थी। वह सामाजिक, धार्मिक और आध्यात्मिक क्षेत्रों में पुरुष की सहभागिनी थी। हिंदू समाज में स्त्रियों का आदर और सम्मान प्राचीनकाल से आदर्शात्मक और मर्यादा युक्त रहा है। परिवार व समुदाय में उनके द्वारा किए गए महत्व और गौरव का योगदान रहा है नारी सर्वशक्तिमान मानी गई है तथा नारी को विद्या, यश तथा सम्पत्ति का प्रतीक माना गया है। उनके बिना कोई धार्मिक अनुष्ठान पूर्ण नहीं माना जाता था। स्त्रियों के मान-सम्मान की पूर्ण रक्षा की जाती थी तथा उन्हें समान का एक महत्वपूर्ण अंग भी माना जाता था।

वैदिक काल में ऋग्वेद में स्त्री व पुरुष के साथ-साथ यज्ञ करने का वर्णन मिलता है। स्त्रियों को पृथक से भी यज्ञ करने का अधिकार था। यजुर्वेद में भी स्त्रियों को पुरुषों के साथ यज्ञ करने का वर्णन मिलता है। दोनों का सम्पत्ति में बराबर अधिकार होता है। इसीलिए उन्हें संयुक्त रुप से यज्ञ करना चाहिए।

उत्तर वैदिक युग में स्त्रियों की स्थिति में कुछ परिवर्तन आया। परम्परागत आदर सम्मान बना रहा शिक्षा के क्षेत्र में पुरुषों के समान ही स्थान रहा। जो स्त्रियाँ शिक्षा अर्जित करती थीं उन्हें ब्रह्मवादिनी कहा गया किन्तु यह युग पवित्रता व धर्म के नाम पर आडम्बर का युग रहा। उत्तरवैदिक काल में नारी की स्थिति का ह्रास हुआ। पुरुषों की तुलना में नारी के अधिकारों में कमी की गई। उन्हें अपनी सुख सुविधा का त्याग करना पड़ा।

मध्यकाल में स्त्रियों की दशा बहुत शोचनीय हो गई उनकी दुर्गति चरमसीमा पर पहुँच गई। भावुक व संवेदनशील होने के कारण प्रेम व आत्मबलिदान की भावना से उन्होंने पुरुषों का दासत्व स्वीकार किया। सम्पत्ति का अधिकार न के बराबर था। उन्नीसवीं शताब्दी को इस दृष्टि से अन्धकार का युग कहा जा सकता है। उस समय स्त्रियों के व्यक्तित्व के विकास के लिए कोई सुविधायें नहीं थी शिक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं था। हिन्दू स्त्रियों को वैवाहिक अधिकार प्राप्त नहीं थे। उनका विवाह बिना उनकी सहमति के किसी के साथ भी कर दिया जाता था। बाल विवाह का परिणाम बाल विधवा के रुप में सामने आया। स्त्रियों के आर्थिक अधिकार समाप्त हो गये थे। स्त्रियों को किसी भी प्रकार के राजनैतिक अधिकार प्राप्त नहीं थे। स्त्रियों के धार्मिक अधिकार भी कम हो गये थे। आधुनिक युग में नारी की स्थिति में परिवर्तन आया है। शिक्षा से व्यक्तित्व का विकास होता है। इसलिए प्राचीन व मध्यकाल की तुलना में आधुनिक काल में महिलाओं की स्थिति बेहतर हुई है, परन्तु आज भी आधुनिक भारतीय शिक्षित समाज में महिलाऐं अनेक समस्याओं से पीड़ित हैं।

महिला उत्पीड़न की समस्या एक गंभीर समस्या है लेकिन यह उत्पीड़न कौन से हैं, और क्यों हैं ? वास्तव में महिलाओं का उत्पीड़न अनेक तरीकों

से किया जाता है। इनमें दहेज उत्पीड़न, दहेज हत्या, अपहरण उत्पीड़न, बलात्कार उत्पीड़न, अश्लील हरकतें, छेड़खानी तथा अन्य घरेलू प्रताड़नायें मुख्य हैं। भारतीय समाज में महिलाओं की अशिक्षा बेटी-बेटे में भेद आदि कुछ ऐसी रुढ़ियाँ हैं जिनमें महिलाओं को पुरुषों की तुलना में दोयम दर्जे का प्राणी समझा जाता है जो महिला उत्पीड़न के लिए बहुत हद तक जिम्मेदार है। महिला उत्पीड़न के अन्य भी कारण हैं जैसे

- ➢ स्त्रियों की स्वछन्दता
- ➢ यौन कुत्सित्तायें
- ➢ आर्थिक इच्छायें
- ➢ व्यक्तिगत बदले की भावना।

स्त्रियों की स्वछन्दता :

वर्तमान में स्त्रियाँ स्वछन्द व उन्मुक्त वातावरण में जीना चाहती हैं। वे पुरुषों के प्रति आकृष्ट होती हैं तथा इस तरह के वस्त्र धारण करती हैं जिनसे पुरुष उनके प्रति आकृष्ट हों। अनेक बार परिवारों में भी जहाँ स्वच्छन्द वातावरण हैं तथा पुरुषों का घर में आगमन होता हैं या महिला व पुरुषों में दूरियाँ काफी कम हैं। पुरुषों के साथ बाहर जाना साधारण बात है वहाँ महिला व पुरुष दोनो का नैतिक पतन होता है तथा समाज का वातावरण दूषित होता है।

यौन कुत्सित्तायें :

यौन से तात्पर्य सैक्स। स्त्री व पुरुष में आकर्षण का भाव उत्पन्न होने पर यौन सम्बन्ध विकसित होते हैं। जो यौन सम्बन्ध पति पत्नी के बीच उत्पन्न होते हैं ये समाज द्वारा मान्य होतें हैं और जो सम्बन्ध विवाह से पूर्व या विवाह के बाद अनैतिक रुप से स्थापित होते हैं। वे समाज द्वारा अमान्य होते हैं तथा यौन अपराधों को जन्म देते हैं। कॉलगर्ल, वैश्या या विधवाओं के अन्य पुरुषों के साथ समाज में सम्बन्ध अमान्य होते हैं। अन्य समाजों की तुलना में भारत में यौन सम्बन्ध प्रतिबन्ध कठोर हैं। मानव इतिहास में यौन सम्बन्धों का सम्बन्ध गर्भधारण की समस्याओं, पितृत्व की निश्चिंतता, व्यक्ति की समस्या, परिवार का स्थायित्व, बच्चों के लालन-पालन की समस्या तथा उत्तराधिकार की समस्या माना हैं। यह सम्बन्ध वह सम्बन्ध हैं जो यौन सम्बन्धों से सम्बन्धित हैं लेकिन अश्लील हरकतें और छेड़खानी वह प्रतिक्रिया है जो यौन अपराधों को बढ़ावा देती हैं। स्वछन्दता के कारण स्त्रियों का वह व्यवहार जो पुरुष को यौन सम्बन्ध करने के लिए आकृष्ट करता है जैसे अश्लील हरकतों का विरोध न करना वरन् उत्तेजित करना भी यौन अपराधों को प्रोत्साहित करता है व समाज के वातावरण को दूषित करता है। यौन सम्बन्धी अपराध, छेड़खानी, बलात्कार, अनचाहा मातृत्व से होकर वैश्यावृत्ति और आत्महत्या पर जाकर समाप्त होता है। इस आधार पर यौन कुत्सित्ताओं को अनेक भागों में बाँटा जा सकता है।

- ➢ अश्लील हरकत
- ➢ छेड़खानी
- ➢ अनचाहा मातृत्व
- ➢ वैश्यावृत्ति
- ➢ आत्महत्या

वर्तमान में महिला उत्पीड़न के अनेक कारण हैं जैसे कन्या भ्रूण की हत्या, बेटे-बेटी में भेद, दहेज उत्पीड़न, दहेज हत्या, अपहरण, बलात्कार, अश्लील हरकतें, छेड़खानी आदि। महिला उत्पीड़न में परिवार के सदस्यों के अतिरिक्त अनेक बार सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त राजनैतिक हस्तियाँ, पुलिस अधिकारी-कर्मचारी, समाज के विरोधीजन, ससुराल के लोग, धर्म, जाति के लोग भी शामिल होते हैं। अधिकांश अपराधियों को राजनेताओं का संरक्षण प्राप्त होता है। उनके खिलाफ न तो कोई कानूनी कार्यवाही की जाती है। वरन् उन्हे संरक्षण प्रदान किया जाता है। जब कोई अपराधी किसी महिला का अपहरण करके पुलिस की सक्रियता के कारण गिरफ्तार कर लिया जाता है तो उस स्थिति में अपराधी के संरक्षणकर्त्ता को यदि यह पता चल जाता है कि उसका व्यक्ति गिरफ्तार हो गया है तो अपने प्रभाव द्वारा जमानत करा दी जाती है। राजनेता भी महिला उत्पीड़न में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रुप से जिम्मेदार होते हैं। अनेक बार महिलाओं को ससुराल वालो द्वारा दहेज के लिए प्रताड़ित किया जाता हैं और ऐसे में यदि पीअर पक्ष पुलिस में जाकर रिपोर्ट दर्ज कराता है तो पुलिसकर्मियों द्वारा सहयोग नहीं किया जाता है। दहेज के कारण मृत्यु हो जाने पर अनेक बार माता पिता के पहुँचने से पूर्व ही दाह संस्कार कर दिया जाता है। और माता पिता को शव प्राप्त नहीं हो पाता है अध्ययन के दौरान पता चला है कि कई बार माता-पिता को शव मिल भी गया और पोस्टमार्टम करवा भी लिया तो भी पुलिसकर्मी रिर्पोट दर्ज नहीं करते है। भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी इत्यादि के कारण पीअर पक्ष को न्याय प्राप्त नहीं हो पाता है। अपहरण, बलात्कार अनेक ऐसी घटनायें हैं जब पुलिसकर्मियों से यह अपेक्षा की जाती है कि मुस्तैदी से वे अपना कर्त्तव्य निभायेंगे परन्तु ऐसा नहीं होता अपितु वे अनेक बार खुद ही अपराध में शामिल हो जाते हैं।किसी महिला के साथ दुष्कर्म होता है और वह थाने में रिपोर्ट दर्ज कराने जाती है तो अनेक बार उसकी रिपोर्ट नहीं लिखी जाती है बल्कि पुलिस कर्मी स्वयं उसके साथ दुष्कर्म करतें हैं। ऐसे में यदि रक्षक ही भक्षक बन जाए तो क्या किया जाए।

महिला उत्पीड़न की बढ़ती घटनाओं के कारण महिला दक्षता समिति ने समाज में जनचेतना और संघर्ष का बीड़ा उठाया हुआ है और इसके लिये अनेक रचनात्मक कार्यक्रमों का आयोजन किया है। सर्वप्रथम यह समिति महिलाओं में जाग्रति लाने के लिये महिला प्रदर्शनों और आन्दोलनों का सहारा लेती है। जिसमें समाज के सभी

ISSN 2277-5587

वर्गो के प्रबुद्ध व्यक्ति सहयोग देते हैं। इस जनचेतना के परिणामस्वरुप यह समिति विशाल जनसमूह का रुप धारण कर चुकी है। महिलाओं की वैवाहिक व पारिवारिक समस्याओं के हल के लिए समिति एक ''फैमिली कॉंसलिंग सेन्टर'' परिवार परामर्श केन्द्र भी चल रहा है। जहाँ एक माह में लगभग 35-40 केस विवाहित और अविवाहित समस्याओं के आते हैं। यह केस दिल्ली के अलावा अन्य राज्यों से भी जाते हैं। महिलाएँ जागरुक हो इसलिए यह समिति हर वर्ष गाँधी जयन्ती के अवसर पर दिल्ली में एक जागरुकता सप्ताह मनाती है। समिति के संचालन के लिए 21 सदस्यों की कार्यकारिणी है। महिला उत्पीड़न की बढ़ती हुई गम्भीर समस्याओं को देखते हुए अनेकों समितियाँ स्थानीय स्तर पर भी स्थापित की गई हैं। महिलाओं के उत्थान के लिए कुछ ऐसी संस्थायें हैं जो सरकार द्वारा संचालित हैं, विशेष सहयोग कर रही हैं। राष्ट्रीय महिला आयोग समाज कल्याण विभाग, महिला कल्याण निगम, नारी निकेतन दिल्ली, पुलिस अपराध, राष्ट्रीय महिला अयोग, पंजाब सरकार द्वारा संचालित संजीवनी व सवेरा नामक संस्थायें आदि सरकारी संस्थायें महिलाओं के उत्थान के लिए। 'सवेरा' नामक संस्था की स्थापना का श्रेय पंजाब के तत्कालीन राज्यपाल माननीय ओमप्रकाश मल्होत्रा की पत्नी श्रीमती सरोज मल्होत्रा को जाता है। समाज द्वारा बहिष्कृत, पति द्वारा तिरस्कृत, अभिभावकों द्वारा पीड़ित, ससुराल द्वारा अपमानित तथा प्रताड़ित गलत हाथों में पड़ जाने वाली अविवाहित गर्भवती युवतियों को सहारा देने के उद्देश्य से स्थापित 'सवेरा' संस्था काफी हद तक अपने नाम को सार्थक कर रही है। यह वर्तमान में चंडीगढ़ में स्थित है।

अत: स्पष्ट है कि महिला उत्पीड़न की समस्या एक गम्भीर समस्या है। परिणामस्वरुप समाज में महिलाओं की संख्या दिन प्रतिदिन कम होती जा रही है, जो आने वाले समय में और भी कम हो जायेगी। नारी समाज की एक महत्वपूर्ण इकाई है यदि वह सुखी नहीं है तो समाज भी सुखी नहीं है। इसलिये आवश्यकता इस बात की है कि नारी की स्थिति को सुधारने के प्रयास किए जाऐं।

- दहेज की समस्या महिला उत्पीड़न की एक महत्वपूर्ण समस्या है। इसके समाधान के लिए आवश्यक है कि माता-पिता अपनी बेटियों को शिक्षित व आत्मनिर्भर बनायें तथा उनका विवाह उस युवक से न करें जो दहेज की अपेक्षा करता हो। जाति, सामाजिक बंधन के दायरे से बाहर निकलकर सुयोग्य युवक से पुत्री का विवाह करें।
- अपहरण अनेक कारणों से किया जाता है, जिसमें बदले की भावना तथा वासना महिलाओं के अपहरण का विशेष कारण है। माता-पिता को अपने बच्चों को ऐसे संस्कार देने चाहिए जिससे उनमें बदले की भावना न हो उनको किसी अजनबी के साथ न जाने दें। जिसका अपहरण किया गया है उसे समाज में बाद में जीने का सामान्य हक प्राप्त हो उसे अपराधी, हेय या अछूत न समझा जावे एक सामान्य नागरिक की तरह जीने का हक प्राप्त हो।
- बलात्कार किसी महिला के साथ जबरदस्ती स्थापित किया गया यौन सम्बन्ध है जिसमें महिला की सहमति का सर्वथा अभाव पाया जाता है। पीड़िता के साथ सहानुभूतिपूर्वक व्यवहार नहीं किया जाता है। समाज में उन्हें वही सम्मान व दर्जा दिया जाए जो घटना से पूर्व दिया जाता था। महिलाओं के साथ अश्लील हरकतों और छेड़खानी के कारण वे कुण्ठित हो जाती है यह स्थिति नयी नहीं है इसके लिए युवतियों को चाहिए कि वे भड़कीले तथा सैक्सी कपड़े न पहने, ऐसे हाव-भाव न अपनायें जिससे पुरुष उनकी ओर आकर्षित हों और अश्लील हरकतें व छेड़खानी करें। माता-पिता को भी बेटियों की पोशाक और हाव-भाव पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए। किशोरियों को चाहिए कि वे अपनी छवि एक सभ्य एवं सचरित्र महिला की बनायें न कि अपने हाव-भाव से पुरुषों की कामुक प्रवत्ति को उभारें। ससुराल वालो को भी चाहियें कि वह बहू को परिवार के सदस्य के रुप में मानें विवाह से पूर्व ही सुन्दरता व पारिवारिक स्तर से सन्तुष्ट हो लें और नि:सन्तान होने तथा सिर्फ बेटियों को जन्म देने में उनका दोष न मानें। साथ ही कम दहेज के लिए भी प्रताड़ित भी न करें। समाज के लोगों को भी विधवाओं व बलात्कार व दहेज से पीड़ित महिलाओं, परित्यक्ताओं के प्रति सहानुभूति रखनी चाहिए।
- कन्याभ्रूण हत्या को एक संगीन अपराध माना जाना चाहिए। सरकार द्वारा नवयुवकों को नौकरी इस शर्त पर प्रदान की जाए कि वह लोग अपना विवाह बिना दहेज के करेंगे। यदि परिवार में महिला सदस्या कामकाजी है तो पुरुषों को उसके प्रति सहयोगात्मक व्यवहार करना चाहिए। अपनी व्यक्तिगत आदतों के कारण महिलाओं को परेशान न करें। महिलाओं को राजनीतिक व सामाजिक कार्यो में भाग लेने की स्वतन्त्रता हो ताकि उनके व्यक्तित्व का विकास उनकी इच्छानुसार हो सके।
- मीडिया, समाज व विकास एक-दूसरे को बहुत अधिक प्रभावित करते हैं। मीडिया का अर्थ प्रचार, प्रसार तथा सूचना के समाचार पत्र, पत्रिकाओं, जनरल जैसे प्रिंट मीडिया व रेडियो, टेलीविजन, कम्प्यूटर व इन्टरनेट जैसे इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के सार्वजनिक साधनों से है। इसी प्रकार समाज का अर्थ व्यक्तियों के उस समूह से लिया जाता है,जिसमें व्यक्ति कुछ नियमों, परम्पराओं, मान्यताओं को स्वैच्छिक रुप से स्वीकार करते हुए उसे प्रभावित होने व उसे प्रभावित करने की क्रियाएँ करते रहते है। विकास का संकीर्ण अर्थ तो आर्थिक विकास अर्थात् सुख समृद्धि में वृद्धि व सहायक वस्तुओं एवं सेवाओं के विस्तार से लिया जाता है। वर्तमान में टेलीविजन केन्द्रों व चैनलों की जितनी भरमार हुई है। इससे यह माध्यम

सामाजिक परिवर्तन, राजनैतिक जागरुकता, वाणिज्य व व्यापार के विस्तार, वैज्ञानिक व तकनीकी विकास, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सूचनाओं एवं विचारों के आदान-प्रदान तथा सांस्कृतिक मूल्यों व मान्यताओं की समझ के क्षेत्र में अति प्रभावी भूमिका निभाने लगे हैं। परन्तु मीडिया की भूमिका नकारात्मक भी है। टीवी चैनलों, समाचार पत्रों में हिंसा, बलात्कार, अनैतिक सम्बन्धों, सैक्स, नशा, अकर्मण्यता, देवी-देवताओं, समाज कंटकों इत्यादि के सन्दर्भ में ही दृश्यों की भरमार होती है। बुद्धिजीवियों, समाज सेवको, नेतृत्वकर्त्ताओ के लिए यह आवश्यक है कि वे जनता के हित में मीडिया पर दबाव बनायें कि वे रुढ़िवादी व विकास विरोध मानसिकता का विकास करने की बजाए सृजनात्मक व सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए प्रयासरत रहें, महिलाओं की गरिमापूर्ण व सम्मानजनक स्थिति को समाज में बनाये रखने में सहायक हों।

वस्तुत: समग्र प्रयासों के माध्यम से समाज के महिला उत्पीड़न की समस्या का निराकरण किया जा सकता है इस हेतु व्यापक स्तर पर मानसिकता में परिवर्तन अपेक्षित है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ. जौहरी, रचना व डॉ. गुप्ता, सुभाष चन्द्र ''महिला उत्पीड़न'' अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, 2009, पृ0 सं0 116-118*
2. *डॉ. जौहरी, रचना व डॉ. गुप्ता, सुभाष चन्द्र ''महिला उत्पीड़न'' अर्जुन पब्लिशिंग हाऊस, 2009, पृ0 सं0 180-183*
3. *अंसारी, एम.ए., ''राष्ट्रीय महिला व मानवाधिकार'' ज्योति प्रकाशन, जयपुर, 2001*
4. *मेहता, चेतन ''महिला और कानून'' आशीष पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1996*
5. *चतुर्वेदी, शालिनी ''भारतीय समाज में महिलाओं की स्थिति व मूल्यांकन'' पाइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2014*
6. *चतुर्वेदी, शालिनी ''भारत में सामाजिक विद्यालय'' राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2014*
7. *नाटानी, प्रकाश नारायण ''भारत में कन्या भ्रूण हत्या एवं महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा'' बुक एनक्लवे, जयपुर, 2007*
8. *मिश्र, मनीष ''लॉ ऑन वाइलेंस अगेन्स्ट वूमैन'' प्रतीक पब्लिकेशन्स, जयपुर*

ISSN 2277-5587

दक्षिण एशिया में मानवाधिकार : बलूचिस्तान में मानवाधिकारों के हनन की समस्या

डॉ. विकास कुमार शर्मा
व्याख्याता, राजकीय महाविद्यालय, बून्दी

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

मानवाधिकार व्यक्ति के जीवन की वे आवश्यक परिस्थितियाँ हैं जिनके बिना उसका स्वतंत्र और गरिमापूर्ण विकास संभव नहीं है। इन अधिकारों का अस्तित्व राज्य की मान्यता पर निर्भर करता है। यद्यपि व्यक्ति के अधिकारों को लागू करने के बारे में प्रत्येक देश में अलग-अलग मानदण्ड है। दक्षिण एशिया के देशों का मानवाधिकारों को लागू करने के बारे में रिकॉर्ड अच्छा नहीं रहा है। विशेषकर पाकिस्तान और उसके क्षेत्र में स्थित कई प्रांतों में जिनमें मुख्यत: बलूचिस्तान में मानवाधिकारों के संबंध में स्थिति अधिक खराब है। पाकिस्तान के निर्माण के बाद से ही लगातार इस क्षेत्र के लोगो के मौलिक अधिकारों के हनन की घटनाये आम बात है। भारत ने पहली बार इस समस्या को अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर उठाकर दुनियां के सामने लाने की कोशिश की है।

***संकेताक्षर :** मानवाधिकार, पश्तों, मंज, अफगान युद्ध, अंजुमान-ए-इत्तेहाद-ए-बलूचिस्तान, गफ्फार खान, ब्रह्ममदाग बुगती, कबायली, भू राजनीति।*

व्यक्ति के मानव होने के नाते, उसके स्वतंत्र और गरिमामय जीवन के विकास हेतु कतिपय परिस्थितियाँ आवश्यक है। स्वतंत्र राष्ट्र राज्यों के उदय के पश्चात् सभी देशों ने मानव मात्र के जीवन की आवश्यक परिस्थितियों को मानव अधिकार या मूल अधिकारों के रुप में मान्यता प्रदान की है। भारत ने अपने संविधान के नीति निदेशक तत्त्वों के अनुच्छेद 51 में यह दोहराया है कि वह दूसरे देशों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा। भारत अपनी इस नीति का पूर्ण वचनबद्धता से पालन करता रहा है। भारत के आसपास के क्षेत्र के लोगों के विरुद्ध जातीय एवं सांस्कृतिक पहचान के आधार पर लगातार हो रहे शोषण, उत्पीड़न एवं संघर्ष के विरुद्ध भारत विश्व संगठनों में लगातार आवाज उठाता रहा है। भारत के पड़ौसी देशों में श्रीलंका के बाद पाकिस्तान ही एक ऐसा देश है, जिसके आन्तरिक मामले विशेष में भारत ने कोई पक्ष लिया है। इससे पूर्व श्रीलंका के एक जाति संघर्ष के मामले में पूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी के कार्यकाल में लिट्टे के संघर्ष को समाप्त करने के लिये भारतीय शांति सेना को कोलम्बो भेजा गया था।

भारत एवं पाकिस्तान की इस समस्या को समझने के लिए पाकिस्तान की भूस्थिति एवं संरचना को जानना आवश्यक है। पाकिस्तान में चार प्रान्त हैं- बलूचिस्तान, खैबर-पख्तनख्वा, पंजाब एवं सिंध, जिनमे से बलूचिस्तान पाकिस्तान के दक्षिण भाग में स्थित सबसे बड़ा प्रान्त है। बलूचिस्तान में पाकिस्तान का लगभग 44 प्रतिशत भू-भाग आता है।

यदि प्राचीन भारतीय इतिहास पर दृष्टि डालें तो अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बलूचिस्तान सभी भारतीय भू-भाग के हिस्से रहे हैं। बलूचिस्तान आर्यो की प्राचीन भूमि आर्यवर्त का हिस्सा है।

'प्रथम अफगान युद्ध' (1839-1842) के बाद अंग्रेजों ने इस क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। अंग्रेजों ने कई बार कलात के खानों एवं बलूचिस्तान के सरदारों के बीच झगड़ों में मध्यस्थता की। वर्ष 1876 में रॉबर्ट सैंडमैन को बलूचिस्तान का ब्रिटिश एजेंट बनाया गया और वर्ष 1887 तक

इसके ज्यादातर हिस्सों पर ब्रिटिश आधिपत्य स्थापित हो गया। अंग्रेजों ने बलूचिस्तान को 4 रियासतों में बांट दिया- **कलात, मकरान, लसबेला और खारन**। 20वीं सदी के प्रारम्भ में बलूचों ने अंग्रेजों के खिलाफ संघर्ष छेड़ दिया। इसके लिए उन्होंने 1941 में राष्ट्रवादी संगठन '**अंजुमान-ए-इत्तेहाद-ए-बलूचिस्तान**' का गठन किया। वर्ष 1944 में जनरल मनी ने बलूचिस्तान की स्वतंत्रता का स्पष्ट विचार रखा। आजम जान खान को कलात का नेता घोषित कर दिया गया, लेकिन वह बलूच सरदारों से जा मिला। जिन्ना की सलाह से यार खान 4 अगस्त, 1947 को इस बात के लिए राजी हो गया कि कलात राज्य 5 अगस्त, 1947 को आजाद हो जायेगा तथा उसकी वर्ष 1938 की स्थिति बहाल हो जायेगी।

पाकिस्तान के संविधान के अनुच्छेद 1 में लिखा गया है कि- 'पाकिस्तान सरकार इस पर रजामंद है कि कलात एक स्वतंत्र राज्य है जिसका वजूद हिन्दुस्तान के दूसरे राज्यों से अलग है।' अनुच्छेद 4 में लिखा गया है कि- 'पाकिस्तान और कलात के बीच एक करार होगा कि पाकिस्तान, कलात और अंग्रेजों के बीच 1839 से 1947 तक हुए सभी करारों के प्रति दोनों प्रतिबद्ध होंगे। इस तरह पाकिस्तान अंग्रेजी राज का कानूनी, संवैधानिक और राजनीतिक उत्तराधिकारी होगा।' पाकिस्तान ने संविधान के अनुच्छेद 4 की इसी बात का लाभ उठाकर कलात के खान को 15 अगस्त, 1947 को एक फरेबी एवं फसाने वाली आजादी देकर 4 माह के भीतर समझोता तोड़ दिया तथा 27 मार्च, 1948 को औपचारिक रुप से कलात पर कब्जा कर लिया। बलूच जनमानस इस विलय के विरुद्ध था, लेकिन पाकिस्तान ने सैनिक कार्यवाही कर जबरन बलूचिस्तान का अपने में विलय कर लिया। पाकिस्तान की इस कार्यवाही के विरुद्ध सबसे पहले निसार खान और बलूच राजकुमार अब्दुल करीम खान ने बगावत की तथा गौरिल्ला पद्धति से सशस्त्र संघर्ष किया जो आज भी जारी है।

भारत-पाकिस्तान के विभाजन के समय अगस्त, 1947 से ही बलूचिस्तान का इतिहास बहुत शोषण, उत्पीडन, पिछडेपन, गरीबी एवं अत्याचार भरा रहा है। इन्हीं सबके कारण आज बलूच राष्ट्रवाद का विचार लगातार बुलन्द होता जा रहा है। मूल बलूच लोग पाकिस्तान के निर्माण के समय से ही अपने लिए अलग देश बलूचिस्तान की मांग कर रहे हैं।

समस्या के विविध पक्ष : बलूचिस्तान में कबीलाई जनजातियां निवास करती हैं जिनकी अपनी सामाजिक एवं सांस्कृतिक परम्पराएं हैं, जो मूल पकिस्तानी संस्कृति से मेल नहीं खाती हैं, जिससे दोनों में टकराव होता रहता है। प्रारम्भ में जब बलूचिस्तान को पाकिस्तान में मिलाया गया तो यही शर्ते थी कि पाकिस्तानी शासन उनकी सांस्कृतिक विरासत के साथ छेडछाड नहीं करेगा। कालान्तर पाकिस्तानी शासन की दोषपूर्ण नीतियों के कारण बलूच आन्दोलन को बल मिला। पाकिस्तान ने बलूचिस्तान के साथ वैसा ही भेदभाव पूर्ण व्यवहार अपनाया जैसा पूर्वी पाकिस्तान के साथ किया था। पाकिस्तानी सियासत में एवं सरकारी नौकरियों में पंजाब प्रान्त का वर्चस्व रहा है, जबकि बलूचिस्तान को इससे आज भी महरुम रखा जा रहा है। पाकिस्तान का यह सूबा आज भी गरीबी, बदहाली एवं सरकार की अनदेखी का शिकार है। बलूचिस्तान के प्रमुख नेता अकबर बुगती को 26 अगस्त, 2006 को राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ के शासनकाल में हुए सैन्य ऑपरेशन में मार दिया गया था। अकबर बुगती बलूचिस्तान के राज्यपाल एवं मुख्यमंत्री होने के साथ ही केन्द्र सरकार में भी कई विभागों के मंत्री रह चुके थे। इनके मारे जाने से सम्पूर्ण बलूचिस्तान में रोष एवं अलगाववाद विद्यमान है। अकबर बुगती के पोते ब्रह्ममदाग बुगती आज भी बलूच अलगाववादियों के प्रमुख नेता हैं। बलूच नागरिक अपने राष्ट्रीय कानूनों से ऊपर अपनी कबीलाई संस्कृति एवं परम्पराओं को मानते हैं। पाकिस्तान के पूर्व राष्ट्रपति जनरल परवेज मुशर्रफ कहते हैं कि-''बलूच लोग जगह-जगह पाकिस्तान के विरुद्ध दहशतगर्दी के कैंप चलाते हैं। ये आये दिन पाकिस्तान के अन्य भागों पर हमला करते रहते हैं तथा ये पाकिस्तानी कानून को नहीं मानते हैं। जिसके कारण पाकिस्तान एवं बलूचिस्तान में आज भी टकराव की स्थिती बनी हुई है।''

बलूचिस्तान के लोग प्रारम्भ से ही पाकिस्तान की दोषपूर्ण शोषण एवं उत्पीड़न की नीति के विरुद्ध थे। उन्होंने आजादी के तुरन्त बाद पाकिस्तान के खिलाफ हथियार उठा लिए थे। बलूचिस्तान में पाकिस्तान के विरुद्ध कई बार विद्रोह हुआ। सबसे पहला विद्रोह आजादी के तुरन्त बाद वर्ष 1948 में हुआ, उसके बाद 1955, 1958, 1973 में एवं मौजूदा विद्रोह की शुरुआत वर्ष 2006 में वहां के प्रमुख नेता अकबर बुगती की मौत से निरन्तर जारी है। पाकिस्तान के खिलाफ बलूचिस्तान के इस विद्रोह को कभी भी अन्तर्राष्ट्रीय समर्थन नहीं मिला। अभी हाल ही में 15 अगस्त, 2016 को भारतीय प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी ने अपने भाषण में अन्तर्राष्ट्रीय बिरादरी एवं मीडिया के सामने बलूचिस्तान में हो रहे पाकिस्तानी अत्याचार, शोषण एवं उत्पीडन की तरफ दुनियां का ध्यान आकर्षित करने की कोशिश की। पाकिस्तान प्रारम्भ से ही बलूचिस्तान में मानवाधिकारों के विरुद्ध काम कर रहा है। मानवाधिकार समूहों के अनुसार वहां फर्जी मुठभेड़ों में लगातार मौतों एवं लापता लोगों की तादाद बढ़ रही है। एक अनुमान के अनुसार वर्ष 2003 से 2012 के बीच पाकिस्तानी फौजों ने 8000 बलूच लोगों को अगवाह किया। वर्ष 2008 में लगभग 1100 बलूच लोग लापता पाये गये। पाकिस्तान के पूर्व सेनापति जनरल टिक्का खान ने कई बार बलूचों की सामूहिक हत्याएँ की। वहां की जनता उसे आज भी '**बलूचों का कसाई**' के नाम से सम्बोधित करती है। बलूच लोग पाकिस्तानी चरमपंथी एवं पाकिस्तानी सेना दोनों के अत्याचारों का लगातार शिकार हो रहे हैं। पाकिस्तान बलूच लोगों की आवश्यक जरुरतों को भी नज़रअंदाज कर रहा है एवं उन्हें जबरदस्ती आतंकवाद एवं अलगाववादी गतिविधियों में धकेल रहा है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के इस विचार को पाकिस्तान ने अपने घरेलू

ISSN 2277-5587

मामलों में हस्तक्षेप की संज्ञा दी। जबकि पाकिस्तान तो वर्षो से अलगाववाद, आतंकवाद एवं घुसपैठ के माध्यम से भारत के आन्तरिक मामलो में हस्तक्षेप करता रहा है। भारत ने प्रारम्भ में अपनी कूटनीतिक भूलों में से एक भूल बलूचिस्तान के मामले में भी की । जब पाकिस्तान ने पहली बार वर्ष 1948 में जम्मू-कश्मीर (भारत) पर कबाइली हमला किया उसी समय बलूच नागरिकों ने भी पाकिस्तान के विरुद्ध अपना पहला विद्रोह किया था। यदि भारत उसी समय बलूच विद्रोह को अपना समर्थन देता तो शायद भारत पाकिस्तान कश्मीर समस्या का कुछ ओर ही समाधान होता। भारत हमेशा अपनी आर्दशवादी विदेश नीति का खामियाजा भूगतता रहा है। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी की बलूच नीति के कारण ''दूसरों के घरो पर पत्थर फेंकने वाले पाकिस्तान को पहली बार लगा है कि अपना घर भी शीशे का बना हुआ है।''

पाकिस्तान की शोषण एवं उत्पीडन की नीति के कारण बलूची लोग अपने लिए अलग बलूचिस्तान की मांग कर रहे हैं। बलूचिस्तान से पाकिस्तान के कुल गैस का 45 प्रतिशत हिस्सा निकाला जाता है, लेकिन बलूचों को मात्र 17 फीसदी गैस ही मिल पाती है। बलूचिस्तान में प्राकृतिक गैस भण्डार के अलावा यूरेनियम, पेट्रोल, तांबा और अन्य बहुत सी धातुएँ मिलती हैं। बलूचिस्तान पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था का आधार है, लेकिन फिर भी उसे उसके ही संसाधनो से वंचित रखा जाता है।

बलूचिस्तान में पाकिस्तानी सरकार के अत्याचार इस कदर बढ़ रहे है कि वहां जानबूझकर बुद्धिजीवी वर्ग को उत्पीडित किया जा रहा है। वहां रोज डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, प्रोफेसर एवं पत्रकारों को गोलियों का निशाना बनाया जा रहा है। जिससे बहुत बडी संख्या में बुद्धिजीवी वर्ग यहाँ से पलायन कर अन्यत्र शरण ले रहे हैं। पाक सेना बलूचिस्तान में ''**किल एंड डंप**'' की नीति पर काम कर रही है अर्थात् मारो एवं नष्ट करो की नीति पर काम कर रही है। बलूचिस्तान की आजादी के लिए आवाज उठाने वाले संगठन '**बलूचिस्तान स्टूडेन्टस ऑर्गेनाईजेशन (बीएसओ)**' पर पाकिस्तान ने रोक लगा दी है। कनाडा में निर्वासन कर रही बीएसओ नेता करीमा बलूच ने बताया कि बलूचिस्तान में चुनाव भी मात्र रस्म अदायगी के लिए होता है। सेना एवं आई एस आई लोगों को धमकाकर अपने पक्ष में वोट डालने के लिए बाध्य करते हैं।

बलूचिस्तान अलग देश के रुप में (समर्थन) :-

- यदि बलूचिस्तान अलग देश बनता है तो इससे पाकिस्तान की शक्ति क्षीण हो जाएगी क्योंकि इसका लगभग आधा भाग इससे अलग हो जायेगा, जैसे-बांग्लादेश विभाजन के समय हुआ।
- बलूचिस्तान पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था का आधार है, इसके अलग देश बनने से पाकिस्तान की अर्थव्यवस्था नष्ट हो जायेगी, जिससे कमजोर पाकिस्तान भारत के विरुद्ध उग्रवाद एवं आतंकवाद को बढ़ावा नहीं दे सकेगा।
- बलूचिस्तान के अलग देश बनने से पाकिस्तान हमेशा के लिए कश्मीर मुद्दे का राग अलापना बंद कर देगा। इससे पाकिस्तान को यह एहसास होगा कि भारत के विरुद्ध लिये गये उग्रवाद एवं अलगाववाद के निर्णय ने पाकिस्तान को आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक रुप से भी विखण्डित कर दिया है।
- इससे पाक-चीन के मध्य बनने वाले आर्थिक कोरीडोर के समझौते पर असर पडेगा। जिससे पाक-चीन के आर्थिक संबंधों में गतिरोध आ जायेगा जो भारत की कूटनीतिक सफलता होगी। पाकिस्तान द्वारा चीन को दिया गया प्रसिद्ध ग्वादर बंदरगाह बलूचिस्तान के क्षेत्र में ही स्थित है।
- इससे भारत दुनियां के सामने पाकिस्तानी करतूतों को और मजबूत प्रकार से उजागर कर सकेगा, कि पाकिस्तान स्वयं अपने ही नागरिकों के विरुद्ध शोषण, उत्पीड़न, अत्याचार एवं पिछड़ेपन की नीति पर चल रहा है। इसके परिणामस्वरुप पहले बांग्लादेश एवं अब बलूचिस्तान में यह स्थिति उत्पन्न हुई है।
- पाकिस्तान का विखण्डन आंतकवाद की रोकथाम में भी सहायक होगा। पाकिस्तान द्वारा फलित एवं पोषित आतंकवाद के तार बलूचिस्तान के मार्ग से होकर अफगानिस्तान, ईरान, इराक होते हुए मध्य एशिया तक जाते हैं। जिसके कारण तालीबान, आईएसआईएस, इराकी कुर्द एवं अफगानी लड़ाके भारत के खिलाफ आतंकवाद को बढ़ावा देते रहते हैं, जो हमेशा के लिए समाप्त हो जायेगा।
- बलूचिस्तान की अपनी अलग एवं विशिष्ट सांस्कृतिक विरासत रही है, जो इसके अलग राष्ट्र बनने पर ओर तेजी से विकसित होगी।
- भू-राजनीतिक दृष्टि से बलूचिस्तान का अलग राष्ट्र के रुप में उदय भारत, मध्य एशिया एवं विश्व के अन्य देशों के हित में होगा। इससे भारत मध्य एशियाई देशों के साथ तेल, गैस एवं अन्य वस्तुओं का व्यापार निर्बाध रुप से कर सकेगा, बदले में उन राष्ट्रों को भी मोटी आमदनी प्राप्त होगी। भारत-ईरान गैस पाईप लाईन पाकिस्तान के अड़ंगे के कारण ही वर्षो से अटकी पड़ी है, इसको क्रियान्वित करने में सफलता मिलेगी। भारत का मध्य एशियाई देशों से अरब सागर से होते हुए सीधा जुड़ाव हो

जायेगा, जो इस क्षेत्र के विकास के लिए बहुत महत्वपूर्ण साबित होगा।

बलूचिस्तान अलग देश के रुप में (विरोध में तर्क) :-

- बलूचिस्तान तालिबानियों, अलगाववादियों एवं इस्लिामिक आतंकवाद का केन्द्र बना हुआ है, इसके अलग राष्ट्र बनने से ये सभी समस्याएँ कम होने की बजाए और अधिक ही होगी।
- बलूचिस्तान में कबीलाई संस्कृति विद्यमान है जो लोकतांत्रिक मूल्यों के विरुद्ध है। अत: यह अलग राष्ट्र के रुप में अन्य देशों के हित में नहीं हो सकता है।
- विश्व राजनीति की दृष्टि से भी छोटे राष्ट्र उपयुक्त नहीं है। आज भारत के सामने पाकिस्तान एक राष्ट्र के रुप में समस्या है। अलग बलूचिस्तान बनने के बाद हो सकता है भारत को दो राष्ट्रों का सामना करना पडे।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि बलूचिस्तान के संदर्भ में भारत को पाकिस्तान के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करते समय विशेष सावधानी बरतने की आवश्यकता है। जिस प्रकार की सावधानी एवं दूरदर्शिता तत्कालीन भारतीय प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने वर्ष 1971 में पाकिस्तान एवं पूर्वी पाकिस्तान (बांग्लादेश) के आपसी क्लेश के समय दिखाई थी। अपनी दूरदर्शिता से ही श्रीमती गांधी ने दिसम्बर, 1971 के भारत-पाक युद्ध से पूर्व अगस्त, 1971 में सोवियत संघ के साथ 20 वर्षीय मित्रता एवं सहयोग की सन्धि की थी। इससे भारत का पक्ष काफी मजबूत हो गया था, जिसका प्रभाव वर्ष 1971 के भारत-पाक युद्ध में देखने को मिला। आज तकनीकी विकास के कारण भारत के साथ पाकिस्तान भी वर्ष 1971 की स्थिति से काफी आगे निकल गया है। आज पाकिस्तान भी आधुनिक हथियारों के साथ आणविक शक्ति सम्पन्न राष्ट्र है। पाकिस्तान हमेशा भारत में आतंकवादी गतिविधियों को अंजाम देता रहता है। अत: भारत भी पाकिस्तान की बलूचिस्तान, गिलगित - बालचिस्तान में मानवाधिकार हनन के मुद्दे को वैश्विक पटल पर उजागर करके पाकिस्तान को चुप करा सकता है। भारत पाकिस्तान की बलूचिस्तान में मानवाधिकार हनन संबंधी कमजोरी को युक्ति के रुप में प्रयुक्त कर सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 *चन्द्र, विपिन **भारत का स्वतंत्रता संघर्ष**, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, नई दिल्ली, 2011*

2 *सिंह, सुखवंत (मेजर जनरल) **द लिबरेशन ऑफ बांग्लादेश**, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि., दिल्ली विश्वविद्यालय, 1980*

3 *दीक्षित, जे.एन. **भारत-पाक संबंध (युद्ध एवं शान्ति में)**, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2012*

4 *हसन, जोया **डेमोक्रेसी इन द मुस्लिम वर्ल्ड**, रोज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2007*

5 *रोबिन्सन, फ्रान्सिस **इस्लाम एण्ड मुस्लिम हिस्ट्री इन साउथ एशिया**, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2000*

6 *राजस्थान पत्रिका, 28 अगस्त, 2016*

7 *दैनिक भास्कर, अगस्त, 2016*

8 *एबीपी हिन्दी न्यूज, 11 सितम्बर, 2016*

9 *विकिपिडीया एनसाइक्लोपिया 14/09/2016 अपडेट*

10 *इण्डिया टूडे 05 सितम्बर, 2016*

11 *बलूचिस्तान मेप by Google search*

 ISSN 2277-5587

स्वप्रेरित कार्यसंपादन: कुशल लोकसेवा का मूल मंत्र

डॉ. कमल तिवाडी
प्रवक्ता, बाबूशोभाराम राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

मानव सभ्यता की विकास की कहानी अथक श्रम व जिज्ञासा की कहानी है। प्रशासन का विकास मानव जीवन के व्यवस्थित सांगठनिक जीवन की कहानी है। किसी भी प्रशासन की सफलता इसके कार्मिकों की निष्ठा, लगन व लक्ष्य प्राप्ति के प्रति समर्पण पर निर्भर करती है। समय के अनुसान प्रशासन की भूमिका में परिवर्तन आते रहते हैं। किन्तु जो चीज अपरिवर्तनीय है ; वह है-संगठन में दी जाने वाली अभिप्रेरणा/अभिप्रेरणा से मनोबल का संवर्धन और मनोबल से स्वप्रेरित कार्यकुशलता की राह खुलती है। स्वप्रेरणा से किए गए कार्य गुणवत्ता पूर्ण होते हैं। अभिप्रेरित कार्मिक प्रशासन की मूल समस्याओं में से एक है। आज सभी संगठन कार्मिकों के बेहतर योगदान की अपेक्षा रखते हैं। अत: कार्मिक प्रशासन की दृष्टि से 'स्वप्रेरित कार्मिक' एक महत्त्वपूर्ण विषय है।

संकेताक्षर : *नौकरशाही, सॉफ्ट स्किल, हैण्डस्किल, स्वप्रेरणा की प्रतिक्रिया, स्वप्रेरणा का संस्थानीकरण, सामाजिक बुद्धिमत्ता, संगठनात्मक प्रभावशीलता।*

मानव सभ्यता की विकास की कहानी अथक श्रम व जिज्ञासा की कहानी है। आज सभ्यता के जिस शिखर पर व्यक्ति आरुढ़ है उसमें संघर्ष क्षमता के साथ स्वप्रेरणा का महत्त्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति के समूह निर्माण के साथ ही प्रशासन का आरम्भ माना जा सकता है। क्योकि प्रशासन मूलत: सहकारी क्रिया है। राज्य के अस्तित्व में आने के लगभग 200 वर्षो बाद नागरी सेवा/नौकरशाही ने व्यवस्थित स्वरुप ग्रहण किया। 16 वी सदी में जब सत्ता राजा सामंतो व पूंजीपतियो के हाथो में केन्द्रित हो गयी तो सत्ता व धन प्रबंधन के सुसंचालन हेतु एक विशेष तंत्र की आवश्यकता अनुभव हुई, यह तंत्र नौकरशाही या लोकसेवा था। भारतीय प्रशासन के संदर्भ में चर्चा करें तो ऐतिहासिक दृष्टि से यह ब्रिटिश प्रशासन से प्रभावित है। ब्रिटिश राज के दौरान भारतीय नागरी सेवा सामान्यतावादी **(Genaralist)** अफसरों के आभिजात्य वर्गो के हाथों में रही 1919 से 1935 के कानूनों के तहत उसमें राजनीतिज्ञों को प्रवेश दिया गया किन्तु चोटी के नौकरशाहों का वर्चस्व बना रहा। यह शासक नौकरशाही थी, जो कानून के प्रतीक से अधिक कानून की मालिक थी।

स्वाधीनता के बाद औपचारिक तौर पर परिस्थितियाँ बदल गयी अब राजनीतिज्ञ सर्वोच्च व प्रशासक अधीनस्थ थे। नये भारत का निर्माण इन्ही नौकरशाहों से होना था अत: इनके विशेषाधिकारों को 1969 तक समाप्त नहीं किया गया। किन्तु फिर भी प्रशासन का स्वरुप, भूमिका परिवर्तन के दौर से गुजरी। इसका कारण राज्य का लोक कल्याणकारी स्वरुप, विकास कार्यो का दबाव, नियोजन, उत्तरदायी शासन था। वर्तमान में 1992 के आर्थिक सुधारों के मद्‌दे नजर प्रशासन को व्यापक परिवर्तनों से गुजरना पड़ा है। ये परिवर्तन, मूलगामी संरचनात्मक कार्यविधिपरक तथा प्रवृतिपरक है। अब प्रशासन को सामाजिक सरोकारों को अधिक गंभीरता से लेना पड़ता है। किन्तु अपने बड़प्पन की धारणा से ग्रस्त नौकरशाही आज तक औपनिवेशक संस्कारों से पूर्णत: मुक्त नहीं हो सकी है। यह राजनीतिक विषमताओं व आर्थिक सामाजिक विकास के घनघोर दबावों के बीच कार्य करती है। तथा उससे वह लोक इच्छा को अमलीजामा पहनाने का उपकरण है। उससे अन्तत: अपेक्षा सहज मानवीय व्यवहार की होती है। पं. नेहरु ने प्रशासनिक अधिकारियों की बैठक में कहा था - ''प्रशासन अधिकांश वस्तुओं की तरह अपने विश्लेषण में एक मानवीय समस्या है। उसे मनुष्यों से पेश आना है न कि सांख्यिकी से'' उपरोक्त कथन का संदर्भ आज भी प्रासंगिक है। किसी भी संगठन की मूल समस्या मानवीय व्यवहार को ठीक से समझना है। तार्किकता, संगतता तथा उपयुक्तता के मानदण्डो के साथ कार्य संपादन करवाना प्रशासन की मूल चुनौती है। अत: प्रशासनिक कार्यकुशलता के सन्दर्भ में दो तकनीकों की चर्चा की जाती है-

1. तकनीकि ज्ञान व कौशल **(Hand Skill)**

2. अ-तकनीकि ज्ञान व कौशल **(Soft Skill)**

तकनीकि ज्ञान व कौशल किसी अनुशासन या कार्य के शास्त्रीय पक्ष से संबंधित है अर्थात कोई व्यक्ति अपना कार्य करने में कितना दक्ष है। जबकि सौम्य ज्ञान पूर्ण **(Soft Skill)** संगठन के लक्ष्योन्मुखी व्यवहार से व्यक्त होती है। इसमें कुशल नेतृत्व, मनोबल, विश्वसनीयता, सहकारी भाव, नमनीयता, समयप्रबंधन, मृदु व्यवहार आदि को शामिल किया जाता। स्वप्रेरणा का संबंध भी इसी व्यावहारिक कला से है। क्योंकि स्वप्रेरणा मन व आत्मा से आती है नियम से नहीं।

स्वप्रेरणा का अर्थ व अवधारणा

स्वप्रेरणा एक शक्ति है जो व्यक्ति को कार्य आरंभ करने से लक्ष्य प्राप्ति के अनुसंधान पथ को ढूंढने में सहायता प्रदान करती है।'' **(इमर्सन)** स्वप्रेरणा शब्द सांदर्भिक दृष्टि से अत्यन्त व्यापक है। महात्मा बुद्ध ने हजारो वर्षो पूर्व कहा था-

''आत्मदीपोभव'' अर्थात अपने दीपक स्वयम् बनो यह आत्मप्रेरणा को जाग्रत करने का आदेश था। सभी धर्मो, आध्यात्म दर्शन में व्यक्ति के मानसिक व आत्मिक बल को प्रतिस्थापित किया गया है। जो व्यक्ति संवेदनशील हो, आन्तरिक विश्लेषण की कला में दक्ष हो वह तार्किकता से तथ्यों का अन्वेषण कर पाता है। यह व्यक्तित्व विकास की कुंजी है क्योकि स्वप्रेरित व्यक्ति अन्तर्चिन्तन, आत्ममंथन तथा आत्मानुशासन पर बहुत बल देता है। स्वप्रेरणा कृत कार्य उचित, पक्षपातरहित व कल्याणकारी होता है। किसी भी संगठन में स्वप्रेरणा की प्रतिक्रिया तीन घटकों से होती है- व्यक्तिगत घटक (आवश्यकताएें, समस्याएें आदि के संदर्भ में) संगठनात्मक घटक (संरचना, भौतिक सुविधा, तकनीक आदि के सन्दर्भ में) बाह्य घटक (सांस्कृति रीति-रिवाज, परंपरा आदि के संदर्भ में) स्वप्रेरणा इन त्रिआयमी घटकों को प्रभावित करती है और प्रभावित होती है। अत: एक स्वप्रेरणाजन्य कृतकार्य प्रशासन में निम्नांकित विशेषताएें समाहित हो जाती है- मितव्ययिता, संवेदनशीलता, जनसहभागिता, समयानुशासन, तटस्थता, प्रतिवद्धता तथा व्यापकता। **Kitez** तथा **Denel** ने अपनी पुस्तक **"Bureaucracy & People"** में नौकरशाही के मानदंडो **(Norms)** तथा समूह की अन्तक्रिया पर विशेष बल दिया है। यह पक्ष नौकरशाही के स्वचेतना पक्ष से सीधे जुडता है। नौकरशाही या लोक सेवा का यह संबन्धात्मक पहलू (प्रशासक-जनता) ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। जिसे वेबर ठीक से विवेचित नहीं कर पाये। उनके आदर्श प्रतिमान की यह चूक **(Lacuna)** आज स्वीकार्य नही है। प्रतिपाद्य विषय प्रशासन के संजीदा स्वरुप को इंगित करता है। अत: निम्नांकित बिदुंओ के आधार पर हम स्वप्रेरणा का विश्लेषण करेंगे।

स्वप्रेरणा से संपादित कार्य प्रभावी होता है। उसमें कार्यदक्षता व कार्य कुशलता भी होती है। किसी लोक सेवा में नियुक्त कार्मिक स्वप्रेरणा से कार्य करे तो नि:संदेह कार्यकुशलता बढेगी यहाँ मूलत: दो प्रश्न उपस्थित होते है।

- व्यक्ति व संगठन के अन्त सम्बन्धों का स्वरुप
- संगठन का सामाजिक स्वरुप

आज संगठन में मूल समस्या मानवीय व्यवहार को प्रबंधित करने की है। एक व्यक्ति जब सरकारी संगठन में आता है तो प्राय: शांति व निश्चितता का भाव उसके अर्न्तमन में होता है क्योंकि इसमें **(Job Security)** सेवा - सुरक्षा उपलब्ध होती है। प्रारम्भ में व्यक्ति का लक्ष्यों के प्रति आसान होता है किन्तु सरकारी महकमों में व्याप्त नकारात्मक प्रवृतियाॅं। उसे धीरे-धीरे नैत्यिक कार्य संपादन करने का यंत्र सा बना देती है। क्रिस आर्गिरिस के अनुसार **(Personality and organization)** परम्परागत संगठनों व कर्मचारी की आवश्यकताओं के मध्य एक असंगति बनी रहती है। परिणामत: व्यक्तियों में निराशा व संकीर्ण दृष्टिकोण पाया जाता है। **"Transparency International 2011"** के आंकड़ो के अनुसार भ्रष्टाचार वे अकार्यक्षमता में भारतीय प्रशासन 184 में से 96 वें स्थान पर है, तथ्य यह है कि सरकारी महकमों की उदासीन कार्य संस्कृति व्यक्ति को कार्यक्षम व कार्यसिद्ध होने के स्थान पर कार्य विमुख बनाती है।

सरकारी संगठनों की सामाजिक छवि ठीक नही है। अनेक तकनीकों के विकास के बाद भी प्रशासन की अकार्य कुशलता अंगद का पाॅव बनी हुई है। आम धारणा यही है कि सरकारी महकमे भ्रष्टाचार लालफीताशाही के गढ है। सरकारी विभागों की अप्रतिष्ठा उसमें कार्यरत कार्मिकों के मनोबल पर व्यापक दुष्प्रभाव डालती है। नौकरशाही की इस नकारात्मक किंतु यथार्थवादी स्थिति के बारे में सभी परिचित है। हमें इसी बीच उसकी कार्य कुशलता का स्तर बनाये रखने पर विचार करना है। लोकसेवा की कार्य कुशलता में स्वप्रेरणा और नौकरशाही के अर्न्तसंबंधों को निम्नांकित बिंदुओ से व्यक्त किया जा सकता है।

1. स्वप्रेरणा के प्रमुख आधार
2. स्वप्रेरणा का सांस्थानिकरण

1. स्वप्रेरणा के आधार - कोई व्यक्ति लक्ष्योन्मुखी रहे तथा स्वप्रेरित हो कर कार्य करता रहें। यह तथ्य कई कारकों पर निर्भर करता है जिसमें से प्रमुख है।

- मनोवैज्ञानिक कारक(दृष्टिकोण)
- परिवारिक कारक(संस्कार)
- सामाजिक कारक(संवद्धता)

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण में व्यक्ति की सोच तथा दृष्टिकोण को शामिल किया जाता है। कुछ लोग प्रकृति से कार्यशील, उत्साही व सकारात्मक होते है। वे कार्य दायित्व को निभाने से प्रसन्न होते है।

ISSN 2277-5587

ऐसे व्यक्तियों को अभिप्रेरित करने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि वे स्वयं उर्जा स्फूत **(Automatically)** होते है। इसके विपरीत कुछ व्यक्ति कार्य न करने या कार्य बिगाडने में रुचि लेते है। नकारात्मक प्रवृति से प्रेरित ऐसे व्यक्ति प्रत्येक कार्य में विवाद उत्पन्न करते हैं। कुछ उदासीन प्रवृति के लोग संगठन में होते हैं, जो नैत्यिक कार्य संपादन की इतिश्री करने को सर्वोपरि मानते है। किसी नवीन कार्य करने से डरते हैं। नये उत्तरदायित्व लेने से दूर भागते हैं। पारिवारिक मूल्य व्यक्ति को संगठन में अपनी भूमिका के प्रति संवेदनशील बनाते हैं। अनुशासन, समय की पाबंदी, संयमित व्यवहार, कार्य निष्ठा जैसे मूल्य व्यक्ति परिवार से ही सीखता है। सामाजिक कारक में हम सामाजिक बुद्धिमत्ता **(Social Intelligence)** को शामिल करते है। परस्पर सम्बद्धता, समूह भावना, सहकारी भाव तथा सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे गुण व्यक्ति सामाजिक रुप से, जागरुक होने पर मानसीकृत कर पाता है।

2. स्वप्रेरणा का संस्थानीकरण – स्वप्रेरणा का संस्थानीकरण **(Institutionalization)** करने से अभिप्राय है कि संगठन में व्यक्ति को स्वप्रेरित करने के उपायों का मानकीकरण किया जाये। कुछ उपाय इस प्रकार स्थापित किए जाएँ कि वे संगठन की मूल क्रियाओं में एकाकार हो जायें कतिपय उपाय इस प्रकार है–

- **प्रशिक्षण कार्यक्रम (अभिप्रेरणाउन्मुखी)** – प्रशिक्षण का लक्ष्य व्यक्ति को सांगठनिक मूल्यों की प्राप्ति के प्रति जागरुक व कार्यदक्ष बनाना होता हैं। लोक- प्रशासन के अनेक विचारकों, साइमन, मास्लो, आर्गिरिस, मैक्ग्रेगर, हर्जबर्ग आदि ने संगठन में अभिप्रेरणा को एक प्रशिक्षण कार्यक्रम का अभिन्न अंग बनाने पर जोर दिया है। प्रशिक्षण कार्यक्रम ऐसे होने चाहिए जो प्रशिक्षण कार्यक्रमों में निरंतरता का होना आवश्यक है। जमीनी स्तर से जुडे प्रशिक्षण कार्यक्रमों की अधिकता होनी चाहिए। व्यक्ति में सकारात्मक सोच उत्पन्न करने में सहायक हो। ये कार्यक्रम व्यावहारिक व यथार्थपरक दृष्टिकोण से प्रेरित होने चाहिए। परिवर्तित परिस्थितियों का पूर्ण ज्ञान व्यक्ति को हो सके, ऐसा चरमबद्ध कार्यक्रम बनाना अत्यन्त आवश्यक है। प्रशिक्षण कार्यक्रम में प्रत्येक प्रतिभागी की सक्रिय सहभागिता को सुनिश्चित किया जाना आवश्यक है। साथ ही प्रशिक्षण कार्यक्रमों की उपादेयता के मूल्यांकन की तकनीकी भी विकसित होनी चाहिए।
- **संगठनात्मक प्रभावशीलता** – संगठन की प्रभावशीलता तीन महत्त्वपूर्ण क्रियाओं पर निर्भर करती है। – उद्धेश्यो की प्राप्ति आंतरिक प्रणाली की एकरुपता तथा संगठन का बाह्य पर्यावरण से अनुकूलन। संगठन में कार्यरत अधिकारियों का नैतिक दायित्व है कि वे संगठनात्मक प्रभावशीलता की दिशा में कार्य करे।
- **नवाचारों को प्रोत्साहन** – से संगठन में कार्मिकों के उत्साह व मनोबल में वृद्धि होती है। राजस्थान सरकार के अनेक कार्यक्रमों का जिक्र पूर्व मुख्य सचिव श्री एम.एल. मेहता ने पुस्तक (भारतीय प्रशासन के पचास वर्ष) में किया है। बकौल श्री मेहता 1977 अन्त्योदय कार्यक्रम, 1979-81 **IRDP** लोकर्जुविश, भामाशाहा योजना बत्तीस जिले, बत्तीस बत्तीस गॉव आदि नवाचार के उदाहरण हैं। इसी प्रकार – विभागाध्यक्षों को सचिवालय में अधिकार देने में भी राज0 सरकार ने पहल की। मुख्य अभियन्ताओं को अतिरिक्त सचिव, अधीक्षण अभियन्ता को उपशासन सचिव तथा इसी प्रकार निदेशक पर्यटन व निदेशक समाज कल्याण विभाग को उपशासन सचिव स्तर के अधिकार प्रदान किए गए। सचिवालय स्तर के स्वीकृत आदेश वे स्वयं निकाल सकते थे। 1994 में केन्द्र की भांति मुख्य विभागों के सचिवों की समिति बनाई गई, जिनके निर्णय विभागीय मंत्री व मुख्यमंत्री के अनुमोदन के बाद सरकार के निर्णय माने जाते थे। भारतीय प्रशासनिक सेवा के डा0 कुलदीप रांका, श्री सुमित शर्मा, श्रीमती श्रेया गुहा ने राजस्थान के विभिन्न विभागों में नवाचारी कदम उठाये तथा सरकार द्वारा पुरस्कृत भी किए गए।
- **जनसंपर्क कार्यक्रमों का आयोजन** – जनसंपर्क कार्यक्रमों के आयोजन से दफ्तरी कार्यशैली से निकल कर कर्मचारी नये ढंग से अन्तक्रिया करना सीखते है। अन्तक्रिया में कार्य के ढंग, क्रिया विधि तथा संसाधनो के लेनदेन को शामिल किया जाता है। संरचनात्मक मापदण्ड व अन्तक्रिया के तीनों आयाम धारणात्मक है तथ्य हैं, जो विशेष परिस्थितियों में अनुभवात्मक परीक्षण हेतु उपयोगी बनते है। अत: जनसंपर्क जनसहयोग प्राप्त करने व उसके यथा संभव सरल तरीके स्थापित करने में उपयोगी होता है। **Waldo** ने **(Crisis of Identity)** में नौकरशाही के कार्य प्रक्रिया के बदलाव पर जोर देते हुए उसे गतिशील बनाने पर जोर दिया है राजस्थान सरकार द्वारा आयोजित प्रशासन गाँवों के संग, प्रशासन शहरों के संग इस संबंध में उल्लेखनीय है।
- **जनसेवाभावी तकनीक (Public Service Methnation Technique)** – लोरेंट लीगेक्स ने अपनी पुस्तक **Leadership & Motivation in Public Sector** में उपरोक्त तकनीक के विकास को विकसित करने पर बल दिया है। यह तकनीक तीन महत्वपूर्ण तत्वों पर जोर देती है। ये **C3** तत्व है–
  - स्पष्ट लक्ष्य **(Clean Purpose)**
  - कार्य क्षमता **(Competence)**
  - उपभोक्तावाद **(Consumerism)**

लीजेक्सा का कहना है कि अगर लोक सेवा निजी क्षेत्र के उपभोक्तावादी मूल्यों से सीख ले तो वह काफी नवीनता परक हो सकती है कि परिवर्तित परिवेश में लोक-प्रशासन को आत्मविकास हेतु प्रतियोगी मूल्यों को स्वीकार करना होगा। उपलब्ध संसाधनों को आकर्षक व जनपयोगी बनाना होगा। पीटर ब्लॉ ने भी प्रशासन की व्यवसायिकीकरण की भूमिका की चर्चा की है। ताकि जनकल्याण तटस्थता से हो सके। पीटर ब्लॉ ने अपने अनेक शोधों का निष्कर्ष यह निकाला कि नौकरशाही के संबंधात्मक स्वरुप में परिवर्तन होना चाहिए।

उपरोक्त विवरण व विवेचन के उपरान्त हम कह सकते है कि नौकरशाही के संभ्रातावादी **(Elitist)** तथा अलगावनिष्ठ **(Isolationist)** स्वरुप को स्वप्रेरणाकारी रुप में बदलने के लिये प्रशिक्षण कार्यक्रमों को गुणवत्ता पूर्ण बनाना होगा। नौकरशाही ने जो वर्षों के अनुभव से अपना निजि सुरक्षात्मक चरित्र बनाया है उसमे निरंतर प्रशिक्षण से परिवर्तन होगा। प्रशासन की कार्यकुशलता का असली मुद्दा काम, सोच और प्रतिबद्धताओं को जनपक्षीय राष्ट्रीयता से जोडने का है। जब प्रशासन अपने इस गुरुतर दायित्व को गंभीरता से समझेगा उसमे स्वयम् परिवर्तन आयेगा। मात्र यह सोच कि कम्पनी-प्रबन्धन तंत्र की शैली से प्रशासन में स्वप्रेरणा आयेगी, यह सोचना अनुचित है। यह नौकरशाही को अनौकरशाहीकरण **(Debureaucatisation)** की तरफ ले जाने जैसा होगा। भारत जैसे विकासशील देशों में प्रशासन का यह स्वरुप सहज स्वीकार्य नहीं होगा। क्योंकि एक लोककल्याणकारी राज्य की अपनी प्रतिवद्धताएँ होती है।

पं नेहरु ने प्रशासन के लक्ष्यों को बताते हुए उच्चाधिकारियों से कहा था ''आखिर जो भी विभाग आप संभालते हो अन्ततः वह एक प्राणियों की समस्या होती है और जब हम उन्हें भुला देते हैं, हम यथार्थ से कट जाते है।'' यद्यपि एक अनेकतावादी संस्कृतिवाली व्यवस्था में लोक सेवा की अनेक उलझने हैं। उन्हे अनेक विरोधाभासी स्थितियों का सामना करना पडता है किन्तु अन्ततः वे लोक सेवक होते हैं और अपेक्षित है कि जन सेवा का अपना मूल दायित्व न भूले। अमेरीका के राष्ट्रपति केनेडी ने उच्चाधिकारियों की बैठक (अप्रेल 1963) में कहा था- **"Some people see things as they are and say why I dream things that never were and say why not"** व्यक्तिगत जीवन हो या सार्वजनिक व्यक्ति की आत्मचेतना जन्य शक्ति ही कार्य सफलता के लिये जवाबदेह होती है। **Henary Ford** के अनुसार **"Don't find fault find a remedy"** नौकरशाही के पास स्वप्रेरणा से कार्य संपादन का उपचार सुरक्षित है। स्वतः संवेदना व प्रेरणा से नौकरशाही न केवल कुशल वरन् लोकप्रिय व प्रतिष्ठित भी हो सकेगी। अतः नौकरशाही को स्वयं स्वतः स्फूर्ति संवेदना को आत्मसात करके जनोपयोगी बनाना होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *प्रो. रवीन्द्र शर्मा (संपादित) - भारतीय लोक प्रशासन के पचास वर्ष*
2. *प्रो. पी.डी. शर्मा - भारतीय प्रशासन*
3. *प्रो. आर.पी. जोशी - प्रशासनिक विचारक*
4. *प्रो. सी.एन. भाले राव (संपादित) - एडमिनिस्ट्रेशन, पॉलिटिक्स एण्ड डवलपमेंट इन इण्डिया*
5. *प्रो. रमेश अरोडा व संगीता शर्मा (संपादित) - कम्पेरेटिव एण्ड डवलपमेंट एडमि0 (आइडियाज एण्ड एक्शन)*
6. *द पॉवर ऑफ पॉजिटिव थिंकिंग - नारमन विन्सेंट पेले, सरमन पब्लिशस, न्यूयार्क, यूएसए, 1996*
7. *सेल्फ मोटिवेशन - गेल लिन्डेन फील्ड हार्पर, कोलिन्स पब्लिकेशंस, यू.एस.ए. 2003*
8. *थिंक एण्ड ग्रोरिच - नेपोलिएन हिल, स्टर्लिंग पब्लिकेशन प्रा. लि. 2015*
9. *प्रशासनिका*
10. *इण्डियन एण्ड पोलीटिकल वीकली*
11. *जनसत्ता समाचार पत्र*

 ISSN 2277-5587

विदुरनीति में समाजदर्शन

संजीव कुमार लवानियाँ
असिस्टेंट प्रोफेसर, पं. सुन्दरलाल शर्मा मुक्त विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छत्तीसगढ़)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

विदुरनीति महाभारत जैसे महनीय आर्ष महाकाव्य का एक अंश होने पर भी अपनी सशक्त सन्देशपरायणता के कारण श्रीमद्‌भगवदगीता की भाँति एक स्वतन्त्र पहचान रखता है। महाभारत के पाँचवे पर्व 'उद्योग पर्व' के 33 वें अध्याय से 40 वे अध्याय तक के आठ अध्यायों के 593 श्लोकों का संग्रह लोकविश्रुत ''विदुरनीति'' है। इसमें महात्मा विदुर ने मानव जीवन के प्रत्येक पक्ष पर अपने मार्मिक वचनों में शाश्वत सत्य का उद्‌घाटन किया है। पाण्डवों और कौरवों का एक ही वंश है, किन्तु वृत्ति-प्रवृत्ति भेद से विध्वंस की ओर प्रवृत्त है। महाराज धृतराष्ट्र अपने पुत्रमोह में 'अनीति' को भी 'नीति' के रुप में विदुर की स्वीकृति चाहते है, किन्तु महात्मा विदुर उन्हें स्पष्टत: सत्य वक्ता के रुप में नीरक्षीर विवेक पूर्वक सन्मार्ग का आश्रय लेने का परामर्श देते हैं। इसी ब्याज से वे कुल, समाज, देश की रक्षा हेतु पावन आदर्शों का उपस्थापन करते हैं। एक समर्थ समाजशास्त्री के रुप में उनका समर्थ समाज दर्शन सर्वथा अनुकरणीय है।

संकेताक्षर: *विदुर नीति,समाजदर्शन, कुटुम्बसंस्था।*

रामायण और महाभारत ऐसे आर्षग्रन्थ हैं, जिनमें सामाजिक, राजनीतिक, दार्शनिक, धार्मिक, साहित्यिक, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, आदि विषयक मार्मिक सिद्धान्तों की समर्थ अभिव्यक्ति हुई है। अतएव परवर्ती समाज और साहित्यपर इनका गहन प्रभाव देखा जा सकता है। महाभारत के विषय में तो यहाँ तक कहा गया है कि-

''धर्मे अर्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र, यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।।''[1]

अर्थात् इसमें चारों पुरुषार्थों, धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष का विशद रुप में प्रतिपादन है। जो इस ग्रन्थ में है, वह तो अन्यत्र है, किन्तु जो इसमें नहीं है वह कहीं भी नहीं है। ऐसे विशद ग्रन्थ का ही एक अंश है ''विदुरनीति''। यह महात्मा विदुर के आदर्श चिन्तन का प्रतिबिम्ब है। महाभारत में विदुर यद्यपि कौरव पक्ष में हैं किन्तु महाराज धृतराष्ट्र के विचारों से कदापि सहमत नहीं। वे नीर-क्षीर विवेकी हैं, अत: महात्मा विदुर के रुप में समादृत हैं। वे स्पष्टवक्ता, शालीन, मनीषी हैं। वे जब भी राजा को परामर्श देते हैं 'महाराज' सम्बोधित करते हैं, जबकि रिश्ते में वे धृतराष्ट्र के भाई होते हैं। धृतराष्ट्र की लाख कोशिशें हैं कि विदुर उनकी 'पुत्रमोह' की अनीति का समर्थन करें, किन्तु महात्मा विदुर कदापि ऐसा नहीं करते और इस बहाने वे विशद व्याख्यान देते हैं धृतराष्ट्र के सम्मुख, जिसे 'विदुरनीति' के रुप में जाना जाता है। इस ग्रन्थ की आदर्श शिक्षाओं ने इसे इतना महनीय बना दिया है कि यह स्वतन्त्र आचार संहिता के रुप में ग्राह्य एवं प्रतिष्ठित है।

विदुर की नीतियों में जिन सामाजिक मूल्यों की प्राण-प्रतिष्ठा हुई है, वे मानवता का श्रृंगार हैं। वे ऐसे समाज की स्थापना के पक्षधर हैं, जहाँ राजधर्म 'समाजधर्म' के रुप में परिणत हो। वे स्वयं राजपरिवार से, राजपद से सम्बद्ध होने पर भी समाजपद से सुशोभित है। राजमद उन्हें स्पर्श नहीं कर सका। अतएवं वे निर्भीक भाव से नीतिसंगत बात कहते हैं। उनकी मान्यता है कि राजा को नीति पर चलकर श्रेष्ठ समाज का निर्माण करना चाहिए। वे कहते हैं-

''द्वेष्यो न साधुर्भवति, न मेधावी न पण्डित:।
प्रिये शुभानि कार्याणि, द्वेष्ये पापानि चैव ह।।''[2]

ISSN 2277-5587

वस्तुत: राजधर्म तो वही अनुकरणीय है, जो समाज के सम्मुख अनुकरणीय आदर्श उपस्थित करे। यदि राजा अपने प्रिय व्यक्ति के दोषों का आच्छादन करेगा और विपक्षी के गुणों को अस्वीकार करेगा, तो समाज अराजकता की ओर अग्रसर होगा ही। विदुर का यह उद्घोष एक श्रेष्ठ समाज के निर्माण का पथ प्रशस्त करता है। अत: राजनीति को राजकेन्द्रित नहीं, समाजकेन्द्रित होना चाहिए। पुत्रमोह जैसे स्वार्थ सर्वनाश का कारण बनते हैं। इसलिए वे आहवान करते हैं कि अपने सौ पुत्रों की सुरक्षा हेतु एक पुत्र दुर्योधन का परित्याग करना ही श्रेयस्कर है। निस्सन्देह, जब राजा अनीतिगामी पुत्र के समर्थन से बचेगा, उसे दण्डित करेगा तो समाज में एक अनुकरणीय आदर्श का सन्देश जायेगा और समाज स्वत: ही राजानुरक्त और राज्यानुरक्त होगा। जनसमृद्धि का यही मूल मन्त्र है-

''उक्तं मया जातमात्रेऽपि राजन् ! दुर्योधन त्यज पुत्रं त्वमेकम्।
तस्य त्यागात् पुत्रशतस्य वृद्धिरस्यात्यागात् पुत्रशतस्य नाश:।।''[4]

समाज में सदैव गुणीजनों की वृद्धि का प्रयास होना चाहिए क्योंकि गुणी-समाज का निर्माण ही 'रामराज्य' है। गुणहीन तथा दुर्गुणी लोग तो समाज पर कलंक होते हैं। यह भारतीय आदर्श है कि हमारी गुणराशि ही हमें महत्व प्रदान करती है। कुमार्गगामी व्यक्ति भी अपनी सन्तति को गुणी देखना चाहता है। अतएव विदुर का यह परामर्श है कि धृतराष्ट्र गुणीजनों का पोषण करें।

समृद्धा: गुणत: केचिद् भवन्ति धनतोऽपरे।
धनवृद्धान् गुणैर्हीनोन् धृतराष्ट्र विवर्जया।।[5]

शनै: शनै: विदुर महाराज धृतराष्ट्र को यह सन्देश देना चाहते हैं कि पाण्डव गुणीजन हैं, आप उनकी उपेक्षा मत करिये। आप अपने दुर्गुणी पुत्र का मोह त्यागियें। यह उपक्रम विदुर के समाजदर्शन के तीन आयामों की स्थापना करता है। प्रथम राजधर्म द्वितीय, समाजधर्म, और तीसरा कुटुम्बधर्म। वस्तुत: राष्ट्र, समाज और कुटुम्ब ये तीन इकाइयाँ ही समवेतरुप से वृहत्तर-श्रेष्ठतर समाज का परिपूर्ण रुप-स्वरुप गठित करती हैं। इन तीनों के अनुक्रम में मानवधर्म भी समाहित है। मानव तो सर्वोपरि है ही। अत: मावन की आचार संहिता का परित्याग विदुर कैसे कर सकते थे। पूरी विदुरनीति मानव के आचरण की पावनता का निर्मल दर्पण है। यह कथन अक्षरश: सत्य है-

''श्रोतुमिच्छामि ते धर्म्यं परं नै:श्रेयसं वच:।
अस्मिन् राजर्षिवंशे हि त्वमेक: प्राज्ञसम्मत:।।''[6]

कुटुम्बीजनों की परस्पर प्रीति कुल के उत्थान का समर्थ हेतु बनती है। यह हार्दिक एकता परिवार का श्रृंगार करती है। इसीलिए विदुर कहते हैं कि धन-समृद्धि तभी संभव है जब परिजन प्रीतिसम्पदा को संजोये रहें-

''यो ज्ञातिमनुगृह्णाति दरिद्रं दीनमातुरम्।
स पुत्रपशुभिर्वृद्धिं श्रेयश्चानन्त्यमश्नुते।।''[7]

अर्थात् जो मनुष्य निर्धन, दैन्ययुक्त, रोगी तथा आत्मीय जनों पर कृपा करता है, वह सन्तति तथा पशुओं की समृद्धि से अपरिमित कल्याण की उपलब्धि करता है। आशय यह है कि कुटुम्बियों का क्लेशनिवारण करना सुख समृद्धि का दायक होता है। विदुर का यह भाव व्यष्टिगत रुप से मात्र कौरव-पाण्डवों के पारिवारिक परिवेश का ही निदान नहीं कर रहा है, अपितु यह समष्टिगत कौटुम्बिक परिवेश का पोषक है। कुटुम्ब संस्था परम पावन संस्था है। यह वह इकाई है जो समाज और राष्ट्र की शोभा है। विदुर यहाँ ''ज्ञाति'' शब्द का प्रयोग करते हैं, जिसका अर्थ है जाति। किन्तु इतने संकीर्ण अर्थ में यह ग्राहय नहीं है। इसका उपयुक्त अर्थ कुटुम्ब ही है-

'' ज्ञातयो वर्धनीयास्तैय इच्छन्त्यात्मन: शुभम्।।''[8]

आगे विदुर स्पष्टत: प्रतिपादित करते हैं कि 'ज्ञाति' ही 'कुल' है। इस 'कुलसंस्था' की श्रीवृद्धि को वे 'श्रेय' और 'प्रेय' की प्राप्ति का अपरिहार्य उपादान मानते हैं। वे कहते हैं-

''कुलवृद्धिं च राजेन्द्र ! तस्मात् साधु समाचर।
श्रेयसा योक्ष्यते राजन् ! कुर्वाणों ज्ञाति सत्क्रियाम्।।''[9]

कुलवृद्धि, वंशोन्नति, आत्मीयजनों का सम्मान कल्याणकारी होता है। यह हमारा पारिवारिक-मूल्य है। विदुर का यह सन्देश बहुत प्रेरक सूत्र के रुप में ग्रहण करना चाहिए। वे तो यहाँ तक प्रतिपादित करते हैं कि यदि गुणहीन परिजन हो तो भी रक्षणीय होता है। उसे तथापि आश्रय दिया जाना चाहिए। फिर गुणवान् परिजन की तो बात ही क्या? यह एक सशक्त और सटीक उपाय है, क्योंकि यदि कदाचित् कोई गुणहीन परिजन गुणहीन अथवा कि कुमार्गगामी भी है, तो निन्दा या तिरस्कार के स्थान पर स्नेह और आत्मीयता से उसे सन्मार्ग पर लाया जाना चाहिए। इससे कुटुम्ब-संस्था की रक्षा होगी और सकारात्मक परिणाम सामने आयेंगे। वस्तुत: यही तो जीवन जीने की कला है कि हम विध्वंस में भी सृजन के आयामों का अनुसन्धान करें-

''विगुणा ह्यपि संरक्ष्या ज्ञातयों भरतर्षभ।
किं पुनर्गुणवन्तस्ते त्वत्प्रसादा भिकांक्षिण:।।''[10]

अपने परिवार के साथ मिलकर रहना, भोजन करना, विरोध न करना कौटुम्बिक आनन्द का मूलमन्त्र है। यह कोरा आदेश नहीं है, एक सहज सुन्दर सुलभ दैनिक अनुकरणीय यथार्थ है। इससे सुमति, सन्मति, समृद्धि का स्वत: आविर्भाव होता है। कल्याण की इस परम्परा का सतत वरण करना चाहिए-

''ज्ञातिभिर्विग्रहस्तात ! न कर्तव्य: शुभार्थिना।
सुखानि सह भोज्यानि ज्ञातिभिर्भरतर्षभ।।''[11]

एवम्-

ISSN 2277-5587

"सम्भोजनं संकथनं सम्प्रीतिश्च परस्परम्।
ज्ञातिभिः सह कार्याणि न विरोधः कदाचन॥"[12]

इस कुटुम्ब-कल्याण के सूत्र के उद्घाटन के क्रम में विदुर यह निर्णय देना अपरिहार्य मानते हैं कि श्रेष्ठ कुटुम्ब ही उद्धारक होता है और दुराचारी कुटुम्ब डुबो देता है। विचारणीय तथ्य यह है कि कौरवों और पाण्डवों का कुटुम्ब तो एक ही है, किन्तु आचरण की भिन्नता एवं उचित-अनुचित के भेद से एक ही इकाई कितनी भीषण स्थिति में है। विनाश के कगार पर खड़ा है एक गौरवशाली वंश। अतः विदुरनीति यह प्रतिपादित करती है कि इस परिवार संस्थान की मर्यादाओं को तार-तार कभी न होने दिया जाय।[13] वे कहते हैं-

"ज्ञातयस्तारयन्तीह ज्ञातयो मज्जयन्ति च।
सुवृत्तास्तारयन्तीह, दुर्वृताः मज्जयन्ति च॥"[14]

यह पावन स्वर है महाभारत कार कृष्णद्वैपायन वेदव्यास का। सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि कुटुम्ब की पावन मूल्य-साधना कितनी अनिवार्य है। यही मूल्य-साधना समाज के उत्कर्ष का सशक्त आधार बनती है। जीवन का प्रत्येक क्रिया कलाप समाज सापेक्ष होता है। सामाजिकों की सोच, कार्यविधि, सदाचरण ही हमारे समाज को आगे ले जाता है। अतएवं सच्चरित्र का आहवान सर्वत्र विद्यमान है। दुराचारी नागरिक समाज को कहाँ ले जायेगें, यह कहने की आवश्यकता नहीं। सच्चरित्र नागरिक ही यशस्वी समाज का निर्माण करते हैं-

"सुव्याहृतानि धीराणां फलतः परिचिन्त्य यः।
अध्यवसति कार्येषु चिरं यशसि तिष्ठति॥"[15]

समाज के प्रत्येक वर्ग का सम्मान तथा उपयोग सामाजिक उत्कर्ष हेतु अनिवार्य है। विशेषतः वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध और अनुभववृद्ध जनों के बुद्धिकौशल का उपयोग अवश्य किया जाना चाहिए। वृहस्पति के तुल्य शास्त्रज्ञ भी वृद्धजनों की उपेक्षा नहीं कर सकता। विदुर कहते हैं-

"न वै श्रुतमविज्ञाय वृद्धाननुपसेव्य वा।
धर्मार्थौ वेदितुं शक्यौ बृहस्पतिसमैरपि॥"[16]

जिस समाज के लोग विनम्र, पराक्रमी, क्षमाशील एवं सदाचारी होंगे उस समाज से अकीर्ति, अनर्थ, क्रोध, एवं कुलक्षण जैसे निन्दनीय तत्वों का समूल विनाश हो जायगा। तब समाज का प्रांजल परिवेश समादरणीय, अनुकरणीय तथा वदनीय होगा-

"अकीर्त्तिं विनयो हन्ति, हन्ति अनर्थं पराक्रमः।
हन्ति नित्यं क्षमा क्रोधं, आचारो हन्त्यलक्षणम्॥"[17]

ऐसे उत्तम चारित्र्यवाले समाज को आस्तिक स्वभाव से यज्ञादि कार्यो में सदैव प्रवृत्त रहना चाहिए। पर्यावरक्षण हेतु यज्ञ-यागादि सर्वथा सम्पादनीय सत्कृत्य हैं। ये वैज्ञानिक रुप से सिद्ध हैं। ये रुढ़ियाँ नहीं है, अपितु स्वस्थ राष्ट्र के निर्माण के सार्थक अनुष्ठान हैं। फलतः अपरिहार्य हैं-

"अग्निहोत्रफला वेदा : शीलवृत्तफलं श्रुतम्।
रतिपुत्रफला नारी, दत्तभुक्तफलं धनम्॥"[18]

साथ ही विदुर समाज को त्याज्य एवं ग्राहय तत्वों का भी स्पष्ट निर्देश देते हैं। उनकी मान्यता है कि समाज में अनीति का पदार्पण नहीं होना चाहिए। सतत उद्योगशील ही समाज को उन्नति के शिखर तक ले जाते है।

अस्तु विदुरनीति में एक सर्वांग सुन्दर, धर्म प्रवण, कर्मयोगी, चरित्रवान्, शास्त्रानुयायी, सद्भाव सम्पन्न, उदाराशय, निष्पाप समाज का दर्शन समाहित है। दो कुलों के विध्वांस को बचाने एवं स्वस्थ समाज के निर्माण हेतु विदुरनीति एक श्रेष्ठ 'आचार संहिता' है। समाज के उत्कर्ष हेतु यह एक पवित्र अनुशासन है। वही समाज उत्तम है जिसमें शान्ति से क्रोध को, सज्जनता से दुर्जन को, दानशीलता से कृपणता को एवं सत्य से असत्य को जीतने का उपक्रम किया जाय।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *महाभारत, आदिपर्व, 62.53,*
2. *वही, उद्योग पर्व, 33-40,*
3. *विदुरनीति, 7.5,*
4. *वही, 7.5,*
5. *वही, 7.8,*
6. *वही, 1.15*
7. *वही, 7.17*
8. *वही, 7.18*
9. *वही, 7.19*
10. *वही, 7.20*
11. *वही, 7.23*
12. *वही, 7.24*
13. *वही, 7.26*
14. *वही, 7.26*
15. *वही, 7.33*
16. *वही, 7.39*
17. *वही, 7.42*
18. *वही, 7.65*

जीन पियाजे का चिंतन और ज्ञानरचनावाद

गौरव सिंह
शोधार्थी, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर

डॉ. सतीश चंद मंगल
सहायक प्रोफेसर, श्री अग्रसेन शिक्षा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सी.टी.ई, जामडोली, जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

बालक जिस परिवेश में रहता है एवं जिस प्रकार से अनुभव लेता है वैसे ही तरीके वह अपनाता है एवं वैसा ही वह ज्ञान निर्मित करता है। बच्चा अपने आप को दूसरे से जोडकर सीखता है जिससे उसकी समझ बनती है, वह कार्य कर पाता है और रुपान्तरण कर पाता है समाज में हर एक नई पीढी को विरासत में संस्कृति एवं ज्ञान का एक भण्डार मिलता है जिसे वह अपनी गतिविधियों तथा समझ में समाहित करते हुए नया ज्ञान रचने की सार्थकता महसूस करता है। जीन पियाजे का महत्वपूर्ण योगदान यह समझाने में है कि बच्चा वयस्कों से मात्रात्मक ही नहीं गुणात्मक रुप से भी भिन्न होता है। पियाजे इस सवाल का अध्ययन करना चाहते थे कि ''ज्ञान कैसे होता है।'' पियाजे ज्ञान के होने के कारणों को समझना चाहते थे। वे ज्ञान की व्याख्या इसके बनने तथा विकसित होने की प्रक्रिया को केन्द्र में रखकर करने की कोशिश चाहते थे। वे ज्ञान के बनने तथा उसके विकसित होने की प्रक्रिया समझना चाहते थे।

संकेताक्षर: ज्ञानरचनावाद, संज्ञानात्मक, साम्यधारण, आत्मसातीकरण, विकासात्मक, स्कीमा, अवधारणात्मक, नया ज्ञान।

जीन पियाजे (1896-1980) एक प्रमुख स्विस मनोवैज्ञानिक थे जिनका प्रशिक्षण प्राणी विज्ञान में हुआ था। 21 वर्ष की उम्र में उनको जीव विज्ञान के क्षेत्र में पी.एच.डी की उपाधि मिली। जीव विज्ञान के साथ-साथ इनकी रुचि दर्शनशास्त्र में भी होने लगी दर्शनशास्त्र में भी ज्ञान मीमांसा इनकी रुचि का विषय बना जीव विज्ञान तथा ज्ञान मीमांसा के सयुक्त अध्ययन ने इनके शोध के दायरे को प्रभावित किया। उनका प्रमुख अध्ययन बालक के शैशव काल से किशोर काल तक के संज्ञान पक्ष से था।

इसमे कोई संदेह नही की पियाजे ने अपने कार्य को अधिगम सम्बन्धी तथ्यों से नही जोडा, फिर भी उन्होंने तर्क, विचार, चिंतन, नैतिक निर्णय, प्रत्यय बोध आदि उस समय तक न छुए जाने वाले मनोवैज्ञानिक तथ्यों के क्रमिक विकास का अध्ययन किया। यही कारण है कि जीन पियाजे की मनोवैज्ञानिक विचारधाराओं को विकासात्मक मनोविज्ञान के नाम से जाना जाता है। इस संदर्भ में उनके अपने विचार प्रस्तुत किये जा सकते है। जैसे - ''मैं प्रशिक्षण से प्रकृतिवादी और जैविक वैज्ञानिक हूँ जिसने मनोविज्ञान में किसी प्रकार का नियम अनुसार अध्ययन ग्रहण किये बिना ज्ञान मीमांसा संबंधी समस्याओं में की रुचि ली। मेरा प्रमुख सम्बन्ध व्यक्ति द्वारा किये गये कृत्यों को निश्चित करना और सदा उनके द्वारा ज्ञान प्राप्ति के सीमित पक्षों को जानना रहा है। खास तौर पर यह इच्छा थी कि इस समस्या का समाधान प्रयोगात्मक प्रक्रिया द्वारा किया जाये, जिसके कारण मैं मनोविज्ञान के क्षेत्र में आया किन्तु इस दृष्टिकोण को प्राय: स्वीकार नही किया और न ही पूरी तरह बाल-मनोवैज्ञानिको ने जिन्होंने कि मेरे कार्य का अध्ययन किया और अपने आप को संभ्रान्त पाया है।''

जीन पियाजे का चिंतन

जीन पियाजे की ज्ञान संबंधी धारणा को समझने के लिए उनके जीवन-सम्बंधी विश्वासो को समझना आवश्यक है। उनका विश्वास था कि घटनाओं के मध्य सार्वभौमिक व्यवस्था होती है इसी व्यवस्था के कारण घटनाएँ आपस में संबंधित रहती है। सार्वभौमिक से मतलब ऐसी व्यवस्था या नियम जो समान स्थितियों में सभी जगह लागू होता है। वे जीव वैज्ञानिक सामाजिक मनोवैज्ञानिक प्रणालियों को संबंधित मानते है तथा तर्क को इनके मध्य जुड़ाव का कारण मानते है वे मानते है। कि भौतिक दुनिया जीव वैज्ञानिक प्रक्रियाओं तथा मस्तिष्क की प्रक्रियाओं को चलाने वाले नियमों का तर्क एक सा है।

मानव विकास के इन परम्परागत सिद्धान्तों को हम अपने ध्यान में रखे तो कहा जा सकता है कि विकास के तीन महत्वपूर्ण पहलू होते है।

- जैविक परिपक्वता
- भौतिक पर्यावरण का अनुभव
- सामाजिक पर्यावरण का अनुभव

उनके मतानुसार विकास की एक अनिवार्य स्थिति सन्तुलनीकरण है। यह उपर्युक्त तीनो सिद्धान्तों के मध्य समन्वय स्थापित करता है इसकी न्यूनता की स्थिति में किसी भी मानव का विकास संभव नही है उनके अनुसार संतुलनीकरण एक स्व-संचालित प्रगतिशील प्रक्रिया है जो व्यक्ति को क्रमश विकास हेतु अग्रसर करने में सहायक होती है जीन पियाजे ने अपने विचारों में संज्ञान के विकास को सबसे महत्वपूर्ण समझा अर्थात पियाजे का अधिकाधिक कार्य संज्ञान तथा तर्क के विकास से संबंध रखता है। उनके सम्पूर्ण कार्य से विदित होता है कि वह तर्क तथा मनोविज्ञान को एक दूसरे के समीप लाना चाहते थे।

- संज्ञानात्मक मनोविज्ञान में जीन पियाजे ने आत्मीकरण, स्थानीकरण और साम्यधारण के संप्रत्ययों की चर्चा की है।
- आत्मीकरण से अभिप्राय पूर्व अनुभवों पर आधारित पृष्टभूमि से है। ज्ञाता के पास पूर्व अनुभवों का एक जगत है और इस आन्तरिक आनुभाविक जगत में ऐसा व्यवस्थित ढांचा बना हुआ है। जिसके आधार पर हम आगामी अनुभवों को व्यवस्थित करते है। नए अनुभव को पूर्व अनुभवों के साथ व्यवस्थित और क्रमिक करने से जो आंतरिक ढांचे बने है उसमें स्थापित किया जाता है यह एक तरह का आत्मीकरण है।

आत्मीकरण का अर्थ केवल पर्यावरण द्वारा उपलब्ध ज्ञान से ही नही है बल्कि उन पूर्व अनुभवों से भी है जो कि वर्तमान पर्यावरण द्वारा ज्ञान प्राप्त करने में मदद करते हैं जीन पियाजे बालक के पूर्व अनुमानों को उसकी संगठनात्मक संरचना का नाम देते हैं। स्कीमा का अर्थ है वे संरचनाए जिनके आधार पर वातावरण से मिलने वाली जानकारी को ग्रहण किया जाता है कल्पना की जाती है तर्क किया जाता है तथा निष्कर्ष निकाला जाता है।

किसी शिशु को कोई वस्तु देने पर वह अपने मुंह में रख लेता है क्योंकि इस उम्र में उपलब्ध स्कीमा उस वस्तु के प्रति ऐसा कर पाने तक सीमत है यानि स्कीमा व्यवहार के हदों का तय करता है। किसी दो वर्षीय शिशु को उसी वस्तु को देने पर वह भिन्न व्यवहार करता है क्योकि उसकी स्कीमा भिन्न है। एक ही तरह की वस्तु के प्रति दोनों शिशुओं के व्यवहारों में यह अंतर यह बताता है कि दो वर्षीय शिशु का वही व्यवहार संशोधित हो गया। बौद्धिक संरचनाएं जिन्हें पियाजे ने स्कीमा कहा है बदलती रहती है। जैसे-जैसे वातावरण के साथ अंत क्रियाये बढती है बौद्धिक संरचनाएं अधिक जटिल होकर सामान्यीकरण की तरफ बढ़ती हैं।

- जब कोई ऐसा अनुभव आता है जो पूर्व स्थापित अनुभव-निर्मित ढांचे में स्थापित नहीं किया जा सकता है तो ज्ञाता के समक्ष वैचारिक समस्या उत्पन्न होती है यह वैचारिक समस्या अब तक स्थापित हो चुके और समझने -समझाने के लिए बाध्यता उत्पन्न करती है क्योंकि विचार या व्यवहार में अपेक्षित परिणामों से इतर परिणाम उत्पन्न होते हैं इस तरह की स्थितियों में ज्ञाता स्थानीकरण करता है और वैचारिक विरोध को समाप्त करने के लिए नई वैचारिक योजना को ग्रहण कर लेता है और धीरे-धीरे यह उसके वैचारिक व्यावहारिक जगत का कुछ अधिक विश्वसनीय स्थायी पक्ष बनने लगता है। जैसे यदि कोई बालक जानता है कि 'कुत्ता' क्या होता है परन्तु एक बिल्ली को देखकर जब वह अपने मानसिक सम्प्रत्यय में परिवर्तन कर बिल्ली की अलग कुछ विशेषताओं पर गौर करता है तो यह स्थानीकरण का उदाहरण होगा।
- जितना ही एक ज्ञाता वैचारिक व्यावहारिक समस्याओं को कम करता हुआ ऐन्द्रिक-दैहिक और अनुचिन्तनात्मक अमूर्त्तकरण की और बढ़ता है उतना ही वह साम्यधारण के स्तर पर बढ़ता जाता है कुछ आसान शब्दों में कहें जितना हम अपनी ऐन्द्रिक-दैहिक क्रियाओं और मानसिक-वैचारिक क्रियाओं को समझ और आचरण के स्तर पर संक्षेपित कर ग्रहण करते चले जाते हैं उतना ही हम तजन्य समस्याओं से निजात पाने में समर्थ होते जाते है। पियाजे द्वारा प्रस्तुत इन संप्रत्ययो को ज्ञानरचनावाद ने ज्ञान के सत्य होने की कसौटी के रुप में स्वीकार किया है।
- जीन पियाजे बुद्धि के विकास को विकासवाद की नजर से देखते थे उनके अनुसार बुद्धि का विकास ताउम्र विशेष प्रकार से होता है। जिसमें वर्तमान विकास, पुनर्विकास के विस्तार के रुप में होता है यानि बुद्धि सम्बंधी कोई प्रक्रिया यकायक घटित नही होती। बुद्धि सम्बंधी घटनाओं में निहित तर्क व्यक्ति के जीवन पहले चरणों में घटित घटनाओं में निहित तर्को का विस्तार होता है।
- जीन पियाजे का मानना है कि मानसिक विकास जन्मजात कारको से निर्धारित नहीं होता। यह जीव वैज्ञानिक सिद्धान्तो के अनुसार परिपक्व होते जीव तथा वातावरण के मध्य अन्त: क्रिया का परिणाम होता है।

जीन पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त में संवेदी पेशीय अवस्था में बताया कि मानव शिशु जन्म में ही वातावरण की अनिश्चितता को दूर करने के लिए अनुकूलन करता है तथा एक सम्बन्धित एवं समन्वित ढंग से इस क्षमता को विकसित करने की कोशिश करता है।

ज्ञानरचनावाद

समसामयिक पाश्चात्य शिक्षा दर्शन और मनोविज्ञान में एक वैचारिक परम्परा प्रमुखता से उभर रही है जिसने ज्ञानमीमांसा प्राचीनतम और मौलिक समस्या पर अपने विचार नए ढंग से रखने, परखने और उसे एक कसौटी पर कसने का प्रयास किया है।

- यदि शाब्दिक अनुवाद की चिंता ना करें तो हम इसे हिन्दी में भी कंस्ट्रक्टिविज्म ही कहेंगे क्योंकी सृजन, निर्माण या निर्मित जैसे शब्दों की हमें यह वैचारिक गहनता सातत्य और अर्थबोधकता समझ में नही आती जिसे कंस्ट्रक्टिविज्म शब्द द्वारा इस चिंतन परम्परा ने समझना-समझाना चाहा है।
- ज्ञानरचनावाद में व्यक्ति किन नवीन विचारों को स्वीकार करे व संसार के विषय में स्थापित विचारों में उन्हें किस प्रकार समायोजित करे। संबंधित विकल्पो का चयन ही ज्ञानरचनावाद है।
- **लिसा फ्रेश्चर** के अनुसार ज्ञानरचनावाद सीखने का एक सिंद्धात है यह व्यक्ति के सीखने और सक्रिय रहकर निर्माण करने की प्रक्रिया है।
- ज्ञानरचनावाद अधिगम के मनोवैज्ञानिक सिंद्धात के प्रणेता जीन पियाजे है। पियाजे ने माना कि व्यक्तिगत संज्ञानात्मक संरचना की प्रक्रिया अधिक महत्वपूर्ण है अर्थात अधिगम के परिणाम इन धारणओं को संज्ञानात्मक ज्ञानरचनावाद, सामाजिक ज्ञानरचनावाद नाम दिया।
- संज्ञानात्मक ज्ञानरचनावाद में व्यक्ति के द्वारा अर्जित ज्ञान, विश्वास, मूल्य, धारणाओं, आत्म प्रत्यय पर ध्यान केन्द्रित करता है।
- सामाजिक ज्ञानरचनावाद में अधिगम एक सक्रिय सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें विद्यार्थी नये विचारों व अवधारणाओं को वर्तमान ज्ञान के आधार पर निर्मित करते है।
- ज्ञान मीमांसा और सत्ता मीमांसा से जुडी आधारभूत समस्याओं को नए सिरे से समझ कर कंस्ट्रक्टिविज्म एक क्रांतिकारी परविर्तन लेता है जिसमें वस्तु की तात्विक स्थिति के विषय में कुछ न कहकर ज्ञान के मानवीय अनुभवों के व्यवस्थीकरण एवं क्रमबद्धकरण के आधार पर समझाया जाता है।

पियाजे का चिंतन और ज्ञानरचनावाद

- ज्ञानरचनावाद को अधिगम के दर्शन से सम्बोधित किया जाता है यह दर्शन अधिगमकर्ता द्वारा नवीन विचारों की समझ के द्वारा तथा विकसित करने को प्रस्तावित करता है।
- शैक्षिक दायरो में आधतन शब्द ज्ञानरचनावाद है इस पद व दर्शन की व्याख्या सर्वप्रथम जीन पियाजे ने की।
- ज्ञानरचनावाद ज्ञान एवं अधिगम का एक सिद्धान्त है। यह सिद्धान्त जानना क्या है और व्यक्ति किस प्रकार की जानकारी करता है का वर्णन करता है।
- वर्कले काण्ट और वायको के चिंतन से प्रभावित होकर मानवीय ज्ञान निर्माण या सृजन क्षमता को नये अर्थो में परिभाषित करने का प्रयास करते हुये ज्ञानरचनावाद जीन पियाजे के संज्ञानात्मक मनोविज्ञान को आधार में रखकर आगे बढता है।
- ज्ञानरचनावाद अधिगम के उपागम के समर्थक निम्न विशेषताओं पर एकमत है।
- अधिगम पूर्व अर्जित अवधारणात्मक योजनाओं का पुर्नसंगठन है।
- नवीन अधिगम बच्चे के पूर्वज्ञान पर निर्भर रहता है। कभी-कभी यह ज्ञान नवीन रचनात्मक के अर्थग्रहण में बाधा डालता है।
- अधिगम ग्रहण निष्क्रिय न होकर सक्रिय रह अर्थग्रहण करने की प्रक्रिया है।
- प्रमाणिक अधिगम कार्यो में सार्थक अधिगम होता है।
- अधिगम की प्रक्रिया को सामाजिक एवं अन्त क्रिया सरल व सुगम करती है।
- जीन पियाजे ने भी अपने सिद्धान्त में शिक्षार्थो अथवा बालक की भूमिका को काफी सक्रिय एवं महत्वपूर्ण माना जिससे शिक्षार्थो की आवश्यकता, प्रेरणा एवं अभिरुचि पर विशेष सत्य से नजर रखकर कार्यक्रम तैयार करने में सुविधा होती है।
- जीन पियाजे ने अपने सिद्धान्त में यह स्पष्ट कर दिया, की खेल का शैक्षिक महत्व काफी है खेल के माध्यम से बच्चों

ISSN 2277-5587

में संज्ञानात्मक सम्पन्नता विकसित होती है। इसका उदाहरण ज्ञानरचनावाद शिक्षण में सहयोगी अधिगम हैं।

- जीन पियाजे के अनुसार जीव और पर्यावरण में निरन्तर प्रतिक्रिया होती रहती है। फलस्वरुप बौद्धिक ढाँचे का क्रमबद्ध रुप से विकास होता है। विचार वस्तुओं और अनुक्रियायों से संबंध स्थापित करते है।
- जीन पियाजे का मानना था की ज्ञान की निर्मिति में पूर्व ज्ञान तथा पूर्व अनुभवों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। वस्तुओं के आंतरिक प्रतिनिधित्व का स्वरुप या स्कीमा विकसित करने का अवसर दिया जाना चाहिए।

निष्कर्ष

बौद्धिक संरचना के आधार पर बच्चा अपने वातावरण में घटने वाली घटनायों की व्याख्या करता है तथा वातावरण द्वारा प्रस्तुत की जाने वाली चुनौतियो का सामना करता है। संरचनाए देखी नही जा सकती लेकिन व्यवहार के आधार पर उनके स्वरुप के बारे में निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

ज्ञान की कोई निश्चित अंतिम व सर्वमान्य परिभाषा नही दी जा सकती क्योकि ज्ञान मानवीय अनुभवों को क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित किये जाने का नाम है आनुभाविक जगत जितना व्यवस्थित एवं व्यापक होगा ज्ञान में उतनी ही विश्वसनीयता और उपादेयता समाहित होगी।

स्पष्ट है कि पियाजे के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धान्त का शैक्षिक महत्व अत्यधिक इससे शिक्षकों को अध्ययन कार्य के लिए स्वयं भी अच्छा निर्देश मिलता है एवं बच्चे को सीखने के लिए उपयोगी सुझाव मिलते है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डी.डब्ल्यु. पियाजे (1973) एजुकेशन एण्ड टीचिगं, ऐम्स एण्ड रार्बटशन प्रा.लि. सिडनी।*
2. *सिंह, अरुण (2011) ''शिक्षा मनोविज्ञान'' भारती भवन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली।*
3. *शर्मा, गणपतराय, हरिशचन्द्र व्यास (2013) ''अधिगम शिक्षण और विकास के मनोसामाजिक आधार'' राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर*
4. *रावत, बरिन्द्र सिंह ''जीन पियाजे का भाषा चिंतन'' परिपेक्ष्य वर्ष 20 अंक 3 दिसम्बर 2013 न्यूपा नई दिल्ली।*
5. *गोस्वामी, आयुष्मान (2013) कंस्ट्रक्टिविज्म : शिक्षा की ज्ञान मीमांसा से एक विमर्श*
6. *माथुर, डॉ. एस एस (2013) शिक्षा मनोविज्ञान श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।*
7. *कटारा, राकेश (2012) निर्मित वादी शिक्षण विधिया एडुसर्च अक्टूबर 2012 रिसर्च आर्गेनाईजेशन, विलासपुर*

राजनीति मे अपराधीकरण : समस्या एवं सुझाव

सांवल सेठ
शोधार्थी, जय नारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

भारतीय राजनीति मे निरंतर नैतिक मूल्यों का पतन होता जा रहा है एवं राजनैतिक शुचिता खोती जा रही है। वर्तमान में भारतीय राजनीति में अपराधीकरण, भ्रष्टाचार, अनुशासहीनता, अनैतिकता, साम्प्रदायिकता, प्रादेशिकता, भाषावाद, जातिवाद, तुच्छ दलगत स्वार्थ आदि दूषित तत्वों का समावेश होने से भारतीय राजनीति, राजनीति न रहकर नैतिकता विहीन दूषित राजनीति बन गई है, जिसके मकड़जाल में देश निरन्तर फंसा हुआ है।

विगत दशकों में भारतीय राजनीति में अपराधियों के सक्रिय होने से लोकतंत्र के संसदीय ढ़ाँचे को गहरा आघात लग रहा है। और इनकी सक्रियता से राजनीति भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूब गई है। भारतीय राजनीति में अपराधीकरण एवं भ्रष्टाचार की बढ़ती प्रवृत्ति अत्यन्त ज्वलंत, चिंतनीय एवं विचारणीय समस्या के रुप में उभरकर सामने आयी है, जिसनें भारतीय लोकतंत्र की जड़ों को हिलाकर रख दिया है।

***संकेताक्षर :** अवसरवादिता, नैतिकता, भ्रष्टाचार, भौतिकवादी, अपराधीकरण ।*

राजनीति की रीढ़ होती है नैतिकता, और आज की राजनीति मे नैतिकता के लिए कोई जगह रह ही नहीं गई है। यह खुल्लम खुल्ला अवसरवादिता है, जिसकी प्रेरणा शक्ति है, लोकसत्ता का लोभ, पद का लोभ, पैसे का लोभ, भोग का लोभ।[1] परिणाम आज राजनीतिक वातावरण एवं राजनीतिक गतिविधियाँ दूषित हों चुकी है। राजनीति के अपराधीकरण एवं भ्रष्टाचार की बढ़ती प्रवृत्ति राश्ट्रीय प्रगति एवं लोकतांत्रिक प्रक्रिया को आघात पहुंचा रही है।भारत में जिस तरह राजनीति का अपराधीकरण तथा अपराधों का राजनीतिकरण हुआ है, वह अत्यन्त भयावह स्थिति की ओर संकेत करता है। भारत में भ्रष्ट राजनेताओं, व्यापारियों, अपराधियों तथा नौकरशाहों के ऐसे संगठित समूह बन चुके है, जो राष्ट्र के नाम पर कलंक है, वस्तुत: यह सब उस सड़ी-गली व्यवस्था में ही सम्भव होता है जहाँ राष्ट्रीय चरित्र का अभाव होता है।

स्वामी विवेकानंद के अनुसार ''सारे पापों तथा बुराइयों की जड़ है-''भय''। असुरक्षा तथा पतन का भय राजनेताओं को अनैतिकता एवं सांठ-गांठ के बंधनों की ओर ले जाता है। सत्ता मे रहते हुए राजनेता जिस प्रकार के भौतिक सुख, सामाजिक प्रतिष्ठा, प्रशासनिक रुतबे तथा नियंत्रणकारी एवं विवेकाधीन शक्तियों का लाभ उठाते है, वह सत्ता छिनने के बाद लुप्त हो जाता है। यद्यपि यह कारक छोटे-से प्रतीत होते है। किन्तु व्यक्ति का चिन्तन यहीं से गड़बड़ होना शुरु होता है। राजनीति के अपराधीकरण के लिए उत्तरदायी कुछ अन्य प्रमुख व्यवहारिक कारक है-

- शिथिल न्यायपालिका एवं कानूनों तथा नियमों का ढेर।
- विधायिका, न्यायपालिका, एवं कार्यपालिका की विवेकाधीन शक्तियां।
- निर्वाचन प्रणाली के दोष
- राष्ट्रप्रेम का अभाव।
- निरक्षरता, गरीबी तथा बेरोजगारी।
- स्वार्थ, मोह एवं तृष्णा।
- एक दूसरे (अपराधी, नेता, प्रशासक तथा व्यापारी) की कमियों को पूरा करना तथा नैतिक एवं अनैतिक लेन-देन।

- समाज द्वारा अपराधों तथा अपराधियों को अनदेखा करना।
- लेकप्रियता, प्रतिष्ठा तथा प्रभाव की चाहत।
- मीडिया की भूमिका।

राजनीति का मुख्य लक्ष्य बुराईयों से लड़ना तथा जनहितकारी प्रशासन देना है। महान् दार्शनिक अरस्तू ने कहा है- ''राज्य का जन्म जीवन को संभव बनाने के लिये हुआ है, परन्तु यह अच्छे जीवन की प्राप्ति के लिए कायम रहता है।[1]

लेकिन यदि राजनीति को चलाने के लिए अपराधी तत्वों, अपराधी उद्देश्यों एवम् आपराधिक साधनों की आवश्यकता होती है। तो वह दिन दूर नहीं जब सारा देश अपराधियों के ही हाथों में आ जायेगा और देश के चरित्र का विनाश हों जायेगा तब न कोई सभ्यता रहेगी और न संस्कृति।

राजनीति के अपराधीकरण की प्रवृत्ति में लगभग डेढ़ दशक में काफी तेजी आई है। ऐसी स्थिति में इस प्रवृत्ति के कारणों पर विचार किया जाना अति आवश्यक है। स्पष्टत: यह प्रवृत्ति किसी व्यक्ति विशेष के कारण होने वाली घटना नहीं अपितु इसके लिए समग्र समाज एवं सामाजिक परिस्थितियां उत्तरदायी है। कुछ प्रमुख कारण इस प्रकार है।[2]

- वास्तव में राजनीतिज्ञों को अपराधियों की सहायता की आवश्यकता दो कारणों से हुई एक तो, महंगे चुनावों का खर्च जुटाने के लिए और दूसरे बाहुबल के जोर पर चुनाव जीतने के लिए पहले। उम्मीदवार समाजसेवा एवं सिद्धातों के आधार पर चुनाव जीतता था, लेकिन जब लोग अपने तुच्छ स्वार्थो की पूर्ति हेतु राजनीति में आयें या राजनीतिक उन्हे ले आवे, और ऐसे लोगों के पास समाज जन सेवा एवं देश के प्रति त्याग जैसी भावना नहीं रही और न कोई सिद्धांत रहे तो उन्हें चुनाव जीतने के लिए अपराधी तत्वों का सहारा लेना पड़ा। मतदाताओं को डराना, धमकाना, वोटरो को वोट न डालने देना, फर्जी मतदान करवाना, ये सब चुनाव जीतने के साधन बन गये। लठैत, बंदूक धारी एवं छुरेबाज किराये पर लिये जाने लगे। ऐसे लोगो में स्वयं चुनाव लड़ने की इच्छा जाग्रत होने लगी कि इस तहर विधायिका जैसी महत्वपूर्ण संस्था में अपराधी विधायक बनने लगे।

यद्यपि चुनावों का खर्च कम करने के लिए सरकारों ने लोकसभा चुनावों के लिए कानूनी सीमा बांध दी है, परंतु, हर व्यक्ति यह जानता है कि इस सीमा का पालन नही किया जाता। अत: बढ़ते हुए चुनाव खर्च की पूर्ति के लिये राजनीतिज्ञ, स्मगलरों, अवैध धंधा करने वाले, बडे.-बड़े उद्योगपतियों आदि से धन लेते है और चुनाव जीतने के बाद उन्हें प्रश्रय देने के लिए विवश होते हैं। यद्यपि चुनाव आयोग ने इस विकृति को समाप्त करने के लिए चुनाव कोष के गठन का सुझाव दिया है। परंतु केन्द्र सरकार द्वारा अभी तक इसका गठन नही किया है।[3]

- राजनीतिज्ञ अपनी सामाजिक हैसियत बढ़ाने तथा अपना दबदबा बनाने के लिए भी अपराधी तत्वों को संरक्षण देते है और जब अपराधियों को उनका संरक्षण मिलने लगता है तो वे समाज पर हावी होने लगते है। जगह-जगह चौथ वसूल करना, व्यापार उद्योग चलाना आदि में अपराधियों की सक्रिय भागीदारी बढ़ रही है। जब नागारिक इन वारदातों की रिपोर्ट पुलिस में करता है तो पहले तो इसकी रिपोर्ट ही नहीं लिखी जाती और यदि रिपोर्ट लिख ली गई तथा गिरफ्तारी हो गई तो थाने पर किसी नेता का फोन आ जाता है और अपराधी मुक्त हो जाता है। वही अपराधी अब उन लोगों को और अधिक परेशान करता है। आम आदमी सोचता है कि अगर अपराधी के सम्मुख पुलिस असहाय है तो बेहतर है अपराधी की शरण में जाना। वह अपराधी को छिपाने लगता है क्योकि वह उससे दुश्मनी नही लेना चाहता।[4]
- अपराधी को लाभ की स्थिति में देखकर आम आदमी भी उसकी ओर आकर्षित होने लगता है और अपराध की ओर प्रवृत्त होने लगता है। इस प्रकार समाज पर भी राजनीति के अपराधीकरण का प्रभाव पड़ रहा है। छात्र नकल करने के लिए गुरु को चाकू एवं छुरे से धमकाता है। विश्वविद्यालयों तथा महाविद्यालयों से निकले छात्रों पर भी राजनेताओं एवं अपराधी तत्वों का प्रभाव पड़ रहा हैं और ये युवा छात्र उनके जाल में फंसकर अपनी ऊर्जाशक्ति को गलत कार्यो में लगा रहे है।
- राजनीति के अपराधीकरण में उन कट्टरवादियों का भी हाथ हैं जो अपने तुच्छ स्वर्थो के लिए अपने धर्म तथा संप्रदाय के अपराधी तत्वों का समर्थन करते है। इस का परिणाम यह होता है कि छोटी बातों पर भी दंगे भड़क उठते है और धर्म के नाम पर नफरत, हिंसा, उपद्रव, अराजकता जैसे तत्वों को प्रश्रय मिलता है। राजनीति में इसलिए आज क्षेत्रीयवाद, संप्रदायवाद, भाषावाद, जातिवाद जैसी कुत्सित विचारधाराएं तेजी से बढ़ रही है।
- राजनीति के अपराधीकरण को प्रोत्साहित करने में एक बड़ा कारण मूल्यों की अवधारणा में व्यापक परिवर्तन है। आज का युग घोर भौतिकवादी एवं विलासिता का युग है। प्रत्येक व्यक्ति ऐश्वर्य एवं विलासितापूर्ण जीवन जीना चाहता है और इसलिए उसने समस्त नैतिक मूल्यों को भुला दिया है। राजनीतिज्ञ एवं अपराधी भी इसी समाज

के अंग होने के कारण समस्त सुख सुविधाओं को प्राप्त करना चाहते है और इसके लिए अपराधी और राजनीतिज्ञ एक दूसरे के पूरक बनकर भूमिका निभाते है।

- इसके अतिरिक्त आज संपूर्ण सामाजिक और राजनैतिक व्यवस्था भ्रष्टाचार की महाव्याधि से ग्रस्त है। लोक जीवन में व्याप्त भ्रष्टाचार न केवल राष्ट्र और समाज को गर्त मे ले जाता है। वरन् सामाजिक विद्रोह का भी कारण बनता है। वर्तमान में भ्रष्टाचार भारतीय प्रजातंत्र की एक महाव्याधि बन चुका है। और समाज की नस-नस में घुसकर रक्त कैंसर का रुप ले चुका है। ऐसी व्यवस्था में राजनीति का अपराधीकरण तेजी से फल-फूल रहा है।

भारतीय राजनीति अपराधीकरण की ओर भी मुड़ गई। आज देश में राजनीति का अपराधीकरण हुआ है और अपराध का राजनीतिकरण। फलस्वरुप, राजनीति में नैतिक आधार क्षीण हो जाने से राजनीति न केवल सिद्धान्तहीन हो गई है, वरन् बहुत खतरनाक भी हो गई है। राजनीति देश का दर्पण होती है। किन्तु आज राजनीति माफिया तत्वों, बड़े अपराधियों, तस्करों तथा सामाजिक हिंसा फैलाने वाले लोगों का आश्रय बन गई है। राजनीतिक दल स्वयं अपराधियों को पनाह देते है। टिकिट वितरण के समय दल का ही विचार होता है कि चुनाव कौन जीत सकता है। अपराध कार्यो में सलंग्न लोग चुनाव जीतने की अधिक क्षमता रखते है-अपने बाहुबल एवं अपराध करने की प्रवृत्ति के कारण। पिछली लोकसभा में 39 सांसद अपराध कार्यो मे लिप्त थे। उत्तरप्रदेश विधानसभा में अपराधिक प्रवृत्ति वाले विधायकों की संख्या 1984, में 35, 1989 में 50, 1991 में 133 तथा 1996 मे 163 थी। दाऊद इब्राहिम, हाल ही में गिरफ्तार रोमेश शर्मा तथा इसी प्रकार के अनेक माफिया तत्व राजनीतिज्ञों के संरक्षण मे पलते है। राजनीति का अपराधीकरण तेजी से बढ़ रहा है। उत्तर प्रदेष में एक सौ से अधिक विधायकों के खिलाफ पुलिस में उनकी अपराधिक गतिविधियों के रिकांड दर्ज है। राज्यों में मंत्री तक अपराधियों के सरपरस्त हैं राजनेताओं अपने अनेक कार्यो मे अपराधी तत्वों का सहयोग लेते है। व अपराधियों के हमजोली बन गये है।[5]

अक्टूबर, 1993 में प्रस्तुत बोहरा सीमित की रिपोर्ट मे समूचे देश में माफिया तत्वों द्वारा समानान्तर सरकार चलाने की बात को स्वीकार किया गया था। माफिया तत्वों की राजनीतिज्ञों, अधिकारियों तथा पुलिस के साथ सांठ गांठ होने के कारण, उनकी गैर कानूनी गतिविधियों के विरुद्ध सरकारी मशीनरी पूरी तरह से पंगु प्रमाणित होने के तथ्य को भी स्वीकार किया गया था। रिपोर्ट के अनुसार, देश के प्रत्येक क्षेत्र, शहरों या गांवों तक में सभी जगह माफिया तत्वों ने अपने जाल को फैला रखा है। रिपोर्ट के अनुसार इन माफिया तत्वों ने स्वयं भी राजनीति अपनानी शुरु करके स्थानीय निकायों, विधानसभाओं तथा संसद की सीटों पर कब्जा करना शुरु कर दिया है। इनके कारोबार मे नशीले पदार्थो की बिक्री सहित सभी प्रकार के अनैतिक व्यवसायों का उल्लेख रिपोर्ट में किया था। आज देश की राजनीति मे अनेक डाकू, अपराधी, अन्डरवर्ड तथा क्राइम जगत् के लोग घुसतें चले जा रहें है। सुशील शर्मा, रोमेश शर्मा, चन्द्रास्वामी तथा ऐसे ही हजारों अपराधियों ने राजनीतिक चोला पहल लिया है ताकि इन्हें पूरी तरह से राजनीतिज्ञों पर निर्भर न रहना पड़े।

नब्बे के दशक में राजनीति के अपराधीकरण मे तेजी से तूफान आया। इस प्रवृत्ति को तेजी से बढ़ाने में स्थानीय अपराधी ही नहीं, बल्कि संगठित माफिया गिरोह लगे हुए है, जो सभी दलों में पैबस्त है और राजनीतिक तथा प्रशासनिक स्तर पर भी उनका बोलबला है। चिन्ता की बता यह है कि इन तत्वो ने न्यायपालिका में भी घुसपैठ कर ली हैं। भ्रष्टाचार, काले धन की बढ़ती तादाद और चुनावों में धनबल की भूमिका के पीछे माफिया का हाथ भी उजागर हो गया है। माफिया गिरोह के सामने राजनीतिक तन्त्र व शासन तंत्र पंगु साबित होता है। मुम्बई बम कांड की जांच में भी माफिया गिरोहो की विभिन्न सरकारी एजेंसियों, राजनीति के गलियारों, उद्योग-व्यापार तन्त्र एवं फिल्मी दुनिया से सांठ गांठ के पुख्ता सबूत उजागर हुए थे। इसके बावजूद जाँच ब्यूरों असहाय बना अपराधियों को खुले घूमते देखता रहा। इस प्रकार राजनीति में अब बाहुबलियों एवं उद्दंड लोगों का जमावड़ा बढ़ रहा।[6]

राजनीति में अपराधिकरण की रोकथाम के लिए सुझाव

- यहां ऐसी कानूनी व्यवस्था होनी चाहिए कि जिस व्यक्ति के विरुद्ध मुकदमा दर्ज है। जब तक बरी नहीं हो जाता तब तक किसी भी चुनाव में प्रत्याषी नहीं बन सकता।
- कुकरमुत्तों की भांति बन रहे राजनीतिक दलों पर रोकथाम लगानी चाहिए। राजनीतिक दल अपने संगठन में सुधार करें तथा स्वयं अपना शुद्धिकरण करें। राजनीतिक दलों की अपनी कोई आचार संहिता होनी चाहिए जिसका पालन प्रत्येक स्थिति में किया जाए।
- राजनीति और प्रशासन में उच्च पदों पर पदासीन सत्ता, राजनीति तथा अनन्त धन लिप्सा या अन्य कारणों से अपराधियों के आश्रयदाता बने हुए है। इन सफेदपोश अपराधियों के विरुद्ध कठोर कार्यवाही की आवश्यकता है इसके साथ ही पुलिस और प्रशासन में राजनीतिक हस्तक्षेप तुरन्त प्रभाव से और पूरी सख्ती के साथ समाप्त किया जाना चाहिए।
- चुनावों के दौरान लगभग सभी राजनीतिक दलों द्वारा चुनावी आचार संहिता का उल्लंघन किया जाता है, इसके लिए चुनाव आयोग को सख्त निर्देश देने चाहिए तथा आचार संहिता का उलंघन करने वाले दलों की मान्यता खत्म कर देनी चाहिए।

ISSN 2277-5587

- आपराधिक मामलों में मुकदमें के निपटारे के लिए समय-सीमा निर्धारित करनी चाहिए। न्याय व्यवस्था का झुकाव अपराधी के बचाव करने की ओर नहीं वरन् उसे दण्डित करने की ओर होना चाहिए। न्यायिक निर्णयों के विरुद्ध केवल एक ही अपील की व्यवस्था होनी चाहिए।

आज नहीं तो कल हमें इन समस्याओं की जड़ में पहुंचना ही होगा। राजनीति का अपराधीकरण हो या अपराधियों का राजनीति में प्रवेश भारतीय संविधान का लचीलापन भी इसके लिए जिम्मेदार नजर आता है। संविधान में संशोधन समय की मांग है ताकि देश की साफ-सुथरी, ईमानदार और मूल्यों पर आधारित राजनीति करने वाले लोगों का संरक्षण प्राप्त हो तथा मक्कारी लफ्फाजी, तथा स्वार्थी प्रवृत्ति के नेताओं से छुटकारा मिल सकें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *दैनिक भास्कर, भोपाल, 10 अगस्त 2001, पृ.-4।*
2. *उपाध्याय, डॉ. सर्वेश्वर -भारतीय लोकतंत्र की खंडित होती गरिमा और उठते सवाल, अमन प्रकाशन, म.प्र., 2007, पृ.-206।*
3. *मोदी, डॉ. महावीर प्रसाद, मोदी, डॉ. (श्रीमती) सरोज -भारतीय राजनीति की प्रवृत्तियां, कालेज बुक डिपो, जयपुर, नयी दिल्ली, मुंबई, 2002, पृ.-78-79।*
4. *प्रतियोगिता दर्पण, अगस्त 2004, पृ.- 162।*
5. *सिंह, निर्मल कुमार -अपराध और भ्रष्टाचार की राजनीति, पृ.-57।*
6. *मोदी, डॉ. महावीर प्रसाद एवं मोदी, डॉ. सरोज भारतीय राजनीति की प्रवृत्तियाँ, पृ-33।*

अर्वाचीन संस्कृत-गीत : एक सिंहावलोकन

डॉ. ऋतु दीक्षित
प्रवक्ता, शा.जॉ.न.पा. कन्या महाविद्यालय, कासगंज (उत्तर प्रदेश)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

गीत परम्परा वैदिक काल से चली आ रही है। गीत उतने ही प्राचीन हैं जितने वैदिक मंत्र। भारतीय वाड्मय में वैदिक युग से आज तक गीतों का निर्विच्छिन्न विकास होता चला आ रहा है। साहित्य का समाजशास्त्र बताता है कि गेयता आदिम काल से ही प्रकृति की देन रही है। हर्षोल्लास के क्षणों में आदिम मनुष्य गाता रहा है और पीड़ा के क्षणों में भी गाकर ही अपनी वेदना प्रकट करता आ रहा है। इसी प्रकार चलते-चलते वह एक कला का रुप बन गया।

अर्वाचीन युग पर गीतों के विषय में दृष्टिपात करने पर पता चलता है कि संस्कृत साहित्य की उन्नीसवीं शताब्दी 'पुनर्जागरण काल' तथा बीसवीं शताब्दी 'समृद्धि काल' नाम से जानी जाती है। इस काल में संस्कृत भाषा एवं वाड्मय का प्रचार-प्रसार समूचे विश्व में हुआ है तथा संस्कृत भाषा में निबद्ध विषयों पर एक बार पुन: दृष्टि से विचार श्रृंखला आरम्भ हुई है। संस्कृत की अवरुद्ध रचना धर्मिता पुन: गतिशील हुई है।

संकेताक्षर - *अर्वाचीन-संस्कृत-गीत,गीत परम्परा, सिंहावलोकन।*

काव्य का सर्वाधिक आह्लादक पक्ष उसमें निहित सत्याधारित आत्मिक अनुभूतियाँ है। ये अनुभूतियाँ व्यावहारिक स्तर से साहित्य जगत् में पहुँची हैं, परन्तु साहित्य में जाकर दु:खानुभूतियाँ भी आनन्ददायिनी हो जाती हैं अन्यथा ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो साहित्य पढ़ने का परिश्रम करके भी शोकानुभूति में रुदन करना पसंद करेगा। साहित्यिक रसानुभूति कराने में काव्य को अधिक समर्थ माना जाता है। जब अनुभूति का अतिरेक होता है और उसका वाचिक उद्रेक दिखाई देने लगता है तब यह 'गीत' की संज्ञा प्राप्त करता है। यह अनुभूति अत्यन्त आनन्ददायिनी व आह्लादिका होती है।

संस्कृत काव्यधारा में गीतिकाव्य वह विधा है, जिसमें मानव-जीवन की किसी एक घटना का चित्रण अथवा अन्तर्भूत मानवीय चेतना के किसी एक पक्ष का उद्घाटन होता है। गीतियों में शब्दों की सुन्दर ध्वनि, कोमल-कल्पना, संगीतात्मकता, छन्द विनियोग, आनुभतिक चिन्तन, भावानुकूल भाषा तथा कलापूर्ण अभिव्यक्ति होती है।

संस्कृत काव्य में गीत काव्य की सुदीर्घ परम्परा रही है। अस्पष्ट रुप में वेद से आरम्भ गीत जयदेव, शाङ्र्गदेव, आचार्य शंकर आदि मध्यकालीन कवियों से होती हुई मुख्य रुप से आचार्य भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री आचार्य परमानन्द शास्त्री, प्रो. श्री निवास रथ, प्रो. जगन्नाथ पाठक, प्रो. रमाकान्त शुक्त, 'अभिराज राजेन्द्र मिश्र, प्रो. हरिदत्त शर्मा, प्रो. राधा वल्लभ त्रिपाठी, प्रो., विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र 'विनय' प्रो. इच्छाराम द्विवेदी 'प्रणव' प्रो. जनार्दन प्रसाद पाण्डेय 'मठि' और डॉ. रामविनय सिंह जैसे समर्थ और सशक्त गीतिकारों में प्रवाहमान है।

वैदिक वाड्मय में गीत का प्राचीन नाम रहा है, 'गाथा'। गाथा शब्द मूलत: वैदिक है। यह उतना ही प्राचीन है जितने प्राचीन वेदमंत्र हैं। 'गै' धातु में 'थन' प्रत्यय करने पर 'गाथ' शब्द बनता है, उसी का स्त्रीलिंग रुप गाथा है। गाथा का अर्थ है- गीति। गाथा और गीति दोनों समानार्थक है, किन्तु ये वैदिक यज्ञों में मंत्रगान (वाच्यमुक्तक) से भिन्न लोकगीति के रुप में गाये जाते थे। वैदिक ऋचा के वाचन में जितना समय लगता है, उससे तिगुना समय लगाकर मंत्र के गान को गाया जाता था जिसे 'साम' कहा जाता था- त्र्यर्चं साम'।

ISSN 2277-5587

यच्च गीतिषु सामाख्येत्युक्तमासीत्पुरातनैः।
तेनैव गीतितत्वस्य महत्वं धुरि संस्थितम्।।[1]

प्राचीन आचार्यो के द्वारा यह माना जाता है कि 'गीतियों की ही साम संज्ञा है, उसी से गीतितत्व का महत्व उच्च स्तरीय सिद्ध होता है। गीत वह है जो अपनी लयों और मूर्च्छनाओं से देवताओं तक को वशीभूत कर लेने में समर्थ है।

गीत शब्द की व्युत्पत्ति 'गै+क्त'[2] से हुई है, जिसका अर्थ है गाया गया अथवा अलापा गया। अन्य शब्दों में 'गीर्यत इति गीतम्' अर्थात् जिसे गाया जाए वही गीत है। इसी संदर्भ में संस्कृत वाङ्मय पर दृष्टिपात किया जाए तो ऋग्वेद से ही नियमित और सुसम्बद्ध गीत साहित्य मिलता है, जिसकी परम्परा शिक्षा ग्रन्थों तक में अक्षुण्ण बनी रही। वेद में दो प्रकार के संगीत के दर्शन होते है। प्रथम, वैदिक संहिताओं का संगीत जिसमें सामवेद का संगीत सर्वप्रमुख है, तथा द्वितीय, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, सूत्र, शिक्षा तथा प्रातिशाख्य ग्रन्थों में उपलब्ध संगीत।

वेद में गीत को 'साम' कहा गया है- 'गीतिषु सामाख्या'[3]। भारत का सम्पूर्ण संगीतशास्त्र 'साम' को संगीत का मूल मानता है। आचार्य भरत मुनि ने 'नाट्यशास्त्र में कहा है-

जग्राह पाठयमृग्वेदात् सामभ्यो गीतमेव च।
यजुर्वेदाभियान् रसनाथवर्णादपि।।[4]

अर्थात् पाठ्य को ऋग्वेद से, गीत को साम से, अभिनयों को यजुर्वेद से और रसों को अथर्ववेद से लिया गया। अतः साम गीत ही है। 'अभिराज' राजेन्द्र मिश्र के अनुसार गीति, गीत, गेय और गान से सब परस्पर समान हैं। मात्र प्रत्यय की भिन्नता से इन शब्दों के आकार में भिन्नता हो जाती है न कि धातु की दृष्टि से, क्योंकि धातु तो सभी में एक ही 'गै' धातु है।

गीतिर्भवति रागस्य सन्ततं परिवाहिणी।
रागहारि च गीतं स्यात्कालिदासमतेन वै।।[5]

अर्थात् कवि ने कालिदास के मतानुसार गीति का अर्थ स्पष्ट किया है- राग का निरन्तर प्रवाह धारण करने वालीं उसी प्रकार जो राग से चित्र को आकृष्ट तथा मर्मस्पर्शी पदों वाला होता है।

डॉ. जनर्दन प्रसाद पाण्डेय 'मणि' गीत की व्याख्या करते हुए अपने काव्यसंग्रह 'निस्यन्दिनी' में लिखते हैं- *''गीति लयतालयों नैसर्गिकसंगतौ समुच्छ्वसितानां भावप्रवणचित्तस्य रससान्द्राणां तासां निश्छलाभिव्यक्ताना शब्दार्थ संरचन्दनमर्या काचिद रागात्मिका क्रीडा। नूनं ललितललितां छान्दसीं काञ्चन सांगीतिकी वीणां वादयन्ती कवेरात्मोत्कलिकावधुटी विवृतावगुण्ठना भवन्ति। यदापातमधुरं वाचोऽमृतं सृजति तदैव गीतिरिति।''*[6]

अर्थात् गीत, लय और ताल की स्वाभाविक संगति में समुच्छ्वसित भावप्रवण चित्र की रस से सराबोर उन निश्छल अभिव्यक्तियों की शब्दार्थस्यन्दमयी कोई रागात्मिका क्रीड़ा को कहते हैं। निश्चित् रुप से कवि की अपनी उत्कलिकावधुटी जब घूँघट खोलकर अतिशय लालित्य भरी किसी सांगीतिकी वीणा को बजाती हुई आपात मधुर वाणी के अमृत की सृष्टि करती है, वही गीति होती है। प्रो. हरिदत्त शर्मा के अनुसार, ''गीति को काव्य का रक्त रुप कहा जाता है जिसमें कोमल भाव, मधुर संगीत एवं मनोरम छन्दों का सुन्दर समन्वय होता है।''

गीतिरेव गहन भावानामुच्छ्वासः।[7]

अर्थान गहन भावों का उच्छ्वास ही गीति है। इस प्रकार स्वर-संयोग, ताल-लय, ललितपदावली आदि के संयोजन द्वारा भावों का उच्छ्वास ही गीति है।

संस्कृत साहित्य में गीतों के साथ-साथ रागकाव्य की भी परम्परा रही है। गीत जब शास्त्रसम्मत रागों (भैरवी, केदार, धनाश्री आदि) के माध्यम से गाये जाते हैं तो उस प्रकार के गीतों का काव्य 'रागकाव्य' कहा जाता है। रागकाव्य विविध संगीतशास्त्रीय रागों से गाये जाने वाले गीतों का संकलित काव्य है। वर्तमान युग में उपलब्ध रागकाव्य का प्रथम निदर्शन है- कवि जयदेव प्रणीत 'गीतगोविन्दम्' तत्पश्चात् ताल एवं लयाश्रित 'गीतगिरीशम्' 'गीतगौरीशम्', 'गीतपीतवसनम्', 'गीतगंगाधरम्', 'गीतरामगोविन्दम्' आदि परम्परा में आते है।

गीतिकाव्य के अनुशीलनकर्त्ताओं ने प्रायः 'गीतिकाव्य' के अंगीभूत रुप में मुक्तक को लिया है। किसी ने उसे 'गीतमुक्तक' कहा है तो किसी ने मुक्तक गीति कहा है। निश्चित ही शास्त्रीय चिन्तन की तात्विकता के आधार पर यह मत मान्य होने योग्य नहीं है परन्तु अनुशीलनकर्ताओं के अनुसार 'गीतिकाव्य' मानव भी आदिम अवस्था से ही उसके भावों का वाहक बना और आज तक अवच्छिन्न रुप से विकसित होता हुआ वर्तमान गीति की अवस्था में पहुँचा है।

विद्वान् अनुशीलनकर्ताओं ने बड़े श्रमपूर्वक वैदिक संस्कृत, लौकिक संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश के काव्यों में गीतिकाव्य के पारम्परिक रुपगत विकास तथा उर्दू काव्य के प्रभावों की चर्चा की है। ''उर्दू के गजल, नज्म, रुबाई, किता, मुसन्नस, खमसा या मुख़तलास तथा बहूर आदि अनेक काव्य-रुपों एवं छन्दों के प्रभाव को रेखांकित किया है।''[8]

गीत के शिल्पगत विकास की केन्द्रीय प्रतिश्रुति एक दूसरी समस्या भी खड़ी करती है कि लेखक आधुनिक गीतिकाव्य के विभिन्न युगों की चर्चा करते हुए उन युगों की राजनीतिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि तथा उसके साहित्यिक प्रभावों के साथ-साथ उसके भावगत आयामों के विवेचन-विश्लेषण का पूरा-पूरा प्रयास भी मनोयोगपूर्वक करता है। वस्तुतः काव्यवस्तु से काव्यरुप का गहरा सम्बन्ध है। आधुनिक युग में काव्य की जितनी विधाएँ प्रचलित है, उन सबका बीज प्रारम्भिक

अवस्था में था। उस समय भाषा के उद्भव के साथ ही काव्य का प्रादुर्भाव भी हुआ था। उस आदिम मानव समाज में कविता का विकास किस रुप में हुआ? इसका अध्ययन करने पर काव्य की प्रमुख विधा-गीतिकाव्य का मूल-रुप का पता लगाया जा सकता है। विद्वानों का अनुमान है कि विश्व की सभी मानव जातियों का आदिम काव्य पहले सामूहिक नृत्य-गीत के रुप ही रहा होगा। आदिम मानव अपने कार्य सामूहिक रुप में करता था और उस समय उसके कलात्मक मनोविनोद के साधनों में सामूहिक नृत्यगीत सर्वप्रमुख था। भारत में आज भी संथाल, मुण्डा, उरांव, कोल-भील आदि जातियों के त्यौहारों और उत्सवों का प्रधान अंग सामूहिक नृत्यगीत ही होता है। इसमें स्त्री-पुरुष दोनों ही साथ-साथ नृत्य-गान करते हैं। इस युग के सामूहिक नृत्यगीत भाषागत अभिव्यंजना को ही इस युग का 'गीतिकाव्य' कहा जा सकता है। सभ्यता के आरम्भिक युग के इस नृत्य से गीत अनिवार्यत: जुड़ा हुआ था। इसके गतिमय पदाघातों और मुद्राओं से छन्द-शास्त्र का विकास हुआ। डेनमार्क के प्रख्यात विद्वान् 'बोमे' के शब्दों में ''इस युग में नृत्य के बिना गीत या गीत के बिना नृत्य संभव[9]'' नहीं था। गीति परम्परा का मूल रुप नृत्य में प्रयुक्त गीत ही था।

भारत में आदिकाल से लेकर आज तक गीतिकाव्य की धारा अजस्र रुप से प्रवाहित होती आ रही है। वस्तुस्थिति यह है कि गीति धारा ही वैदिक काल की मुख्य काव्य-धारा थी किन्तु ज्यों-ज्यों आर्य सभ्यता विकसित होती गई और प्राचीन आर्य धर्म पौराणिक धर्म में बदलता गया त्यों-त्यों गीतिकाव्य का पराभव होता चला गया। मध्यकाल में 10 वीं शताब्दी के बाद भक्ति आंदोलन के साथ गीतिकाव्य का पुनरुत्थान हुआ और आगे चलकर समस्त आधुनिक भारतीय भाषाओं में वह काव्य की एक प्रमुख धारा बन गया। कवि जयदेव से पूर्व गीतिकाव्य के ग्रन्थ बहुत कम मात्रा में मिलते हैं। न मिलने का एक प्रमुख कारण विदेशी आक्रमण भी है।

इस प्रकार यदि वैदिक वाङ्मय पर पुन: अवलोकन किया जाये तो संस्कृत गान की परम्परा प्राचीन काल से रही है। प्राचीनतम वेद ऋग्वेद के मन्त्रों का पाठ करते समय उदात्तादि स्वरों का

ध्यान रखा जाता था। वैदिक साहित्य के पश्चात् पुराणों में वर्णित छन्दों में गीत उपलब्ध होते हैं- यथा श्रीमद् भागवतपुराण में वेणुगीत[10] युगलगीत[11] गोपिका विरहगीत[12] भ्रमरगीत[13] आदि। 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' नाटक में रानी हंसपदिका का गीत,[14] मृच्छकटिकम् प्रकरण का 'रेभिलगीत'[15] आदि को गीत की संज्ञा प्रदान की गयी है, किन्तु समकालिक संस्कृत गीत में वर्णिक छन्द में जो गीत लिखे गये हैं उनको छोड़कर शेष गीतियों का स्वरुप उनसे भिन्न है। इन वेदादिको में मात्रिक एवं वर्णिक छन्दों में लिखित गीत में 'रागपरिवाहित्व' के कारण गीतिमयता है। गीत के परिप्रेक्ष्य में यदि अर्वाचीन संस्कृत वाङ्मय पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होता है कि सर्वप्रथम संस्कृत गीत हमें अम्बिकादत्त व्यास जी के 'शिवराजविजयम्' नामक उपन्यास में मिलता है-

सखि हे नन्द तनय आगच्छति। सखि।।
मन्दं मन्दं मुरली-रम्यै: समधिक सुखं प्रयच्छति।।
भैख-रुप पारिजनानां सतां सुख-करो देव:।
कलित-ललित-मालती-मालिक-सुखर-वांछित-सेव:।।
सारगै: सारंग-सुन्दरी दुग्भियनिपीयमान:
चपला-चपल चमत्कृति-वसनो-विहित-मनोहर गान:।।
श्री वत्सेन-लांछितो ह्रदये श्रील: श्रीद: श्रीश:।
सर्वश्रीभियुत: श्रीपति: श्री मोहनो गवीश:।।[16]

उपलब्ध भारतीय साहित्य को दृष्टि में रखकर यदि विभाजन की रेखा खींचनी हो तो विषय की दृष्टि से निम्नलिखित गीतरुपों का उल्लेख किया जा सकता है- स्तुति गीत या स्त्रोत्र, मंत्र गीत गोचारण गीत, प्रेम गीत, व्यंग्य गीत, वीर गीत, मंगल गीत, प्रशस्न्ति गीत (विरुदावली) उपालम्भ गीत, कीर्तन गीत (भजन), युद्ध गीत, प्रयाण गीत राष्ट्र गीत, ऋतु गीत तथा शोक गीत इत्यादि।

वैदिक साहित्य में गीत काव्य के ग्याहर शैली भेद मिलते हैं जो निम्नलिखित है- नाट्य गीत, सांगीतिक गीत, पद गीत, प्रगीत, आवृत्ति गीत, मुक्तक गीत, गाथा गीत, समवेत गीत, प्रश्नोततर गीत, गीतिमाला, मध्य गीत। इन सभी शैलियों में आदिम गीतिकाल की विभिन्न शैलियों का विकसित रुप वर्तमान है।[17]

संस्कृत गीत साहित्य की परम्परा यद्यपि महाकवि कालिदास के मेघदूत से प्रारम्भ होती है किन्तु इसके पल्लवन और पोषण की सुदीर्घकालीन परम्परा है।[18] वैदिक साहितय में जिन गाथाओं का उल्लेख स्थान-स्थान पर प्राप्त होता है वे ही स्वतन्त्र गीत साहित्य के स्रोत हैं।[19] वेद चतुष्ट्य से नि:सृत यह गीत मंदाकिनी पुराणों, महाकाव्यों एवं नाटकों से प्लावित होती हुई महाकवि कालिदास, कवि हाल, अमरुक, गोवर्द्धनाचार्य जयदेव, जैसे भगीरथों द्वारा प्रशस्त मार्गो से प्रवाहित होकर एक विशाल सागर का रुप धारण करती है। मेघदूत, आर्यासप्तशती, गाथा सप्तशती, चौरपंचाशिका, गीतगोविन्द आदि पूर्व कृत सभी रचनाएँ अर्वाचीन युग की आलोचना की परिधि से सर्वथा पृथक् हैं किन्तु अर्वाचीन संस्कृत गीतों का युगगत विभाजन की परम्परा पर दृष्टिगत न करें तो यह विभाजन अपूर्ण ही रहेगा।

अत: अर्वाचीन संस्कृत गीतों के विभाजन की परम्परा को देखें तो संस्कृत साहित्य की उन्नीसवीं शताब्दी अभिराज राजेन्द्र मिश्र के अनुसार, 'पुनर्जागरण काल' नाम से द्रष्टव्य है।[20] इस काल में संस्कृत भाषा एवं वाङ्मय का प्रचार-प्रसार समूचे विश्व में हुआ। संस्कृत की अवरुद्ध रचना धर्मिता पुन: गीतशील हुई है। नवीन स्थापनाओं का शुभारम्भ पुनर्जागरण काल में आरम्भ हुआ है। अर्वाचीन संस्कृत गीतों के आदि स्रष्टा आचार्य भट्ट मथुरानाथशास्त्री (1889) ने प्राचीन परम्पराओं से हटकर संस्कृत साहित्य में गजल विधा को चरमोत्कर्ष प्रदान किया। धीरे-धीरे अन्य कवियों ने भी इस विधा का

ISSN 2277-5587

और अधिक विकास किया। स्वांत्र्य पूर्व के कविया के स्वयुगीत परम्परापोषक पण्डितों, कवियों, आचार्यों तथा पाठकों का तिरस्कार भी सहना पड़ा। परन्तु कवियों ने भाषा का आदर करते हुए जिन नवीन साहित्यिक मूल्यों एवं प्रतिमानों की स्थापना की, उसी से अर्वाचीन संस्कृत वाङ्मय समृद्ध, लोकप्रिय एवं जीवन्त बना है। उन्नीसवीं शताब्दी में जिस प्रकार एक ओर संस्कृत साहित्य समृद्धि की ओर अग्रसर था तो दूसरी ओर भारत राष्ट्र की स्वतन्त्र होता देखने के लिए सभी भारतवासी प्रतीक्षारत थे। इस आग्नेय वातावरण ने अर्वाचीन कवियों को भी आकृष्ट किया। फलस्वरुप शान्ति, सौमनस्य एवं अध्यात्मज्ञान की माध्यमभूत संस्कृत गीत का भी मार्ग परिवर्तित हुआ। यह परम्परा उत्तर भारत में महामहिम भट्ट मथुरानाथ शास्त्री, श्रीधर पाठक, रामनाथ प्रणयी, महामहिम रामवतार शर्मा तथा पं. प्रभात शास्त्री, आचार्य जानकी वल्लभ शास्त्री के गीतों एवं कविताओं से विकसित हुई।

भारत राष्ट्र के स्वतन्त्र होने के पश्चात् अर्वाचीन संस्कृत साहित्य न केवल समृद्ध हुआ, अपितु साहित्य गरिमा की पराकाष्ठा का संस्पर्श भी किया। जिसे अभिराज राजेन्द्र मिश्र के अनुसार 'समृद्धिकाल' का नाम दिया गया।[21] पूर्वस्थापित मान्यताओं का परिपूर्ण पल्लवन समृद्धिकाल में द्रष्टव्य है। सर्वाधिक गीतों की सर्जना समृद्धिकाल में हुई हैं और निरन्तर गीतशील है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *अभिराजयशोभूषणम्, प्रकीर्णतत्वोंन्मेषः, पृ. सं. 248*
2. *वामन शिवराम आप्टे संस्कृत हिन्दी कोश पृ. सं. 345*
3. *मीमांसा सूत्र 2/1/36*
4. *नाट्यशास्त्र- 1/17*
5. *अभिराजयशोभूषणम्, प्रकीर्णतत्वोंन्मेषः, पद्य सं. 10*
6. *निस्यन्दिनी, नैवेद्यम् से उद्धृत*
7. *उत्कलिका, पृ. सं. 5*
8. *आधुनिक गीतिकाव्य, पृ. सं. 9, भूमिका भाग से उद्धृत*
9. *वही, पृ. सं. 28, भूमिका भाग से उद्धृम*
10. *श्रीमद्भागवतपुराण,स्कन्द-10, अध्याय 21, पद्य 7*
11. *वही- पद्य संख्या 68*
12. *श्रीमद्भागवतपुराण, स्कन्द-10 अध्याय 47, पद्य 12*
13. *वही- पद्य संख्या 13*
14. *अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1/5*
15. *मृच्छकटिकम्- 3/4*
16. *शिवराजविजयम्- 2/90-91*
17. *आधुनिक गीतिकाव्य-पृ. सं. 35*
18. *संस्कृत साहित्य का इतिहास- पृ. सं. 325*
19. *गीतिकाव्य का परम्परा- पृ. सं. 15*
20. *संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र- पृ. सं. 380*
21. *वहीं पृ. 381*

राष्ट्रीय धरोहर (पुरा-सम्पदा) का संरक्षण

डॉ. चित्रा तंवर
व्याख्याता, जगत्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय, जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

पुरातन का मोहपाश किसे नहीं बांधता? इस पुरातन को संजोकर रखना भावी पीढ़ी का नैतिक कर्तव्य ही नहीं बल्कि राष्ट्रधर्म भी है। पुरातन की ही झलक हमारी संस्कृति में सदैव चलायमान रहती है जिसके संरक्षण का भागीरथ प्रयास अभिलेखागारों तथा पुरातत्व संरक्षण विभाग द्वारा किया गया है। यह विभाग इस धरोहर और जनता के बीच की कड़ी का काम करते है। इन पुरा संरक्षण विभागों का कार्य आसान नहीं है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सभी रियासतों-रजवाड़ों के दस्तावेजों को संभालकर रखना उनके प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन करना कोई आसान कार्य नहीं था। इनकी संरक्षण प्रक्रिया अत्यन्त जटिल है, जिनको काई स्तरों से होकर गुजरना पड़ता है। तत्पश्चात् प्रशासन में शोध की नई गवेषणाओं में इनकी महत्ती आवश्यकता के लिए इनका उपयोग किया जाता है। यही वह अमूल्य विरासत है जो भूत को वर्तमान में जोड़कर नवीन भविष्य का सृजन करती है।

संकेताक्षर :*अभिलेखागार प्रशासन, रजतमीन, हस्तपर्तावरण, निरम्लीकरण क्रिया, डोकेटिंग, प्रधूमन विधि, भा-चित्रण, सर्वमुद्रण यंत्र, डवलोपर, स्थिरिकरण घोल, रिप्रोग्राफिक्स।*

इतिहास, संस्कृति, कला और ऐतिहासिक धरोहर की आत्मा को खोजने तथा उसे संजोए रखने में और उसमें निहित मूल स्वर को उजागर करने में भारतीय पुरातत्व विभाग का योगदान अविरस्मरणीय है। स्वाधीनता के पश्चात् भारत में ऐतिहासिक धरोहर तथा संग्रहालयों में सुरक्षित कला सम्पदा की नई दृष्टि के साथ व्याख्या करने का जब देशव्यापी अभियान चला तो जहां एक ओर इन अभिलेखागारों ने ऐतिहासिक स्मारकों को जनता से जोड़ने का भागीरथ प्रयत्न किया। वहीं दूसरी ओर पुरातत्ववेत्ताओं ने पुरातत्व की गंभीर समस्याओं का समाधान प्रस्तुत कर प्राचीन संकीर्ण मान्यताओं को दूर कर नयी नींव रखने में अपना योगदान दिया। भारत में अनेक पुरास्थलों के उत्खनन से प्राप्त ''नगरीय क्रांति'' के साक्ष्य तो विश्व परिपेक्ष्य में सभ्यताओं की उत्पत्ति, विकास, विस्तार सम्बन्धी अनेक संश्लिष्ट प्रश्नों को वैज्ञानिक सोच के आधार पर समझ सकने में उपादेय होने के साथ-साथ प्राचीन भारतीय इतिहास के अतीत की झांकी भी प्रस्तुत करते हैं।

भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग, भारत सरकार के संस्कृति विभाग के अन्तर्गत एक सरकारी एजेंसी है, जो कि पुरात्तव अध्ययन और सांस्कृतिक स्मारकों के अनुरक्षण के लिए उत्तरदायी होती है। इसी प्रकार भारत के राष्ट्रीय अभिलेखागार में भारत सरकार के अप्रचलित अभिलेख का भंडारण किया जाता है। जिसका उपयोग अधिकतर प्रशासकों और शोधार्थियों के द्वारा किया जाता है। यह भारत सरकार के पर्यटन और संस्कृति मंत्रालय से संबद्ध एक कार्यालय है।

अभिलेखागार-उत्पत्ति एवं विकास का इतिहास

यूरोप महाद्वीप में सर्वप्रथम प्राचीन ग्रीस में 4-5 ई.पू. में एथेंसवासी महत्वपूर्ण अभिलेख ''मदर ऑफ गॉडिस'' के मंदिर में सुरक्षित करते थे। यह स्थान मेटरुन के नाम से जाना जाता था। यहां संधियों की प्रतियां, कानूनी प्रलेख, पोपूलर एसेम्बली कार्यवाही, सुकरात वक्तव्य इत्यादि रखे गये। यह सामग्री तीसरी ए.डी. तक ''पेपीरस रोल'' के रूप में संरक्षित थी। 1302 में बोलोग्ना में अभिलेखों के निदान कार्य के लिए प्रथम पुरालेखपाल की नियुक्ति की जानकारी मिलती है। इंग्लैंड में सर्वप्रथम एडवर्ड प्रथम ने अभिलेखागार की स्थापना की (टावर ऑफ लंदन के एक भाग में) जो इस दिशा में मील का पत्थर साबित हुई। 1578 में एलिजाबेथ ने 'स्टेट पेपर ऑफिस' की स्थापना की हुई तत्पश्चात् 1789 में फ्रांस की नेशनल एसेम्बली ने अपने यहां अभिलेख संस्थान की स्थापना की (Archiral Institute) व 1790 में इसका नाम "Archieves National of Paris' रखा तत्पश्चात् 14 अगस्त 1838 इंग्लैंड में ''केन्द्रीय अभिलेख संस्थान'' (Central Archival Institute)

ISSN 2277-5587

स्थापित किया गया जिसे बाद में "Public Record Office' (PRO) के नाम से जाना गया। अमेरिका में 19 जून 1934 "National Archieves' की स्थापना हुई।

भारत में अभिलेख प्रशासन का विकास

- ऐसा माना जाता है ईस्ट इंडिया कम्पनी के समय से। लेकिन ऐतिहासिक प्रमाणों के आधार पर 600 बी.सी. ''बौद्ध जातकों'' के रुप में अभिलेखों को सुरक्षित रखने के प्रमाण। 300 ई.पू. कौटिल्य के अर्थशास्त्र में अभिलेख प्रशासन की विकसित अवस्था की जानकारी प्राप्त होती है।
- अर्थशास्त्र में ''अक्षपटल'' का उल्लेख, जो उस समय का अभिलेखागार था।
- ईसवी सन् 320 में बौद्ध साहित्य में ''निलापिता'' = अभिलेखागार के सन्दर्भ में प्रयुक्त हुआ हैं।
- सन् 328-329 में समुद्रगुप्त की ''गया प्लेट'' में लेख खुदा हुआ जिसमें अक्षपट्टालाधिकृता का उल्लेख = अभिलेखागार का प्रभारी के रुप में हुआ हैं।
- सन् 767 शालिदित्य सप्तम के शिलालेख में ''महाक्षपट्टालिका'' का उल्लेख = महानिदेशक अभिलेखागार (Director General of Archieve) के रुप में हुआ हैं।
- 1000-1300 ई.में चोल शासकों ने ''ताड़पत्र अभिलेखों'' (पाम-लीफ रिकॉर्ड) की देखभाल के लिए ''ओलयन्यागम'' (Keeper of the Record) की नियुक्ति की।
- सल्तनत काल में ''दीवान-ए-इन्शा'' का कार्य शाही खातों की देखरेख करना था।
- मुगल काल में अकबरनामा से ज्ञात होता है 1574 में अकबर ने अभिलेखागार की स्थापना की जो फहेतपुरसीकरी में ''महल-ए-ख्वाबगाह'' के पास स्थित है।
- ''आइने-अकबरी'' में लिखा है ''अभिलेखों को संभालकर रखना किसी सरकार का सर्वश्रेष्ठ कार्य है। अनेक विद्वानों ने मुगल सरकार को ''कागजी सरकार'' की संज्ञा दी है।
- दीवान का कार्यालय जिसे ''दफ्तर-ए-दीवान-आला'' कहा जाता था। उस समय का केन्द्रीय अभिलेख कक्ष होता था।
- दीवान के अभिलेख दो भागों में बंटे थे।

  i) शिला - जमा खर्च का लेखाजोखा।

  ii) अवारिजा (सार)

  ये दोनों अभिलेख 23 समूहों एवं 47 उपसमूहों में विभक्त थे।
- यह क्रम अंतिम बादशाह बहादुरशाह तक जारी। उसके समय में निम्न दफ्तर स्थापित हुए

  a) मुहाफिज-ए-दफ्तर-ए-मारुजा - Keeper of the Letters Written

  b) मुहाफिज-ए-दफ्तर-ए-अहालत सुल्तानी Keeper of the Office of Royal Judicial Records, Delhi
- दक्षिण में शिवाजी ने रिकॉर्ड रखने हेतु निम्न कार्यालय स्थापित किए।
  - दफ्तरखाना (रिकॉर्ड रुम)
  - दफ्तरदार (कीपर ऑफ रिकॉर्ड)
  - पेशवाओं ने रिकॉर्ड सुरक्षित रखने हेतु - ''हजुर दफ्तर स्थापित किए''।
- अंग्रेजों के समय में 1763 कम्पनी के कामों को दो भागों में बांटा ''पब्लिक'' एवं ''सीक्रेट''। जिसमें अलग-अलग अभिलेख रखने की व्यवस्था थी।
- 1775 में रेवेन्यू डिपार्टमेंट स्थापना जिसमें पब्लिक, सीक्रेट तथा रेवेन्यू - इन तीन विभागों के रुप में अभिलेखागार अस्तित्व में आया।

जहां तक भारत में राष्ट्रीय अभिलेखागार के विकास के इतिहास का सवाल है इसका विकास 1860 से दिखाई पड़ता है। जब सिविल ऑडिटर सैंडमैन ने अपनी रिपॉर्ट में कार्यालयों में जगह बनाने की आवश्यकता पर बल दिया। इसके लिए उन्होंने दैनिक प्रकृति के कागजातों को नष्ट करने तथा सभी महत्वपूर्ण रिकॉर्ड को 'वृहत केन्द्रीय अभिलेखागार' में स्थानान्तरित करने की बात कहीं। इससे पहले बॉम्बे रिकॉर्ड ऑफिस में अपने कार्यों के लिए उन्होंने एक अभिलेखागारविद के रुप में ख्याति अर्जित की थी। अत: 11 मार्च 1891 में इम्पीरियल रिकॉर्ड्स (आईआरडी) अस्तित्व में आया जो इम्पीरियल सचिवालय भवन, कलकत्ता (कोलकाता) में स्थित था। प्रोफेसर जी.डब्ल्यू फॉरेस्ट को इसका प्रभारी अधिकारी बनाया गया। उनका मुख्य कार्य सभी विभागों के रिकॉर्ड की जांच, स्थानान्तरण, व्यवस्था और सूचीबद्ध करना तथा विभिन्न विभागीय पुस्तकालयों के स्थान पर एक केन्द्रीय पुस्तकालय की व्यवस्था करना था। जी.डब्ल्यू. के पश्चात् इम्पीरियल रिकॉर्ड्स डिपार्टमेंट (आईआरडी) का कार्य एस.सी.हिल (1900), सी.आर. विल्सन (1902), एन.एल. हालवर्ड (1904), ई. डेनीसन रोज़ (1905), ए.एफ. स्कॉलफील्ड (1915), आर.ए. ब्लाकेर (1919), जे.एम. मित्रा (1920) और राय बहादुर ए.एफ.एम. अब्दुल अली (1922-1938) के कार्यकाल में अच्छी तरह से आगे बढ़ा ये लोग अपने आप में विद्वान के साथ-साथ रिकॉर्ड-कीपर भी थे आगे चलकर यह कलकत्ता स्थित Imperial Secretarial Building में स्थापित

किया गया। 1911 में भारत की राजधानी कलकत्ता से दिल्ली स्थानान्तरित की। Imperial Record Department को भी स्थानान्तरित करने का निर्णय। 1926 में दिल्ली में एक Record Office Building बनायी जिसमें 1926 और 1937 में दो बार रिकॉर्ड स्थानान्तरित किया। स्वतंत्रता पश्चात् का Imperial Record Department नाम ''राष्ट्रीय अभिलेखागार'' रखा गया। उसमें British Residency, Political Agencies, ईस्ट इंडिया कम्पनी के महत्वपूर्ण रिकॉर्ड, 1857 के विद्रोह एवं बाद के अभिलेख सुरक्षित रखे गये। सन् 1939 में पहली बार जब सदाशयी शोध कार्य के लिए अभिलेखों को उपलब्ध कराया गया और 1947 तक 1902 से पहले के सभी रिकॉर्ड परामर्श के लिए उपलब्ध हो गये थे। सन् 1940 में एक संरक्षण अनुसंधान प्रयोगशाला (सीआरएल) की स्थापना की गई जिसका उद्देश्य संरक्षण से संबंधित समस्याओं से जुड़े शोध कार्य करना था जो कि डॉ. सेन का दूरदर्शी योगदान था। वर्ष 1947 में भारतीय अभिलेखागार नामक विभागीय जर्नल अस्तित्व में आया जिसमें आधुनिक भारतीय इतिहास, दस्तावेजों के संरक्षण, अभिलेख प्रबंधन, रेप्रोग्राफिक्स, अभिलेखीय जागरुकता तथा कार्यात्मक अभिलेखागारों से जुड़े अन्य सभी पहलुओं की स्रोत सामग्री होती है। 1954 में ''राष्ट्रीय अभिलेखागार'' ने अपना एक क्षेत्रीय कार्यालय भोपाल में स्थापित किया।

भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार स्वतंत्रता के पश्चात् विशेष रुप से प्रगति के पथ पर अग्रसर हुआ ताकि सम्पूर्ण देश के अभिलेखीय क्षेत्र में अधिक स्मरणीय और प्रेरक भूमिका निभाई जा सके। इसने तब से राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सार्वजनिक अभिलेखों के अभिग्रहण निजी पत्रों/संग्रहों तथा पुस्तकालय सामग्रियों के प्रापण, अभिलेख प्रबंधन, शोध एवं संदर्भ, प्रकाशन, प्रशिक्षण, संरक्षण, रेप्रोग्राफी, कार्यक्रम, समन्वयन के क्षेत्रों में अपने कार्यकलापों में कई गुना विस्तार किया। इस विभाग ने जून 1990 में अपने दर्जे में आगे और बल मिलने को देखा जब निदेशक, अभिलेखागार के कार्यालय को पुन: पदनामित करते हुए महानिदेशक, अभिलेखागार कर दिया गया। वर्तमान में भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार, संस्कृति मंत्रालय का एक सम्बद्ध कार्यालय है और भोपाल में इसका क्षेत्रीय कार्यालय है तथा जयपुर, पाण्डीचेरी और भुवनेश्वर में इसके अभिलेख केन्द्र है अत: वर्तमान समय में इनकी प्रासंगिकता स्वयं सिद्ध है। अभिलेखागार में प्राच्य रिकॉर्डो के अन्तर्गत करीब 1.5 लाख दस्तावेज हैं जिनमें उर्दू, फारसी, अरबी आदि भाषाओं में पांडुलिपियां, परवाना, हुकुम, खैरात, फरमान आदि शामिल है। दस्तावेजों के दुर्लभ और मूल्यवान संग्रह में फोर्ट विलियम कॉलेज संग्रह, इनायत जंग संग्रह, मथुरा दस्तावेज, गुजरात दस्तावेज, हल्दिया पत्र आदि शामिल है। ये सारे पत्र सार्वजनिक रिकॉर्ड नियमावली 1997 के तहत आम लोगों के लिए उपलब्ध हैं।

प्राच्य रिकॉर्ड संभाग में रिकॉर्डो का विशाल संग्रह है जिनमें फारसी, अरबी, उर्दू, अंग्रेजी, हिन्दी, राजस्थानी, मराठी, तुर्की, बंगला और कई अन्य भाषाओं एवं लिपियों में दुर्लभ पांडुलिपियां, एकल यूनिट दस्तावेज और दुर्लभ पुस्तकें शामिल है। इनायत जंग संग्रह में 1,37,000 दस्तावेज हैं और यह आधिकारिक मुगल दस्तावेज है। इनमें रिपोर्ट, दैनिक लेखाजोखा और राजस्व आंकड़े शामिल है। ये राजस्व आंकड़े नियमित रुप से दक्कन के छह प्रांतों के दीवानों द्वारा दक्कन के प्रमुख दीवान को भेजे जाते थे। संग्रह में निम्नलिखित शासकों के काल से संबंधित दस्तावेज हैं - औरंगजेब (अवधि 1658-1707), आजम शाह (1707), शाह आलम बहादुर शाह प्रथम (1707-12), जहांदार शाह (1712-13), फर्रुखसियर (1713-19), रफीउद दाराजात (1917), रफीउद दौलाह (1919), मुहम्मद शाह (1719-48), अहमद शा (1750-52) और शाह आलम द्वितीय (1768-74)। हल्दिया संग्रह में फारसी और उर्दू में 1060 दस्तावेज है। ये दस्तावेज राजस्थान में हल्दिया वंश की राजनीतिक भूमिका पर प्रकाश डालते है। अभिलेखागार में प्राच्य भाषाओं खासकर फारसी और उर्दू में 14000 अन्य दस्तावेज है जो इसकी शोभा बढ़ा रहे हैं।

भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार के पुस्तकालय में 1,70,000 प्रकाशन हैं जिनमें दुर्लभ पुस्तकें, रिपोर्ट, संसदीय पत्र और बहस, विनिबंध, गजट, गजेटियर, यात्रा वृतांत, स्वदेशी अखबार, जर्नल आदि शामिल है। यह ज्ञान का सबसे मूल्यवान स्रोत है। ये प्रकाशन आधुनिक इतिहास एवं राजनीति, संस्कृति, जनसांख्यिकी, अभिलेख, अर्थशास्त्र, सामाजिक विज्ञान, लिंगीय अध्ययन, जनजातीय अध्ययन आदि विषयों के है जो बहुत ही महत्वपूर्ण है।

राजस्थान के विशेष संदर्भ में : स्वतंत्रता पूर्व राजस्थान 21 राज्यों (19 राज्य एवं 2 चीफ शिप) में विभक्त था। प्रत्येक राज्य के अपने सचिवालय व सुव्यवस्थित अभिलेखागार थे। स्वतंत्रता के पश्चात् इनका नाम ''यूनिट रिकॉर्ड ऑफिस'' कर दिया गया जो ''डिपोजिटेड रिकॉर्ड डिपार्टमेंट'' की एक शाखा के रुप में काम करते थे।

1955-56 में राजस्थान राज्य अभिलेखागार की स्थापना की गई। मुख्यालय जयपुर से बदलकर बीकानेर किया तथा 20 स्थानों पर इसकी शाखाएं बनायी गई। यहां ऐतिहासिक महत्व के समस्त अभिलेख उपलब्ध है। जो शोधार्थियों की जिज्ञासाओं को शांत कर उनके शोध को नयी दिशा देते है। जुलाई 1962 के पश्चात् इन समस्त विकेन्द्रित अभिलेखों को एक स्थान पर केन्द्रित करने का निर्णय। मार्च 1963 तक समस्त जिला अभिलेखागारों का 1900 ई. से पूर्व का रिकॉर्ड बीकानेर स्थानान्तरित किया गया। सन् 1900 के बाद के रिकॉर्ड हेतु पांच मध्यवर्ती शाखाएं स्थापित की गई - (1) अलवर, (2) जयपुर, (3) जोधपुर, (4) कोटा, (5) उदयपुर। बाद में 2 और शाखाएं बढ़ाई - (6) भरतपुर, (7) अजमेर। वर्तमान में मुख्यालय बीकानेर के अतिरिक्त 7 मध्यवर्ती शाखाएं है जो पुरा सम्पदा के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। अभिलेखों के परिरक्षण एवं व्यवस्था हेतु बीकानेर मुख्यालय में कई खंड निर्मित है जिसमें कई ठिकानेदारों का रिकॉर्ड भी सम्मिलित है।

लेखों की अवाप्ति एवं व्यवस्था खंड

- विभिन्न राजकीय विभागों द्वारा निर्मित दीर्घकालीन महत्व के अभिलेखों को अधिगत करता है।

- अवाप्त अभिलेखों को व्यवस्थित कर सूचीकरण करता है।
- सृजन निकाय (Creating Agency) अपने अभिलेखों के निदान (नष्ट) करने से पहले अभिलेखागार से अनापत्ति पत्र लेता है।
- निदेशक या प्रधिकृत प्रतिनिधि अभिलेखागार में रखने योग्य सामग्री का उल्लेख करके शेष सामग्री का निदान करने हेतु प्रमाण पत्र लेता है।
- रखने योग्य सामग्री अवाप्त (Acquisition) की जाती है।
- अभिलेख प्राप्त करते समय सूची (3 प्रति में) एवं सूची उसी क्रम में बनती है जिस क्रम में रिकॉर्ड व्यवस्थित है।
- सूची में अभिलेख का शीर्षक, पृष्ठ संख्या, परिक्षण अवधि इत्यादि होती है।
- अभी सामग्री प्रवेश कक्ष में रहती है, संचयशाला में नहीं।
- सूची की एक प्रति हस्ताक्षर कर भेजने वाले विभाग को दे दी जाती है।

निर्धूलीकरण कर शुद्धिकरण करना

- (डस्टिंग चैम्बर) अथवा वैक्यूम क्लीनर उपलब्ध न हो तो फटकारे लगाकर पहले बस्ते, बोरिया एवं बंडल को झड़काया जाता है तत्पश्चात् सामग्री को झड़काकर व्यवस्थित किया जाता है।

कीटाणुनाशन प्रक्रिया में

- इस हेतु प्रधूमन कक्ष अथवा प्रधूमन पिटक Vaccum Chamber या की आवश्यकता होती है।
- कीटाणुनाशन के बिना संचयशाला में नहीं रखना चाहिए, इनका शुद्धिकरण अत्यन्त अनिवार्य है।

छटाई प्रक्रिया एक अभिन्न अंग के रुप में

- अभिलेख सामग्री विभिन्न भूतपूर्व राज्यों से प्राप्त की छंटाई एवं उनके लिए निर्धारित स्थान पर एकत्र (संचयशाला) होती है।
- एक-एक राज्य के अभिलेखों की उनके विभागों/शीर्षकों अथवा अन्य निर्मित श्रृंखलाओं के क्रम में छंटाई की जाती है।
- प्रत्येक विभाजन को कालक्रम में छांट लिया जाता है - (सृजन क्रमांक/पत्रावली क्रमांक)।
- छंटाई करते समय राज्य की चली आ रही सृजन प्रणाली अथवा पूर्व श्रृंखलाओं का अध्ययन किया जाता है ताकि इससे परम्परागत तकनीकी का भी संरक्षण हो सकेगा।

सुविधा की दृष्टि से

- बस्ता या पैड बनाकर रिकॉर्ड को व्यवस्थित किया जाता है।
- व्यवस्थित क्रम में छंटाई के पश्चात् बस्ते या पैड में बांधा जाता, पैड की ऊंचाई 20 से 30 सेमी. तक हो जिससे उसे निकालने-रखने में सुविधा रहे।
- बस्तों में गांठ नहीं लगाई जाती है, पैडो की तरह फीतों का उपयोग किया जाता है
- गोल डोरी अथवा सूतली से सामग्री कटने की आशंका अत: अभिलेखों को बांधने के लिए चपटे फीते ही काम लिए जाते हैं।
- बस्ता क्षितिजाकार (तले के बल पर) रखा जाता है, उर्ध्वाकार नहीं।

सूचना पत्र (लेबल) : पत्रक दो प्रतियों में तैयार किए जाए -

- बस्ते के ऊपर 'भीतर की सामग्री' की सूचना वाला एक पत्रक ऊपर चिपका दिया जाता है व एक बस्ते के भीतर रखा जाता है।
- पत्रक में अभिलेखागार, शाखा का नाम/मुख्य श्रृंखला, शीर्षक, विभाग/उपश्रृंखला/कालक्रम (अवधि)/ अभिलेख क्रम पत्रावली क्रम सं...... से....., अभिलेख कक्ष, कतार, रैक, फलक इत्यादि होता है।

स्वस्थापन या श्रृंखला : सम्मिलन कर प्राचीन के साथ नवीन इतिहास का संगम करना किया जाता है।

- पत्रक तैयार होने के पश्चात् उस स्थान का पता लगाया जाए जहां प्रस्तुत श्रृंखला के पिछले अभिलेख रखे गये है।
- यदि श्रृंखला नयी हो तो उसके लिए स्थान निर्धारित किया जाता है।
- स्वस्थापन करने या यथास्थान रखने से पहले सूचना पत्रक का अंतिम चरण अर्थात् कक्ष, कतार, रैक, फलक की प्रविष्ठि भरी जाती है।
- रैक चार्ट में प्रविष्ठि की जाती है।
- फलक पर बस्ता क्रम का संकेत चिपका दिया जाता है।
- बस्ते या पैड बायें से दायें रखे जाता है।
- पर्ण-पंजूषा (कार्ड केबिनेट) बना लिया जाता है।

सूचीकरण कर व्यवस्था बनाना

वांछित अभिलेख ढूंढने में आसानी हो इस हेतु निम्न संदर्भ माध्यम

I **प्रवेश सूची :** संस्था से प्राप्त होने वाली सामग्री प्रवेश पंजिका में प्रविष्ट की जानी चाहिए एवं उस पर प्रवेशांक अंकित किये जाते हैं।

II **पत्रावली सूची :** सामग्री को अपने स्थान पर रखने के पश्चात् उस श्रृंखला की पंजिका (Register) में नव प्राप्त अभिलेखों को भी अंकित किया जाता है।

III **विवरणात्मक सूची :** जिस अभिलेख की विवरणात्मक सूची तैयार की जाए उसमें प्रमुख घटनाओं, स्थानों, व्यक्तियों इत्यादि का संकलन किया जाता है।

आपूर्ति सेवा के सात स्तर

(अ) संदर्भ अन्वेषण, (ब) प्रदान प्रक्रिया, (स) आदान प्रक्रिया, (द) पुर्नस्थापन, (य) देय सामग्री लेखा (र) विलम्ब स्मृति, (ल) विशेष प्रयास।

अभिलेखों की मांग करने वाले व्यक्ति जो पुरा-सम्पदा का उपयोग कर इतिहास निर्माण का कार्य करते हैं -

(1) प्रशासन, (2) न्यायालय, (3) शोध अध्येता (रिसर्च स्कॉलर), (4) जनसाधारण, (5) विभाग की मध्यवर्ती शाखाएं।

प्रक्रिया हेतु

- अभिलेख की मांग हेतु व्यक्ति द्वारा मांग पत्र (Demand Letter) भरवाया जाता है।
- संदर्भ प्राप्ति (राज्य विभाग श्रृंखला, वर्ष, क्रमांक, निर्णय तिथी) के पश्चात् उल्लेखित स्थान देखा जाता है, यदि वह मिलती है तो मांग पत्र का आधा भाग वहां रख कर दिया जाता है।
- सामग्री मिलने पर पहले आदान-प्रदान पंजिका में चढ़ाकर मांग पत्र पर अंकित करके संबंधित खंड को भिजवा दी जाती है। (शोध खंड/अधियाचन खंड)। अभिलेख सीधे व्यक्ति अथवा संस्था को नहीं दिये जाते है तथा पृष्ठ संख्या का उल्लेख होता है।
- सामग्री सौंपते समय प्राप्तकर्ता के हस्ताक्षर करवाये जाते है एवं सामग्री लौटाने पर पृष्ठ संख्या की जांचकर सही हालत में प्राप्त होने पर जमा किया जाता है, दोष या अधूरापन होने पर अधिकारी के ध्यान में लाया जाता है।
- प्राप्त होते ही उसके स्थान पर रखकर, वहां रखा गया मांग-पत्र उठाया जाता है।
- आदान-प्रदान पंजिका में इस पुन:स्थापन प्रक्रिया का अंकन करके मांग पत्र मूल खंड में प्रेषित किया जाता है।
- प्रतिमाह न लौटाये जाने वाली सामग्री का क्रम अंकित किया जाता है। देय सामग्री खाता - हर तीसरे माह स्मरण पत्र दिया जाता है। 1 वर्ष तक न लौटे तो अधिकारी को अवगत कराया जाता है ताकि उचित कार्यवाही की जा सके और रिकॉर्ड पुन: प्राप्त किया जा सके।

जन-सेवा का भागीरथ कार्य

- प्रतिलिपि सेवाएं/निरीक्षण सेवाएं/न्यायालय में साक्ष्य उपलब्ध करवाना।
- अधियाचन शाखा प्रभारी सेवा संदेश/प्रार्थना पत्रों को प्राप्त करना एवं सामग्री यथास्थान पहुंचायेगा। उत्तर भेजेगा। स्मरण पत्र देगा। लौटी हुई सामग्री को यथास्थान पहुंचाया जाता है।
- अभिलेखागार को कचरापात्र बनने से रोकने के लिए इन अभिलेखों का मूल्यांकन किया जाना अत्यन्त आवश्यक है साथ ही महत्वहीन अभिलेखों को नष्ट करना भी उतना ही महत्वपूर्ण है।
- सामान्यतया अभिलेखों को भेजने से पहले उनका सृजन निकाय स्वयं ही अंतिम समीक्षा एवं निर्दान-प्रक्रिया पूरी कर लेता है।
- यदि अभिलेखों का पुर्नमूल्याकंन व निर्दान नहीं किया तो स्थान की समस्या उत्पन्न हो जाती है अत: महत्वहीन अभिलेखों को हटाकर महत्वपूर्ण अभिलेखों हेतु स्थान बनाना चाहिए।
- मूल्यांकन (कौनसा स्थायी रुप से रखने योग्य व कौनया नष्ट करने योग्य) के लिए निर्धारित मानदंडों के साथ-साथ स्वविवेक का भी सहारा लेना पड़ता है।
- पत्रावली की प्रशासनिक, न्यायिक, वित्तिय, सूचनात्मक महत्ता को परखा जाता है।
- पत्रावली का आयु निर्धारण उसके निर्माण की परिस्थिति, उसमें किये गये हस्ताक्षर, उसमें लगी मुद्राओं के द्वारा भी होता है।
- ऐसे अभिलेख जिनमें नागरिकों के अधिकारों की रक्षा से संबंधित जानकारी, जमीन-जायदाद संबंधी अधिकारों का वर्णन, शोध अध्येताओं के लिए विविध प्रकार की सूचना उपलब्ध करवाते हो कभी न किये जावें।
- ऐतिहासिक महत्व की सूचनाएं संरक्षित करना - सरकारी विभाग की स्थापना, नीति परिवर्तन संबंधी कागज, सनसनीखेज मुकदमें, घटनाएं, वैज्ञानिक अनुसंधान कार्य
- प्रशासनिक महत्व की सूचनाएं संरक्षित करना - योजना, आदेश, मंजूरिया, महत्वपूर्ण समितियों का गठन, विधि निर्माण संबंधी आज्ञा पत्र इत्यादि।

रिकॉर्ड को नष्ट करने हेतु प्रक्रिया : के चलते सर्वप्रथम कर्मचारी निदान फॉर्म भरेगा तत्पश्चात् ही सक्षम अधिकारी प्रविष्ठियों की जांच करता है। इसकी एक सूची सृजन निकाय को भेजी जायेगी वहां से पत्रावली के बारे में परामर्श आता है कि उसे नष्ट किया जाए या सुरक्षित रखा जाये। जिन पर अनापत्ति व्यक्त की गई उनके बस्ते, कंवर व फीते अलग कर शेष कागजों को फाड़ दिया जाता है। गोपनीय पत्रावलियां सक्षम अधिकारी के सामने जलाकर नष्ट की जाती है। रद्दी की नीलामी सरकार के नियमानुसार की जाती है।

ISSN 2277-5587

शोध खंड द्वारा शोधार्थियों की सहायता के लिए अध्येताओं को प्रवेश देना, सामग्री उपलब्ध करवाना, उपस्थिति प्रमाण पत्र देना, खंड के पत्र व्यवहार का कार्य।

- प्रवेश पत्र भरकर देते समय अध्येता को अपने पथ प्रदर्शक (शोध निर्देशक/गाइड) का परिचय पत्र या संबंधित विश्वविद्यालय या शोध संस्थान का प्रामाणिक अध्येता होने का प्रमाण पत्र देना।
- अनुमति लिखित रुप में अध्येता को दी जाती है। किसी भी कार्य दिवस को शोध कक्ष में बैठकर सामग्री का लाभ उठा सकता है। निदेशक चाहे तो अवकाश के दिनों में भी खोलने की अनुमति दे सकता है।
- अध्येता को उपस्थिति पंजिका में हस्ताक्षर करने होते है।
- सामग्री मांगने पर निर्धारित मांग-पत्र भरकर देना होगा, जिसकी जांच शोध-खंड प्रभारी करेगा तथा संचयशालाओं को सामग्री उपलब्ध करवाने के लिए भेजता है।
- अध्येता से सामग्री लौट आने पर संचयशाला को जमा करवाया जाता है। शोध खंड की अपनी एक आदान-प्रदान पंजिका (रजिस्टर) होती है जिसमें पूरा विवरण होता है।
- उपस्थिति पंजिका देखकर अध्येता को प्रमाण-पत्र भी जारी हो सकता है।
- अभिलेखों की फोटोप्रतियां लेने के लिए भा-चित्रण (Reprography Section) से कार्य करवाने की सहायता दी जाती है।

पुस्तकालय द्वारा संरक्षण के अन्तर्गत

- पुस्तकों का चयन, पुस्तक क्रय और भुगतान, प्रवेशन, वर्गीकरण, सूचीकरण, आदान-प्रदान का कार्य पुस्तकालय करता है।
- स्रोत खरीदकर, दान-उपहार से, अभिलेखों के साथ।
- पुस्तक क्रय करने हेतु समिति जिसके सदस्य निदेशक, सहायक निदेशक तथा पुस्तकालध्यक्ष इसमें संयोजन का कार्य।
- हर तीन माह में एक बैठक का आयोजन करना होता है।
- पुस्तकों के साथ उनका बिल (विपत्र) तीन प्रतियों में प्राप्त किया जाता है तथा पुस्तकों को प्रवेश-पंजिका में अंकित कर टिप्पणी बिल के पीछे लिखकर लेखा शाखा को भिजवाया जाता है।
- सामग्री प्रवेश के बाद वर्गीकरण होता है, उस पर वर्गीकरण संख्या लिखी जाती है एवं अंकपर्ची चिपकायी जाती है।
- सूचीकरण करते हुए उचित मात्रा में पर्ण (कार्ड) बनाये जाते है व व्यवस्थित करके पर्ण-मंजूषा में रखा जाता है।
- सामग्री वर्गानुसार अपने स्थान पर रख दिया जाता है।
- प्रवेशकर्ता को आने के कारण सहित पुस्तिका में हस्ताक्षर करवाए जाते है।
- 30,000 (तीस हजार) पुस्तके उपलब्ध है।

प्रकाशन व सर्वेक्षण हेतु :- विभागीय प्रकल्प - प्रकाशन खंड इनकी पांडुलिपि तैयार कर दो प्रतियों में टंकित करवाकर संशोधित करता है व प्रकाशित करता है।

- विभागीय प्रकाशन भंडार अवाप्त कर जमा करता है। मूल्य तय करवाकर बिक्री हेतु खोलता है।
- मूल्य नकद लेखा शाखा में जमा करवा कर रसीद प्राप्त कर भंडार में अंकित करवा कर सामग्री ली जा सकती है।
- प्रकाशन की अदला बदली, विशिष्ट व्यक्तियों की समीक्षा, भेंट हेतु बिना मूल्य के भी प्रतियां दी जा सकती है।
- मुख्यालय एवं मध्यवर्ती शाखाओं के प्रभारी अपने-अपने क्षेत्रों में अभिलेखों के रुप में सामग्री सर्वत्र बिखरी पड़ी है वह इसे प्राप्त कर देखभाल करता है।
- निजी संग्राहकों को सामग्री के परिरक्षण (रिपेयर एंड मेनेटेनेंस) एवं प्रतिसंस्कार करने में सहयोग व परामर्श देना।
- निर्धारित प्रपत्र संकलनकर्ता के पास भिजवाएं जाए जो अपनी सामग्री का निरीक्षण करने की अनुमति दे उनके यहां पहुंचना तथा सामग्री उपयोगी हो तो संकलनकर्ता को प्रोत्साहित करना ताकि वह उसे अभिलेखागार को दे देंवे।
- प्रवासकाल में साम्रगी की सफाई, छंटाई, सूची, मरम्मत, अणुचित्रण की व्यवस्था करवायी जाती है।
- अभिलेख सर्मपण हेतु जनचेतना निर्मित करने के लिए दाताओं को विभाग के उत्सवों पर आमन्त्रित व सम्मानित कर उनको प्रोत्साहित किया जाता है।

निरीक्षण के अन्तर्गत

- सृजन निकायों के अभिलेखों के रखरखाव के संबंध में परामर्श।
- निरीक्षक के उपरान्त उसका विस्तृत वृत्त पांच पत्रियों में बनाकर निदेशक को भिजवाया जाता है तत्पश्चात्

अभिलेखों को हानिकारण वातावरण तथा जीवों से बचाने की प्रक्रिया आरम्भ की जाती है ताकि दीर्घकालिक रिकॉर्ड प्राप्त किये जा सकें।

- **भौतिक कारण** : अत्यधिक ताप, अत्यधिक नमी, प्रकाश आदि
- **जैविक कारण :** फंफूद, रजतमीन, दीमक व अन्य कीड़ों द्वारा
- वायुमंडलीय प्रदूशण व रासायनिक कारणों के दूषित प्रभाव को दूर करने हेतु उचित प्रक्रिया आवश्यक है।
- तापक्रम के असंतुलन से रिकॉर्ड नष्ट हो सकते है।
- अधिक तापमान से अभिलेखों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- अधिक तापमान से अभिलेख पीले पड़ जाते है एव भंगुर हो जाते है।
- इसी प्रकार कम तापमान भी अभिलेखों के लिए हानिकारक है इससे जैविक (जीव) पैदा होने की संभावना बन जाती है। अत: सामान्य तापमान 220-250 सेंटीग्रेड के मध्य नियन्त्रित किया जाना चाहिए।
- **प्रकाश** भी रिकॉर्ड खराब कर सकता है क्योंकि सीधा प्रकाश (डायरेक्ट लाइट) अभिलेखों के लिए हानिकारक होती है, इससे कागज पीला पड़ जाता है और उसमें नमी की मात्रा कम हो जाती है जिससे कागज भंगुर (ब्रिटल) हो जाता है व स्याही का भी फोटो केमीकल ऑक्सीडिशन हो जाता है जिससे पढ़ने में दिक्कत आती है।
- अत: अभिलेख कक्ष में सीधा प्रकाश नहीं आना चाहिए। पर्दे लगाकर हानिकारक किरणों से बचाव किया जाना नितान्त आवश्यक है।
- धूल से भी रिकॉर्ड नष्ट होने की संभावना बनती है क्योंकि धूल के कण कागज में पाये जाने वाले सेल्यूलोज फाइबर को काट देते है जिससे अभिलेख भंगुर हो जाते है तथा पेपर की कमी भी इन कणों द्वारा सोख ली जाती है जिससे पेपर कमजोर हो जाता है इस हेतु उनकी नियमित सफाई व वैक्यूम क्लीनर का उपयोग अत्यन्त आवश्यक है।
- आपेक्षिक आर्द्रता (रिलेटिव ह्यूमिडिटी) रिकॉर्ड हेतु खतरनाक सिद्ध होती है अत: उचित रखरखाव हेतु वायुमंडल में व्याप्त पानी की मात्रा रिलेटिव ह्यूमिडिटी 45-55 प्रतिशत के मध्य होनी चाहिए।
- तापमान कम या अधिक होने पर आर्द्रता में भी परिवर्तन होता रहता है।
- आर्द्रता (नमी) कम होने पर अभिलेख भंगुर हो जाते है।
- आर्द्रता अधिक होने पर फफूंद, दीमक व अन्य जैविकीय शत्रु बढ़ जाते है। इसके अलावा कागज पर धब्बे, स्याही का घुलना भी संभव है जो रिकॉर्ड को विध्वंस कर सकती है।
- **जैविक कारण** भी पुरा सम्पदा के शत्रु है।
- फफूंद का फैलाव जिसमें बहुत छोटे जीव, कम ताप, अधिक आर्द्रता होने पर वृद्धि करने लगते है। फफूंद अभिलेखों से भोजन प्राप्त करती है जिनसे कागज कमजोर होता है।
- इन जीवों के रुपक तंतु (हाईपेन) भी कागज पर एकत्र होते है जिससे लिखावट पर दाग या धब्बे पड़ जाते है।
- इनसे बचाव के लिए आपेक्षिक आर्द्रता तथा तापमान आदर्श हो तथा 10 प्रतिशत थाइमोल या मिथाइल एल्कोहल में घोल बनाकर कक्ष में छिड़काव किया जाना आवश्यक होता है।
- रजतमीन (यह एक प्रकार का पंखरहित तथा चांदी के रंग जैसा डेढ़ सेमी. लंबा कीड़ा होता है) के हमले में जो कि मुख्यत: रात्रि में क्रियाशील (कम ताप, अधिक नमी) होता है। लेई, संरचनीय पदार्थ इसकी खाद्य सामग्री होती है।
- रजतमीन से बचाव हेतु सोडियम क्लोराइड (12 भाग) तथा आटा 400 भाग मिलाकर कक्ष में बिखेरना पड़ता है।
- बोरिक एसिड व आटा मिलाकर भी बिखेरा जाता है।
- नियमित सफाई/नैपथलीन की गोलियों का प्रयोग किया जाता है।
- **तिलचट्टे** - गहरे भूरे रंग का पौन इंच से दो इंच लंबा कीड़ा जो लेई, कपड़ा, कार्ड बोर्ड, गोंद इत्यादि की ओर आकर्षित होता है।
- रजतमीन वाले रसायन ही तिलचट्टे को नष्ट करने हेतु काम में लिये जाते है।
- **दीमक** - समूह में रहती है, उष्ण प्रदेश में अधिक, जमीन के भीतर या लकड़ी में रहती है, प्रकाश से दूर रहती है। अपनी सुरक्षा हेतु मिट्टी की सुंरग बनाती है। सेल्यूलोज, लकड़ी, फोटोग्राफ मुख्य भोजन होते है।
- अभिलेख कक्ष की फर्श टूटी न हो, दीवारों में दरार न हो।
- बचाव हेतु एल्ड्रीन 30 प्रतिशत ई.सी. के घोल का उपयोग किया जाता है।
- अभिलेखों को दीवार से 6 इंच दूर तथा फर्श से करीब 9 इंच ऊपर रखना होता है।

ISSN 2277-5587

- लकड़ी की जगह स्टील की अलमारी का प्रयोग किया जाता है।
- दीमक की सुरंगों में ट्राइक्लोरोबेंजीन सोडियम आर्सेनाइट मेलेथियन आदि का छिड़काव।
- शुद्ध वायु की व्यवस्था की जाती है ताकि जीव रहित उचित वातावरण तैयार किया जा सके।
- तीक्ष्णदंत जंतु की भूमिका भी इसमें रहती है क्योंकि चूहे बस्ते, कागज कुतर-कुतर कर काट डालते है अत: खाद्य सामग्री का कक्ष में निषेध होना चाहिए इनके निस्तारण हेतु बेरियम कार्बोनेट/जिंक फास्फाइड आदि आटे में मिलाकर गोलिया कक्ष में डाली जाती है।
- रासायनिक अपकृष्टता द्वारा विध्वसं जिसमें वायुमंडलीय प्रदूषण से वायुमंडल में व्याप्त सल्फरडाई ऑक्साइड नमी से क्रिया कर सल्फ्यूरिक अम्ल बनाती है।
- अम्ल कागज के अवयव सेल्यूलोज का अपघटन करता है जिससे अभिलेख भंगुर हो जाते है।
- कागज में अम्लता बढ़ जाती है इस हेतु निरम्लीकरण किया जाता है।
- अभिलेखों की मरम्मत (प्रतिसंस्कार) एवं पुनर्वास के लिए उनकी मरम्मत आवश्यक है अन्यथा वे क्षतिग्रस्त हो जायेंगे। कागज कमजोर और स्याही फीकी होने लगेगी।
- इन दुष्प्रभावों से बचाने के लिए विभिन्न परिरक्षण-प्रक्रियाओं जिनमें प्रधूमन, निरम्लीकरण, रक्षापट्टी, पूर्ण लेपन, टिशु मरम्मत, सिफोन मरम्मत, लेमीनेशन, जिल्द इत्यादि प्रयोग किये जाते है।
- इनकी मरम्मत से पूर्व पेज नम्बर कच्ची पेंसिल से तथा पानी लगाकर देखा जाता है कि स्याही घुलती है या नहीं। इनके संरक्षण हेतु मैदा लेई लगाना एक उपयोगी प्रक्रिया है।
- मैदा, नीला थोथा, लोंग का तेल एवं ग्लिसरीन प्रयुक्त किया जाता है।
- पानी और मैदा घोला जाता है व स्टोव चढ़ाकर उसे हिलाया जाता है बाद में शेष तीनों डालकर पकाया जाता है, ठंडा होने पर उपयोग में लिया जाता है।

सी.एम.सी. पेस्ट : (कारबोक्सी मिथायल सेल्यूलोज) -

- यह पारदर्शी मरम्मत हेतु प्रयुक्त किया जाता है जिससे लिखावट ढ़क नहीं पाये। इसमें पानी और सीएमसी को स्टोव पर 80-90 सेंटीग्रेड पर गरम कर हिलाते रहते है ताकि इसमें गांठे न पड़े। ठंडे होने पर उपयोग में लेते है।

समतलीकरण (फ्लेटनिंग)

- मुड़े-सिकुड़े अभिलेखों की सिलवटे निकाल कर सीधा किया जाता है।
- रुई, प्याला, पानी, प्रेस ब्लाटिंक पेपर, बटर पेपर
- अभिलेख को ब्लाटिक पेपर के नीचे रख भीगी रुई से ब्लाटिंक पेपर को नमी दें फिर सफेद बटर पेपर के बीच में कागज रखकर प्रेस से सलवटे निकाल लें। सीधी प्रेस न करें।
- घुलने वाली स्याही हो तो नमी कम दें, प्रेस तेज गर्म नहीं होनी चाहिए। ब्लाटिंग पेपर रंगीन नहीं हो अन्यथा उसका रंग अभिलेख पर चढ़ सकता है।

रक्षापट्टी लगाकर सुरक्षित करना

- सिलाई वाले किनारे की रक्षा, हैंड मेड कागज, 35 एमएम ब्रश, बटर पेपर इत्यादि का प्रयोग, हैंड मेड पेपर 2 इंच चौडी पट्टी काटी जाती है।
- रक्षा पट्टी लगाते समय अक्षर न दबे, अत्यधिक लेई नहीं, सरस व गोंद का प्रयोग नहीं करें। अभिलेख के बांयी ओर लगाये। ब्रुश से लेई लगायी जाती है।

पूर्णलेपन अपारदर्शी

- अपारदर्शी पूर्णलेपन एक तरफ लिखे अभिलेख का पूर्णलेपन कर सुरक्षित बनाया जाता है। जीर्ण शीर्ण अभिलेख जिनके एक ओर लिखाई हो, किसी अन्य कागज (हैंड मेड पेपर) पर चिपकाकर प्रतिसंस्कार करते है।
- अभिलेख उल्टा कर पूरे हिस्से पर ब्रश से लेई लगाकर हस्तनिर्मित कागज चिपका दी जाती है।
- मरम्मत किये अभिलेख को बटर पेपर में रखकर दाब मशीन में रखा जाए व सूखने पर काम में लिया जाता है।

पूर्णलेपन पारदर्शी (टिशू मरम्मत)

- इस प्रक्रिया के चलते दोनों ओर लिखे जीर्ण शीर्ण अभिलेखों की रक्षा की जाती है।
- पारदर्शी कागज, सी.एम.सी. पेस्ट, ब्रश (35 एमएम), बटर पेपर दो पारदर्शी कागजों पर सी.एम.सी. पेस्ट लगाकर उनके बीच में अभिलेख रखे जाते हैं। सूर्य धूप में नहीं सुखाना चाहिए।

चीनांशुक (सिफोन) मरम्मत

- अभिलेख को सिफोन के बीच में रखकर सी.एम.सी. पेस्ट द्वारा चिपकाया जाता है।
- ऐसे अभिलेख जो अत्यधिक महत्वपूर्ण व स्याही घुलने

वाली हो, के लिए सेल्यूलोज एसीटेट फोयल एवं एसीटोन की सहायता ली जाती है।

हस्तपर्तावरण

- महत्वपूर्ण रिकॉर्ड हेतु, बटर पेपर, सेल्यूलोज एसीटेट फोयल, पारदर्शी कागज (टिश्यू पेपर), एसीटोन का उपयोग किया जाता है।
- अभिलेख पर सेल्यूलोज एसीटेट फोइल एवं पारदर्शी कागज लगाकर सीधा कर लेते है। रुई को एसीटोन से भीगोकर उस पर धीरे-धीरे लगाते हैं। एसीटोन पारदर्शी कागज में होकर फोयल को घोलकर अभिलेख व पारदर्शी कागज को चिपका देते है। इसी प्रक्रिया को अभिलेख व उल्टाकर पुन: दोहराये। यह प्रक्रिया कांच अथवा बटर पेपर पर ही करनी चाहिए।

नक्शा मरम्मत हेतु

- नक्शे को साफकर सलवट निकालकर हस्तनिर्मित कागज पर चिपकाकर पानी में भीगे हुए मलमल या लट्ठे पर लेई से चिपकाया जाता है।

निरम्लीकरण क्रिया में

- अभिलेखों की अम्लता को हटाना।
- केल्सियम हाइड्रोऑक्साइड को घोल, कैल्सियम बाईकार्बोनेट घोल
- पहले केल्सियम हाइड्रोऑक्साइड से साफ, फिर केल्सियम बाईकार्बोनेट से साफ फिर पानी से साफ कर ब्लोटिंग पेपर पर सूखने के लिए रखा जाता है।
- अधिक समय तक घोल में नहीं रखना, स्याही घुलने वाली हो तो घोल में नहीं रखना, रंगीन ब्लाटिंग पेपर का प्रयोग नहीं करना चाहिए।
- जिन अभिलेखों की स्याही घुलने वाली हो उनके लिए शुष्क विधि का प्रयोग किया जाता है हवारोधक कक्ष में उल्टे 'वी' आकार में फाइलों को रखा जाता है। तरल अमोनिया और पानी का 1:10 भाग का घोल ट्रे में कक्ष में रखकर कक्ष बंद कर 4-5 घंटे तक रखते है बाद में खुली हवा में 8-10 घंटे रखते है इससे अम्लता हट जाती है।

डोकेटिंग के अन्तर्गत

- अभिलेख डोकेट कवर के बीच में रखकर गार्ड पट्टी को डोकेट कवर के साथ सिलाई की जाती है।

जिल्द में

- गत्ता, धागा, सुई, बाइंडिंग कपड़ा, क्राफ्ट पेपर, अबरी पेपर, रुई, ब्रश, लेई, चाकू, कैंची, दाब मशीन, हथौड़ी से जिल्द चढ़ाई जाती है।
- बांई ओर हाशिया छोड़, क्राफ्ट पेपर लगाकर सिलाई, बाइंडिंग कपड़े की 2 सेमी. चोड़ी पट्टी दोनो ओर चिपकाई, गत्ते के ऊपर अबरी पेपर लगाकर दाब मशीन के नीचे रख दे, सूखने के बाद जिल्द चढ़ाकर रिकॉर्ड तैयार होता है।

चर्म परिरक्षण में

- चमड़े के बने कवरों पर लगाकर क्षतिग्रस्त होने से बचाना चाहिए।
- बीज वैक्स, लैनोलीन सीडर वुड आयल (देवदार तेल) एवं बैंजीन मिलाकर चर्मरक्षक रसायन बनाते है।
- बैंजीन सीधे गर्म नहीं करते (वाटर बाथ पर), लेनोलीन गर्म करके डालते है।

प्रधूमन विधि (फूमीगनेशन) के अन्तर्गत

- दीमक और फफूंद को नष्ट कर कीटाणु रहित किया जाता है।
- वैक्यूम क्लीनर, प्रधूमन कक्ष, 60 वॉट के 2 बल्ब, सत अजवायन के खे, जालिया रखी जाती है।
- अभिलेखों की मिट्टी वैक्यूम क्लीनर से साफ कर उल्टे वी आकार में प्रधूमन कक्ष की जालियों पर रखें। दोनों बल्बों के नीचे स्टेंड पर थाइमाल क्रिस्टल अर्थात् सत अजवायन के खे डालकर रख दिये जाकर बल्ब जलाएं। कक्ष के दरवाजे बंदकर रखे गर्म होने पर भाप बन कर कक्ष में फैल जाते है जिससे कीटाणु नष्ट होते है। थाइमाल क्रिस्टल को प्रतिदिन 2-4 घंटे करना आवश्यक होता है। इस हेतु कक्ष हवारोधक होना चाहिए।
- आधुनिक तरीके में वैक्यूम फूमीगेशन के अन्तर्गत स्टील के बड़े-बड़े चैम्बर्स में वैक्यूम करके मिथायल ब्रोमाइड गैस प्रवाहित की जाती है। इसमें एक समय में काफी मात्रा में प्रधूमीकरण हो जाता है।

तत्पश्चात् भा-चित्रण में अणुचित्रण (माइक्रोफिल्म), सर्वमुद्रण (जिरोक्स), प्रतिलिपिकरण, चित्रमुद्रण (फोटोप्रिंट), अनुकृति चित्रण (पोसिटिव माइक्रोफिल्म), फिल्म प्रोसिसिंग का कार्य सम्पन्न किया जाता है।

- व्यक्ति, शोध अध्येता द्वारा लिखित में आवेदन, पैसे जमा कर रसीद लेखाशाखा से प्राप्त कर अणुचित्रण कार्य प्रवेश प्रंजिका में अंकित किया जाता है। माइक्रोफिल्मस्, जिरोक्स प्रतियां तैयार कर उपलब्ध करवाता है।

ISSN 2277-5587

- अणुचित्र कैमरा 35 एमएम (30.5 एम. का चक्र), पारदर्शी कांच होना चाहिए।
- 30.5 मी. फिल्मचक्र को कैमरे में चढ़ाते है, अभिलेख पारदर्शी कांच के नीचे रखकर कैमरे को अभिलेख की कार्य सीमा में एडजेस्ट करते है। शटर दबाकर चित्र खींचा जाता है इसे प्रशासन (एक्सपोजर) कहा जाता है।
- फिल्म समाप्त होने पर ध्वनि सुनाई देती है। फिल्म को लपेटकर चक्र को धोने के लिए रख देते है।
- रोल कैमरे पर चढ़ाते या उतारते वक्त अंधेरा होना चाहिए।

सर्वमुद्रण यंत्र - (जिरोक्स मशीन) द्वारा

- मशीन सेलिनियम, लेपित प्लेट, प्लास्टिक दाने, टोनर, रुई
- अंधे कांच पर अच्छी तरह फोकस करते हैं।
- ब्लैक टोनर ज्यादा नहीं अन्यथा कापी काली आयेगी।
- सेलिनियम काटेड प्लेट पर हाथ नहीं लगाना, प्लेट खराब होती है।
- अभिलेख फीका हो तो तीव्र प्रकाश देने का समय बढ़ा देना
- आधुनिक मशीने स्वचालित होती है सभी प्रक्रियाएं स्वत: हो जाती है एवं प्रतियां तीव्र गति से बाहर आती है।
- वांछित आकार से बड़े आकार में मुद्रित किया जाता है।
- निगेटिव चित्र, निरापद प्रकाश, विकसन घोल, स्थिरीकरण घोल, ऐसिटिक अम्ल आदि की सहायता ली जाती है।
- आवर्धन यंत्र मे निगेटिव लगाकर इतना ऊंचा उठाया जाता है ताकि वांछित आकार आने लगे। ब्रोमाइड पेपर काटकर मंच पर रखकर प्रभासित कर धोकर ब्रोमाइड कागज का लेपित भाग ऊपर रखा जाता है। सारी प्रक्रिया अंधेरे या निरापद प्रकाश (सॉफ्ट लाईट) में होती है। अंत में एसिटिक अम्ल के घोल से चित्र को निकाल लेना चाहिए ताकि कालान्तर में कागज पीला ना पड़े।
- बिंब मुद्रक में अभिलेख के मूल आकार की प्रति मुद्रित की जाती है।
- अनुकृति मुद्रक (पॉजिटिव प्रिन्टर) अनुकृति मुद्रक, प्रतिकृति फिल्म (निगेटिव) उसी आकार की कच्ची पॉजिटिव फिल्म धुलाई साधन का प्रयोग करना।

विकसन घोल (डेवलोपर)

- एलोन, सोडियम सल्फाइट, हाइड्रोकुनेन, सोडियम कार्बोनेट, पोटेशियम ब्रोमाइड का उपयोग करना।
- पानी को 400 सेंटीग्रेड पर गरम करते है फिर केमिकल्स मिलाकर घोलते है। प्रयोग में लेने से पूर्व 200 सेंटीग्रेड पर ठंडा किया जाता है।

स्थिरिकरण घोल के अन्तर्गत

- हाइपो, सोडियम सल्फाइट, बोरिक एसिड, एसेटिक एसिड, एलम आते हैं।

फिल्म की धुलाई के लिए

- मोर्स टैंक, कीप, विकसन घोल (2.5 लीटर), स्थरीकरण घोल (2.5 लीटर) पानी (1 लीटर), वेटिंग एजेण्ट।
- कीप द्वारा एक के पश्चात् एक घोल डालकर मोर्स टैंक का हैंडिल घुमाकर फिल्म के दो चक्कर लगाते हैं। (पहले पानी फिर विकसन घोल फिर स्थरीकरण घोल) फिर वेटिंग एजेंट एवं ड्रायर पर सुखाते है।

अत: पुरा-सम्पदा के संरक्षण का कार्य भी बहुत महत्वपूर्ण है। यह हमारी प्राचीन धरोहर है, विरासत है, जो इतिहास को समझने, पढ़ने और उसे लिखने में अत्यन्त ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके लिए अभिलेखागारों का योगदान अविस्मरणीय व अमूल्य है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *Handbook of libraries, archives and information centres in India By B M. Gupta.*
2. *Rajasthan State Archives: an introduction By Rajasthan State Archives.*
3. *National Archives of India <http://www.nationalarchives.nic.in/> website www.nationalarchives.nic.in*
4. *Rajasthan State Archives Bikaner.*

प्राचीन भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी : वर्तमान प्रासंगिकता के विशेष सन्दर्भ में

हितेश शर्मा
व्याख्याता, राजकीय महाविद्यालय, राजगढ़, अलवर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

आधुनिक विज्ञान की जननी समझा जाने वाला यूरोप अंकगणित तथा बीजगणित के अनेक सूत्रों के ज्ञान के लिए प्राचीन भारतीयों के अन्वेषण का ही ऋणी है। तकनीक का विकास हमें पाषाणकाल से ही देखने को मिलता है, जब क्रोर उपकरणों की तुलना में शल्क उपकरण एवं आगे पॉलिशदार पत्थर के उपकरणों का प्रयोग होने लगा। ऋग्वैदिक ग्रन्थों में कई प्रकार की प्रौद्योगिकी पर प्रकाश पड़ता है।गणित के क्षेत्र में प्राचीन भारतीयों ने तीन विशिष्ट योगदान यथा अंकन पद्धति, दाशमिक पद्धति और शून्य को आविष्कार के रुप में दिया। खगोल एवं ज्योतिष के क्षेत्र में प्राचीन काल में आर्यभट्ट एवं वराहमिहिर ने महत्वपूर्ण योगदान दिये। प्रौद्योगिकी विज्ञान के क्षेत्र में भारतीय शिल्पियों ने रसायन विद्या की प्रगति में बहुत योगदान दिया। भारतीयों ने टिकाऊ रंगों का विकास किया और नील का आविष्कार किया। प्राचीन भारत में आयुर्विज्ञान के क्षेत्र में भी काफी प्रगति हुई। इस काल में शरीर-रचना विज्ञान का अध्ययन किया गया। औषधियों का उल्लेख हमें अथर्ववेद से ही प्राप्त होने लगता है। प्राचीन भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी चाहे वर्तमान की तुलना में उस रुप में विकसित नहीं थी, जैसा कि हम आज देखते है किन्तु इस तथ्य को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि तत्कालीन समय व परिस्थितियां आज से नितान्त भिन्न थी और उन परिस्थितियों में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का जितना विकास हुआ उसके लिए आज भी सम्पूर्ण विश्व भारत का ऋणी है।

संकेताक्षर : विज्ञान प्रौद्योगिकी, आर्यभट्ट, खगोल एवं ज्योतिष चिकित्सा विज्ञान।

साम्राज्यवादी इतिहास लेखन में आरम्भ में यह दिखाने का प्रयास किया गया कि भारत के लोग धर्म एवं अध्यात्म मे ही डूबे रहे तथा विज्ञान की दिशा में इनका ज्ञान सतही था लेकिन इसके विपरीत यदि हम सूक्ष्म अवलोकन करे तो आधुनिक विज्ञान की जननी समझा जाने वाला यूरोप अंकगणित तथा बीज गणित के कुछ सूत्रों के ज्ञान के लिए प्राचीन भारतीयों के अन्वेषण का ही ऋणी है। यद्यपि यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि प्राचीन भारतीयों ने धर्म और दर्शन में ही विशेष रुचि ली तथापि इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि व्यवहारिक विज्ञान में उनकी कोई दिलचस्पी नहीं थी। सभ्यता के आदि काल पाषाण काल से ही हमें यहां के निवासियों में वैज्ञानिक बुद्धि होने का स्पष्ट प्रमाण मिलता है। विज्ञान के कुछ क्षेत्रों जैसे गणित, ज्योतिष, धातु विज्ञान आदि के क्षेत्र में भारत के लोगों ने जो अविष्कार किये तथा सफलता प्राप्त की वह सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है।

लैटिन धातु सिओ (Scio), साईरे (Scire) से बना शब्द 'सांइस (विज्ञान)' शब्द का अर्थ है, ज्ञान, सिद्धान्तों अथवा तथ्यों का ज्ञान। इसी अर्थ में 'सांइस' शब्द का प्रयोग मध्य युग के दार्शनिकों ने किया था उनके लिए धर्म- दर्शन भी विज्ञान का पर्याय था।[1]

तकनीक का विकास हमें पाषाण काल से ही देखने को मिलता है, जब क्रोर उपकरणों की तुलना में शल्क उपकरण एवं आगे पॉलिशदार पत्थर के उपकरणों का प्रयोग होने लगा। वस्तुत: पाषाणकालीन मानव ही विज्ञान की कुछ शाखाओं वनस्पति शास्त्र,प्राणीशास्त्र, ऋतुशास्त्र आदि का जन्मदाता है। पशुओं का चित्र तैयार करने के निमित्त उसने उनकी शरीर संरचना की अच्छी जानकारी प्राप्त की थी।[2]

वैज्ञानिक प्रगति का स्पष्ट ज्ञान हमें सिन्धु सभ्यता में दिखाई देता है। सिन्धु सभ्यता के नगरों के भग्नावशेषों से यह स्पष्ट हो जाता है कि इसके निर्माता माप व गणना की तकनीक में पारंगत होगें। अन्यथा इस सभ्यता की नगर-विन्यास व स्थापत्य और सभ्यता के अन्य स्वरुपों को

 ISSN 2277-5587

समझना कठिन होगा। मोहनजोदड़ों से एक खण्डित मापदण्ड मिला है। सीप का यह मापदण्ड 16.55 सेमी लम्बा, 1.55 सेमी चौड़ा और .675 सेमी मोटा है और इसके एक ही तरफ निशान अंकित है। किन्ही दो निशानों के मध्य की दूरी 0.66 सेमी है और पांच ऐसी इकाइयों को दूसरे प्रकार की विभाजक रेखाओं से अलग किया गया है। जिसकी माप 3.3 सेमी है। इस बात की सम्भावना व्यक्त की जाती है कि यह दशमलव प्रणाली के 33 सेमी मापदण्ड का खण्डित भाग हो सकता है। दूसरे शब्दों में सिन्धु सभ्यता का अंकविन्यास दशमलव प्रणाली पर आधारित होगा।[3]

उत्खनन से विशाल संख्या में मिले बांट अलग-अलग आकारों के है। इन बांटों की तौल का अनुपात इस प्रकार है 1,2,8/3,4,8,16, 32,64,160,200,320,640 इसमें इकाई 16 के अनुपात में थी जो वजन में 13.624 ग्राम थी। छोटे तौल वाले माप में द्वयांगी (दून-प्रणाली) और बड़े तौल वाले दशमलव प्रणाली पर आधारित थे।[4] सैन्धव सभ्यता के नियोजित नगर समकोणो पर काटने वाली समानान्तर सड़कें, मकानो के स्वरुप व उनमें काम में आने वाली ईटों के आकार में एकरुपता से स्पष्ट अनुमान लगाया जा सकता है कि उनके पास सीधी रेखाएं, समकोण बनाने, वस्तुओं के मध्य की दूरियों को निश्चित करने के साधन होंगे। कालीबंगा तथा लोथल से प्राप्त बालक के दो कपालों के आधार पर ऐसा निष्कर्ष निकाला गया है कि इस काल के लोग खोपड़ी की शल्य चिकित्सा करना जानते थे।

वैदिक काल में भारतीयों ने गणित के क्षेत्र में अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की। इसमें शुल्व-सूत्र विशेष महत्व का है। रेखागणित संबंधी सिद्धान्तों के प्रतिपादन तथा विकास का प्रधान श्रेय बौधायन को ही दिया जा सकता है। उन्होंने ही सबसे पहले $\sqrt{2}$ जैसी संख्याओं को अपरिमेय मानते हुए उनका अधिकतम शुद्ध मूल्य ज्ञात किया था। बौद्धायन ने वृत को वर्ग तथा वर्ग को वृत में बदलने का नियम प्रस्तुत किया तथा त्रिभुज , आयत, समलम्ब चतुर्भुज जैसी रेखागणित की आकृतियों से वे पूर्ण परिचित थे। यजुर्वेद में अग्नि की स्तुति के संबंध में एक(1), दस(10), शत(100), सहस्त्र(1000), अयुत(10000),नियुत(100000),प्रयुत(1000000),अर्बुद(10000000),न्यर्बुद(100000000),समुद्र(1000000000,)मध्य(10000000000),अन्त(100000000000)तथा परार्ध(1000000000000) जैसी संख्याओं का उल्लेख मिलता है।[5] गणित के इतिहास में आर्यभट्ट का एक विशेष स्थान है अपनी पुस्तक 'आर्यभट्टीयम्' के गीतिकापाद तथा गणितपाद में उन्होंने गणित के नियमों को प्रस्तुत किया है । गणितपाद में कुल 33 श्लोक है। प्रथम श्लोक में मंगलाचरण है और शेष में अंकगणित, बीजगणित व रेखागणित के प्रश्न है। इसमें वर्ग, वर्गक्षेत्र, घन, घनफल, वर्गमूल, घनमूल, त्रिभुज का क्षेत्रफल, त्रिभुजाकार शंकु का घनफल, वृत का क्षेत्रफल, गोल का घनफल, विषम चतुर्भुज क्षेत्र के कर्णो के सम्पात से भुजा की दूरी और क्षेत्रफल तथा विभिन्न प्रकार के क्षेत्रों की मध्यम लम्बाई व चौड़ाई से क्षेत्रफल जानने के साधारण नियम दिए गए है। एक स्थान पर परिधि के छठे भाग की ज्या उसकी त्रिज्या के समान बताई गई है। एक श्लोक के अनुसार यदि वृत का व्यास दो हजार हो, जो उसकी परिधि 62832 होती है, याने π का मूल्य 3.1416, चौथे दशमलव स्थान तक शुद्ध आता है।[6]

आर्यभट्ट के पश्चात् ब्रह्मगुप्त का नाम आता है जिन्होनें 'ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त' दिया। ब्रह्मगुप्त के पश्चात् महावीर तथा भास्कर अथवा भास्कराचार्य जैसे प्रसिद्ध गणितज्ञों का नाम आता है। गणितज्ञ भास्कर का सुप्रसिद्ध ग्रन्थ 'सिद्धान्त शिरोमणी' है । इसके चार भाग है- *लीलावती*, बीजगणित, ग्रहगणित, तथा गोला। अन्तिम में मुख्यत: खगोल का वर्णन है। न्यूटन से शताब्दियों पूर्व भास्कर ने पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण सिद्धान्त का पता लगा लिया था। भास्कर ने बताया कि पृथ्वी का कोई आधार नहीं है और यह केवल अपनी शक्ति से स्थिर है। गुरुत्वाकर्षण को स्पष्ट करते हुए वे लिखते है - पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है जिसके द्वारा बलपूर्वक वह सभी वस्तुओं को अपनी और खींचती है। वह जिसे खींचती है वह वस्तु भूमि पर गिरती हुई प्रतीत होती है।[7]

इस प्रकार नवीन अंकन पद्धति, शून्य तथा दाशमिक पद्धति का आविष्कार गणित क्षेत्र में प्राचीन भारतीयों की सर्वाधिक महत्वपूर्ण उपलब्धियां है।खगोल एवं ज्योषि के क्षेत्र में प्राचीन काल में आर्यभट्ट एवं वराहमिहिर ने महत्वपूर्ण योगदान दिये। आर्यभट्ट ज्योतिष पर लेखनी उठाने वाले प्राचीनतम् ज्ञात ऐतिहासिक व्यक्ति थे। नि:संदेह वे भारत द्वारा उत्पन्न महानतम् वैज्ञानिकों में से है।8 उन्होनें यह मत दिया कि चन्द्र या सूर्य ग्रहण चन्द्रमा पर पृथ्वी की छाया पड़ने से अथवा सूर्य और पृथ्वी की बीच चन्द्रमा के आ जाने से लगते है। इनका सबसे महत्वपूर्ण योगदान पृथ्वी की परिधि का मान निकालना था, जिसे आज भी शुद्ध माना जाता है।

वराहमिहिर फलित ज्योतिष के प्रणेता के रुप में स्मरणीय है। इनके प्रसिद्ध ग्रन्थ बृहत्संहिता, बृहज्जातक, लघुजातक है जो फलित ज्योतिष पर है जबकि 'पंचसिद्धान्तिका' गणित ज्योतिष पर। बृहज्जातक एवं बृहत्संहिता में भौतिक भूगोल, नक्षत्र विद्या, वनस्पति विज्ञान, प्राणिशास्त्र आदि का विश्लेषण किया गया है। पौधों में होने वाले विभिन्न रोगों तथा उनके उपचार के क्षेत्र में भी उन्होनें बड़ा काम किया। विभिन्न औषधि के रुप में पौधों के गुणकारी उपयोग संबंधी उनके शोध आयुर्वेद की अमूल्य निधि है। बृहत्संहिता, ज्योतिष, भौतिक भूगोल, वनस्पति तथा प्राकृतिक इतिहास का विश्वकोष ही है।ब्रह्मगुप्त भी एक प्रसिद्ध ज्योतिष शास्त्री थे। इनकी कृति 'ब्राह्मस्फुट' सिद्धान्त के कुल चौबीस अध्यायों में से बाइस ज्योतिष से सबंधित है।

रसायनशास्त्र नि:संदेह एक आधुनिक विज्ञान की शाखा है, परन्तु रासायनिक व्यवहार प्राचीन काल से ही होता आया है, जो तकनीकी कौशल का अभिन्न अंग था। प्राचीन ग्रन्थों मे रसविद्या को

'पराविद्या' कहा गया है जो तीनों लोकों में दुर्लभ तथा भोग और मुक्ति प्रदान करती है।[9] भारतीय परम्परा में बौद्ध दार्शनिक नागार्जुन को रसायन का नियामक माना गया है जिन्होंने पारा की खोज की।मेहरौली स्थित लौह स्तम्भ इस बात का जीता-जागता प्रमाण है कि प्राचीन भारतीय वैज्ञानिक धातु विज्ञान में अत्यन्त निष्णात थे। जिस समय पश्चिमी विश्व में भी लोहा बनाने की विधि का अधूरा ज्ञान था, भारतीय धातु शोधकों ने इस लौह स्तम्भ को इतनी निपुणता से बनाया कि पिछले डेढ़ हजार वर्षो से धूप और वर्षा में खुला खड़ा होने पर भी इसमें किसी प्रकार की जंग नही लगने पाई है। इसकी पालिश आज भी धातु वैज्ञानिकों के लिये आश्चर्य की वस्तु है। कई शताब्दियों तक इतने बड़े लौह स्तम्भ का निर्माण मानव कल्पना से परे था।[10]

भारत में चिकित्सा का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है ओर यह वैदिक काल से ही माना जाता है। ऋग्वेद में 'अश्विन' को देवताओं का कुशल वैद्य कहा गया है। 'विषस्य विषमौषधम्'[11] अर्थात् विष की दवा विष ही होती है का सिद्धान्त भी अथर्ववेद के एक मन्त्र में मिलता है। बुद्धकाल में जीवक महान आयुर्वेदाचार्य थे, जिन्होनें बिम्बिसार , प्रद्योत तथा बुद्ध तक की चिकित्सा कर उन्हें रोगमुक्त किया था। आयुर्वेद में मुनि आत्रेय का वही स्थान है जो यूनानी चिकित्सा में हिपोक्रेटीस का।चिकित्सा शास्त्र के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति चरक तथा सुश्रुत जैसे सुप्रसिद्ध आचार्यो के समय हुई। चरक का योगदान चरक संहिता मे है, जो उनके ही अनुसार अग्निवेश तन्त्र का सम्पादित संकलन हैं । चरक मूलत: काय चिकित्सक थे। उनके ग्रन्थ में मुख्यत: मानव शरीर रचना विज्ञान, शरीर क्रिया विज्ञान, विकृति विज्ञान, निदान, रोग हेतु विज्ञान ओर रोगोपचार की विवेचना हैं सम्पूर्ण संहिता आठ अनुभागों में बंटा हुआ है।

चरक के पश्चात् सुश्रुत हुए जो कि शल्य चिकित्सा के प्रणेता माने जाते है। इनकी कृति 'सुश्रुत संहिता' है जिससे शल्य चिकित्सा के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। मुनष्यों के साथ-साथ पशुओं की चिकित्सा पर भी ग्रन्थ लिखे गये। इसका एक अच्छा उदाहरण पालकाप्य कृत 'हस्त्यायुर्वेद' है। इस विस्तृत ग्रन्थ में हाथियों के प्रमुख रोगों उनकी पहचान एवं चिकित्सा का वर्णन किया गया है। इसमें अनेक शल्य क्रियाओं का भी उल्लेख है।

प्रौद्योगिकी में सर्वप्रथम पाषाण प्रौद्योगिकी का विकास हुआ। उसके पश्चात् हम धातु प्रौद्योगिकी का विकास पाते है। धातुओ में मनुष्य ने सर्वप्रथम तांबे का प्रयोग किया। तत्पश्चात् कांसा तथा अन्तत: लोहे का प्रयोग किया। मौर्य काल में पाषाण एवं लौह प्रौद्योगिकी का खूब विकास हुआ। अशोक के एकाश्मक स्तम्भ पाषाण तराशने की कला की उत्कृष्टता के साक्षी है। लगभग 50 टन वजन तथा तीस फीट से अधिक की उंचाई वाले स्तम्भों को पांच-छ: सौ मील की दूरी तक ले जाकर स्थापित करना तत्कालीन अभियान्त्रिकी कुशलता को सूचित करता है तथा आज के वैज्ञानिक युग में भी आश्चर्य की वस्तु है।[12] भारतीय इस्पात के क्षेत्र में कुशल थे इनकी इस्पात की तलवारें विश्व प्रसिद्ध थी। दिल्ली के लौह स्तम्भ से हमें ज्ञात होता है कि भारतीय वैज्ञानिकों ने कच्चे माल से धातु निकालने तथा विभिन्न धातुओं के मिश्रण को ढालने की अपूर्व क्षमता का विकास कर लिया था। धातु प्रौद्योगिकी के सुविकसित होने का प्रमाण सिक्कों तथा मुहरों की बहुलता में देखा जा सकता है।

इस प्रकार हम देखते है कि प्राचीन भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अनेक खोजे की गयी जिनका ऋणी सम्पूर्ण विश्व हैं वर्तमान की वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति का आधार हमें कहीं ना कहीं प्राचीन भारतीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में दिखाई पड़ता है। गणित, चिकित्सा, ज्योतिष, खगोल शास्त्र, रसायनशास्त्र, भवन निर्माण तकनीक आदि सभी क्षेत्रों में हम आज भी प्राचीन कालीन वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान से प्रेरणा प्राप्त करते है। गणित के क्षेत्र में आर्यभट्ट के योगदान के तहत हम देख सकते है कि उन्होनें π(पाई) का मान 3.1416 बताया जो वर्तमान मान के नजदीक मान है। सुश्रुत ने सर्वप्रथम संसार को शल्य चिकित्सा का परिष्कृत ज्ञान प्रदान किया जिसे वर्तमान में सिजेरियन ऑपरेशन कहते है। खगोलीय गणनाओं की सटीकता के कारण ही आज भी पंचांग बनाने के लिए आर्यभट्ट एवं वराहमिहिर की खगोलीय गणनाओं का उपयोग किया जाता है। चरक ने बच्चों में आनुवांशिक दोष जैसे लंगड़ापन या अंधापन का कारण डिम्बाणु या शुक्राणु में त्रुटि को बताया जो आज वैज्ञानिकों द्वार स्थापित किया जा चुका है।

स्पष्ट है कि प्राचीन भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विकसित रुप में थी और उस विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से हम वर्तमान तक प्रेरणा प्राप्त करते रहे एवं उसमें परिष्करण के द्वारा इस क्षेत्र में समायानुकूल प्रगति कर रहे हैं अत: यह कहना कि प्राचीन भारतीय केवल धर्म, दर्शन एवं अध्यात्म में ही प्रवृत रहें, कदापि सही नहीं है। क्योकि उनका वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान न केवल तत्कालीन समय में अपितु वर्तमान में भी अपनी प्रासंगिकता सिद्ध करता है। इतिहास लेखन के विभिन्न दृष्टिकोणों में इस बात से सहमत होने की आवश्यकता है कि प्राचीन भारत में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी चाहे वर्तमान की तुलना में उस रुप में विकसित नहीं थी, जैसा कि हम आज देखते है किन्तु इस तथ्य को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि तत्कालीन समय व परिस्थितियां आज से नितान्त भिन्न थी और उस परिस्थितियों में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का जितना विकास हुआ उसके लिए आज भी सम्पूर्ण विश्व भारत का ऋणी है।

ISSN 2277-5587

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. पंत, रजनीकान्त, प्राचीन सभ्यताओं में विज्ञान एवं तकनीक, पृ.1
2. श्रीवास्तव, के.सी., प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, पृ 884
3. पंत, रजनीकान्त, प्राचीन सभ्यताओं में विज्ञान एवं तकनीक ,पृ 215
4. वहीं, पृ 216
5. इमा में अग्नइष्टका धेनवः सन्त्वेका च दश च दश च शतं च शतं च सहस्त्र च सहस्त्र चायुतं चायुतं च नियुतं च प्रयुतं चार्बुदं च न्यर्बुदं च समुद्रश्च मध्यं चान्तश्च परार्धश्चैता- यजुर्वेद 17.2.
6. पंत, रजनीकान्त, प्राचीन सभ्यताओं में विज्ञान एवं तकनीक ,पृ 257
7. आकृष्ट शक्तिश्च मही तथा यत् स्वस्थं गुरु स्वाभिमुखं स्वशक्तया। आकृष्यते तत् पततीव भाति समे समन्तात् कं पतत्वियं खे।। (भुवनकोश, 6)
8. अल्तेकर, ए.एस. : न्यू हिस्ट्री आफ इण्डियन पीपुल पृ 416
9. रसाविद्या पराविद्या त्रैलोक्येऽपि तु दुर्लभा भुक्तिमुक्तिकरी यस्मात् तस्माद्देया गुणान्वितैः - रसार्णव
10. अल्तेकर, ए.एस. : न्यू हिस्ट्री आफ इण्डियन पीपुल पृ 421
11. अथर्ववेद 7.88.1
12. श्रीवास्तव, के.सी., प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति, पृ 893

भारतीय समाज के ग्रामीण विकास में पंचायती राज की भूमिका का विश्लेषण

डॉ. संजय कुमार
व्याख्याता, राजकीय लोहिया स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चूरू

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

एक ऐसा समुदाय जो निश्चित संख्या में ग्रामीण क्षेत्र में रहता है, गाँव कहलाता है। इस प्रकार ''ग्रामीण विकास वह व्यूह रचना है जिसमें ग्रामीण क्षेत्र में मानवीय एवं भौतिक संसाधनों का अधिकतम उपयोग करके गाँवों का सर्वांगीण विकास किया जाता है। ग्रामीण विकास एक सुव्यवस्थित प्रक्रिया है जिसके माध्यम से ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों की आय स्तर को उच्च कर जीवन स्तर में सुधार करना तथा उनके आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक व्यवहार में मात्रात्मक व गुणात्मक परिवर्तन लाना है। ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले गरीब तबके के कम आय वाले लोगों की आय तथा जीवन स्तर में वृद्धि करके उनकी जीवन प्रक्रिया को आत्मपोषक बनाने की विधि को ही ग्रामीण विकास कहते हैं।

***संकेताक्षर :** व्यूह रचना, मानवीय एवं भौतिक संसाधन, अन्तर्विषयात्मक, आत्मपोषक।*

भारत के लगभग 6 लाख गाँवों में 65 प्रतिशत आबादी निवास करती है। इसीलिए यह माना गया है कि ग्रामीण समस्याओं का हल किया जाये तथा ग्रामीण क्षेत्रों का समग्र विकास हो, तो हमारे देश की अधिकाधिक समस्याएँ स्वयं हल हो जायेंगी। ग्रामीण विकास का अर्थ लोगों को होने वाले आर्थिक लाभों के साथ-साथ समाज के सम्पूर्ण ढांचे में होने वाले अधिकाधिक परिवर्तन से लगाया जाता है। विभिन्न विचारक ग्रामीण विकास को अपने-अपने ढंग व दृष्टिकोण से परिभाषित करते हैं।

विश्व बैंक के ग्रामीण विकास क्षेत्र नीतिपत्र, 1975 के अनुसार, ''ग्रामीण विकास, ग्रामीण निर्धनों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन के सुधारने हेतु बनाई गई व्यूह रचना है, जिसके अन्तर्गत छोटे कृषकों, काश्तकारों एवं भूमिहीन कृषकों के समूह को शामिल किया जाता है। जी. पार्थसारथी के शब्दों में, ''ग्रामीण विकास से आशय गरीबों के प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग से उनके जीवन स्तर में सुधार करने से है। इसके लिए पूँजी एवं तकनीक का अच्छा उपयोग एवं गरीबों की सक्रिय भागीदारी आवश्यक है।

ग्रामीण विकास बनाम शहरीकरण

ग्रामीण विकास से विभिन्न पहलुओं पर जब विचार किया जाता है तो यह भी प्रश्न उठता है कि गाँवों को शहरों जैसा बना दिया जाए तो गाँवों का वांछित विकास हो जाएगा? यानि पक्की सड़कें, बिजली, पानी की आपूर्ति, मनोरंजन के विभिन्न साधन, पक्के मकान, पश्चिमी तर्ज पर बड़े-बड़े बाजार यानि मॉल्स, सिनेमाघर इत्यादि। ग्रामीण विकास का अर्थ शहरीकरण कतई नहीं है।

ग्रामीण समुदाय की अपनी प्राकृतिक आवश्यकताएँ हैं। प्रकृति के निकट रहने तथा भूमि से इसके सम्बन्ध होने के कारण अधिकांश ग्रामीण कृषि और तत्सम्बन्धी रोजगारों से अपनी आजीविका अर्जित करते हैं। प्राकृतिक वातावरण से प्रभावित होते हैं। उनमें क्षेत्रीय होने की प्रवृत्ति होती है उनमें अलगाववाद पाया जाता है। परिवार उत्पादन की इकाई होता है जो अपनी आवश्यकता की सभी वस्तुएँ उत्पन्न करता है और जो वस्तुएँ उत्पादन नहीं कर पाता वह उसी गाँव अथवा पड़ोसी गाँव द्वारा उत्पन्न की जाती हैं। ग्रामीण समाज के कुछ विशेष गुण होते हैं। जैसे – जीवन तथा संस्कार की सरलता, परम्परागत लोकशैली आदि उत्पन्न हो जाती है जो शहरी समाज से बिल्कुल भिन्न होते हैं। गाँवों के जातिगत व्यवसाय होते हैं जो परम्परा से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होते जाते हैं।

वस्तुत: शहरीकरण ग्रामीण विकास का पर्याय नहीं है। गाँवों की मौलिकता, परम्परा व संस्कृति को सुरक्षित रखते हुए शिक्षा, स्वास्थ्य व रोजगार

 ISSN 2277-5587

के लिए बेहतर परिस्थितियाँ बनाना आवश्यक है। इस अर्थ में ग्रामीण विकास के लिए जो योजनाएँ बनायी जाएँ और उनके लिए जो कार्यक्रम किए जाएँ वे शहरी विकास से भिन्न स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल होने चाहिए।

विभिन्न विद्धानों द्वारा दी गई ग्रामीण विकास की परिभाषाएँ और विचारों का विश्लेषण करें तो ग्रामीण विकास के विभिन्न आयाम स्पष्ट होते हैं- सामाजिक एवं आर्थिक विषमताओं में कमी करना, रोजगार के अवसर बढ़ाना ताकि लोगों के जीवन स्तर को सुधारा जा सके, आर्थिक विकास की प्रक्रिया में व्यापक जन सहभागिता, कृषि उत्पादन तथा उत्पादकता में वृद्धि करना, ग्रामीण लोगों के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं मनोवैज्ञानिक व्यवहार व दृष्टिकोण में सकारात्मक व समायानुकूल परिवर्तन लाना, ग्रामीणों को स्वावलम्बी एवं स्वरोजगार, शिक्षा की व्यवस्था तथा शिक्षा को ग्रामीण रोजगारोन्मुख बनाना, गाँवों में सभी सुविधाएँ व अवसर प्रदान करना ताकि ग्रामीण युवाओं का शहरों की ओर पलायन को रोका जा सके।

वर्तमान स्वरुप

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि पंचायती राज व्यवस्था से ग्रामीण विकास तथा ग्रामीण जन चेतना पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। यद्यपि इस व्यवस्था की अपनी कमियाँ व दुर्बलताएँ हैं फिर भी यह ग्रामीण जीवन का अनिवार्य हिस्सा बन गया है। इस व्यवस्था ने आधुनिकीकरण के लिए मार्ग खोला है। पिछड़े वर्ग तथा महिलाओं में राजनीतिक और सामाजिक चेतना बढ़ी है गाँवों का जागरण राज्य और राष्ट्र की राजनीति पर एक दबाव समूह के रुप में प्रभाव डालने में सक्षम हुए हैं। गाँव के लोग अपने अधिकारों, उत्तरदायित्वों को समझने लगे हैं, जिससे उनमें एक नया आत्मविश्वास आया है। मेरे वर्तमान शोध अध्ययन के आधार पर पंचायती राज व्यवस्था को सक्षम और सबल करने के लिए कुछ सुझाव भी दिये गये है।

ग्रामीण विकास का उद्देश्य

ग्रामीण विकास का आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक महत्व है। ग्रामीण विकास कई दृष्टिकोण से आवश्यक है। कृषि की दृष्टि से देखें तो देश के 70 प्रतिशत लोग कृषि पर आश्रित हैं। कृषि विकास हेतु ग्रामीण विकास आवश्यक है। सहायक रोजगार जैसे- पशुपालन, दुग्ध व्यवसाय, ऊन उद्योग, मधुमक्खी पालन, कुक्कुट पालन, मत्स्य पालन, सामाजिक वानिकी आदि का विकास करके बेरोजगारी को कम किया जा सकता है। ग्रामीण विकास के इस पहलू पर भी ध्यान देना आवश्यक है। ग्रामीण विकास से ग्रामीण लोगों की बेरोजगारी दूर करके उनकी आय में वृद्धि की जा सकती है। ग्रामीण विकास द्वारा शिक्षा का प्रसार, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सेवाओं में वृद्धि की जा सकती है।

ग्रामीण विकास का एक राजनीतिक पहलू भी है। ग्रामीण विकास से गाँवों के उदासीन लोगों में राष्ट्रीय चेतना जागृत होगी। जब राष्ट्रीय चेतना की भावना उत्पन्न हो जाती है तो वहाँ के नागरिक राजनीति में भी रुचि लेने लगते हैं और राजनीतिक परिपक्वता के लिए वातावरण तैयार होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में सत्ता में प्रत्येक व्यक्ति की भागीदारी सुनिश्चित करने तथा सत्ता के केन्द्रीकरण के स्थान पर विकेन्द्रीकरण को प्रोत्साहन देने के लिए ग्रामीण विकास का महत्व स्वयं सिद्ध है।

पंचायती राज व्यवस्था में सुधार

पंचायती राज व्यवस्था की त्रिस्तरीय व्यवस्था अभी भी ग्रामीण विकास को मूर्त रुप देने में पूर्ण रुप से सफल नहीं है। अत: सुझाव है-

- केन्द्र और राज्य सरकार की भांति ग्राम पंचायत में भी कानून बनाने, क्रियान्वयन करने और न्याय के लिए स्पष्ट विभाजन की आवश्यकता है। ग्राम विधायिका में चुने हुए सरपंच व पंच के साथ पूर्व जनप्रतिनिधि, ग्रामीण जाति प्रमुख तथा गाँव के अन्य महत्वपूर्ण व्यक्तियों को शामिल किया जाए। इस विधायिका के द्वारा बनाये हुए कानून का क्रियान्वयन ग्राम पंचायत द्वारा किया जाए तथा ग्राम न्यायालय द्वारा गाँव में उठे छोटे-मोटे झगड़ों का निपटारा किया जाए।
- पंचायती राज व्यवस्था से जुड़े जनप्रतिनिधियों के लिए आचार संहिता बनाई जानी चाहिए।
- कार्मिक दृष्टि से पंचायती राज संस्थाओं को स्वावलम्बी बनाया जाना चाहिए।
- तकनीकी तथा अन्य कर्मचारियों की पर्याप्त संख्या में नियुक्ति होनी चाहिए।
- पंचायती राज संस्थाओं को स्थानीय स्वशासन की इकाई के रुप में विकसित किए जाने की आवश्यकता है। जिला परिषद को जिला सरकार व ग्राम पंचायत को ग्राम सरकार का रुप दिया जाए।
- ग्राम स्तर की विकास योजना एवं कार्यक्रम तैयार करने का उत्तरदायित्व पंचायती राज संस्थाओं को दिया जाना चाहिए।
- पंचायतों द्वारा किये गए कार्यों में पारदर्शिता होनी चाहिए ताकि लोगों में इन संस्थाओं के प्रति विश्वास बढ़े तथा सहभागिता भी बढ़े।
- सांसदों व विधायकों की भांति जिला प्रमुख, समिति प्रधान और सरपंच को भी अपने क्षेत्र के विकास के लिए कुछ राशि प्राप्त होनी चाहिए।

- सरपंच के साथ पंचों को भी कार्य विभाजन के अनुसार विकास कार्यों से जोड़ा जाना चाहिए।

प्रशिक्षण और प्रबोधन

भावी भूमिका की सफलता के लिए आवश्यक है कि उत्तरदायित्वों, अधिकारों और कर्त्तव्यों की पूरी जानकारी हो। इसलिए पंचायती राज व्यवस्था को सफल बनाने के लिए जनप्रतिनिधियों के प्रशिक्षण और प्रबोधन के लिए कदम उठाये जाने की आवश्यकता है। कुछ सुझाव इस प्रकार हैं-

- पंचायती राज संस्थाओं से जुड़े जनप्रतिनिधियों, अधिकारियों, कर्मचारियों के लिए राज्य, क्षेत्र, जिला और ग्राम स्तर पर नियमित प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए।
- जनप्रतिनिधियों के लिए 6 माह के भीतर ही प्रशिक्षण अनिवार्य होना चाहिए तथा प्रशिक्षण अलग-अलग विषयों पर केन्द्रित होने चाहिए।
- इन प्रशिक्षणों में ग्रामीण विकास योजनाओं की जानकारी, वित्तीय प्रबंधन तथा जनप्रतिनिधियों के अधिकारों व कर्त्तव्यों की जानकारी दी जानी चाहिए।
- पंचायत अधिनियम व अन्य सम्बन्धित नियमों की जानकारी सहज और सरल रुप में दी जानी चाहिए।
- पंचायती राज संस्थाओं से जुड़े जनप्रतिनिधियों को ग्रामीण समस्याओं के प्रति वास्तव में संवेदनशील बनाने के लिए मानवीय मूल्य आधारित जानकारी और प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- समय-समय पर शिविर और सम्मेलनों का आयोजन किया जाकर नवीनतम जानकारी दी जानी चाहिए। सम्मेलनों में विभिन्न विभागों के प्रतिनिधियों को आमन्त्रित किया जाना चाहिए।
- महिलाओं और अनुसूचित जाति जनजाति से जुड़े सदस्यों को उनसे सम्बन्धित विशेष संवैधानिक और कानूनी जानकारी दिये जाने की आवश्यकता है।

ग्रामीण विकास के लिए आवश्यक सुझाव

यदि ग्रामीण विकास के स्वप्न को साकार करना है तथा राजनीतिक चेतना और जन सहभागिता को सार्थक करना है तो ग्रामीण जनसमुदाय को भी अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। इसके लिए कुछ सुझाव इस प्रकार हैं-

- स्थानीय लोगों की सक्रिय भागीदारी के लिए उनको जाति और धर्म की संकुचित भावना से ऊपर उठना आवश्यक है। उन्हें अपने मन में यह भावना लानी चाहिए कि गाँव या क्षेत्र उनका अपना है जिसके विकास में उनकी भी महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।
- ग्रामीण विकास के लिए आवश्यक योजनाओं के लिए उन्हें पहल करनी चाहिए। सरकार की भूमिका मार्गदर्शन, सहयोग और वित्तीय सहायता तक ही सीमित रहे तो बेहतर है।
- सामाजिक कुरीतियों और अंधविश्वासों से धीरे-धीरे इनसे ग्रामवासियों को स्वयं को मुक्त करना होगा। दृष्टिकोण में व्यापकता लाए बिना आधुनिकता और विकास की ओर बढ़ना सहज नहीं है।
- महिलाओं की स्थिति समाज में सदैव दोयम दर्जे की रही है। कृषि में व परिवार में लगातार सहयोग के बावजूद उनके योगदान का मूल्यांकन नहीं हो पाया है। उनके व्यक्तित्व और भूमिका को मान्यता प्रदान करने की आवश्यकता है। महिलाओं की सशक्त राजनीतिक भागीदारी तभी सम्भव हो सकती है जब सम्पूर्ण ग्रामीण जनसमुदाय के दृष्टिकोण में सकारात्मक परिवर्तन आये।
- समाज के पिछड़े वर्गों और जातियों में सदियों से हाशिये पर उपेक्षित जीवन जिया है, उनके प्रति मानवीय व्यवहार की आवश्यकता है। यदि विकास की प्रक्रिया को सम्पूर्ण जनसमुदाय की क्षमता व भागीदारी प्राप्त हो जाए तो निश्चित रुप से गति को तीव्र किया जा सकता है।
- महिलाओं की सक्रिय भागीदारी के लिए चुनी हुई महिला जनप्रतिनिधियों का विषय विशेषज्ञों की उपस्थिति में गहन प्रशिक्षण नियमित रुप से होना चाहिए।
- पंचायती राज व्यवस्था के माध्यम से ग्रामीण विकास कार्यों को सुचारु रुप से क्रियान्वयन के लिए स्थानीय गैर सरकारी संस्थाओं का सहयोग लिया जाना चाहिए।
- विकास की योजनाओं के सफल क्रियान्वयन हेतु स्थानीय विद्यालय, चिकित्सालय एवं अन्य सरकारी कर्मचारियों की भी सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए।

उपरोक्त सुझाव व्यापक हैं जिनका क्रियान्वयन एक दिन में एक साथ सम्भव नहीं है लेकिन लक्ष्य सामने हो और स्पष्ट हो तो मार्ग स्वयं ही प्रशस्त हो जाता है।

ISSN 2277-5587

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. पाडोलिया, एम. के., एप्रोचेज टू रुरल डवलपमेंट एण्ड एग्रेरियन स्ट्रक्चर, उद्धृत सी. एम. जैन एवं टी कंगन, फोर्टी ईयर्स ऑफ रुरल डवलपमेंट इन इण्डिया, प्रिंटवैल, जयपुर, 1993।
2. चौधरी, सी. एम., ग्रामीण विकास एवं सहकारिता, शिवम् बुक हाऊस (प्रा.) लि., जयपुर, 2002।
3. माथुर, पी. सी., रुरल डवलपमेंट इन इंडिया : द फर्स्ट फोर्टी इयर्स एण्ड बियोन्ड, उद्धृत सी. एम. जैन एवं टी. कंकन, पूर्वोक्त, पृ. 33।
4. नायक, एस. के., इम्पेरेटिवज ऑफ रुरल डवलपमेंट इन इंडिया, उद्धृत सी. एम. जैन एवं टी. कंगन, पृ. 14।
5. वर्ल्ड बैंक, रुरल डवलपमेंट सेक्टर पॉलिस पेपर, वाशिंगटन, 1975।
6. पार्थ सारथी, जी., कॉन्सेप्ट थ्योरिटिकल बेस एण्ड कॉन्ट्राडिक्शन उद्धृत सी. एम. चौधरी, पूर्वोक्त, पृ. 3।
7. सिंह, सूर्यभान, ग्रामीण विकास और पंचायत राज, कुरुक्षेत्र, नई दिल्ली, नवम्बर, 2005, पृ. 29।
8. यादव, सुबेह सिंह, ग्रामीण विकास के नये क्षितिज, मानव पब्लिकेशन्स, प्रा. लिमिटेड, दिल्ली, 1994।

भारत-अमेरिका तथा आतंकवाद

डॉ. जहाँआरा
व्याख्याता, मुस्लिम कन्या महाविद्यालय, जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध में भारत-अमेरिका के मध्य सहयोग अपेक्षित है। यह सर्वविदित है कि प्रारम्भ में भारत के संदर्भ में अमेरिकी दृष्टिकोण दोहरी मानसिकता पर आधारित था। अमेरिका द्वारा भारत में आतंकवाद पर नियंत्रण की कार्यवाहियों को मानवाधिकार का हनन, परमाणु प्रसार तथा इजराइल के प्रति शत्रुता रखने के आरोप लगाये जाते रहे। 9/11 घटना ने अमेरिका की सर्वोच्चता, महानता तथा प्रभुता पर कड़ा प्रहार किया। 2 मई 2011 को 'ऑपरेशन किल ओसामा' अमेरिका की एक तरफा कार्यवाही थी। इस घटना ने पुन: प्रश्न को ज्वलन्त किया कि अमेरिका अपनी महाशक्तिवादी छवि को बनाये रखने के लिए किसी भी हद तक जा सकता है। अमेरिकी नेवी की इस कार्यवाही से पाकिस्तान-अमेरिका के मध्य उत्पन्न अविश्वास ने दोनों देशों के सम्बन्धों को निम्न स्तर पर पहुँचा दिया। अमेरिका द्वारा अति-क्षेत्रीय तथा अति न्यायिक विशेषाधिकारों के प्रयोग से पाकिस्तानी सेना का असन्तोष व रोष विद्रोह के स्तर पर पहुँच गया है। ट्रम्प आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध में भारत को क्या स्थान देंगे? भारत अपनी नीति कुशलता से अमेरिका का आतंक के विरुद्ध युद्ध में सहयोग प्राप्त कर सकता है।

संकेताक्षर: *आतंकवाद, मानवाधिकार, महाशक्तिवादी, तालिबान, मुजाहिद्दीन, वैश्विक आतंक।*

भारत और अमेरिका दोनों आतंकवाद से पीड़ित देश हैं। परन्तु अमेरिका का भारत में आतंकवाद के प्रति प्रारम्भिक दृष्टिकोण दोहरी मानसिकता से ग्रसित रहा। भारत में अमेरिका से पहले ही 1980 के दशक के मध्य से ही पंजाब व जम्मू और कश्मीर राज्यों में पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवादी गतिविधियाँ शुरु हो गयी थी। भारत सरकार आतंकवाद के नियंत्रण में अमेरिकी सहयोग की इच्छुक थी। परन्तु अमेरिका और पश्चिमी देश भारत में सीमा पार आतंकवाद की घटनाओं को 'आतंकवाद' की मान्यता देने को तैयार नहीं थे। भारत को सहयोग की अपेक्षा 'मानवाधिकार के हनन' के आरोप झेलने पड़े। भारत का आतंकवाद के विरुद्ध संघर्ष अमेरिका के असहयोग तथा मानवाधिकार के हनन की दोहरी रणनीति में उलझा रहा। अमेरिका ने आतंकवाद के विरुद्ध भारत के साथ सहयोग 1995 के बाद शुरु किया जब पाकिस्तान में रह रहे हरकत-उल-अंसार ने अलफरान के नाम से अमेरिका सहित पश्चिमी देशों के पर्यटकों का जम्मू कश्मीर से अपहरण कर लिया। अमेरिका का भारत के प्रति बदला हुआ दृष्टिकोण भारत की चिंता या सुरक्षा का संकेत नहीं था बल्कि अमेरिकी नागरिकों की जान की सुरक्षा के कारण था। अमेरिका ने भारत की खालिस्तानी और कश्मीरी आतंकवादियों की अमेरिका में सम्पत्ति और बैंक खातों पर रोक लगाने के अनुरोध को इस आधार पर अस्वीकार कर दिया था कि उनके देश के कानून केवल संदेह के आधार पर ऐसा करने की अनुमति नहीं देते।[1]

परम्परागत युद्धों में पराजित होने के बाद पाकिस्तान को यह भली भांति समझ में आ गया था कि भारत को प्रत्यक्ष युद्ध में हराना उसके लिये असम्भव है, अत: उसने सीमा पार आतंकवाद की खतरनाक रणनीति को अपनाया। यह पाकिस्तान की 'भारत पर हजारों घाव के साथ खून बहाने की नीति थी।' जिया-उल-हक के शासनकाल में पाकिस्तान द्वारा भारत के विरोध में चलाया गया आतंकवादी अभियान कश्मीर व पंजाब होता हुआ सारे भारत में फैल गया। कश्मीर में निरन्तर युद्ध की स्थिति बनाये रखने के साथ-साथ 1980 के प्रारम्भ से पाकिस्तान ने गुप्तचर संस्था आई.एस.आई. (ISI) के सहयोग से पंजाब के अलगाववादियों को स्वतन्त्र खालिस्तानी राज्य के लिये भड़काना शुरु किया। इन अलगाववादियों को पाकिस्तान से छापामार युद्ध का प्रशिक्षण दिया जा रहा था।

आतंकवादी अमेरिका, ब्रिटेन, कनाडा तथा पश्चिमी जर्मनी की भूमि से भारत में सक्रिय थे। किन्तु फिर भी इन देशों ने आतंकवाद के विरुद्ध भारत का सहयोग नहीं किया। 1985 में कुछ घटनाएं ऐसी घटी कि उन्हें परिस्थिति की गम्भीरता समझ में आई। जून 1985 में अमेरिकी संस्था एफ.बी.आई. को सूचना मिली कि आतंकवादियों ने भारतीय प्रधानमंत्री राजीव गांधी की अमेरिका यात्रा के दौरान हत्या करने की योजना बनाई थी।[2]

1980 के दशक से पाकिस्तान ने जम्मू और कश्मीर राज्य में भी आतंकवाद को प्रायोजित करना शुरु कर दिया था। सोवियत संघ के अफगानिस्तान में सैनिक हस्तक्षेप (दिसम्बर 1979) से उत्पन्न परिस्थितियों में पाकिस्तान को सोवियत विरोधी अफगान विद्रोहियों को, पाकिस्तान के माध्यम से मदद देने के लिये अमेरिकी सहायता मिलने लगी। इस सहायता को पाकिस्तान ने कश्मीर में खूनी विद्रोह फैलाने में प्रयोग किया। पाकिस्तान में पाक अधिकृत कश्मीर एवं पाकिस्तान के प्रान्तों में आतंकवाद को संचालित करने के लिये कई प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये। प्रारम्भ में जम्मू और कश्मीर लिबरेशन फ्रन्ट (JKLF) एक उग्र अलगाववादी संगठन कश्मीर में राजनैतिक हिंसा और विद्रोह के लिये उत्तरदायी था। इन आतंकवादी संगठनों की आम धारणा थी कि भारत मुसलमानों और मुस्लिम हितों का विरोधी है। इन आतंकवादी संगठनों का उद्देश्य कश्मीर को स्वतन्त्र कराना है। पाकिस्तान ने 'जिहाद' अवधारणा को प्रोत्साहित कर इन आतंकवादी घटनाओं को धार्मिक युद्ध का रुप देने का प्रयास किया।

भारत सरकार ने समय-समय पर अमेरिकी सरकार को इस बात से अवगत कराया कि पाकिस्तान भारत के पंजाब और कश्मीर राज्यों में आतंकवादियों को सक्रिय समर्थन दे रहा है जिससे भारत की सुरक्षा के लिये खतरा पैदा हो गया है। अमेरिका की सरकार को भी उसकी गुप्तचर एजेन्सियाँ समय-समय पर सूचित करती रही हैं कि भारत के पंजाब और कश्मीर राज्य में चल रही आतंकवादी गतिविधियों के पीछे पाकिस्तान सरकार का हाथ है और पाकिस्तान ने अपनी भूमि पर आतंकवाद से सम्बन्धित केन्द्र चला रखे हैं और आतंकवादियों को हथियार देकर भारत में भेज दिया जाता है। पाकिस्तान की आई.एस.आई. (I.S.I.) ने अमेरिका की C.I.A. के साथ मिलकर अफगानिस्तान युद्ध के दौरान सोवियत संघ के विरुद्ध अफगान मुजाहिदों को लड़ाने के लिये प्रशिक्षण एवं हथियार दिये। अमेरिका ने अफगानिस्तान में सोवियत साम्यवाद से लड़ने के लिये 'सच्चे मुसलमानों' को आर्थिक सहायता दी। यह अफगानिस्तान में तालिबान-अमेरिका-पाकिस्तान गठबन्धन का निर्माण था। अफगानिस्तान- पाकिस्तान में इसका लालन-पालन हुआ अब लश्कर-ए-तैयबा जैसे पाकिस्तानी संगठन भारत में आतंकवादी गतिविधियों को संचालित करते हैं।

1982 में भारतीय प्रधानमंत्री इन्दिरा गांधी ने अमेरिकी राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन के साथ वार्ता में भारत में पाकिस्तान समर्थित आतंकवाद की ओर संकेत किया था। राजीव गांधी ने भी 1985 में अपनी अमेरिका यात्रा के दौरान राष्ट्रपति रीगन के समक्ष इस मुद्दे को उठाया और यह अपेक्षा की कि वाशिंगटन इस्लामाबाद में अपने प्रभाव का प्रयोग कर पाकिस्तान को भारत में आतंकवादियों को सहायता न देने के लिये राजी करेगा। तब अमेरिकी राष्ट्रपति ने एक पत्रकार सम्मेलन में कहा था कि हम मिलकर (भारत के साथ) आतंकवाद के विरुद्ध लड़ रहे हैं। किन्तु अमेरिका ने मूर्त रुप में इस दिशा में कुछ नहीं किया।

शीत युद्धोत्तर यथार्थवाद से अमेरिका की दक्षिण एशिया में भारत नीति में परिवर्तन हुआ। सोवियत संघ की साम्यवाद प्रसार की नीतियों का भय समाप्त हो जाने पर अमेरिका के लिये पाकिस्तान का रणनीतिक महत्व कम हुआ इसलिये जार्ज बुश के कार्यकाल में ऐसा प्रतीत हुआ कि अमेरिका ने पाकिस्तान समर्थित आतंकवाद के बारे में भारत की चिन्ता को समझने का प्रयत्न किया और इस समस्या को सुलझाने में कुछ दिलचस्पी दिखाई। मई 1990 में राष्ट्रपति जार्ज बुश ने अपने सहायक राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार राबर्ट गेट्स को अपने विशिष्ट प्रतिनिधि के रुप में भारतीय उपमहाद्वीप में भेजा। अपनी पाकिस्तान यात्रा के दौरान गेट्स ने आतंकवाद का मुद्दा कश्मीर के मुद्दे के साथ-साथ उठाया। जून 1990 में अमेरिका के प्रतिरक्षा अधिकारी ने न्यूयार्क टाइम्स को बताया कि अमेरिका यह चाहता है कि पाकिस्तान कश्मीर में आतंकवादियों को अपनी भूमि से जो सहायता दे रहा है, उसे रोक दे।[3] बुश प्रशासन ने पाकिस्तान को चेतावनी भी दी थी कि उसे उन राष्ट्रों की सूची में रखा जा सकता है जो आतंकवादी गतिविधियों को प्रायोजित करते हैं और प्रोत्साहन देते हैं।[4]

अमेरिका में पाकिस्तान समर्थक मजबूत लॉबियाँ है जो भारत के विरुद्ध प्रचार करके अमेरिकी विधेयकों को प्रभावित करती रहती है। ये लॉबियाँ खालिस्तान और जम्मू कश्मीर के आतंकवादी आन्दोलनों से जुड़ी हुई हैं, उदाहरण के लिये कश्मीरी अमेरिकन काउन्सिल। भारत में पुलिस और सैनिक बलों द्वारा आतंकवाद के विरुद्ध की जाने वाली कार्यवाहियों को यह लॉबियाँ मानवाधिकारों के अतिक्रमण के रुप में चिन्हित करती रहीं है जिसके कारण अमेरिकी कांग्रेस में भारत विरोधी विधेयक लाए जाते हैं। इन विधेयकों में भारत पर मानवाधिकारों के अतिक्रमण का आरोप लगाया जाता है। ऐसा न केवल रीगन के राष्ट्रपति काल में हुआ बल्कि फरवरी 1991 में खालिस्तान समर्थक लॉबी के प्रयत्नों के फलस्वरुप अमेरिका की प्रतिनिधि सभा में यह विधेयक लाया गया जिसमें यह कहा गया कि यदि भारत एमनेस्टी इन्टरनेशनल को पंजाब का भ्रमण कर मानवाधिकारों के उल्लंघन के बारे में जाँच की अनुमति नहीं देगा तो उसे अमेरिका के द्वारा दी जाने वाली विकासात्मक सहायता की 25 मिलियन डालर की राशि पर रोक लगा दी जाएगी। यह विधेयक पूर्व में पारित एक विधेयक का नया रुप था और इसे अमेरिका के दोनों दलों

के 28 सदस्यों का समर्थन प्राप्त था। कुछ मामलों में बुश प्रशासन ने इस प्रकार के प्रस्तावों का विरोध किया। यह भारत विरोधी विधेयक इण्डियाना प्रान्त से रिपब्लिकन पार्टी के सदस्य डॉन बर्टन के द्वारा लाया गया था। बुश प्रशासन के प्रयासों से अन्तत: यह प्रस्ताव गिर गया। परन्तु मोटे तौर पर अमेरिका भारत की आतंकवाद की समस्या से उदासीन ही बना रहा। क्योंकि अमेरिका व अन्य पश्चिमी देश जम्मू एवं कश्मीर में हो रही घटनाओं को आतंकवाद की श्रेणी में नहीं रखते थे। उनके लिये यह कश्मीरी जनता का आन्दोलन था। अमेरिका के भू-सामरिक समीकरणों में पाकिस्तान अत्यंत महत्वपूर्ण था अत: वह पाकिस्तान के विरुद्ध भारत का सहयोग नहीं करना चाहता था।[5]

खालिस्तानी आतंकवाद की ही तरह कश्मीरी आतंकवाद भी शीघ्र ही अमेरिका को प्रभावित करने लगा। पाकिस्तान स्थित आतंकवादी संगठन हरकत-उल-अंसार का एक गुट भारत में अल-फरान के नाम से आतंकवादी गतिविधियाँ चला रहा था। 1995 में अल-फरान ने कुछ अमेरिकी सहित पश्चिमी देशों के कुछ पर्यटकों का कश्मीर में अपहरण कर हत्या कर दी।[6] इस घटना के पश्चात् अमेरिका ने भारत के साथ सहयोग का मन बनाया। इन घटनाओं से अमेरिका के दोहरे मानदण्ड सामने आए। जब तक भारतीय नागरिकों की जाने आतंकवादी हमलों में जा रही थी, तब तक वे खामोश थे किन्तु जब अमेरिकी नागरिक आतंकवादियों के हाथों मारे जाने लगे तब आतंकवाद की समस्या के प्रति अमेरिका व अन्य पश्चिमी देशों की संवेदना जागी। इसके साथ ही भारत व अमेरिका के मध्य अन्तत: सूचनाओं का आदान-प्रदान आरम्भ हुआ।

इस दौरान अमेरिका-भारत व अमेरिका-पाकिस्तान वार्ताएँ जारी रही। स्ट्रोब टालबोट के साथ वार्ता में भारतीय विदेश मंत्री जसवन्त सिंह ने आतंकवाद का भी मुद्दा उठाया। अफगानिस्तान में पैर जमाने के बाद तालिबान ने विश्व भर में अमेरिकी प्रतिष्ठानों को आतंकवादी गतिविधियों का निशाना बनाना शुरू कर दिया। अब अमेरिका ने आतंकवाद की समस्या की गम्भीरता को समझा। भारत ने अमेरिका से अनुरोध किया कि वह पाकिस्तान को आतंकवादी देश घोषित करे। किन्तु अमेरिका ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। वस्तुत: तालिबान के उदय के साथ ही अमेरिका के लिये पाकिस्तान पुन: महत्वपूर्ण हो गया था।

अफगानिस्तान पर कब्जा करने के बाद तालिबान अमेरिका के विरुद्ध हो गये और अफगानिस्तान आतंकवाद का गढ़ बन गया। प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादी ओसामा-बिन-लादेन अफगानिस्तान में सोवियत सेनाओं के विरुद्ध संघर्ष में सम्मिलित था। अगस्त 1988 में लादेन ने अफगानिस्तान में अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादी संगठन अल-कायदा (The Base) का गठन किया। इसमें अमेरिका के समर्थन वाले मुजाहिदीन आंदोलन के अरब लड़ाके भी शामिल थे। तालिबान सरकार ने ओसामा बिन लादेन को अफगानिस्तान में रहने की अनुमति दी तथा अल कायदा को प्रोत्साहन व संरक्षण प्रदान कर अमेरिका की राष्ट्रीय सुरक्षा तथा विदेश नीति को चुनौती दी।[7] क्लिंटन प्रशासन ने तालिबानी कार्यवाहियों पर प्रतिबंध लगाने के लिये राष्ट्रीय आपातकाल घोषित कर दिया तथा तालिबान से संबंधित व्यक्तियों की सम्पत्ति पर कैंजा कर लिया। अमेरिकी नागरिकों पर तालिबान ओसामा बिन लादेन एवं अलकायदा से संबंधित लेन-देन पर रोक लगा दी। अफगानिस्तान के साथ होने वाले आयात निर्यात पर कठोरता से प्रतिबंध लगा दिया। भारत में आतंकवाद के प्रति यह अमेरिका की दोहरी मानसिकता का ही संकेत था। जब आतंकवाद से भारतीयों की जाने जा रही थी तब अमेरिका ने केवल संदेह के आधार पर अपने देश में रह रहे आतंकवादियों के सूत्रों के विरुद्ध कार्यवाही करने से इंकार कर दिया था। परन्तु जब अमेरिका वासियों की जान माल की सुरक्षा को खतरा पैदा हुआ तो थोड़े से संदेह पर भी अमेरिकी सरकार ने आतंकवादी सूत्रों के विरुद्ध समुचित कार्यवाही करनी शुरु कर दी।

दिसम्बर 1999 में कंधार से भारतीय वायुयान कनिष्क का आतंकवादी संगठन हरकत-उल-मुजाहिदीन के द्वारा अपहरण के बाद भारत-अमेरिका ने आतंकवाद के विरोध में जनवरी 2000 में एक संयुक्त कार्यदल गठित किया। संयुक्त कार्यदल का उद्देश्य भारत और अमेरिका के मध्य आतंकवाद के विरुद्ध नियमित और व्यवस्थित विचार-विमर्श आयोजित करना था। संयुक्त कार्यदल की नियमित समीक्षा बैठकें होती रही हैं।'

मार्च 2000 में अमेरिकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन भारत की यात्रा पर आए। इस अवसर पर जारी दृष्टि पत्र में दोनों देशों ने शान्ति में साझेदार होने की प्रतिज्ञा की।[8] राष्ट्रपति क्लिंटन ने सार्वजनिक रुप से भारत-पाकिस्तान वार्ता के पुन: आरम्भ करने सम्बन्धी भारतीय रुख का समर्थन किया। उन्होंने कश्मीर समस्या के सैनिक समाधान की अपेक्षा राजनीतिक समाधान की आवश्यकता पर भी बल दिया। सामरिक आवश्यकताओं के कारण पाकिस्तान को नजर अन्दाज भी नहीं कर सकता था। अमेरिका का मानना है कि एक अत्याधुनिक व विकसित पाकिस्तान इस्लामिक गणतन्त्र देशों को प्रभावित कर सकता है। इसमें एक स्वतन्त्र शक्ति केन्द्र बनने की सामर्थ्य नहीं है तथा यह भारत, ईरान और चीन पर विभिन्न रुपों में नियंत्रण रखने का साधन है। साथ ही यह अमेरिका के लिये पुराना विश्वसनीय सहयोगी और शीतयुद्धकाल का साझेदार है।[9]

अमेरिका का यह भी मानना है कि भारत में एकाधिकारवादी प्रवृत्तियाँ हैं जो उसके छोटे पड़ोसियों को भयभीत करती हैं। भारत के परमाणु अप्रसार सन्धियों पर इन्कार तथा विकास कार्यक्रम को अमेरिका इसी बात का प्रमाण मानता है। अमेरिका की भारत नीति मूलत: भारत पर आर्थिक, राजनीतिक तथा सैन्य दबाव डालने की है जिससे कि भारत दक्षिण एशिया की प्रमुख शक्ति न बन सके।[10] वहीं भारत की इसी विकासात्मक शक्ति तथा विशाल आर्थिक कारणों से अमेरिका

भारत को छोड़ना भी नहीं चाहता। भारत का विशाल बाजार अमेरिका की पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अमेरिकी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का दबाव अमेरिकी सरकार को भारत के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्धों के लिये बाध्य करता है।

जॉर्ज डब्ल्यू. बुश प्रशासन ने दक्षिण एशिया में 'भारत प्रथम' (India First) की नीति को अपनाया था परन्तु 9/11 की घटना ने नाटकीय तरीके से अमेरिका के लिये पाकिस्तान के सामरिक महत्व को पुन: स्थापित कर दिया। अफगानिस्तान में आतंक के विरुद्ध युद्ध में पाकिस्तान का समर्थन पाने के लिये अमेरिका ने भारत-पाकिस्तान के साथ संतुलित नीति को अपनाना शुरु कर दिया तथा 1998 में लगाये प्रतिबन्धों को हटाना पड़ा।[11] आतंक के विरुद्ध युद्ध की बुश की नीति से अमेरिका-पाकिस्तान सम्बन्धों का पुनर्नवीनीकरण हुआ। पाकिस्तान अमेरिका का मुख्य सहयोगी देश बन गया व अमेरिका ने पाकिस्तान के सहयोग के बदले उसके एक बिलियन डालर ऋण की माफी बहुपक्षीय सहायता का एक उदाहरण है। पावेल ने कहा, 'यह हमारे दोनों देशों की दूरगामी सहभागिता का पुनर्जन्म है।[12]

9/11 ने अमेरिका-भारत संबंधों का स्वरुप बदल दिया। पाकिस्तान से जारी रहने वाले सीमा पार आतंकवाद को रोकने की जरुरत को भी रेखांकित किया जाने लगा। सन् 2002 में जब भारत और पाकिस्तान संघर्ष की तरफ बढ़ रहे थे तो अमेरिका यह संकट दूर करने में सक्रिय रुप से लगा हुआ था। अमेरिकी सरकार ने इस बात पर भी जोर दिया कि जब भारत और पाकिस्तान अपने मतभेद खत्म करने के लिये काम करेंगे तब अमेरिका शांति कायम करने वाले दोनों पक्षों का पक्का दोस्त और समर्थक बना रहेगा और दोनों से अपने स्तर पर मजबूत दोतरफा संबंध बनाना जारी रखेगा।[13]

हम खुद को मध्यस्थ के रुप में थोपना नहीं चाहते, इसकी बजाए हम उस भरोसे को आजमाना चाहते हैं, जो हमने-दोनों पक्षों के साथ बनाया है जिससे कि वे शांतिपूर्वक तरीकों से सद्भाव की तरफ बढ़े।[14]

9/11 से अमेरिका के वैश्विक आतंक के विरुद्ध युद्ध (GWOT) के बाद भारत अमेरिका द्विपक्षीय सहयोग तेजी से बढ़ा। भारतीय प्रधानमंत्री वाजपेयी ने आतंकवाद के विरुद्ध पूरे सहयोग का प्रस्ताव रखा। अमेरिका के अफगानिस्तान के विरुद्ध 'ऑपरेशन एन्ड्यूरिंग फ्रीडम' में बिना शर्त मदद की। भारत ने आतंकवाद के विरुद्ध अपने संघर्ष से प्राप्त सूचनायें और विशेषज्ञ उपलब्ध कराकर सहयोग किया। अमेरिका ने अपने वित्तीय संसाधनों के साथ-साथ तकनीकी जानकारी भारत के साथ बांटी। दोनों देशों ने आतंकवाद समाप्त करने के लिये 'पारस्परिक कानूनी सहायता' (Mutual Legal Assistance) समझौता किया। 13 दिसम्बर 2001 को भारतीय संसद पर आतंकवादी हमले के बाद अमेरिका के तत्कालीन राजदूत रॉबर्ट ब्लैकविल ने अमेरिकी गुप्तचर संस्था एफ.बी.आई. की सेवायें आतंकवादियों के संदेशों के विश्लेषण के लिये प्रदान करवायी। जनवरी 2002 में आतंकवादियों ने कोलकाता में स्थित अमेरिकी सेंटर पर आक्रमण किया। एफ.बी.आई. के निदेशक रॉबर्ट मुलर ने इस हमलों के लिये उत्तरदायी आतंककारी आफताब अंसारी की अमीरात से प्रत्यर्पण की व्यवस्था कराई। सितम्बर 1993 के मुम्बई बम विस्फोटो के आरोपी अबुसलेम अंसारी को सितम्बर 2002 में एफ.बी.आई. की मदद से पुर्तगाल में गिरफ्तार किया गया। सीमा पार से भारत को आतंकवादी खतरों को स्वीकारते हुए अमेरिका ने भारत को अत्याधुनिक सीमा प्रबन्ध प्रणालियां बेचने की पेशकश की। 1993 के मुबई हमलों के दोषी दाउद इब्राहिम को 'अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवादी घोषित' (2003) किया। अमेरिका में दाउद की सम्पत्ति जब्त कर ली गई। भारत के लिये यह दाउद इब्राहिम को कानून के दायरे में लाने के लिये दस साल से चलाये जा रहे अभियान में महत्वपूर्ण सफलता थी। यह आतंकवाद के विरुद्ध वैश्विक युद्ध में भारत और अमेरिका के सम्बन्धों में निर्णायक क्षण था।

अमेरिका ने विदेश मंत्री कोलिन पॉविल की भारत यात्रा 2001 के समय संस्थागत सलाहकार व्यवस्थाओं के लिये किये गये समझौते के अन्तर्गत एफ.बी.आई ने अपना कार्यालय भारत में खोला व उसकी समकक्ष केन्द्रीय जांच ब्यूरो (सी.बी.आई) की शाखा अमेरिका में स्थापित हुई। पॉविल ने सहयोग पर बल देते हुये कहा, 'अमेरिका और भारत आतंकवाद के विरुद्ध एकजुट हैं इसमें वह आतंकवाद भी सम्मिलित है जो भारत के विरुद्ध चल रहा है।'[15] भारत का एंटीटेरेरिज्म असिसटेंस प्रोग्राम (A.T.A.) 1998 से सक्रिय है। भारत अमेरिका संयुक्त कार्यदल की वार्षिक बैठकों में आतंकवादी कार्यवाहियों की सूचना का आदान प्रदान आतंकवादी हमले के समय सुरक्षा तंत्र के विफल होने के कारणों, आतंकियों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने वाले तंत्रों पर प्रमुख रुप से विचार विमर्श किया जाता है। परन्तु अमेरिका ने भारत में पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद के विरुद्ध ठोस कार्यवाही नहीं की। अमेरिका की मुख्य रुचि ओसामा बिन लादेन और उसके नेटवर्क को समाप्त करने में थी। अमेरिका की आतंक के विरुद्ध युद्ध में विरोधाभासी नीति थी। अमेरिकी प्रशासन के लिये आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध में पाकिस्तान मुख्य सहयोगी देश है जबकि 11 सितम्बर के बाद अमेरिका को पूर्ण, अबाध समर्थन व पूर्ण सहयोग की घोषणा करने वाला भारत पहला देश था। भारत को आशा थी कि अमेरिका अपने अभियान में भारत के विरुद्ध पाकिस्तान प्रायोजित आतंकवाद को भी सम्मिलित कर लेगा। परन्तु अमेरिका ने पाकिस्तान की जम्मू और कश्मीर नीतियों के विरुद्ध कोई सवाल नहीं उठाया। राष्ट्रपति बुश ने भारत को कहा कि जब तक अफगानिस्तान अभियान पूरा नहीं हो जाता वह पाकिस्तान के विरुद्ध कार्यवाही नहीं करें। भारत के सरोकारों के प्रति अमेरिका के रुख को लेकर निराशा बनी रही। ओसामा बिन लादेन ने अमेरिका को यह

अनुभव कराया कि एक देश महाशक्ति इसलिये नहीं है क्योंकि उसकी सैनिक शक्ति सर्वश्रेष्ठ है अथवा आर्थिक रुप से विकसित है बल्कि वह केवल तब तक महाशक्ति है जब तक दूसरे देश उसे महाशक्ति के रुप में मान्यता देते हैं।[16]

उपर्युक्त सभी सहयोग के उदाहरणों के बावजूद आतंकवाद के खिलाफ युद्ध के संदर्भ में भारत-अमेरिकी संबंधों में पाकिस्तान से सम्बन्धित नकारात्मक बिन्दु भी रहे। भारत द्वारा अमेरिका को बिना शर्त पूर्ण समर्थन की पेशकश करने के बावजूद अफगानिस्तान केन्द्रित अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद के खिलाफ अभियान के लिये अमेरिका ने भारत की तुलना में पाकिस्तान को अपना सक्रिय भागीदार चुना है। अमेरिका का सरोकार केवल उसके पश्चिम यूरोपीय मित्र राष्ट्रों और जापान जैसे देशों के खिलाफ आतंकवाद से है। भारत की आशंका है कि अफगानिस्तान के बाद संभवत: पश्चिम एशिया के चंद देशों के विरुद्ध कार्यवाही कर अमेरिका अपना आतंकवाद विरोधी अभियान खत्म कर देगा और भारत को स्वयं ही आतंकवाद से जुड़ी अपनी समस्याओं से निपटने के लिये छोड़ देगा। अमेरिका को पाकिस्तानी समर्थन के फलस्वरुप अमेरिका पाकिस्तान के बीच रक्षा सहयोग व्यवस्थाओं में संभावित विस्तार से भारतीय सुरक्षा हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा और इसकी परिणिति उपमहाद्वीप में शस्त्रों की होड़ में होगी। कोलिन पावेल के इस बयान पर भारत ने आपत्ति जताई है कि भारत-पाकिस्तान रिश्तों में जम्मू और कश्मीर एक केन्द्रीय मुद्दा है। भारत ने पूरी दृढ़ता के साथ कहा कि केन्द्रीय मुद्दा जम्मू और कश्मीर नहीं बल्कि सीमा पार आतंकवाद है। भारत को इस बात से निराशा हुई है कि अमेरिका ने पाकिस्तान को आतंकवाद प्रोयाजित करने वाला देश घोषित नहीं किया।[17]

अमेरिका अपने रणनीतिक प्रयासों से पाकिस्तान की भारत के प्रति संघर्षात्मक नीति को बदलकर भारत को लाभ पहुँचा सकता है, अन्यथा आई.एस.आई. और इसकी संस्थायें भारत में आतंक को जारी रखेंगी।[18] परन्तु अमेरिका आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध में पाकिस्तान को अपना सबसे विश्वसनीय सहयोगी मानने की घोषणा समय-समय पर करता है। जी-20 शिखर सम्मेलन के दौरान अप्रैल 2009 में जिनमें आतंकवाद के विरुद्ध लड़ाई का मुद्दा प्रमुख था।[19] अमेरिकी विदेश मंत्री हिलेरी क्लिंटन ने जुलाई 2009 में भारत यात्रा के समय एक वक्तव्य में पाकिस्तान को भारत में आतंकवादी गतिविधियाँ संचालित करने का दोषी मानते हुए कहा था, 'पाक आतंकियों का सफाया करे तथा इस प्रकार की गतिविधियाँ बर्दाश्त नहीं की जायेंगी।'[20] अमेरिकी राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार जेम्स जोंस ने पाकिस्तान को चेतावनी दी कि 'पाकिस्तान को यदि सही अर्थों में सामाजिक-आर्थिक प्रगति करनी है तो उसे आतंकवाद पूरी तरह खत्म करना होगा।'[21]

इस स्थिति के प्रकाश में बराक हुसैन ओबामा की विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य ओसामा-बिन-लादेन तथा अलकायदा को ध्वस्त करना है ताकि अमेरिकी सर्वोच्चता को पुन: स्थापित किया जा सके। इसमें अमेरिका को भारत से सहयोग की भी अपेक्षा है।जी-20 शिखर सम्मेलन (अप्रैल 2009) में ओबामा तथा मनमोहन सिंह ने आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध में सहयोग पर सहमति जतायी।[22] आपसी सम्बंधो को नये आयाम प्रदान करते हुये भारत व अमेरिका ने आंतकी गतिविधियों से आंतरिक सुरक्षा में पारस्परिक सहयोग के लिये 23 जुलाई 2010 को काउंटर टेररिज्म को ऑपरेशन इनीशिएटिव (CCI) पर हस्ताक्षर किये। इसके द्वारा आतंकी गतिविधियों के वित्तीयन को रोकने, आंतकी विस्फोटो की संयुक्त जांच करने, मेगा शहरों में पुलिस की गतिविधियों में सहयोग करने के साथ-साथ जांच कौशल के विकास में भी सहयोग के प्रावधान किये गये हैं। बराक ओबामा की भारत यात्रा में प्रथम पड़ाव के रुप में 'ताज होटल' मुंबई का चुनाव भारत में आतंकवाद के प्रति संवेदनशीलता का संकेत था। बराक ओबामा ने भारत को आतंक के विरुद्ध युद्ध में प्रमुख सहयोगी स्वीकार किया।

अमेरिकी राष्ट्रपति ओबामा ने नवम्बर 2010 में भारत यात्रा के समय पाकिस्तान समर्थित आतंकवाद के संदर्भ में कहा, 'पाकिस्तान के भीतर आतंकियों के ठिकाने हमें मंजूर नहीं हैं। अलकायदा और उसके साथी संगठनों को हराना हमारा मकसद है।[23] अन्य प्रमुख अमेरिकी अधिकारियों द्वारा दिये गये वक्तव्यों से भी स्पष्ट होता है कि अमेरिका भारत में पाकिस्तान द्वारा फैलाये गये आतंकवाद से चिंतित है परन्तु अफगानिस्तान समस्या तथा पाकिस्तान के सामरिक महत्व के कारण अमेरिका के लिये उसके विरुद्ध दण्डात्मक कार्यवाही करना सम्भव नहीं है।

2000 में भारत-अमेरिका आतंकवाद विरोधी कार्य समूह की स्थापना हुई थी। इसी के अन्तर्गत जून 2010 में भारत-अमेरिका ने 'Counter Terrorism Cooperation Initiative' की स्थापना के पत्र पर हस्ताक्षर किये। इसके अन्तर्गत आतंकी गतिविधियों की वित्तीय सहायता, बम काण्ड में सहयोगी समूहों, सुरक्षा व्यवस्था का असफल हो जाने के कारणों पर विचार-विमर्श किया गया।[24] ये समझौता आतंकवाद के विरोध में 'अत्यधिक महत्वपूर्ण' है।

भारतीय विशेषज्ञों के अनुसार ओबामा का मुम्बई के होटल ताज में ठहरना ही पाकिस्तान की आतंकवाद को जड़ से खत्म करने तथा आतंकवाद के खिलाफ भारत के साथ मिलकर काम करने का संकेत था।[25]

1 मई 2011 की मध्य रात्रि में अलकायदा के प्रतीक बन चुके ओसामा- बिन-लादेन को पाकिस्तान की राजधानी इस्लामाबाद के निकट ऐबटाबाद में अमेरिकी कमांडो (Seal) ने मार कर एक बड़ा

ISSN 2277-5587

अध्याय समाप्त कर दिया। उत्तर 9/11 में अमेरिका द्वारा घोषित वैश्विक आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध (GWOT) विश्व के ज्ञात इतिहास में संभवत: पहला अवसर था जब किसी एक अपराधी के लिये किसी देश को युद्ध की घोषणा करनी पड़ी हो।[26] 9 मई 2011 को प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने बराक ओबामा से दक्षिण एशिया में आतंकवादी गतिविधियों की वृद्धि पर अपनी चिंता टेलीफोन वार्ता के द्वारा व्यक्त की। इसके परिणामस्वरुप अमेरिका ने हक्कानी नेटवर्क (HQN) के बदरुद्दीन हक्कानी पर प्रतिबंध लगाया। इससे भारत को अपने आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध में राहत मिलने की संभावना है।[27]

अमेरिका की भारत और पाकिस्तान में हितों की प्रकृति अलग-अलग है। यह अमेरिका के भारत की ओर बढ़ते झुकाव से स्पष्ट है। अब अमेरिका की दृष्टि में भारत का राजनैतिक, आर्थिक और सामरिक महत्व एशिया की स्थिरता और समृद्धि के लिये न केवल महत्वपूर्ण है बल्कि उसे भारत अमेरिकी हितों की रक्षा में सामरिक भागीदार लगता है यह कहा जाने लगा है कि पिछले 50 वर्षो में अमेरिका ने भारत और उसकी महत्वाकांक्षा को समझने में भूल की है।[28] बुश प्रशासन में अफगानिस्तान में अमेरिका के राजदूत जलमेय खालीजाद ने कहा था, संयुक्त राज्य अमेरिका को पाकिस्तान से आतंकवादियों के सभी शरणस्थल और सैनिक गतिविधियों को बन्द करने के लिये कहना चाहिये, अन्यथा हमें पाकिस्तान की सहमति या असहमति से इन आतंकवादियों के शरणस्थल पर सैनिक कार्यवाही करनी चाहिये। इसके विपक्ष में दिया जाने वाला तर्क कि यह विघटनकारी होगा अतिश्योक्ति है।[29]

वैश्विक आतंकवाद को रोकने के लिए दोनों देश निरन्तर सहयोग कर रहे हैं। इसी संदर्भ में ओबामा-मनमोहन सिंह वार्ता (सितम्बर 2013) के समय आतंकी गतिविधियों पर संयुक्त कार्यवाही करने सम्बन्धी समझौता हुआ।[30] प्रधानमंत्री मोदी की अमेरिका यात्रा के समय सम्पन्न छ: समझौतों में सबसे महत्वपूर्ण समझौता आतंक के विरुद्ध सहयोग से ही सम्बन्धित था।[31] जिसके अन्तर्गत दोनों देश एक-दूसरे के साथ आतंकी गतिविधियों से सम्बन्धित सूचनाएं साझा करने पर सहमत हुए परन्तु ऐसे समझौते होना ही पर्याप्त नहीं है। प्रश्न यह कि क्या भारत के प्रति अमेरिका की नीति में कोई परिवर्तन होगा? अमेरिका के नव-निर्वाचित राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रम्प अपने चुनावी भाषणों में स्पष्ट कर चुके हैं कि वे आतंकवाद के विरुद्ध कठोर कदम उठायेंगे। यहां तक की वह अमेरिका में मुस्लमानों के प्रवेश पर भी रोक लगाने का प्रयास करेंगे।[32] परन्तु उनकी दृष्टि में भारत की क्या भूमिका होगी? राष्ट्रपति चाहे रिपब्लिकन हो या डेमोक्रेटिक अमेरिका की नीतियों में मूल परिवर्तन नहीं होते। उनकी दृष्टि में केवल राष्ट्रहित सर्वोपरी रहा है उसके लिए उन्हें भारत से सहयोग करना पड़े या पाक को सहायता देनी पड़े ये परिस्थितियों पर निर्भर करता है। परन्तु अब अमेरिका में भी पाक विरोधी स्वर उभरने लगे हैं। अमेरिकी कांग्रेस में आतंकवादी देश घोषित करने सम्बन्धी बिल प्रस्तुत हुआ है।[33] अमेरिकी कांग्रेस पाकिस्तान को दी जाने वाली सहायता में कटौती की मांग कर रही है।[34] यदि ऐसा होता है तो भारत-अमेरिकी सम्बन्धों में ऐतिहासिक मोड़ आयेगा।

निष्कर्ष

इस प्रकार स्पष्ट है कि भारत-अमेरिका के मध्य आतंक के विरुद्ध युद्ध में सहयोग बढ़ रहा है।

अमेरिका द्वारा 2009 में नई अफ-पाक नीति की घोषणा में पाकिस्तान को महत्वपूर्ण भूमिका प्रदान की गई क्योंकि दक्षिणी अफगानिस्तान से लगे पाकिस्तान सीमावर्ती क्षेत्र में तालिबान के प्रभावशाली समूहों को शरण प्राप्त है। इसलिये पाक को अतिरिक्त सहायता भी उपलब्ध कराई जाती है। पाकिस्तान ने इसके बदले में तालिबान विरोधी अभियान में सहमति दी। अमेरिका अफगानिस्तान में पुनर्निर्माण हेतु भारत को विशेष भूमिका देने का पक्षधर नहीं है। पाकिस्तान को पूर्णतया तालिबान मुक्त अफगानिस्तान नहीं चाहिए। पाकिस्तान का मानना है ऐसा अफगानिस्तान भारत का मित्र होगा। अमेरिका से मित्रता अथवा सहायता राष्ट्र की सम्प्रभुता की कीमत पर ही प्राप्त होता है। अमेरिका-पाकिस्तान को आर्थिक व सैनिक देने वाला सबसे बड़ा देश है। अमेरिका अस्थायी नीति का पालन कर रहा है, कभी पाकिस्तान समर्थक और कभी भारत समर्थक। भारत को आशा थी कि अमेरिका 26 नवम्बर 2008 की आतंकी घटना के बाद पाकिस्तान की शरण में रह रहे आतंकवादियों को दण्ड दिलवाने में मदद करेगा। परन्तु अमेरिका इस तर्क से संतुष्ट हो गया कि इसमें गैर राज्य संगठनों का हाथ है। डेविड हेडली के बयानों से स्पष्ट था कि वह पाकिस्तान की खुफिया एजेन्सी ISI के लिये कार्य करता था तथा ISI ने मुम्बई हमले की योजना बनाई थी, आतंकवादियों को प्रशिक्षित किया और वित्तीय सहायता दी थी। अमेरिका ने सार्वजनिक रुप से यह माना है कि पाकिस्तानी सेना और ISI का गठबन्धन है। पाकिस्तान एक तरफ अमेरिका के साथ आतंक के विरुद्ध युद्ध में सहयोग में सहयोग का दिखावा करता है तो दूसरी तरफ उन्हें पाकिस्तान में शरण देता है। 2 मई 2011 से पूर्व तक अमेरिका पाकिस्तान को अपना सबसे बड़ा सहयोगी मानता रहा। अमेरिका ने 9/11 और 26/11 को समान आतंकवाद का दर्जा नहीं दिया था। भारत को आशा थी कि ऑपरेशन किल ओसामा बिन लादेन के बाद अमेरिका का भारत में पाक समर्थित आतंकवाद के प्रति दृष्टिकोण बदलेगा परन्तु अमेरिका की विदेश नीति दोहरे मापदण्ड से संचालित होती है। 2 मई 2011 के बाद अमेरिका ने यह दावा किया कि भविष्य में भी इस प्रकार की कार्यवाही की जा सकती है। परन्तु क्या अमेरिका भारत की इस प्रकार की कोई कार्यवाही को न्याय संगत कहेगा? परन्तु जिस प्रकार राष्ट्रपति ट्रम्प ने अपनी नीति में आतंकवाद के विरुद्ध युद्ध को प्राथमिक माना है, तथा इस संदर्भ में प्रधानमंत्री मोदी से टेलीफोन पर वार्ता करना इस बात का संकेत है कि आतंकवाद के विरुद्ध दोनों देशों के मध्य सहयोग की अपार संभावनाएँ हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. बी. रमन, 'काउन्टर-टेररिज्म कोपरेशन-इंटरनेशनल टैररिज्म मॉनिटर पेपर नं. 213, साउथ एशिया एनेलिसिस ग्रुप।
2. 'काउन्टर टैररिज्म कॉ-ऑपरेशन वेबसाइट' www.saag.org 5 अप्रैल 2007.
3. पेट्रियट, 18 जून 1990.
4. उपरोक्त।
5. 'काउन्टर टैररिज्म कॉ-ऑपरेशन वेबसाइट www.saag.org 5 अप्रैल 2007.
6. उपरोक्त।
7. ओडेड लोवेनहैम एण्ड ब्रैनेट जे. स्टीर्ले, ''इस्टीट्यूशन ऑफ वायलैंस, ग्रैट पॉवर'', इन्टरनेशनल पॉलिटिकल साइंस रिव्यू, जनवरी 2010.
8. 'दृष्टि व्यक्तव्य 2000', द हिन्दू, 22 मार्च 2000.
9. आफताब आलम, यू.एस. पॉलिसी टूवडर्स साउथ एशिया, राज पब्लिकेशन्स, 1998, पृ.155.
10. उपरोक्त।
11. जे.एन. दीक्षित, 'भारत की विदेश नीति और आतंकवाद', नई दिल्ली, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, 2006.
12. उपरोक्त।
13. 'साझा नज़रिया', जनता विकास सहभागिता, पृ.14.
14. उपरोक्त।
15. 'जनता विकास सहभागिता', भारत में नई दिल्ली स्थित अमेरिकी दूतावास के पब्लिक अफेयर्स अनुभाग द्वारा प्रकाशित, थॉमस प्रेस, फरीदाबाद, 2005, पृ. 16-17.
16. उपरोक्त।
17. जे.एन. दीक्षित, 'भारत की विदेश नीति और आतंकवाद', नई दिल्ली, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, 2006, पृ.263.
18. राजस्थान पत्रिका, 10 जुलाई, 2009.
19. 'ओबामा-मनमोहन डायलॉग' साउथ एशिया मोनिटर, 11 अप्रैल, 2009, वेबसाइट www.southasiamonitor.org.
20. दैनिक भास्कर, 12 जुलाई 2009.
21. उपरोक्त।
22. अशोक शर्मा, 'ओबामा-मनमोहन डायलॉग : एमफेसिस ऑन स्ट्रेन्थनिंग इंडो-यूएस काउन्टर टैरर कॉपरेशन', साउथ एशिया मॉनिटर, ए परस्पैक्टिव ऑन द रिजन। www.southasiamonitor.org.
23. द टाइम्स ऑफ इंडिया, 9 नवम्बर 2010.
24. द टाइम्स ऑफ इंडिया, 5 जून 2010.
25. दैनिक भास्कर, 12 नवम्बर 2010.
26. हिन्दुस्तान टाइम्स, 2 मई 2011.
27. डेली न्यूज, 10 एवं 12 मई 2011.
28. हिन्दुस्तान टाइम्स, ''काबुल, दिल्ली कीप इस्लामाबाद आउट'', 10 जनवरी 2011.
29. उपरोक्त।
30. ओबामा-मनमोहन सिंह वार्ता, 8 सितम्बर, 2013. www.thehindu.com.
31. 8 जून 2016, www.indianexpress.com
32. 28 जून 2016, www.fortune.com
33. 22 सितम्बर 2016, www.deccanchronicle.com कांग्रेस की आतंकवाद नियंत्रण समिति के सदस्य टेड पोच, दाना रोहरा बाचर द्वारा प्रस्तुत।
34. 4 अगस्त 2016, m.hindu.com>news>.

 ISSN 2277-5587

भक्तिकालीन संत कवयित्रियों के काव्य में स्त्री स्वातंत्र्य के स्वरें

डॉ. जगदीश गिरी
असिस्टेंट प्रोफेसर, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

भारतीय भक्ति आंदोलन की चर्चा करते हुए अक्सर उसे केवल उत्तर भारत तक सीमित करके देखने की रुढ़ि बन चुकी है। कबीर, सूर, जायसी और तुलसी से आगे प्राय: बात नहीं होती जबकि सच्चाई ये है कि भक्ति आंदोलन का स्वरुप अखिल भारतीय था। देश के विभिन्न हिस्सों में अन्तर्धारा के रुप में वह विकसित होता हुआ उत्तर भारत तक आता है। ठीक उसी प्रकार इस आंदोलन में स्त्री-संतों व भक्तों की भूमिका को बहुत नगण्य मानकर उनकी कोई चर्चा आलोचकों द्वारा नहीं की जाती जबकि भारत के विभिन्न क्षेत्रों में केवल मध्यकाल में ही शताधिक स्त्री संतों-भक्तों की उपस्थिति मिलती है। उनकी रचनाओं में तत्कालीन सामाजिक-धार्मिक रुढ़ियों व अन्ध-मान्यताओं के खिलाफ़ मजबूत स्वर सुनाई पड़ता है। तमिलनाडु की आण्डाल, कर्नाटक की अक्क महादेवी, कश्मीर की लल्लद्यद और राजस्थान की मीरां का व्यक्तित्व किसी भी मायने में पुरुष संतों से कमतर नहीं है। इन कवयित्रियों ने सामाजिक-धार्मिक सुधार के साथ-साथ स्त्री-मुक्ति की आवाज भी बुलंद की। आज का स्त्री विमर्श इन कवयित्रियों का ऋणी है।

संकेताक्षर: भक्ति आंदोलन, सामाजिक-धार्मिक रुढ़ियां, जड़ता, स्वातंत्र्य, स्त्री-मुक्ति।

वैदिक काल से ही विदुषी नारियों ने पुरुषों के समान अपने विचारों की अभिव्यक्ति स्वतंत्र रुप से की है, परन्तु उनकी प्रारंभिक रचनाओं से ही यह अभिव्यक्त हो जाता है कि वह निरन्तर पुरुष की शक्ति और अहं के तले कुचली जाती रही है। अधिकांश वैदिक ऋषिकाओं का लेखन पुरुष सत्ता के विरुद्ध अथवा अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति के रुप में विकसित होता है। शताब्दियों बाद 'बौद्ध-थेरियों' के द्वारा पुन: स्त्री की आवाज बुलंद की गई, परन्तु पुरुष वर्चस्व के नीचे दमित स्त्री की भावनाएँ और उसका अस्तित्व अधिक नहीं उभर पाया। समय के साथ-साथ स्त्री पर अनेक बन्धन और वर्जनाएँ लाद दी गई, जिससे वह चाहकर भी पुरुष-सत्ता के विरोध में खड़ी न हो सके। घर की चार-दीवारी उसका कार्यक्षेत्र हो गई तथा पति की हर इच्छा को पूरा करना उसका कर्त्तव्य। शनै-शनै वह इसी को अपनी नियति समझकर इस अवस्था को स्वीकार करती गई। उसे हर क्षेत्र और हर प्रदेश में पुरुषवादी व्यवस्था का शिकार होना पड़ा। यह अत्याचार उच्च कुल की नारियों को मर्यादा के नाम पर और अधिक सहना पड़ा था। यही वजह है कि नारी-संतों व भक्तों में से अधिकांश उच्च कुल व वर्णों से संबंधित रही हैं, जबकि पुरुष संतों के मामले में यह विपरीत है।

भक्ति-आन्दोलन ने इन नारी-संतों व भक्तों को यह अवसर प्रदान किया कि वे अपने अस्तित्व को पहचानें और खोखली सामाजिक-धार्मिक वर्जनाओं को उखाड़ फेंकें। इसका प्रमाण है उनकी रचनाएँ, पद, वाणियाँ और गीत, जो कि इन नारी-संतों द्वारा तत्कालीन व्यवस्था के प्रति उठाए गए प्रश्नों व अकुलाहट का महत्वपूर्ण दस्तावेज है।

नारी-सन्त व भक्त कवयित्रियों ने भक्ति को पारम्परिक सामाजिक-धार्मिक रुढ़ियों से मुक्ति का माध्यम बनाकर नारी स्वातन्त्र्य की घोषणा की है। अखिल भारतीय स्तर पर विकसित इस काव्य में आश्चर्यजनक साम्य नजर आता है। पारिवारिक-सामाजिक रुढ़ियों के भँवर में जकड़ी हुई ये भक्त कवयित्रियाँ इन परम्पराओं एवं वर्जनाओं का विरोध करती हैं और विकृतियों पर कठोर प्रहार करती हैं। रुढ़ियों और वर्जनाओं से मुक्ति पाने के लिए इनका प्रथम विद्रोह उस पति नामक जीव से होता है जो इस जन्म ही नहीं, जन्म-जन्मांतर तक उनकी स्वतंत्रता पर कुंडली मारकर बैठ जाता है। यही कारण है कि उन्होंने ईश्वर को ही अपना पति मानकर उपासना की। मीरा और ताज कृष्ण को पति मानती हैं, आण्डाल भगवान

रंगनाथ को तथा अक्कमहादेवी भगवान चेन्नमल्लिकार्जुन को। मीरा इस लोक के पति की अपेक्षा कृष्ण की प्रेयसी बनकर रहना अधिक श्रेयस्कर मानती है-

''म्हारो साँवरो ब्रजवासी।
जग सुहाग मिथ्या री सजनी, होवाँ ही मिट ज्यासी।''

और आण्डाल भगवान रंगमन्नार के साथ जन्म-जन्मान्तर तक रहकर उनकी सेवा करना चाहती है-

एट्रेक्कुम एकेलु पिरविक्कुम्
उन्दनोडु उट्रोमे आवोम।
उन्नक्के नाम आट्चेय्वोम्।''[1]

अक्कमहादेवी को तो भगवान चेन्नमल्लिकार्जुन को छोड़कर अन्य सभी लौकिक पुरुष अथवा लौकिक पति बादल पार की पुतली लगते हैं अर्थात् मिथ्या हैं-

इहलोक के लिए एक पति, परलोक के लिए दूजा ?
सांसारिक पति एक, फिर पारमार्थिक दूजा ?
मेरा पति चेन्नमल्लिकार्जुन को छोड़
अन्य सारे पति हैं मानो बादल पार की पुतली।''[2]

नागरीदास जी की प्रिया रसिक बिहारी बनी-ठनी जी ने भी मध्यकालीन युग की पराधीनता में अपनी कामनाओं की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति के फलस्वरुप नागरीदास जी के साथ, समस्त सामाजिक तथा वैधानिक नियमों का उपहास करते हुए अपने ह्रदय का संसार बसाया था। प्रेम की आतुरता समाज के उपहास की परवाह नहीं करती, उनके जीवन के प्रत्यक्ष अनुभव का एक साकार उदाहरण अपार्थिव कृष्ण पर आरोपित भावनाओं से मिल सकता है-

मैं अपने मन भावन लीन्हों, इन लोगन को कहा नहिं कीन्हों।
मन दे मोल लियो री सजनी, रत्न अमोलक नवल रंग भीनो।
कहा भयो सबके मुँह मोरे मैं, पायो पीव प्रवीनो।
रसिक बिहारी प्यारो प्रीतम, सिर विधना लिख दीनी।।'[3]

अर्थात् जब अपने प्रियतम से संबंध बना लिया तो अब लोग चाहे कुछ भी कहें, कोई परवाह नहीं। जब मन का मोल देकर प्रिय को लिया है तो फिर चाहे दुनिया भले ही मुँह मोड़े। यहाँ मीरा के उसी क्रांतिकारी पद की स्मृति हो आती है-

माई री! मैं तो लियो गोविन्दो मोल
कोई कहे चोड़े, कोई कहे छाने, लियो री बजंता ढोल।
कोई कहे मुँहघो, कोई कहे सुहँगो, लियो री तराजू तोल।

इसी प्रकार सामाजिक-धार्मिक सभी बंधनों को तोड़कर 'ताज' जैसी कवयित्री ने खुले आम यह घोषणा कर दी कि मैं जब अपने प्रिय के प्रति समर्पित हो गई हूँ तो फिर अपने धर्म का परित्याग करने को भी तैयार हूँ। ऐसा उदाहरण विश्व साहित्य में भी विरला ही होगा-

सुनो दिलजानी, मेरे दिल की कहानी
तुम दस्त ही बिकानी बदनामी भी सहूँगी मैं।
देव पूजा ठानी, मैं निवाज हूँ भुलानी
तजे कलमा-कुरान, साढ़े गुनन गहूँगी मैं।
स्यामला सलोना सिर ताज कुल्हे दिये
तेरे नेह दाग में निदाघ ह्वै दहूँगी मैं।
नन्द के कुमार कुरबान तोरी सूरत पै
त्वाड़ नाल प्यारे हिन्दुवानी ह्वै रहूँगी मैं।।[4]

यद्यपि पुरुषवादी मानसिकता वाले भारतीय समाज को इन नारी-भक्तों की यह विद्रोही प्रवृति नागवार गुजरी थीं और इनको येन-केन प्रकारेण रास्ते पर लाने की कोशिशें भी कम नहीं हुई परन्तु इन साधिकाओं को अपने साधना-पथ से च्युत करने में समाज को सफलता नहीं मिली। बल्कि इनका विद्रोह भाव कम होने की बजाय और बढ़ा। मीरा, ललद्यद, अक्कमहादेवी, आण्डाल, ताज, बनीठनी, गवरीबाई, जनीबाई सहित अनेक नारियों ने तो घर ही छोड़ दिए। स्वतंत्रता में बाधा इन्हें स्वीकार नहीं थी। लल्लद्यद और अक्कमहादेवी ने तो वस्त्र भी त्याग दिए और नग्न रहने लगी। यह तथाकथित नैतिकतावादियों और सामन्ती शक्तियों के मुंह पर करारा तमाचा था। लल्ल कहती हैं- 'आसा बोल कडिन्यम सासा... अर्थात् चाहे उसको कोई हजार गालियाँ दे उसकी आत्मा को कष्ट नहीं पहुँचता। वह तो उस सहज शंकर की भक्त है।'[5]

सच तो यह है कि भक्ति मार्ग पर स्वतन्त्रतापूर्वक चलने की जिद इन नारी-भक्तों के लिए अस्तित्व की लड़ाई थी। इसीलिए इन्होंने साहस और आत्मविश्वास के साथ विपरीत परिस्थितियों का मुकाबला किया। पीड़ाओं के बीच से गुजरते हुए ये इस संसार की वास्तविकता को जान गई थी। इसी से उनके काव्य में विद्रोह की तीव्रता व्यंजित हुई। अक्कमहादेवी कहती हैं-

हड्डियों का ढाँचा
मल-मूत्र का खाँचा
पीब भरा देगचा
जल जाने दे इस तन को।[6]

वहीं लल्लद्यद का स्पष्ट मत है कि इस संसार में कोई भी वस्तु चिरस्थायी नहीं है। चिरस्थायी तो केवल शिव हैं-

दमी ड्याठुम नद ग्रजवनी
दमी ड्युठुम सुम नत तार
दमी ड्याठुम थर फोलवनी
दमी ड्युठुम गुल नत खार।[7]

अर्थात् अभी-अभी नदी को गर्जते देखा, अभी अभी उस पर पुल बनते देखे। अभी-अभी फलों से लदी डाली देखी और अभी अभी उस पर फूल देखे न काँटे।' जब सब-कुछ नष्ट प्राय: है तो फिर भय

ISSN 2277-5587

कैसा ? मीरा ने सबको ठुकरा दिया, सबको उनकी औकात बता दी। वे निर्भय होकर घर से बाहर आ गई। जिसके लिए कृष्ण के अलावा और किसी पुरुष का अस्तित्व ही न हो, उसके लिए किसी से भय और लज्जा का सवाल ही क्या ? उन्होंने साहस के साथ कहा-

'राजा रुठ्यां नगरी त्यागाँ, हरि रुठ्याँ कठ जाणा।'

राजा रुठेगा तो अपनी नगरी ही लेगा, वहीं से निकालेगा, परन्तु यदि हरि रुठ गया तो फिर मैं किसके पास जाऊँगी ?[8] कन्नड़ कवयित्री संकव्वे भी अपना दृढ़ संकल्प व्यक्त करती हैं-

रोजी पाकर इक बार
फिर मैं, हाथ न पसारुंगी
नंगा करके मारी जाऊँ, यदि हाथ पसारुँ।'[9]

'रोजी पाना' वीर-शैव दर्शन में साधक के लिए आवश्यक था। यह भक्तों के कर्म की उपासना का प्रतीक था। संभवत: महिलाओं को संत-जीवन के काबिल नहीं माना जाता रहा होगा और 'कायक धर्म' का पालन करने की उनकी क्षमता को संदेह से देखा जाता होगा। इस का बड़ा चुनौतीपूर्ण शब्दों में जवाब संकव्वे ने दिया है। अक्कमहादेवी तो इससे भी आगे बढ़कर कहती हैं-

काम की खोपड़ी चीरकर
काल की आँखें नोंचकर
चन्द्र-सूर्य को भूनकर
खाने वाली मुझ पर
कौन उँगली उठा सकता ?[10]

अन्यत्र भी उन्होंने इस तरह के भाव व्यक्त किए हैं जो उनकी अदम्य जिजीविषा और स्वातन्त्र्य चेतना का प्रमाण है-

लावारिस समझकर मुझे छलो मत !
कभी मैं भय-भीत न होऊँगी
जी रही हूँ मैं सूखे पत्ते खाकर
जी रही हूँ मैं असि-धारा पर सोकर'[11]

संत कवयित्री लिंगम्मा ने क्रांति एवं विद्रोह की इस भावना को प्रतीकात्मक रुप से उभारा है-

उजड़ी इक बस्ती में जब मैं चली गई
पीछा किया था कुत्तों ने मेरा
रोक लिया था पथ भालू बाघों ने मेरा
भय खाकर जब पत्थर मैंने उठा लिया
कुत्ते सारे भाग खड़े हुए
भालू बाघ वहीं तिरोधान हुए,
बस्ती वह निर्मल बन गई।[12]

राजस्थानी-गुजराती कवयित्री गवरीबाई तो स्पष्टत: संसार को चुनौती देती है कि, यदि मुझे अपने 'गोपाल' पर भरोसा है तो फिर कोई मेरा क्या बिगाड़ लेगा, चाहे कोई अच्छा कहे या बुरा, क्या फर्क पड़ता है-

'साचो संग सामला को लाग्यो, जेसो है चोल को रंग।
बाई ने गोपाल रो 'भरुसो भारी' हो तो 'कहा करे संसारी।'
भले ई कोय बुरी कहे, कोय भली कहे, कोय गाली दे......'[13]

यह बड़ी बात है कि इन भक्त कवयित्रियों को अपना नारी होना सालता नहीं है। उन्होंने कभी भी स्वयं को हीन नहीं माना। बल्कि संचिन होनम्मा जैसी कन्नड़ कवयित्री तो नारी को हीन समझने वालों को फटकार तक लगाती है। मराठी संत कवयित्री बहिणाबाई और मुक्ताबाई जैसी संत तो कबीर से भी आगे होकर कहती हैं- 'स्त्री जन्म मुक्ति-मार्ग में बाधक नहीं है।' और 'चींटी ने उड़कर आसमान नाप लिया, सूरज को निगल लिया।'[14] मध्यकालीन सामंती समाज में स्त्री द्वारा इस प्रकार की उद्घोषणाएँ उनकी स्वातन्त्र्य-चेतना को प्रमाणित कर देती हैं। इन नारी-संतों ने अपने जीवन की दिशा स्वयं निर्धारित की और उसके रास्ते भी स्वयं ने ही खोज निकाले। सुधा सिंह ने 'भक्ति-आंदोलन और मीरां' नामक निबंध में मीरा के संबंध में जो कहा है, वह लगभग सभी कवयित्रियों के संबंध में सत्य है- 'मीरा के काव्य में जिस चीज पर सर्वाधिक जोर है वह है अपने मन द्वारा दिए गए निर्णय को महत्वपूर्ण मानना। मीरा का विरोध वैष्णव भक्ति में रुचि दिखाने के कारण नहीं हुआ बल्कि मीरा के अधिकांश पदों से यही जाहिर होता है कि 'साधुओं' की संगति करने और मंदिरों में तन्मय होकर नाचने, जोगन भेष धरने के कारण हुआ।'[15] मीरा ने एक पद में अपने लौकिक पति और सांसारिक संबंधों को 'झूठा' करार दिया है। वह बतलाती हैं कि उन्होंने जिस वर को परणा है उसके आगे राणा 'कूड़ो वर' है। मीरा राणा से अपने विवाह का विरोध करती हुई कहती हैं- 'कूड़ो वर कुण परणीजे माय, परणूं तो मर-मर जाय।'[16]

क्या यह महत्वपूर्ण नहीं कि संसार जिस मार्ग को ठीक समझता है मीरा उसे अपनी बुद्धि से परखना चाहती हैं। स्त्री अपनी बुद्धि से निर्णय ले और संसार के मार्ग को गलत बताए यह समाज की पुंसवादी मानसिकता को ठेंगा दिखाने जैसा है। यही कारण है कि मीरा से राणा भी रुठते हैं और संसार भी किंतु मीरा अपने निर्णय को नहीं बदलती-

'चोरी करुँ न मारगी, नहिं मैं करुँ अकाज।
पुन्न के मारग चालताँ, झक मारो संसार।।'[17]

वह स्त्री-दासता के प्रतीक घूँघट का भी त्याग करती हैं और साज-शृंगार का भी-

'घूँघट को पटि दूर कियो, सरि बांध्यों छै जूड़ो।'[18]

'नयने लागे तब घूंघट कैसो, लोक-लाज तिनका ज्यूं तोर्यो।'[19]

मीरा तो यहाँ तक कह देती है कि यदि 'राणा' को अपने सम्मान व मर्यादा की ज्यादा ही फिक्र है तो अपने घर का परदा कर लें, मीरा तो स्वतंत्र ही रहेगी-

'लोक लाज कुल काण जगत की दई बहाय जस पाणी
अपने घर का परदा कर ले, मैं अबला बौराणी।'[20]

प्राय: सभी भक्त कवयित्रियाँ अपने आराध्य के प्रति उन्मुक्त प्रेम भाव को खुले आम अभिव्यक्त करती हैं और संत कवयित्रियों ने 'सतगुरु' के प्रति अपनी अगाध आस्था व्यक्त की है। सद्गुरु से मिलने की प्रबल आकांक्षा एवं प्रयत्न, सत्संग में जाकर ज्ञान प्राप्त करने की कोशिश, पुरुषों के साथ सार्वजनिक जीवन में एक साथ उठने-बैठने की इच्छा, सार्वजनिक सम्पर्क बढ़ाने आदि की कोशिशें वस्तुत: सामंती परिवेश में स्त्री के लिए बनाए सीमित दायरे को तोड़ने की कोशिश है, यह स्त्री के सार्वजनिक जीवन में अपना स्थान बनाने की कोशिश भी है। इन साधिकाओं ने 'भेदभाव' और 'भिन्नता' को चुनौती देने के लिए 'संत-सत्संग' के मंच का इस्तेमाल किया। भिन्नता एवं वर्चस्व को बनाए रखने वाले केन्द्रों और संस्थाओं को चुनौती दी गई। 'घर', 'घर का परिवेश', 'शादी', 'नियम', 'मर्यादा' एवं 'लज्जा' के विकृत रुपों को सीधे-सीधे चुनौती दी गई। ये सभी स्त्री को दासी बनाने का काम करते थे, अत: इनके दायरे से बाहर निकलने की छटपटाहट सभी नारी-संतों-भक्तों के काव्य में दृष्टिगोचर होती हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *'माधुर्योपासना की परम आराधिका आण्डाल और मीरा, एक तुलना' लेख, डॉ. एम. शेषन, भाषा, जुलाई-अगस्त, 2004, पृ. 52*
2. *वचन, प्रो.- भालचन्द्र जयशेट्टी, कर्नाटक साहित्य अकादमी, बंगलौर, 1988, पृ. 141*
3. *मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियाँ, डॉ. सावित्री सिन्हा, आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1953, पृ. 165*
4. *वही, पृ. 187*
5. *ललद्यद, जयलाल कौल, अनु.- डॉ. शिब्बन कृष्ण रैना, साहित्य अकादमी, दिल्ली, 1980,पृ. 83*
6. *वचन, सं.- भालचद्र जयशेट्टी, कर्नाटक साहित्य अकादमी, बंगलौर, 1988, पृ. 133*
7. *कश्मीरी भाषा और साहित्य, डॉ. शिब्बन कृष्ण रैना, सन्मार्ग प्रकाशन दिल्ली, 1972, पृ. 64*
8. *भक्ति आन्दोलन और भक्तिकाव्य, शिवकुमार मिश्र, अभिव्यक्ति प्रकाशन इलाहबाद, 2001, पृ. 182*
9. *वचन, सं.- भालचन्द्र जयशेट्टी, कर्नाटक साहित्य अकादमी, बंगलौर, 1988 पृ.- 229*
10. *वही, पृ. 145*
11. *वही, पृ. 139*
12. *वही, पृ. 231*
13. *पद संख्या- 445, संग्रह- गुजरात वर्नाक्युलर सोसाइटी, संदर्भ- गवरी बाई, सं.- मथुराप्रसाद अग्रवाल, ज्योति पुंज, साहित्य अकादमी, दिल्ली,1996, पृ. 17*
14. *भारतीय भाषाओं में महिला लेखन, सं.- आशारानी व्होरा,नटराज प्रकाशन, दिल्ली, 2005, पृ. 13*
15. *मध्यकालीन साहित्य विमर्श, सं.- सुधा सिंह, आनन्द प्रकाशन, कोलकाता, 2004, पृ. 373*
16. *'मीरां बृहत् पद संग्रह, डॉ. पद्मावती शबनम्, लोकसेवक प्रकाशन, बनारस, 1952, पृ. 6*
17. *वही, पृ. 06*
18. *वही, पृ. 18*
19. *वही, पृ. 30*
20. *वही,पृ. 124*

भारतीय महिला राजनीतिक सहभागिता: समस्या एवं सुझाव

सन्जूलता गहलोत
शोधार्थी, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

प्राचीनकाल से आज तक महिलाओं की राजनैतिक व सामाजिक स्थिति में काफी उतार-चढ़ाव आए हैं। कभी 'आधी दुनिया' को प्रतिष्ठा और सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था तो कभी उन्हें दोयम दर्जे का नागरिक माना जाता था। आजादी से पूर्व भारत में महिलाओं की स्थिति कोई बहुत अच्छी नहीं थी। अंग्रेजों के जाने के बाद जब भारतीयों का आजादी मिली तो हमारे नीति-निर्धारकों ने महिलाओं की सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए भी प्रयास करने प्रारम्भ कर दिए क्योंकि 'आधी दुनिया' के विकास की दौड़ में पीछे रह जाने पर कोई भी राष्ट्र अपने समग्र विकास का दावा नहीं कर सकता। आजादी के बाद शुरु हुआ महिला सशक्तीकरण का आंदोलन आज भी जारी हैं इस दौरान इसे कुछ असफलताएं मिलीं तो इसके खाते में बहुत सी सफलताएं भी दर्ज हैं।

संकेताक्षर : *महिला आरक्षण, राजनीतिक सहभागिता, राजनीतिक सोच, राजनीतिक विचारधारा और राजनीतिक जागरुकता।*

हमारे देश में प्राचीन समय से ही राजनीति में महिलाओं की सहभागिता रही है। आदिवासी कबीलो में अनेक मातृसत्तात्मक समाज पाये जाते हैं। रामायण, महाभारत काल के साहित्य में कई स्त्री राज्यों का वर्णन है। कैकेयी राजा दशरथ की पत्नी थी। मुहम्मद गौरी के आक्रमण के समय पाटन पर राजमाता नायकी देवी का शासन था। अंग्रेजों से लोहा लेने वाली कित्तूर की रानी चेन्नमा, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, चांद बीबी, अहिल्या बाई होल्कर के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। ब्रह्म समाज के संस्थापक राजा राममोहन राय, प्रार्थना समाज के संस्थापक गोविन्द रानाडे, आर्य समाज के संस्थापक स्वमी दयानंद ने सामाजिक पुनर्निर्माण में नारी उत्थान के कार्यो को प्रमुख स्थान दिया।[1]

बीसवीं शताब्दी के दूसरे दशक में राजनैतिक क्षेत्र में महिलाओं की मजबूत पकड़ बनने लगी। महान आयरिश महिला ऐनीबेसेन्ट, श्रीमती मार्गरेट कजिंस तथा मार्गरेट नोबल (सिस्टर निवेदिता) के साथ मिलकर भारतीय स्तर पर पहला महिला संगठन स्थापित कर महिलाओं को सीमित मताधिकार प्रदान किया। फलस्वरुप मुथुलक्ष्मी रेड्डी पहली महिला विधायक के रुप में विधान सभा पहुँची। 1930 में नमक सत्याग्रह के समय गांधी जी ने खुले शब्दों में महिलाओं को स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के लिये आमंत्रित किया। 1942 के 'भारत छोड़ो आंदोलन के समय सुचेता कृपलानी, श्रीमती उषा मेहता, अरुणा आसफ अली, जैसी नयी साहसी महिलायें सामने आई। संविधान निर्माण में जिन साहसी महिलाओं ने भाग लिया उनके नाम लीला रे, सरोजनी नायडू, राजकुमारी अमृत कौर, हंसा मेहता, दुर्गाबाई, सुचेता कृपलानी, रेणुका रे, कमला चौधरी, अम्मू स्वामी नाथन, मालती चौधरी, पूर्णिमा बैनर्जी की उपस्थिति ने स्पष्ट किया कि महिलाओं की स्थिति कमजोर नहीं है।[2]

भारत में स्वतंत्रता के पश्चात् स्त्रियों की स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन हुये हैं। किन्तु स्वतंत्रता पश्चात् स्त्रियों की सामाजिक स्थिति में जो परिवर्तन हुआ है संपूर्ण विश्व कल्पना नहीं कर सकता भारत के अनेक राज्यों में महिलाओं का मुख्यमंत्री बनना संपूर्ण संसार के लिये आश्चर्य की बात है। सन् 1980 में जब श्रीमती इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री निर्वाचित हुई तब सभ्य समाजों की स्त्रियां हतप्रभ रह गई उन्हें पहली बार यह महसूस हुआ कि उनकी राजनैतिक जागरुकता अभी बहुत पीछे है। पाणिक्कर का कथन है कि ''जब स्वतंत्रता पहली अंगड़ाई ले रही थी तब भारत के राजनैतिक जीवन में महिलाओ को पद प्राप्त हुये उसे देखकर सारी दुनियां चौंक पड़ी क्योंकि वह हिन्दू स्त्रियों को पिछड़ी हुई, अशिक्षित, प्रतिक्रियावादी समाजिक व्यवस्था में जकड़ी समझने में अभ्यस्त थीं'' यह कथन इस ओर संकेत करता है कि राजनीति में महिलाओं की भूमिका सुदृढ़ रही है। स्त्रियों ने अपनी राजनैतिक शक्ति का पूर्ण सदुपयोग कर मध्यकाल की रुढ़ियों को समाप्त करने तथा के प्रत्येक क्षेत्र में आगे

बढ़ने के लिये प्रशंसनीय कार्य किये निर्वाचित महिलाओं की संख्या में वृद्धि होने से अनुमान लगाया जा सकता है कि महिलायें राजनैतिक रुप से चेतन हुई बल्कि संसद में जनता के बहुत बड़े वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है। भारत के अनेक राज्यों में महिला मुख्यमंत्री का कार्य कर रही है। केन्द्र सरकार के संचालन में भी महिलाओं की महत्वपूर्ण भूमिका है।

हम यदि ध्यान से अवलोकन करें तो पायेंगे कि अनेक क्षेत्रों में प्रगति होने के बावजूद राजनीति के क्षेत्र में महिलायें तुलनात्मक रुप से बहुत पीछे हैं। महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी हो इस पर समाज का दबाव बढ़ने से तथा अनेक महिला संगठनों के द्वारा जोर देने से सत्ता की राजनीति में महिलाओं की हिस्सेदारी पर जोर दिया जाने लगा। परिणामस्वरुप 73वें संविधान संशोधन में पंचायती राज व्यवस्था में महिलाओं को 33 प्रतिशत आरक्षण देने का प्रावधान किया गया। मध्यप्रदेश सरकार ने स्थायी निकायों के चुनावों में भी 33 प्रतिशत महिला आरक्षण रखा जिससे अनुसूचित जाति, जनजाति एवं पिछड़े वर्गों की महिलाओं को विशेष आरक्षण दिया गया।

आज चारों ओर 'महिला आरक्षण' की धूम है। कोई इसके समर्थन में अपनी रोटियां सेंक रहा है तो कोई इसके विरोध में अपनी खिचड़ी पका रहा है। महिला आरक्षण की मांग और विरोध के माहौल में इस बात पर चर्चा करना आवश्यक है कि कैसे महिलाओं के चेहरे से राजनेतिक डमी का मुखौटा उतार फेंका जाए और कैसे महिलाओं को राजनीतिक रुप से जागरुक किया जाए? आरक्षण की मांग करने वाले मानते हैं कि आरक्षण मिलने से महिलाएं, राजनीति में पुरुषों की बराबरी कर सकेंगी और महिलाओं की समस्याओं को जोर-शोर से उठा सकेंगी। लेकिन मात्र आरक्षण मिलने से ही महिलाएं इस पुनीत लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगी, इसमें सन्देह है। पंचायतों में दिए गये आरक्षण के परिणाम हमारे इस संदेह को और पुख्ता करते हैं।[3]

वास्तव में विधायिका में 33 प्रतिशत आरक्षण देने के साथ-साथ जरुरी यह भी है कि महिलाओं को राजनैतिक रुप से जागरुक किया जाए और उन्हें शिक्षित बनाया जाए। 'आरक्षण' का सिद्धांत गलत नहीं है लेकिन राजनीति में महिलाओं की भागीदारी को सार्थक बनाने के लिए आवश्यक है कि महिलाओं को विधायिका के साथ-साथ शिक्षण-संस्थाओं और सरकारी नौकरियों में भी आरक्षण दिया जाए। महिलाओं की 'आधुनिकता' और पुरुषों से 'बराबरी' का नारा लगाने वाले अगर वास्तव में महिलाओं को आगे बढ़ाना चाहते हैं, उन्हें उनका वाजिब हक देना चाहते हैं तो बस जरुरत है महिलाओं को जागरुक व शिक्षित बनाने की। अगर महिलाओं के हाथों में किताबें थमा दी जाएं तो फिर उन्हें राजनैतिक अधिकार देने नहीं पड़ेंगे वरन् वे स्वयं छीन लेंगी क्योंकि कोई भी जागरुक वर्ग अपने अधिकारों का हनन बर्दाश्त नहीं कर पाता है।

राजनैतिक निष्क्रियता का ही परिणाम है कि आज संसद में 50 से भी अधिक महिलाएं हैं, लेकिन फिर भी बाल-वेश्यावृत्ति, बालिका-हत्या, कन्या-भ्रूण हत्या, बाल-विवाह, यौन शोषण और महिलाओं को नग्न करके सरेआम घुमाए जाने का भी वे डटकर विरोध नहीं कर पा रही हैं। इसी कारण शाहबानों के मामले में इनकी जुबान पर ताले पड़ जाते हैं।

आज सबसे बड़ा सवाल यह है कि राजनीति में महिलाओं की स्थिति क्या है? हाल ही में हुए उत्तर प्रदेश एवं जम्मू-काश्मीर के चुनावों के उपरान्त किसी भी राजनैतिक दल ने एक भी महिला का नाम राज्यसभा के लिए प्रस्तावित नहीं किया। राज्यसभा के सभी उम्मीदवार पुरुष ही थ। पंजाब के चुनावों में भी महिला राजनेताओं की कोई सशक्त भूमिका नहीं रही। राजेन्द्र कौर भट्ठल के नेतृत्व का भी सफाया हो गया। महिलाओं की राजनीति में भागीदारी कोई आसान बात नहीं है। यदि इंदिरा गांधी का उदाहरण दिया जाता है तो वह कोई भारतीय नारी का प्रतीत नहीं थीं। वह एक राजनैतिक परिवार से संबंधित थीं। पूर्व प्रधानमंत्री नेहरु की पुत्री थीं। फिर हर महिला की एक सामाजिक दहलीज होती है। महिला की सामाजिक पृष्ठभूमि, शिक्षित या अनपढ़ होना, आर्थिक सक्षमता, निभरता या दरिद्रता, परिवार, सामाजिक दृष्टिकोण व्यक्तिगत संकल्प तथा राजनीतिक दलों का समर्थन, सभी उसकी राजनीति में सक्रियता का निर्णय करते हैं। फिर महिला पढ़-लिख कर कितनी भी सफल क्यों न हो जाए, उसका पूरी तरह आत्मनिर्भर होना मुश्किल ही है। सच तो यह है कि भारत के सभी राजनीतिक दलों में चाहे वह कांग्रेस हो, भारतीय जनता पार्टी हो या जनता दल का कोई अवशेष हो, समाजवादी पार्टी या बहुजन समाज पार्टी हो, कम्युनिस्ट पार्टियां हो या अन्नाद्रमुक, तेलुगुदेशम, असम गण परिषद् जैसे क्षेत्रीय आधार वाले दल हो, कहीं भी महिलाओं की समानुपातिक भागीदारी नहीं है।[4]

जैसी महिलाएं आजकल राजनैतिक परिदृश्य पर हैं, वैसी महिलाओं का बोझ हमारा लोकतंत्र और नहीं उठा सकता। कई विधवाएं, पत्नियां, पुत्रियां व उपपत्नियां हम पर सिर्फ इसलिए थोप दी गई हैं क्योंकि वे किसी नेता से संबंधित रही है। गांवों में रहने वाली 70 प्रतिशत महिलाओं को जब लोकतंत्र की परिभाषा का ही भान नहीं है तो वे उसकी गरिमा का प्रतीक कैसे बन पाएंगी।

यूं तो राजनीति का क्षेत्र प्राकृतिक रुप से ही काफी कठिन होता है, इसमें अपनी जगह बनाने के लिए किसी को भी काफी तप करना पड़ता है, मेहनत करनी पड़ती है लेकिन महिलाओं के लिए तो ये राह और भी अधिक कठिन है। राजनीति में अपनी जगह बनाने की महत्वाकांक्षा रखने वाली महिलाओं के सामने कई ऐसी समस्याएं भी होती हैं जिनका सामना उन्हें सिर्फ इसलिए करना होता है क्योंकि वे 'महिला' हैं।

ISSN 2277-5587

इस क्षेत्र में महिलाओं के लिए सबसे बड़ी रुकावट है उनमें राजनीतिक सोच, राजनीतिक विचारधारा और राजनीतिक जागरुकता की कमी होना। हमारे देश में बालिका-शिक्षा की क्या स्थिति है, यह किसी से छिपी नहीं है। आजादी के 55 बरस बीत जाने के बाद भी भारत में छः से सोलह वर्ष की आयु वर्ग की 40 प्रतिशत से भी अधिक बालिकाएं ऐसी होती हैं जिन्हें विद्यालय जाने का कभी मौका नहीं मिलता, वे जीवनभर कभी स्कूल का मुंह तक नहीं देख पातीं और अगर उन्हें हाथों में किताब थामने का अवसर मिलता भी है तो वे अपनी शिक्षा जारी नहीं रख पाती हैं। ये तो सरकारी आंकड़ों की कहानी है, वास्तविकता इससे भी कहीं अधिक बदतर हो सकती है। इस स्त्री-अशिक्षा के कई कारण हैं। इसका सबसे बड़ा कारण यह है कि आज भी अधिकतर निम्न और निम्न-मध्यम वर्ग के परिवार, बलिकाओं के लिए शिक्षा को आवश्यक नहीं समझते क्योंकि ''पढ़-लिखकर भी तो उन्हें विवाह ही करना होगा, घर-गृहस्थी बसानी होगी, परिवार के लिए उत्तराधिकारी पैदा करना होगा और अपने बच्चों का पालन-पोषण करना होगा''। इन परिवारों का मानना है कि इन कामों के लिए शिक्षा ही नहीं 'संस्कारों' की जरुरत होती है इसलिए बच्चियों को स्कूल भेजने की जगह उन्हें रसोई का रास्ता दिखा दिया जाता है, उनके हाथों में किताबों की जगह चकला-बेलन थमा दिया जाता है। आम भारतीय परिवारों की यह धारणा, महिलाओं के विकास के मार्ग का सबसे बड़ा कांटा है। इन लोगों को समझना चाहिए कि औरतों का काम सिर्फ परिवार बनाना और चलाना ही नहीं है। उसे भी सामाजिक और राजनैतिक निर्णयों में भागीदारी का हक है।

सरकारी आंकड़ों के मुताबिक भारतीय कोख से जन्म लेने वाली प्रत्येक 100 बलिकाओं में से मात्र 62 बालिकाएं ही प्राथमिक विद्यालयों में अपना नाम पंजीकृत करवाती हैं, 30 प्रतिशत बालिकाएं मिडिल स्कूलों की दहलीज चढ़ पाती हैं और सिर्फ 35.3 फीसदी बालिकाएं ही माध्यमिक शिक्षा पूरी कर पाती हैं। केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा परिशद् (सी.बी.एस.ई.) की परीक्षाओं में जरुर सदैव 'लड़कियां ही बाजी मारती हैं' और महानगरों के विश्वविद्यालयों, कॉलेजों तथा प्रोफेशनल शिक्षा देने वाले संस्थानों में जरुर आजकल लड़कियां ही बहुमत में होती हैं लेकिन भारत के गांवों और दूर-दराज के इलाकों की तस्वीर बिल्कुल उल्टी है, लाल बहादुर शास्त्री के 'असली भारत' में लड़कियों की उच्च-शिक्षा आज भी एक दिवास्वप्न मात्र है। इन इलाकों की केवल 7 प्रतिशत, जी हां सिर्फ 7 प्रतिशत लड़कियां ही विश्वविद्यालयों की सीढ़ियां चढ़ पाती हैं।[5]

हमारे यहां स्त्री-अशिक्षा के लिए आर्थिक एवं सामाजिक कारण तो दोशी हैं ही, संसाधनों की कमी भी एक प्रमुख कारण है। एक अनुमान के मुताबिक भारत में गांवों की कुल संख्या 5,47,672 है। इनमें से लगभग 48,566 गांव ऐसे हैं जिनमें एक भी प्राथमिक विद्यालय नहीं है, इनमें से लगभग 1,67,383 ग्रामीण स्कूल ऐसे हैं जिनमें न तो आवश्यकतानुसार अध्यापक हैं और न ही जरुरी साजो-सामान। इतने कम विद्यालयों में, और ऐसे विद्यालयों में बालिकाओं की तो छोड़िये, बालकों का शिक्षा प्राप्त करना भी कठिन है। संसाधनों की इस कमी के चलते ही हमारे यहां जीवन का दसवां सावन देखते-देखते 73.78 प्रतिशत कन्याएं पढ़ाई-लिखाई छोड़ कर घर की दहलीज तक सिमट जाती है।

जब भारतीय महिलाओं में औपचारिक व परंपरागत शिक्षा की ये हालत है तो उनसे राजनैतिक शिक्षा की उम्मीद भी करना बेमानी है। राजनैतिक शिक्षा के अभाव में आम भारतीय महिला की न तो कोई राजनैतिक विचार-शून्यता का असर स्पष्ट रुप से भारतीय परिवारों पर देखा जा सकता है। गांवों-कस्बों की तो बात ही छोड़िये, शहरों की पढ़ी-लिखी आधुनिक महिलाए भी चुनावों में उसी उम्मीदवार को वोट देती हैं, जिसे उनके परिवार के पुरुष सदस्य वोट देते हैं। इन महिलाओं के लिए उम्मीदवार की योग्यता और उसकी पार्टी की विचारधारा गौण होती है तथा वोट डालते समय प्रभावी होती है, परिवार के पुरुष सदस्यों की इच्छा। शिक्षा के अभाव के साथ-साथ राजनैतिक रुप से जागरुकता की कमी भी महिलाओं की राजनैतिक प्रगति के आड़े आ जाती है।

आज भी महिलाओं को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अध्ययन के दौरान कुछ समस्यायें सामने आई जो इस प्रकार हैं-

- स्त्रियों की आर्थिक पराधीनता ने स्त्रियों को निम्न स्तरीय बनाया है। प्राचीन काल से ही महिलाओं का घर से बाहर निकलना अनुचित माना जाता है। उन्हें प्रत्येक कार्य के लिये पुरुषों पर निर्भर रहना पड़ता है जिससे वे अपनी इच्छाओं को प्रारंभ में ही समाप्त कर डालती हैं। महिलाओं की आर्थिक पराधीनता महिलाओं की महत्वपूर्ण समस्या है।
- हिन्दू विवाह में कन्यादान का स्वरुप विद्यमान है। माता पिता द्वारा चुने गये वर को दान करना होता है। पिता द्वारा दिया गया दान इस बात का द्योतक है कि पत्नी पर पति की प्रभुत्ता होगी।
- समाज में व्याप्त कुलीन विवाह की प्रथा के कारण लड़कियों का विवाह उच्च कुलों के लड़कों से किया जाना श्रेयस्कर माना जाता हैं किन्तु इसका दुष्प्रभाव सामान्य वर्ग पर पड़ता है। उच्च कुलीन लड़कों की मांग अधिक होने के कारण उनमें प्रतिस्पर्धा प्रारंभ हो जाती है जिससे लड़की के विवाह में अनेक अड़चनें आती हैं जिससे महिलाओं की स्थिति गिरती जाती है।
- संयुक्त परिवार प्रणाली में महिलाओं को कोई भी अधिकार प्राप्त नहीं होता परिवार में उनकी भूमिका नगण्य

होती है। क्योंकि हमारा समाज पुरुष प्रधान है एवं संयुक्त परिवार में पुरुषों की संख्या अधिक होने से सभी महत्वपूर्ण कार्य इनके द्वारा किये जाते हैं।

- अशिक्षा भी महिलाओं की महत्वपूर्ण समस्या है। आज भी कुछ क्षेत्रों में महिलाओं को शिक्षा के अधिकार से वंचित रखा जाता है। परिणास्वरुप महिलायें अपने अधिकारों का उपयोग उचित तरीके से नहीं कर पातीं।

प्राचीनकाल से आज तक महिलाओं की राजनैतिक व सामाजिक स्थिति में काफी उतार-चढ़ाव आए हैं। कभी 'आधी दुनिया' को प्रतिष्ठा और सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था तो कभी उन्हें दोयम दर्जे का नागरिक माना जाता था। आजादी से पूर्व भारत में महिलाओं की स्थिति कोई बहुत अच्छी नहीं थी। अंग्रेजों के जाने के बाद जब भारतीयों का आजादी मिली तो हमारे नीति-निर्धारकों ने महिलाओं की सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए भी प्रयास करने प्रारम्भ कर दिए क्योंकि 'आधी दुनिया' के विकास की दौड़ में पीछे रह जाने पर कोई भी राष्ट्र अपने समग्र विकास का दावा नहीं कर सकता। आजादी के बाद शुरु हुआ महिला सशक्तीकरण का आंदोलन आज भी जारी है इस दौरान इसे कुछ असफलताएं मिलीं तो इसके खाते में बहुत सी सफलताएं भी दर्ज हैं।

सुझाव

- सर्वप्रथम इन संस्थाओं पंचायती राज संस्थाओं को लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण की सम्यक संस्था बनना है व महिलाओं की वास्तविक भागीदारी सुनिश्चित करना है तो महिला वार्ड। पंच, सरपंच के लिये स्थान आरक्षित करने के कुछ मानदंड निर्धारित किये जायें।

- महिलाओं को साक्षर नहीं शिक्षित बनना होगा जिससे कि वे राजनैतिक क्षेत्रों में विवेक सम्मत निर्णय लेकर शासन व्यवस्था को चला सके।

- महिलाओं को राजनैतिक शिक्षा प्रदान की जाये अनेक प्रशिक्षण दिये जायें जिससे कि वे अपने अधिकारों का पूर्ण उपयोग कर सके।

- महिला उम्मीदवारों को निर्वाचन प्रपत्र भरने के लिये जिलाधीश कार्यालय बुलाया जाये ताकि वे संबंधित अधिकारी के समक्ष प्रपत्र भर सके।

- महिलाओं में सामाजिक चेतना का विकास हो सके इसके लिये समाचार पत्र एवं टेलीविजन के माध्यम से उन्हें, आत्म निर्भर होने की शिक्षा प्रदान की जाये। अनेक महिला उदाहरण दिये जाये जिससे कि वे निडर बन सके। समाज में व्याप्त सामाजिक कुरीतियों जैसे पर्दाप्रथा जैसे का अंत किया जाये। जिससे महिलायें भी अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास कर सकें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *दिवेश प्रसाद ठाकुर, नारी का राष्ट्रीय चरित्र, नवयुग प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-1941.*
2. *शुचिरानी गुरुद्ध, विश्व की महान् महिलाएँ, हिन्द्र साहित्य मंदिर, अजमेर, वर्ष-1955, पृष्ठ संख्या-18.*
3. *डॉ. एच.एम. बरुआ, ''महिला आरक्षण: एक समाज शास्त्री मूल्यांकन'', पूर्वदिवा, 1998 जुलाई-दिसम्बर, पृ. 45-48।*
4. *आर.पी. तिवारी एवं डी.पी. शुक्ला, भारतीय नारी: वर्तमान समस्याओं और भावी समाधान, ए.पी.एच. पब्लिशिंग कारपोरेशन, नई दिल्ली, 1999 पृ. 43*
5. *आशा कौशिक, नारी अधिकार: वस्तुस्थिति एवं चुनौतियाँ, शक्ति, राजस्थान विश्वविद्यालय महिला संस्था-रुवा, अप्रैल, 2003 से मार्च, 2005, पृ. 27।*

ISSN 2277-5587

जल प्रबंधन : समय की मांग (सकारात्मक सोच के आधार पर एकीकृत मानव शक्ति में क्षमता विकसित कर लक्ष्य प्राप्ति करना)

डॉ. ममता तिवाड़ी

व्याख्याता, अग्रवाल इवनिंग कॉलेज,जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

कहा जाता है कि देश की समृद्धि के मूल्यांकन में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों की अतिविशिष्ट भूमिका होती है और भारत विश्व पटल पर जैव विविधता के क्षेत्र में आज अपनी एक विशिष्ट व अनूठी पहचान बनाये हुए है परन्तु प्राकृतिक संसाधनों के आधार पर यह एक असंतुलित राष्ट्र है। कि गत दशक से विकास के स्वरुप एवं दृष्टिकोण में मूलभूत परिवर्तन आया है जिसमें एकीकृत मानव शक्ति में क्षमता विकास कर लक्ष्य प्राप्त करना 'अधिकार आधारित विकास' का युग प्रारम्भ हो चुका है। जिसके अन्तर्गत प्रत्येक समस्या का केवल समाधान मात्र खोज लेना ही सफलता नहीं है अपितु समाधान ऐसा होना चाहिए, जिससे आगामी बहुत वर्षों तक वह समस्या या चुनौती फिर ना उभर पाये व एक बार संचालित प्रक्रिया सतत् रुप से स्वत: ही क्रियान्वित होती रहे, अत: उपर्युक्त शोध पत्र में समस्या, समाधान व संवहनीयता विकास लाने के लिए राजनैतिक, प्रशासनिक व उपभोक्ता स्तर पर सुझाव देने का प्रयास किया गया है।

संकेताक्षर: स्वच्छ जल,सतत्, सकारात्मकता, एकीकृत, संवहनीयता, क्षमता विकास, संर्वधन, मानव संसाधन, मानव शक्ति, जल संसाधन।

जल की सीमित उपलब्धता, अत्यधिक दोहन, पर्यावरणीय असंतुलन और त्रुटिपूर्ण प्रबन्धन के कारण राजस्थान जैसे मरुस्थलीय राज्य की जल स्थिति व संकट दिन प्रतिदिन और भी गहराता जा रहा है। यही कारण है कि शोध पत्र द्वारा राजस्थान की जनता, प्रशासन को समस्या का समाधान सकारात्मक सोच के आधार पर एकीकृत मानव शक्ति में क्षमता विकसित कर लक्ष्य प्राप्त करने की ओर ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है।

उद्धेश्य

- प्रशासनिक तंत्र, नीति उद्यम, NGO, सामजिक इकाईयों, उपभोक्ताओं व समेकित नीतिगत चर्चा करने हेतु आधार प्रदान करना।
- प्रभावित करने वाले कारणों को विशिष्ट क्षेत्र के संदर्भ में अन्वेषित व विश्लेषित करना।
- एकीकृत जल संसाधन प्रबंधन दृष्टिकोण का उपयोग कर जल संकट की चुनौती के सुप्रबंधन व सुदृढ़ीकरण हेतु सुझाव।

प्राकल्पना – सकारात्मकता प्रवृति व व्यवहार वाला मानव संसाधन : जल संसाधन संवहनीयता विकास, सतत् व सुरक्षित पेयजल संवर्धन में नकारात्मक प्रवृत्ति व व्यवहार वाले मानवशक्ति से अधिक सक्षम हैं।

शोध पद्धति : सामाजिक शोध हेतु अनेक पद्धतियाँ प्रचलित है, परन्तु वर्तमान अध्ययन की गहनता, जटिलता, संवेदनशीलता व अर्न्तविषयी प्रकृति व सामाजिक शोध की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध पत्र हेतु एक ऐसा मिश्रित प्रकृति का शोध प्रारुप रचने का प्रयास किया गया है जिससे अध्ययन में अधिक से अधिक सत्यता, प्रमाणिकता, वस्तुनिष्ठता का समावेश कर कारगर परिणाम प्राप्त किये जा सके। जैसे :-

- विशिष्ट क्षेत्र का अध्ययन करना।
- जल संवहनीयता विकास (भूजल स्तर, पुर्नभरण) एवं सतत् एवं सुरक्षित पेयजल का संवर्धन करना।
- जल संसाधन व्यवस्था में पेयजल के गुणात्मक एवं मात्रात्मक गिरावट क्यों आ रही है, इसके अन्वेषण हेतु स्थान का चुनाव करना।

शोध विवरण:

जल एक अत्यधिक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय संसाधन है और वर्तमान में पूरी दुनिया 'जल को लेकर चिन्तित है। भविष्य में जल लुप्त न हो जाए इसके लिए अनेक प्रयत्न किए जा रहे है। ''जल ही जीवन है'' यह उक्ति आज सही मायने में चरितार्थ हो रही है। ऐसे में यदि ''पृथ्वी पर जीवन'' यानी जल का संकट खड़ा हो जाता है तो इसके लिए कारगर उपाय ढूँढ़ना अतिआवश्यक है आज के युग में आज भी जनता का जल के प्रति उपेक्षित व्यवहार, उपलब्ध जल का अधाधुंध दोहन, पृथ्वी का बढ़ता तापमान, पिघलते हिमनद, कहीं बाढ़ और कही सूखे की स्थिति तथा पृथ्वी के गर्भ में दिन-ब-दिन नीचे समाता हुआ पानी मानव अस्तित्व को ही चुनौती दे रहा है।

साथ ही जनसंख्या जिस विस्फोटक गति से बढ़ रही है जल संसाधनों में उसी गति से कमी भी आ रही है। जल संकट के इस दौर में जल को लेकर व्यक्ति की मानसिकता में भी बदलाव आ रहा है। व्यक्ति जल को लेकर अत्यधिक स्वार्थी, शंकालु और लालची हो रहा है यह भी परेशानी का एक सबब है।

जल की कम उपलब्धता, अत्यधिक दोहन, पर्यावरणीय असंतुलन और त्रुटिपूर्ण प्रबन्धन के कारण राजस्थान जैसे मरुस्थलीय राज्य की जल स्थिति व संकट दिन प्रतिदिन और भी गहराता जा रहा है। यही कारण है कि यहां सरकार को अपना सारा ध्यान सबसे पहले पेयजल उपलब्ध कराने की ओर केन्द्रित करना पड़ता है। वर्तमान सरकार की भी पहली प्राथमिकता जनता को शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराना है।

यही कारण है कि आज प्रत्येक सरकार अपने यहा राज्य जल नीति को क्रियान्वित कर रही है साथ ही करोड़ो रुपयों की पेयजल योजनाएँ चलाई जा रही है। कहा भी गया है कि अगला विश्व युद्ध पेयजल के लिए होगा। अर्थात् निरन्तर अकाल एवं पेयजल के संकट से ग्रस्त रहे राजस्थान में आज सतही एवं भूजल प्रबन्धन और जल नियमन के लिए कोई एक व्यापक कानून बनाने की अनिवार्यता अत्यधिक महसूस की जाने लगी है। ऐसा भी नहीं है कि पूर्व में कोई कानून न बना हो किन्तु मनुष्य अपने स्वार्थ, सवेदंनहीन उपेक्षित व्यवहार के कारण जानकर भी इन्हें लागू नहीं करता हैं। अत: जल से सम्बन्धित कानूनों का प्रचार-प्रसार करना निरर्थक है यह तब तक सम्भव नहीं है। जब तक कि इसे कठोर पालना व दण्डनीय अपराधों कि श्रेणी में ना रखा जाये। औपचारिक रुप में राजस्थान राज्य में जल सम्बन्धी कानून 5 वें दशक से ही अस्तित्व में है :

राज्य में जल से सम्बन्धीत अधिनियम :

- ➢ राजस्थान वन अधिनियम, 1953
- ➢ राजस्थान लघु सिंचाई अधिनियम, 1953
- ➢ राजस्थान सिंचाई एवं ड्रेनेज अधिनियम, 1954
- ➢ राजस्थान भू-राजस्व अधिनियम, 1956 (धारा-173)
- ➢ राजस्थान भूमि एवं जल संरक्षण अधिनियम, 1964
- ➢ राजस्थान जल आपूर्ति एवं सीवरेज निगम अधिनियम, 1979
- ➢ राजस्थान पंचायतीराज अधिनियम, 1994
- ➢ राजस्थान फार्मस पार्टीसिपेशन इन इरीगेशन सिस्टम एक्ट, 2000
- ➢ राजस्थान नगरपालिका अधिनियम, 2009
- ➢ राजस्थान रिक्वीजीशन ऑफ प्राईवेट रिसोर्सेज एक्ट

जल संसाधनों के संरक्षण, उपभोग, प्रबन्धन, भागीदारी, जल संधारण आदि से जुड़े कानूनी प्रावधनों की जानकारी आम आदमी को हो इसका कोई सरल प्रेरणादायी मनोरंजन प्रोत्साहन दायक तरीका निकाला जाना चाहिये ताकि लोग जल अधिनियमों के प्रति जागरुक हो। इन अधिनियमों के अनुसार कार्यवाही हो रही है अथवा नहीं इसकी समीक्षा की जानी चाहिए और उन्हें क्रियान्वित करने में आ रही कठिनाईयों का सकारात्मकता के आधार पर निराकरण भी किया जाना चाहिए। ताकि अधिनियमों की सुचारु रुप से क्रियान्विती की जा सके व जल संवहनीयता विकास एवं सतत् सुरक्षित पेयजल संवर्धन किया जा सके अर्थात् समस्या का समाधान किसी एक क्षेत्र के सन्दर्भ में ना समझकर सम्पूर्ण जल तंत्र की समस्या का हल खोजा जाना चाहिए। समाधान के लिए इस अध्ययन को वैज्ञानिक आधार पर तथ्यों की खोज कर उन्हें व्यवहारिकता में लाया गया हैं।

प्रशासनिक चिंतक लूथर गुलिक द्वारा प्रतिपादित **4पी** का सिद्धान्त प्रबन्ध में इस महत्व को सिद्ध करता है कि उद्धेश्य की प्राप्ति हेतु (प्रयोजन, प्रक्रिया, व्यक्ति, स्थान) चारों ही समान रुप से महत्वपूर्ण है। अर्थात् जहॉं से समस्या उत्पन्न हो रही है। समाधान भी उस उपर्युक्त स्तर पर होना चाहिए। इसलिए सुझाव का क्षेत्र भी मुख्वता दो बिन्दुओं पर देने का प्रयास किया गया है।

1. प्रशासनिक स्तर (राजस्थान)
2. उपभोक्ता स्तर ग्रामीण व शहरी

यद्यपि पानी के सरंक्षण व बुद्धिमतापूर्ण दोहन के लिए बहुत सी स्वयंसेवी संस्थाएं, सरकार, प्रशासन समय-समय पर प्रचार-प्रसार व संरक्षण करने के लिए सक्रिय है किन्तु विकट समस्या को देखते हुए यह प्रयास ऊंट के मुंह में जिरे के समान है। ''जल ही जीवन है'' व ''जल है तो कल है'' जैसी कहावतों को चरित्रार्थ करना है तो जल संरक्षण, संर्वधन, सवहनीयता विकास के लिए हर संभव प्रयास करना होगा।

प्रस्तुत अध्ययन द्वारा एक नवीन दिशा ''सकारात्मकता'' को प्रोत्साहित करने का प्रयास किया गया है।

ISSN 2277-5587

उदाहरण के लिये प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर रेखाचित्र में दर्शाये अनुसार :

सकारात्मकता से एकीकृत द्वारा क्षमता विकास चरण

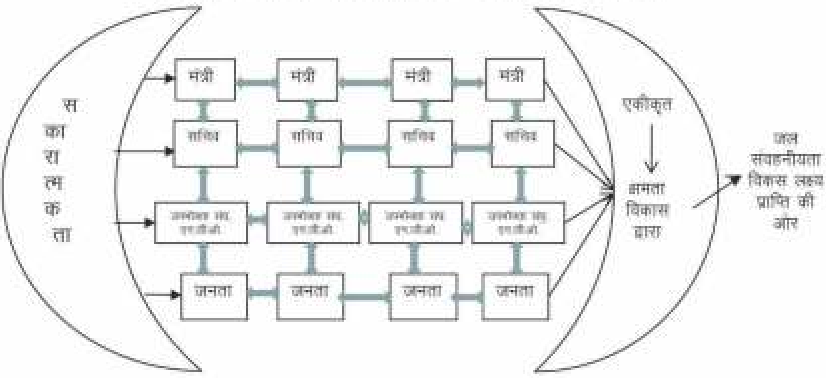

मानव सकारात्मक प्रवृति व आचरण के द्वारा एकीकृत होकर एक ऐसे सक्षम समूह का निर्माण कर सकता है, जिससे जल परियोजनाओं को ज्यादा से ज्यादा सफलता कि ओर ले जाया जा सके, ताकि कार्य का संचालन संरचनात्मक आधार दर, मनोरंजन के साथ-साथ प्रत्येक स्तर पर व्यक्तियों को **एकीकृत करके क्षमता विकास** के माध्यम से **मानव शक्ति** के रुप में परिवर्तित करते हुए, **मानव संसाधन** द्वारा सफलता को पाया जा सके।

जल संवहनीयता हेतु सुझाव

जल संवहनीयता लाने हेतु, जल से सम्बन्धीत, 4R, का प्लान प्रतिपादित किया जा सकता है। यहां प्रत्येक आर का तात्पर्य जल से सम्बन्धित समस्याओं का निवारण करता है जैसे -

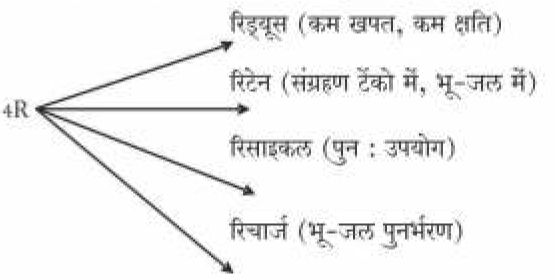

4 R से तात्पर्य :

1R- रिड्यूस, यह कहता है कि जल की कम खपत की जानी चाहिए

2R-रिटेन, जल संग्रहण, स्त्रोतों का विकास टैंकों व भूजल के रुप में किया जाना चाहिए

3R- रिसाइकल, यह कहता है कि पानी को एक से अधिक बार उपयोग में लेना चाहिए

4R- रिचार्ज, कि जितना पानी प्रकृति से लिया है उसे पुन: भू जल पुनर्भरण के रुप में लौटना चाहिए

जल संसाधनों का प्रबन्धन :

जल संसाधनों के प्रबन्धन से तात्पर्य है ''ऐसा कार्यक्रम बनाना जिससे किसी जल स्त्रोत या जलाशय को क्षति पहुंचाये बिना विभिन्न आयामो के लिए अच्छे किस्म के जल की पर्याप्त पूर्ति हो सके''।

अर्थात् उपरोक्त वर्णित 4 R प्लान के साथ-साथ जल संवहनीयता लाने हेतु सुझावों को प्रशासनिक एवं उपभोक्ता स्तर पर भी देने का प्रयास किया जा रहा है।

1. **प्रशासनिक सुझाव**

- ➢ वाटर हार्वेस्टिंग सिस्टम की व्यवस्था करना
- ➢ रुफटोप रेनवाटर हार्वेस्टिंग सिस्टम,
- ➢ आर्गेनिक ट्रीटमेंट प्लाट व्यवस्था करना
- ➢ बहुउद्धेश्यी नदी घाटी परियोजना का निर्माण करना
- ➢ पुनर्भरण व्यवस्था करना
- ➢ समुद्री जल का विलवनीकरण करना
- ➢ जल से सम्बन्धित अवैध कारोबार पर रोक लगाना
- ➢ जल चेतना जागृति अभियान चलाना
- ➢ बाँध क्षेत्र से बंजरी खंनन पर रोक लगाना
- ➢ अत्यधिक दोहन पर पूर्णत रोक परमिट द्वारा
- ➢ जल का मीटरीकरण (खर्च, भरण व संतुलन हेतु)
- ➢ सतही जल भरण क्षमता विकास करना
- ➢ पाइपों द्वारा वाष्पन को रोकना
- ➢ सिंचाई हेतु नवीन पद्धतियों को अपनाना (स्प्रिंकलर व ड्रिपसिस्टम)
- ➢ जल दुरुपयोग नियंत्रण व्यवस्था
- ➢ भू-जल रोक लगाकर सतही जल को प्रोत्साहन देना
- ➢ वर्षा जल से सीधे बोरिंग, कुऐं, खाई बनाकर भूजल स्तर को बढावा देना आदि

2. **उपभोक्ता हेतु सुझाव**

- जल स्त्रोतो का चिन्हनयन करना
- जल भरण को अवरुद्ध करनेवाली बाधाओं को चिन्हित कर दूर करना
- जल की शुद्धता की जांच करना
- जल के सतही स्त्रोतों की मोनिटरिंग
- वर्षा जल से जल स्त्रोत के जल स्तर में वृद्धि की मोनिटरिंग
- बेकार जाते वर्षा जल को स्त्रोत की तरफ मोडना
- जल की अशुद्धियों को दूर करने के उपाय करना
- जल वाष्पन को न्यूनतम करने के उपाय खोजना
- सिंचाई के प्राचीन तरीकों को निषेध करना
- केवल ड्रिप सिंचाई /स्प्रिंकलर सिंचाई को लागू करना
- कृषि में रसायनो का उपयोग न्यूनतम करना
- वर्षाजल संचय प्रत्येक घर हेतु अनिवार्य करना
- सतही जल सेही पेयजल व सिंचाई कार्य हो पाये
- भूमिगत जल दोहन पर पतिबन्ध लगाना
- ग्राम सभा के माध्यम से ऑरटर के काम से संतुष्टि रिपोर्ट तैयार करना
- पेयजल हेतु जिला, राज्य व केन्द्रीय संसाधनों से प्राप्त सहायता का सदुप्रयोग करना
- घर-घर मीटर स्थापित करवाना/ जल के बिलो का भुगतान सुनिश्चित करना
- जल को प्रदूषित करने वाले, फिजूलखर्ची करने वालो व सप्लाई में तोडफोड करने वालो पर सख्त कार्यवाही करना
- अपने गांव में आपूर्ति हेतु भावी योजना तैयार कर ब्लाक/जिलों में भेजना
- जल स्त्रोतो के पुनर्भरण को सुनिश्चित करना (वर्षा से)
- भूमिगत जल स्तर बढाने को जोहड निर्माण
- जल संरचनाओं का निर्माण (एनीकट, बांध, टंकी, पम्प आदि)
- प्रत्येक गांव में मिट्टी बजरी जल संवर्धन यंत्र तैयार करना
- अपशिष्ट व दूषित खराब जल को रिसाईकल कर पीने योग्य जल बनाना
- लवणीय जल उपचार
- क्लोराइड उपचार जैसे - तुलसी, नीम आदि।

उपरोक्त उपायों के आधार पर वर्षा जल को सहेजा जा सकता है जैसा कि वर्तमान समय में इजराईल, सिंगापुर, चीन, आस्ट्रेलिया आदि देशों में किया जा रहा है।

3. **आर्गेनिक ट्रीटमेंट प्लाट व्यवस्था**

घरेलू और नगरीय अपशिष्ट जल के समुचित उपचार से औद्योगिक और कृषि कार्यो के लिए उपर्युक्त जल प्राप्त हो सकता है। साथ ही अपशिष्ट जल के उपचार से प्रदूषित हानिकारक जीवाणुओं और विषाक्त तत्वों को हटाया जा सकता है।

4. **पुनर्भरण व्यवस्था लागू करना**

विभिन्न कारणों से वर्षाजल में भू-जल पुनर्भरण में हुई कमी की क्षतिपूर्ति एवं भूजल को बढ़ती हुई मांग को ध्यान में रखते हुए यह अतिआवश्यक हो गया है कि वर्षा के जल को संचयन कर के अधिक से अधिक मात्रा में कृत्रिम तकनीकों द्वारा भूजल पुनर्भरण हेतु उपयोग में लिया जाए।

इस कार्य हेतु विभिन्न तकनीकों को काम में लिया जा सकता है। शहरी क्षेत्र में भी भवनों कि छतों का वर्षा जल, नलकूप, कुओं और बावड़ियों के माध्यम से भूजल पुनर्भरण हेतु उपयोग में लिया जाना चाहिए।

ग्रामीण क्षेत्र के जल प्रवाह के प्राकृतिक तंत्र में उपर्युक्त स्थान पर इसके ऊपरी हिस्से में गली प्लग, परिरेखा बांध, गेबियन संरचना, चैक बांध एवं निचले हिस्से में सब सरफेस बेरियर, डाइक द्वारा भूजल पुनर्भरण किया जा सकता है। खेतों के पानी का संचयन कर फिल्ट्रेशनपिट के माध्यम से उपयोगी कुओं में डाला जाए जिससे की भूजल पुनर्भरण में वृद्धि होगीं।

सकारात्मकता द्वारा एकीकृत मानव शक्ति में क्षमता विकसित किये जाने से लक्ष्य प्राप्ति संभव

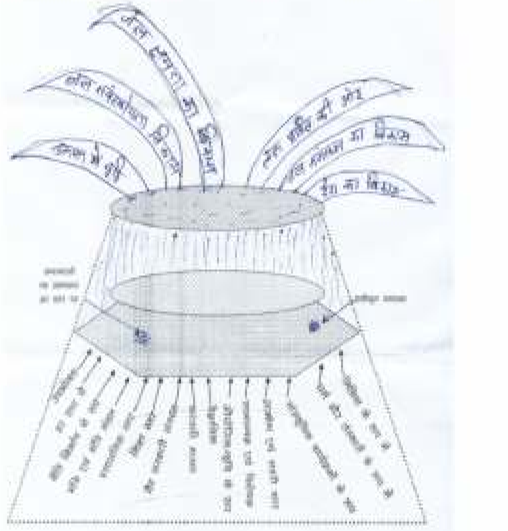

चित्र में यह दिखाया गया है कि योजना निर्माण से लेकर क्रियान्वयन के हर स्तर पर व्यक्तियों को जल संवहनीयता लाने के लिए एक दूसरे से जोड़ते हुए एकीकृत करना होगा जिससे समस्या जहाँ उत्पन्न होगी

ISSN 2277-5587

समाधान भी उसी स्तर पर तुरन्त हो जायेगा और इससे मानव क्षमता का विकास होगा जिसमें व्यक्ति स्वंय मानव साधन के रुप में विकसित हो कर लक्ष्य प्राप्त कर सकेगा।

अन्त में यह कहना चाहूँगी कि

पाणी का सा बबूला।
असमानस की जात ।।

अर्थात् पानी का यह एक बुलबुला ही जब मनुष्य को सुलभ नहीं होगा तो क्षणभर में हम अपने आप समाप्त हो जाएगें। हमें इस अमृत की रक्षा करनी होगी।

सरकार की भूमिका।

1. जल से सम्बन्धित कानूनों को सार्वजनिक किया जाये।
2. वर्षा जल के संरक्षण की अनिवार्यता को सुनिश्चित किया जाये।
3. 'रेन वाटर हार्वेस्टिंग सिस्टम' के प्रस्ताव वाले भवन को ही मंजूरी दी जाये।
4. सरकार द्वारा प्राचीन भवनों की पारम्परिक स्थानीय जल संरक्षण के तरीकों को पुन: जीवित किया जाये।
5. क्षेत्र की प्रदूषण फैलाने वाली औद्योगिक इकाईयों को बंद किया जाये या पुन: चक्रिय जल को उपयोग में लाने हेतु पाबंदी एवं जल परिशोधन यंत्र लगाने की अनिवार्यता लागू कि जाये।
6. सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग व मीडिया, द्वारा जनहित में जारी किय गये विज्ञापनों में कचरा प्रबंधन, वर्षा जल संरक्षण, पानी के कम से कम वांछनीय उपयोग, जल प्रदूषण आदि की जानकारी का प्रकाशन कराया जाये।
7. गैर सरकारी संगठन व समाज सेवी संगठनों को 'पानी को संजोये रखना है' जैसे कार्य के प्रचार -प्रसार हेतु आगे आने का आह्वान करे।
8. श्रेष्ठ जल संरक्षणकर्ता घर/ परिवारों को पुरस्कार व सम्मान देना।
9. कृषि, सिंचाई तथा औद्योगिकरण के लिये पानी की कमी पूर्ति हेतु पुनर्भरण व्यवस्था का प्रभावी रुप से क्रियान्वयन किया जाये।
10. जल संरक्षण से जुड़े कार्यक्रमों को प्राथमिकता देते हुए, कार्यक्रमों में ख्याति प्राप्त व्यक्तियों जैसे - मंत्री, सचिव, फिल्मी कलाकार, आदि को शामिल किया जाना चाहिए।
11. जल से सम्बन्धित अध्ययन के लिए 5 वीं तक नैतिक शिक्षा के रुप में, 10 वीं तक पाठ के रुप में 12 वीं तक जल प्रयोगो के रुप में, स्नातक एवं स्नातकोत्तार स्तर पर अध्ययन के साथ रोजगार तक के रुप में जोडा जाये।
12. स्थानीय जल नीतिनिर्माण, क्रियान्वयन व रखरखाव कि सम्पूर्ण जिम्मेदारी सौपनी चाहिए।
13. जल पर कठोर कानून व कठोर पालना कि जाये।
14. जल परियोजना व नीतियों का सफलता का आंकलन अनिवार्य और मानक से नीचे सफलता पाये जाने पर कठोर कार्यवाही कि जाये।
15. सम्पूर्ण हैण्डपम्प, पाइपों व नलों को सौ प्रतिशत रिसाव पर रोक लगवा कर, रिसाव पाये जाने पर कठोर कार्यवाही।
16. गांव पचायतों, गैरसरकारी संगठनों, उद्योगपतियों को जल संसाधन संवहनीयता विकास के परिणाम आधारित आर्थिक सहायता प्रदान कि जानी चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *राजस्थान सरकार (1667-66) सिंचाई विभाग सरफेस वाटर रिसोर्स ऑफ राजस्थान एब्स्ट्रेक्ट मास्टर प्लान रिवर बेसिन्स इन राजस्थान स्टेडी।*
2. *भारत सरकार, नई दिल्ली (1972) मिनिस्ट्री ऑलि इरीगेशन एण्ड पावर ''रिपॅटि ऑफ दी इरीगेशन कमीशन, वाल्यूम-1।*
3. *भारत सरकार, (2002) जल संसाधन मंत्रालय, 'राष्ट्रीय जल नीति'।*
4. *राजस्थान सरकार, (2004) सिंचाई विभाग 'बीसलपुर पेयजल आपूर्ति एवं सिंचाई परियोजना, प्रगति विवरण जून।*
5. *Hooja Rakesh (2006) 'Management of Water for Agriculture' Rawat Publications.*
6. *राजस्थान सरकार, जल संसाधन विभाग, 'राज्य जल नीति', जयपुर।*
7. *Govt. of Rajasthan (2000) Irrigation Department, Report on 'Water Resources Vision 2045', Jaipur 2000.*
8. *Govt. of Rajasthan, (1996-97) ID & R Irrigation Department, Administrative report 'Dan Safity Organization'.*
9. *कोठारी के.सी. एवं गुप्ता एल.के. (2005) 'सहभागी सिंचाई प्रबन्धन*
10. *मोदी अनिता (2009) वैश्विक जल संकट : विकट चुनौती (बुक एनक्लेव: नई दिल्ली)।*
11. *भल्ला एल.आर (2006) 'राजस्थान का भूगोल' कुलदीप पब्लिशिंग हाउस, जयपुर।*
12. *ओझा बी.एल. (2006) 'भारतीय अर्थव्यवस्था' आदर्श प्रकाशन, जयपुर।*
13. *अग्रवाल - अग्रवाल (2007) 'भारत का आर्थिक भूगोल व आर्थिक समीक्षा दी स्टुडेन्ट्स बुक कम्पनी, जयपुर*
14. *राजस्थान सरकार, (नवम्बर-2011) सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग, 'सुजस'।*

15. राजस्थान सरकार (1996-99 से 2010-11) सिंचाई विभाग, प्रगति प्रतिवेदन।

16. झालानी सीताराम, (2010) राजस्थान वार्षिक, पंचगंगा प्रकाशन, जयपुर।

17. जैन एम.पी.(1996) जल संसाधनों के समग्र विकास की दीर्घकालीन योजनाएं, सुजस।

18. राजस्थान सरकार, (मई जून 2010) सूचना एवं जनसम्पर्क निदेशालय, 'सुजस'

19. वैदिक साहित्य, ऋग्वेद के दशम मण्डल (9/12)

20. कोटिल्य ''कोटिलयम् अर्थशास्त्रम' (व्याख्याकार वाचस्पति गैरोला, तीसरा अभिकरण, प्रकरण 64, अध्याय 6, वास्तु के गृहवास्तुकम, चौखम्बा विद्या भवन, वारणासी)

समाचार पत्र/पत्रिकाए

1. मासिक पत्रिका, 'लेखाविज्ञ' (जनहितकारी सहकारी संस्थान, जयपुर)

2. समाचार पत्र, राजस्थान पत्रिका (जयपुर)

3. समाचार पत्र 'दैनिक भास्कर (जयपुर)

4. समाचार पत्र, दैनिक करंट ज्वाला, (जयपुर)

ISSN 2277-5587

अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर, शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि में सहसम्बन्ध: एक अध्ययन

shodhshree@gmail.com

डॉ. सीमा मीणा
बसवा (दौसा)

शोध सारांश

प्रस्तुत शोध अध्ययन का उद्देश्य है अनुसूचित जाति एवं जनजाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का उनके पारिवारिक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर व शैक्षिक अभिप्रेरणा के परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक अध्ययन करना। प्रस्तुत शोध में शून्य परिकल्पनायें ली गई। वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया। स्वतंत्र चर पारिवारिक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर व शैक्षिक अभिप्रेरणा एवं आश्रित चर में शैक्षिक उपलब्धि व नियंत्रित चर बोर्ड, आयु, भौगोलिक क्षेत्र को सम्मिलित किया गया है। न्यादर्श का चयन करौली जिले से स्तरीकृत यादृच्छिक विधि से किया गया। उपकरण में डॉ. हरप्रीत भाटिया का पारिवारिक परिवेश मापनी, एस. जलोटा का सामाजिक-आर्थिक स्तर व डॉ. टी.आर. शर्मा का अकेडमिक एचीवमेन्ट मोटीवेशन व शैक्षिक उपलब्धि के लिये कक्षा ग्यारह के विद्यार्थियों का चयन किया गया। सांख्यिकी प्रविधियों में वर्णनात्मक व निष्कर्षात्मक विधियों का प्रयोग किया गया।

संकेताक्षर : सामाजिक आर्थिक स्तर, पारिवारिक वातावरण, शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि।

शिक्षा की जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया परिवार से प्रारम्भ होती है जहाँ कि बालक अपने जीवन का मुख्य भाग व्यतीत करता है। परिवार बालक की प्रथम पाठशाला होती है जहाँ उसका व्यक्तित्व आकार ग्रहण करता है। बालक की सभी रुचियों, आदतों एवं धारणाओं के विकास में पारिवारिक वातावरण, सामाजिक कारकों और शैक्षिक अभिवृत्तियों एवं अभिप्रेरणाओं की बहुत अधिक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। संगीत में ध्वनि का, वीणा में तारों का जो महत्व होता है, वही शिक्षा का मानव के जीवन में महत्व पाया जाता है।परिवार का शैक्षिक वातावरण, माता-पिता व अन्य सदस्यों की शिक्षा, समाज का वातावरण, शैक्षिक अभिप्रेरणा एवं शैक्षिक दृष्टिकोण बालक की शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करते है। इस सम्बन्ध में एन.सी.ई.आर.टी. (1978) ने एक अध्ययन में पाया कि घरेलू घटक एवं बालक की वृद्धि एवं शैक्षिक उपलब्धि में अन्तर का कारण बनती है।

अध्ययन के उद्देश्य

- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक- आर्थिक स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके पारिवारिक वातावरण के प्रभाव का अध्ययन करना।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक-आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन करना।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर शैक्षिक अभिप्रेरणा के प्रभाव का अध्ययन करना।

- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर, शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि में सहसम्बन्ध का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ

- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नही पाया जाता है।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर में कोई सार्थक अन्तर नही पाया जाता है।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नही पाया जाता है।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके पारिवारिक वातावरण का कोई सार्थक प्रभाव नही पड़ता है।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर सामाजिक-आर्थिक स्तर का कोई सार्थक प्रभाव नही पड़ता है।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर शैक्षिक अभिप्रेरणा का कोई सार्थक प्रभाव नही पड़ता है।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर, शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नही पाया जाता है।

अध्ययन विधि :प्रस्तुत शोध अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है।

न्यादर्श :प्रस्तुत शोध अध्ययन में स्तरीकृत यादृच्छिकी विधि द्वारा करौली जिला के उच्च माध्यमिक विद्यालयों (20) से कुल 1000 विद्यार्थियों (500 अनुसूचित जनजाति व 500 अनुसूचित जाति) को न्यादर्श में सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन के चर :स्वतंत्र चर-पारिवारिक वातावरण सामाजिक - आर्थिक स्तर शैक्षिक अभिप्रेरणा । परतंत्र चर-शैक्षिक उपलब्धि । नियंत्रित चर-आयु, बोर्ड व भौगोलिक क्षेत्र ।

सांख्यिकी प्रविधियाँ : मध्यमान प्रमाणिक विचलन चतुर्थांश विचलन क्रान्तिक मान प्रसरण विश्लेषण पोस्ट हॉक विश्लेषण (तुर्की टेस्ट) पियर्सन सहसम्बन्ध गुणांक।

शोध में प्रयुक्त उपकरण : डॉ. हरप्रीत भाटिया (1993) द्वारा निर्मित पारिवारिक परिवेश मापनी का प्रयोग किया गया। एस. जलौटा, आर.एन. पाण्डे, एस.डी.कपूर एवं आर.एन. सिंह (1983) द्वारा निर्मित सामाजिक-आर्थिक स्तर मापनी का प्रयोग किया गया। डॉ0 टी.आर. शर्मा (1985) द्वारा निर्मित शैक्षिक उपलब्धि अभिप्रेरणा परीक्षण का प्रयोग किया गया।

शोध अध्ययन की उपलब्धियाँ

- **अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का तुलनात्मक अध्ययन :**

  अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण से सम्बन्धित आंकड़ों का मध्यमान क्रमश: 181.23 व 177.09 एवं मानक विचलन 22.03 व 19.17 प्राप्त हुआ है। शोधार्थिनी ने दोनों जाति समूहों के मध्य सार्थक अन्तर ज्ञात करने के लिए क्रान्तिक मान की गणना की है। अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण के मध्य प्राप्त क्रान्तिक मान 3.16 है जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। अत: उक्त उद्देश्य के सन्दर्भ में वर्णित शून्य परिकल्पना ''अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है'' को .01 स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है।

- **अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर का तुलनात्मक अध्ययन :**

  अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर से सम्बन्धित आंकड़ों का मध्यमान क्रमश: 41.03 व 39.17 एवं मानक विचलन 15.11 व 12.19 प्राप्त हुआ है। शोधार्थिनी ने दोनों जाति समूहों के मध्य सार्थक अन्तर ज्ञात करने के लिए क्रान्तिक मान की गणना की है। अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर के मध्य प्राप्त क्रान्तिक मान 2.13 है जो कि 0.05 स्तर पर सार्थक है। अत: प्रस्तुत उद्देश्य से सम्बन्धित शून्य परिकल्पना ''अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर में कोई सार्थक अन्तर नही पाया जाता है'' को .05 स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है।

- **अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा का तुलनात्मक अध्ययन:**

  अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों

ISSN 2277-5587

के शैक्षिक अभिप्रेरणा से सम्बन्धित आंकड़ों का मध्यमान क्रमश: 24.11 व 22.91 एवं मानक विचलन 11.09 व 9.23 प्राप्त हुआ। शोधार्थी ने दोनों जाति समूहों के मध्य सार्थक अन्तर ज्ञात करने के लिए क्रान्तिक मान की गणना की है। अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के शैक्षिक अभिप्रेरणा के मध्य प्राप्त क्रान्तिक मान 1.85 है जो कि 0.05 असार्थक पाया गया।अत: प्रस्तुत उद्देश्य से सम्बन्धित शून्य परिकल्पना ''अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है'' को .05 स्तर पर स्वीकृत किया जाता है।

➤ **अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन :**

अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि से सम्बन्धित आंकड़ों का मध्यमान क्रमश: 57.18 व 56.38 एवं मानक विचलन 6.11 व 6.03 प्राप्त हुआ है।, शोधार्थिनी ने दोनों जाति समूहों के मध्य सार्थक अन्तर ज्ञात करने के लिए क्रान्तिक मान की गणना की है। अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि के मध्य प्राप्त क्रान्तिक मान 2.10 है जो कि .05 स्तर पर सार्थक पाया गया। अत: प्रस्तुत उद्देश्य से सम्बन्धित शून्य परिकल्पना ''अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया जाता है'' को .05 स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है।

➤ **अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति (संयुक्त समूह) के विद्यार्थियों कीशैक्षिक उपलब्धि पर उनके पारिवारिक वातावरण के प्रभाव का अध्ययन :**

अनुकूलित, सामान्य व प्रतिकूलित पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक अन्तर के सन्दर्भ में एफ मान 87.16 पाया गया है जो .01 स्तर पर सार्थक है। विभिन्न समूहों के मध्य सार्थक अन्तर के लिए एफ-मान सार्थक होने पर पोस्ट-हॉक (तुर्की टैस्ट) विश्लेषण किया गया है। अनुकूलित एवं सामान्य पारिवारिक वातावरण के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य क्रान्तिक मान 6.53 जो कि .01 स्तर पर सार्थक है। इसी प्रकार सामान्य एवं प्रतिकूलित पारिवारिक वातावरण के मध्य क्रान्तिक मान 7.43 और अनुकूलित एवं प्रतिकूलित पारिवारिक वातावरण के मध्य क्रांतिक मान 13.19 पाया गया जो कि .01 स्तर पर सार्थक है।शून्य परिकल्पना ''अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति (संयुक्त समूह) के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके पारिवारिक वातावरण का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है'' को .01 सार्थक स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है।

➤ **अनुसूचित जनजाति एवं अनुसूचित जाति (संयुक्त समूह) के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके सामाजिक-आर्थिक स्तर के प्रभाव का अध्ययन :**

उच्च, सामान्य व निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक अन्तर के सन्दर्भ में एफ-मान 96.10 पाया गया है जो .01 स्तर पर सार्थक है। विभिन्न समूहों के मध्य सार्थक अन्तर के लिए एफ-मान सार्थक होने पर पोस्ट-हॉक (तुर्की टेस्ट) विश्लेषण किया गया है। उच्च और सामान्य सामाजिक-आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य क्रांतिक मान 4.18 जो कि .01 स्तर पर सार्थक है इसीप्रकार सामान्य एवं निम्न का 9.18 ओर उच्च एवं निम्न का क्रांतिक मान 13.81 पाया गया जो कि .01 स्तर पर सार्थक है। अत: शून्य परिकल्पना ''अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति (संयुक्त-समूह) के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनके सामाजिक आर्थिक स्तर का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है'' को .01 सार्थक स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है।

➤ **अनुसूचित जनजाति एवं अनुसूचित जाति (संयुक्त समूह) के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनकी शैक्षिक अभिप्रेरणा के प्रभाव का अध्ययन :**

उच्च, सामान्य व निम्न शैक्षिक अभिप्रेरणा के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक अन्तर के सन्दर्भ में एफ-मान 341.37 पाया गया है जो .01 स्तर पर सार्थक है। विभिन्न समूहों के मध्य सार्थक अन्तर के लिए एफ-मान सार्थक होने पर पोस्ट-हॉक (तुर्की टेस्ट) विश्लेषण किया गया है। उच्च और सामान्य शैक्षिक अभिप्रेरणा के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य क्रांतिक मान 15.36 जो कि .01 स्तर पर पाया गया है इसीप्रकार सामान्य एवं निम्न का 12.79 ओर उच्च एवं निम्न का क्रांतिक मान 26.10 पाया गया जो कि .01 स्तर पर सार्थक है। इसी प्रकार उच्च व निम्न एवं सामान्य व निम्न शैक्षिक अभिप्रेरणा के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि में भी .01 स्तर पर सार्थक अन्तर पाया गया है।शून्य परिकल्पना ''अनुसूचित जनजाति व

अनुसूचित जाति (संयुक्त समूह) के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर उनकी शैक्षिक अभिप्रेरणा का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है'' को .01 सार्थक स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है।

- **अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर, शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि में सहसम्बन्ध का अध्ययन :**

  विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण व सामाजिक-आर्थिक स्तर के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक .317 पाया गया जो कि .01 पर सार्थक है एवं उनके पारिवारिक वातावरण का शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि के साथ सहसम्बन्ध गुणांक का मान .301 एवं .315 पाया गया है जो कि .01 स्तर पर सार्थक है।पारिवारिक वातावरण व सामाजिक-आर्थिक स्तर एवं शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान उच्च एवं .01 स्तर पर सार्थक पाया गया है। अत: शून्य परिकल्पना ''अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर, शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि में सहसम्बन्ध गुणांक में कोई सार्थक सहसम्बन्ध नहीं पाया जाता है'' को .01 सार्थक स्तर पर अस्वीकृत किया जाता है।

अध्ययन के निष्कर्ष :

- अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों का पारिवारिक वातावरण अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों से उच्च पाया गया क्रान्तिक मान 3.16 है जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है।
- अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों का सामाजिक-आर्थिक स्तर अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों से उच्च पाया गया क्रान्तिक मान2.13 जो कि .05 स्तर पर सार्थक है।
- अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक अभिप्रेरणा अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों से उच्च पायी गयी। जाति समूहों के अन्तर क्रांतिक मान 1.85 है जो कि .05 स्तर पर असार्थक है।
- अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों से उच्च पायी, क्रान्तिक मान 2.10 है जो कि .05 स्तर पर सार्थक पाया।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के संयुक्त समूह के विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण के निष्कर्ष में पाया कि अनुकूलित, सामान्य व प्रतिकूलित पारिवारिक वातावरण के मध्य एफ मान 87.16 पाया जो .01 स्तर पर सार्थक है। अनुकूलित व सामान्य पारिवारिक वातावरण के मध्य क्रान्तिक मान 6.53 पाया गया जो .01 स्तर पर सार्थक है। सामान्य व प्रतिकूलित पारिवारिक वातावरण के मध्य क्रान्तिक मान 7.43 और अनुकूलित एवं प्रतिकूलित के मध्य क्रान्तिक मान 13.16 पाया गया जो .01 स्तर पर सार्थक है। (6) अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के संयुक्त समूह के विद्यार्थियों के सामाजिक-आर्थिक स्तर के निष्कर्ष में पाया कि उच्च, सामान्य व निम्न सामाजिक-आर्थिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य एफ-मान 96.10 पाया गया जो कि .01 स्तर पर सार्थक है। उच्च और सामान्य, सामान्य एवं निम्न व उच्च निम्न सामाजिक आर्थिक स्तर के मध्य क्रान्तिक मान क्रमश: 4.18, 9.18 व 13.18 पाया गया जो .01 स्तर पर सार्थक है।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के संयुक्त समूह के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सार्थक अन्तर एफ-मान 341.37 पाया गया कि .01 स्तर पर सार्थक है। उच्च और सामान्य, सामान्य व निम्न और उच्च व निम्न शैक्षिक अभिप्रेरणा के मध्य क्रांतिक मान क्रमश: 15.36, 12.79 व 26.10 पाया जो .01 स्तर पर सार्थक है।
- अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों की पारिवारिक वातावरण व सामाजिक आर्थिक स्तर के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक .317 व पारिवारिक वातावरण और शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक क्रमश: .301 व .315 पाया गया जो कि .01 स्तर पर सार्थक है।

अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि से सार्थक रुप से उच्च है। इसका कारण यह हो सकता है कि प्रस्तुत अध्ययन में अनुसूचित जनजाति व अनुसूचित जाति के विद्यार्थियों का पारिवारिक वातावरण, सामाजिक आर्थिक स्तर, शैक्षिक अभिप्रेरणा अनुसूचित जाति के विद्यार्थियां से अधिक पाया गया है जो कि उनकी शैक्षिक उपलब्धि के लिए सकारात्मक उपलब्धि के संकेत है।पारिवारिक वातावरण, सामाजिक-आर्थिक स्तर एवं शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक का मान उच्च एवं सार्थक पाया गया है। इसका कारण यह हो सकता है कि पारिवारिक वातावरण एवं सामाजिक-आर्थिक स्तर एक दूसरे पर निर्भर होते है। जबकि शैक्षिक अभिप्रेरणा व शैक्षिक उपलब्धि को प्रत्यक्ष रुप से सम्बन्धित होते है।

ISSN 2277-5587

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. ए. गैरट (1962). ''स्टेटिक्स इन साइक्लोजी एण्ड एजूकेशन'', एलाइट पैसेफिक प्राइवेट लि. मुम्बई।
2. कौल, लोकेश (1984). ''शिक्षा अनुसंधान की कार्यप्रणाली'', विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि., नई दिल्ली।
3. गुप्ता, एस.पी. एवं गुप्ता, अलका (2010). ''सांख्यिकीय विधियाँ'', शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद।
4. गुड, बार एवं स्केट्स (1982). ''मैथडोलोजी ऑफ एजूकेशन रिएप्लीकेशन'', सेन्च्युरी पब्लिकेशन, न्यूयार्क।
5. नैपा (1986). ''ट्रेण्ड्स ऑफ इन्रॉलमेन्ट ऑफ द शिड्यूल कास्ट इन हायर एजूकेशन'', नई दिल्ली।
6. पाण्डे, के.स., पूर्णाचन्द्रा (1989). ''ट्राइबल इण्डिया'', न्यू दिल्ली, आशिष पब्लिशिंग हाउस।
7. बुच, एम.बी. (1988-92). ''फिफ्थ सर्वे ऑफ रिसर्च इन एज्यूकेशन'', एन.सी.ई.आर.टी. नई दिल्ली।
8. वर्मा, आर.पी. एवं सक्सैना एवं मिश्रा, ऊषा (2008). ''सोशियो-इकॉनोमिक स्टेट्स इण्डेक्स'', नेशनल साइकोलॉजी कारपोरेशन, आगरा।
9. शाह, बी.पी. एण्ड पटेल, टी. (1985). ''सोशियल कॉन्टेक्स्ट ऑफ ट्राइबल एज्यूकेशन'', न्यू दिल्ली, कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी।
10. शिक्षा विभाग (1993). ''अनुसूचित जाति एवं जनजाति की शिक्षा'', नई दिल्ली, मानवीय स्त्रोत विकास मंत्रालय।

प्राचीन भारतीय चिन्तन में स्मृतियों में राज्य व समाज

डॉ. सुरेन्द्र मोहन शर्मा
निजी सहायक, परीक्षा नियंत्रक, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

प्राचीन भारतीय राजनीतिक चिन्तन में स्मृतियों, महाकाव्यों व नीतिशास्त्रों का महत्वपूर्ण योगदान है। प्राचीन चिन्तन में जीवन के लौकिक पक्षों, विशिष्टत: लौकिक जीवन के नियमन व नियंत्रण की संस्थागत व व्यावहारिक पक्षों की उपेक्षा दृष्टिगत होती है। मनुस्मृति में धर्म को समस्त कार्यों का संचालन करने वाली एक सत्ता के रुप में स्वीकार कर पृथ्वी की स्थिरता एवं दृढता का कारण माना है। धर्म ऐसी शक्ति है जिसके माध्यम से समस्त नैतिक एवं भौतिक गतिविधियों का नियमबद्ध संचालन होता है। यजन, सदाचार, इन्द्रिय संयम, अहिंसा, दान और वेदाध्ययन को याज्ञवल्क्य स्मृति में धर्म के वस्तुनिष्ठ लक्षणों के रुप में मान्यता दी है। अविक्षिप्त चित्त से स्वाध्याय के निमित्त गुरु की उपासना करना, गुरु द्वारा अध्ययन के लिए बुलाए जाने पर अध्ययन हेतु प्रस्तुत होना, जो कुछ प्राप्त हुआ हो उसे गुरु के समक्ष प्रस्तुत कर देना, तथा मन, वाणी और शरीर की क्रियाओं के गुरु के अनुकूल आचरण करना शिष्य का कर्त्तव्य बताया गया है।

संकेताक्षर: धर्म, नैतिक सूत्र, सामाजिक संगठन, वर्णों के कर्तव्य, आश्रम व्यवस्था, राज्य।

भारतीय राजनीति के प्राचीन चिन्तन में मुख्यत: स्मृतियों, महाकाव्यों व नीतिशास्त्रों का महत्वपूर्ण योगदान मिलता है। प्राचीन भारतीय चिन्तन में दार्शनिक प्रस्थापनाओं का तथा सैद्धान्तिक पक्षों का महाकाव्यों, स्मृतियों में असंदिग्ध महत्व रहा है। भारतीय चिंतन में जीवन के लौकिक पक्षों, विशिष्टत: लौकिक जीवन के नियमन व नियंत्रण की संस्थागत व व्यावहारिक पक्षों की उपेक्षा हुई है। चिंतन के स्त्रोत यथा-ग्रंथों, वेदों, स्मृतियों, महाकाव्यों तथा नीति-शास्त्रों के पूर्वाग्रह से मुक्त अनुशीलन द्वारा धारणा की निर्मूलता को स्पष्ट किया गया है।

मनुस्मृति धर्म के वैदिक स्वरुप को मान्यता प्रदान करती है। वैदिक ग्रन्थों में धर्म को समस्त कार्यों का संचालन करने वाली एक सत्ता के रुप में स्वीकार किया गया है एवं इसी को पृथ्वी की स्थिरता एवं दृढता का कारण माना गया है।[1] धर्म को ऐसी शक्ति के रुप में मान्यता प्रदान की गई है जिसके माध्यम से समस्त नैतिक एवं भौतिक गतिविधियों का नियमबद्ध संचालन संभव हो सकता है। धर्म के साथ वैदिक साहित्य में 'ऋत्' शब्द का उल्लेख भी प्राप्त होता है, जिसे धर्म के समतुल्य माना गया है एवं 'ऋत्' को मनुष्यो[2] एवं देवताओ[3] दोनो के लिए बाध्यकारी स्वीकार किया गया है। परन्तु धर्म के लौकिक महत्व एवं सांसारिक तत्वों को भी दर्शन में पर्याप्त महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है।

मनुस्मृति :

(अ) सामाजिक दर्शन का आधार : धर्म

धर्म को प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में विभिन्न अर्थो में प्रयुक्त किया गया है। धर्म को जीवन के नैतिक, सामाजिक एवं राजनैतिक पक्ष से सम्बद्ध माना गया है, जीवन के अंतिम सत्य के रुप में स्वीकार किया गया है। धर्म को मनुष्यों द्वारा पालन किये जाने योग्य सांसारिक एवं नैतिक नियमों के संग्रह के रुप में भी प्रतिपादित किया गया है। अत: इसे सम्पूर्ण सामाजिक दर्शन का मूलाधार भी माना जा सकता है। धर्म व्यक्ति एवं समाज दोनो के लिए समान रुप से महत्वपूर्ण माना गया है। इसका विवेचन मनुष्य के सामाजिक आचरण के मापदण्डों के रुप में भी किया गया है। इस प्रकार यह व्यक्तिगत आचरण एवं सामाजिक दायित्व को स्पष्ट करता है। मनुस्मृति में मानव जीवन के समस्त पक्षों को धर्म के क्षेत्र के अन्तर्गत माना गया है एवं समाज के समस्त अंगों द्वारा उनके कर्तव्यों के परस्पर सामन्जस्यपूर्ण निर्वाह को अनिवार्यत: स्वीकार किया गया है। आचार्य मनु मनुष्यों के परमात्मा में विलीन हो जाने को निवृत्ति एवं परम् सुख की अवस्था मानते हैं।[4] इस प्रकार मनुष्य के जीवन का अंतिम ध्येय

ISSN 2277-5587

परमात्मा में विलीन हो जाना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए व्यक्ति के जीवन का धर्म के अनुकूल संचालित होना अनिवार्यता के रुप में स्वीकार किया गया है।[5]

मनु के अनुसार ''पुत्र, धन एवं स्त्री इत्यादि परलोक में सहायता नहीं कर सकते बल्कि धर्म ही परलोक में एकमात्र सहायक के रुप में साथ रहता है।''[6] बन्धु-बांधव मरने के पश्चात व्यक्ति का साथ छोड देते है, मात्र धर्म ही उनकी सहायतार्थ रहता है।[7] मनुस्मृति में राजा से यह अपेक्षा की जाती है कि वह धर्म का संरक्षण करेगा, इसका यही अर्थ है कि वह प्रजा के धार्मिक कृत्यों में हस्तक्षेप नहीं करेगा, वरन् वह प्रजा के द्वारा उसके कृत्यों के सम्यक् निर्वाह को अपनी शक्ति के प्रयोग के द्वारा सुनिश्चित करेगा।[8] समाज के विभिन्न संगठनों एवं समस्त व्यक्तियों के द्वारा समुचित कर्तव्य पालन धर्म के लौकिक पक्ष के अन्तर्गत माना गया है।[9] राज व प्रजा के मध्य सम्बन्धों में परस्पर निर्भरता का मूल आधार लौकिक उपयोगिता एवं पारलौकिक परिणामों दोनो को स्वीकार किया है।[10]

(ब) सामाजिक आचरण के नैतिक सूत्र

मनुस्मृति समस्त व्यक्तियों के आचरण को नियमित करने के लिए कुछ नैतिक नियमों के समूह को स्वीकृति प्रदान करती है। परन्तु इन नियमों के सम्बन्ध में मनु की मान्यता रही है कि ये समय के साथ बदलते रहे है।[11] मनुस्मृति में धर्म के पांच स्त्रोत माने गए हैं : वेद[12] स्मृति[13], सज्जनों का आचरण, अन्त:करण[14] तथा राजाज्ञा[15]। राज्य में ब्राह्मणों के अतिरिक्त समस्त वर्णो के लिए धर्म का एकमात्र स्त्रोत्र ही मान्य था - वह था राजाज्ञा। राजा द्वारा निर्धारित धर्म के लिये यह आवश्यक था कि वह धर्म की धारणा में समाविष्ट सार्वभौम, नैतिक मूल्यों व मन्तव्यों से संगत हो। इस प्रकार मनु वस्तुत: धर्म को राज्य की विधायी शक्ति के संव्यवहार के निदेशक सूत्र के रुप में प्रतिपादित करते हैं।

मनुस्मृति में सत्य और अंहिसा को समाज के सर्वमान्य मूल्यों के रुप में स्वीकृति प्रदान की गई है। इसके लौकिक व पारलौकिक महत्व को स्पष्ट किया हैं ''जो अधार्मिक है, जिसका झूठ बोलना ही धन है एवं जो परपीडन में निरत रहता है वह इस लोक में उन्नति प्राप्त नहीं कर सकता''।[16] सत्य की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए मनुस्मृति में असत्यवादी को आत्मा के अपहरणकर्त्ता के रुप में माना गया है।[17]

सामाजिक आचरण के नियमों के रुप में प्रतिपादित 'यम' एवं 'नियम' की व्याख्या तथा इनके मध्य भेद की प्रस्थापना द्वारा मनु सार्वभौत्रिक नैतिक मूल्यों तथा आचरण के लिये विधि द्वारा निर्धारित विशिष्ट मापदण्डों के मध्य पारस्परिकता को अभिनिर्धारित करते हैं। 'यम' के अन्तर्गत अक्रूरता, क्षमा, सत्य, अहिंसा, इंन्द्रिय दमन, ध्यान, प्रसन्नता, मधुरता एवं सरलता आदि गुणों को एवं 'नियम' के अन्तर्गत प्रार्थना, दान, तपस्या, स्वाध्याय, ब्रह्मचर्य, व्रत, उपवास, अक्रोध एवं गुरु सेवा आदि गुणों को माना गया है। 'यम' को सार्वभौमिक, नैतिक आस्थाओं के रुप में प्रतिपादित किया गया है एवं नियमों का सम्बन्ध आचरण के व्यावहारिक पक्ष से माना गया है।[18]

(स) सामाजिक संगठन एवं विभिन्न वर्णो के कर्तव्य

मनुस्मृति में सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था का चार वर्णो - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र से निर्माण हुआ है।[19], इसी के साथ आयु को अग्रसर व्यक्ति के जीवन की भी चार विभिन्न अवस्थाओं को मान्यता प्रदान की गई है :- ब्रह्मचर्य आश्रम, ग्रहस्थाश्रम, वानप्रस्थ आश्रम एवं सन्यास आश्रम। प्रत्येक वर्ण एवं आश्रम के आधार पर व्यक्ति के कर्तव्यों के सम्बन्ध में मनुस्मृति में स्पष्ट विवेचन किया गया है।

(i) ब्राह्मणों के कर्तव्य :

ब्राह्मणों को मनुस्मृति में सम्पूर्ण वर्ण व्यवस्था में सर्वोच्च एवं प्रमुख स्थान प्रदान किया गया है। मनुस्मृति वेदों को महत्वपूर्ण मानती है, तथा वेद को धारण करने वाले ब्राह्मणों को सृष्टि का स्वामी स्वीकार करती है। अत: स्पष्ट है कि ब्राह्मणों को वेदों के ज्ञान से युक्त होना चाहिए।[20] ब्राह्मणों द्वारा धर्मशास्त्रों के अध्ययन को भी आवश्यक माना गया है। साथ ही धर्मशास्त्र के ज्ञान को अन्य सुपात्रों तक पहुंचाने की भी ब्राह्मणों से अपेक्षा की गयी है।[21] मनुस्मृति ब्राह्मणों हेतु वेदों एवं स्मृतियों में वर्णित आचार को श्रेष्ठ मानता है, अत: द्विज द्वारा इसको ग्रहण करने में तत्पर रहने को उसके दायित्व के रुप में परिभाषित करता है।[22] ब्राह्मण का यह दायित्व माना गया है कि वह इन इन्द्रियों पर संयम रखे।[23] अर्थात, संयमित व्यवहार ब्राह्मण के प्रमुखतम दायित्वों में से माना गया है। मनुस्मृति ब्राह्मणों के लिये प्रमुखतम कर्तव्यों की विवेचना करता है - उनमें पढना, पढाना, यज्ञ करना, दान देना एवं लेना[24] प्रमुखत: सम्मिलित है।

(ii) क्षत्रियों के कर्तव्य :

मनुस्मृति में प्रजा रक्षण के कार्यो हेतु क्षत्रियों को उत्तरदायी माना है। ग्रन्थ में वर्णित क्षत्रियों के प्रमुख्त: कर्तव्य - प्रजा की रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, पढना, विषय में आसक्ति नहीं रखना आदि माने गये हैं।[25] शासक के रुप में क्षत्रिय के विभिन्न कर्तव्यों एवं दायित्वों का राजधर्म के अन्तर्गत विवरण प्रस्तुत किया गया है :- ''राजा को प्रजा की रक्षा करनी चाहिए[26], प्रजा की अपराधियों से रक्षा हेतु सदैव दण्ड का समुचित संव्यवहार भी क्षत्रिय का प्रमुख दायित्व माना गया है।[27] मनु ने क्षत्रियों द्वारा, राज्य में उनके प्रमुखतम स्थान के पश्चात् भी अधिकारों का दुरुपयोग होने से रोकने का प्रयास किया है।

(iii) वैश्यों के कर्तव्य :

मनुस्मृति में राज्य की आर्थिक व्यवस्था के सम्बन्ध में वैश्यों की भूमिका को महत्वपूर्ण माना गया है। इसके अनुसार वैश्यों के प्रमुख

कर्तव्य :- पशुओं की रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, पढ़ना, व्यापार करना, ब्याज लेना व कृषि कार्य करना आदि माने गए हैं।[28] मनुस्मृति में वैश्यों को राज्य के आर्थिक विकास एवं आर्थिक व्यवस्था के संचालन का उत्तरदायित्व प्रदान किया गया है। वैश्यों के लिए व्यापार करना, पशुओं की रक्षा करना, कृषि कार्य के माध्यम से धन अर्जित करना इत्यादि दायित्व स्वीकार किए गए है। वेद के अध्ययन से उदित सात्विक भावों के माध्यम से वैश्यों द्वारा धार्मिक कार्य भी सम्पन्न किया जाना सम्भव होगा, इसलिए यज्ञादि करना व दण्ड देना भी वैश्यों का कर्त्तव्य माना गया है।[29]

(iv) शूद्रों के कर्त्तव्य :

आचार्य मनु शूद्रों के प्रति सामाजिक व्यवस्था में सेवा का दायित्व निर्दिष्ट करते हैं। उनके अनुसार ''ब्रह्मा ने ब्राह्मणादि तीनों वर्णो का अनिन्दक रहते हुए सेवा करने को शूद्रों का प्रधान कर्म बताया है।''[30] मनु की मान्यता है कि शूद्र वर्ण के सदस्यों द्वारा अन्य वर्णो द्वारा की जाने वाली निन्दा, अनिन्दा या प्रशंसा पर विचार किए बिना सदैव सेवा कार्य में रत रहना चाहिए। आचार्य मनु ने शूद्र वर्ण के व्यक्तियों के लिए वेदों का अध्ययन वर्जित माना है, जिसका कारण संभवत: उस वर्ग का निम्न बौद्धिक स्तर माना गया है।

(द) विभिन्न वर्णो के मध्य परस्पर सम्बन्ध :

सम्पूर्ण समाज के निर्माण व व्यवस्था के सुचारु निर्वाह के लिए चारों वर्णो के विभिन्न विशेषीकृत कार्यो का सम्पन्न किया जाना आवश्यक था। मनु स्पष्ट करते हैं कि क्षत्रिय द्वारा वेदपाठी ब्राह्मणों की रक्षा एवं संरक्षण किया जाना उचित है, क्योंकि इनके द्वारा किए जाने वाले वेद अध्ययन व धार्मिक कार्यो से राज्य में धर्म की वृद्धि होती है।[31] अत: स्पष्ट है कि ब्राह्मणों की उच्च स्थिति अकारण नहीं थी, अपितु इसका मूल कारण ब्राह्मणों का उच्च कोटि का चरित्र एवं उच्च आदर्श थे। समाज में अराजकता के नाश हेतु राजा की सृष्टि की गई, अर्थात क्षत्रिय के सामाजिक व्यवस्था में अस्तित्व का मूल कारण उसके द्वारा समाज को प्रदान की जाने वाली उस बाध्यकारी शक्ति को माना गया है जिसके माध्यम से वह समस्त व्यक्तियों को स्वधर्म पालन करने के लिये उद्यत करता है एवं आपराधिक प्रवृत्ति के लोगो को आपराधिक वृत्ति के त्याग हेतु तत्पर करता है।''[32] अत: यह भी स्पष्ट है कि वर्ण व्यवस्था में क्षत्रिय का मुख्य स्थान उसके द्वारा राज्य को प्रदान की गई वह बाध्यकारी शक्ति है जिसके माध्यम से समाज के समस्त सदस्य अपने-अपने भोग ग्रहण करने में समर्थ होते है।[33] इसी प्रकार आचार्य मनु द्वारा वैश्य एवं शूद्र हेतु स्वीकार किए कर्तव्यों को भी समाज में आवश्यकता के आधार पर स्पष्ट किया जा सकता है। मनुस्मृति में वर्ण व्यवस्था में चारों वर्णो को व्यवस्था बनाए रखने के लिए परस्पर एक- दूसरे पर निर्भर माना गया है। वर्ग विशेष की समाज व्यवस्था में प्रदान की गई उच्चता अथवा निम्नता उस वर्ण द्वारा किए गए कृत्यों की महानता पर निर्भर करती है।

मनुस्मृति महिलाओं को समाज में स्वतंत्र स्तर प्रदान करने के पक्ष में नहीं है। ग्रन्थ में प्रतिपादित किया गया है कि स्त्री बाल्यकाल में पिता के, युवावस्था में पति के, वृद्धावस्था में पुत्र के नियंत्रण में व संरक्षण में रहे तथा वह स्वतंत्रता के योग्य नहीं है। शूद्रों व स्त्रियों के प्रति मनुस्मृति में प्रतिपादित दृष्टिकोण से यह व्यक्त होता है कि ग्रन्थ सामाजिक व्यवस्था में समानता के सिद्धान्त को मान्यता प्रदान नहीं करता। शूद्रों के प्रति ग्रन्थ में प्रतिपादित किये गये भेदभावपूर्ण दृष्टिकोण का कोई तर्कसम्मत आधार प्रतीत नहीं होता।

(य) आश्रम व्यवस्था

आश्रम व्यवस्था के माध्यम से मनुस्मृति में मानव जीवन के सार्थक काल के विभाजन की व्यवस्था की गई है। मानव के जीवन को मनुष्य की अवस्था के अनुसार चार आश्रमों के रुप में चार भागों में विभाजित किया गया है :- ब्राह्मचर्य आश्रम, गृहस्थ आश्रम, वानप्रस्थ आश्रम एवं सन्यास आश्रम।[34] मनु ने व्यक्ति के जीवन में पारलौकिक एवं आध्यात्मिक निवृत्ति को सर्वाधिक उच्च स्थान प्रदान किया है। मनु ग्रन्थ में स्पष्ट करते हैं कि जो व्यक्ति चारों आश्रमों में उचित रुप से व्यवहार करते हुए एक आश्रम से दूसरे आश्रम में प्रवेश करते हैं वे व्यक्ति मोक्ष के अधिकारी होते हैं।[35] मनु ने मानव जीवन को चार अंगो में विभाजित करके प्रथम चतुर्थांश को गुरुकुल में रहकर इन्द्रिय नियंत्रण करते हुए ज्ञान प्राप्ति हेतु नियम करते हैं एवं ब्रह्मचर्याश्रम का नाम दिया है। द्वितीय चतुर्थांश को, जिसे व्यक्ति के विचार एवं सामाजिक दायित्वों की पूर्ति हेतु नियम माना गया है -गृहस्थाश्रम की संज्ञा गई है। तृतीय चतुर्थांश को स्वाध्याय हेतु समर्पित माना गया है, तथा उसे वानप्रस्थाश्रम का नाम दिया गया है। अंतिम चतुर्थांश में व्यक्ति से अपेक्षा की गई है कि वह समस्त सांसारिक माया, मोह त्याग कर स्वयं को मोक्ष हेतु समर्पित कर दें। जीवन के इस चतुर्थ खण्ड को सन्यासाश्रम कहकर सम्बोधित किया गया है।[36]

(i) ब्रह्मचर्याश्रम :

ब्रह्मचारी की दिनचर्या के निर्धारण एवं उस पर आरोप्य निषेधों के विवेचन का मुख्य आधार यह रहा है कि वेद अध्ययन, ज्ञान प्राप्ति एवं विद्वान आचार्य की संगत से व्यक्ति ज्ञानवान एवं विनयशील हो जाता है।

मनु ब्रह्मचारी के लिए लौकिक (अर्थ आदि विषयों पर), वैदिक (वेद अध्ययन) एवं ब्रह्म विषयक (मोक्ष एवं ब्रह्म विषयक) समस्त प्रकार के अध्ययन को आवश्यक स्वीकार करते हैं।[37] वेद अध्ययन को ग्रन्थ सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं सर्वोच्च ज्ञान के रुप में माना गया है।[39] आलस्य हीनता[38], परनिन्दा में अरुचि, निरर्थक प्रलाप से अनासक्ति, मिथ्याभाषण से परहेज आदि ग्रन्थ में ब्रह्मचारी के श्रेष्ठ गुणों के रुप में स्वीकार किए हैं।[40] ग्रन्थ ब्रह्मचारी के लिए विषयाभिलाषी कर्मों (सर्वांश में तैल मालिश, जूता व छाता धारण करना, काम आदि) क्रोध, लोभ, नाचना, गाना बजाना, जीवनों के प्रति हिंसा आदि का निषेध किया गया है।[41] ब्रह्मचर्य पालन हेतु

व्यक्ति द्वारा इन्द्रिय पालन करते हुए तपोवृद्धि के लिए निम्य देवताओं, ऋषियों, पितरों का अर्पण, देवताओं का पूजन एवं प्रात: एवं सांयकाल हवन आवश्यक माना गया है।[42] संचयन की प्रवृत्ति का ब्रह्मचारी हेतु निषेध किया गया है।[43] ब्रह्मचारी के लिये जीवन-यापन हेतु किसी भी प्रकार की वृत्ति का आश्रम उचित नहीं माना गया, इसके लिए भिक्षावृत्ति को स्वीकार किया गया है। परन्तु ग्रन्थ में भिक्षावृत्ति हेतु कुल बान्धवों एवं महापापियों के घरों का निषेध किया गया है।[44] ब्रह्मचारी के लिये गुरु का स्थान सर्वोच्च माना गया है, गुरु की समस्त आज्ञाओं का पालन, गुरु के प्रति अत्यधिक आदर भाव एवं गुरु सेवा हेतु तत्पर भाव की आवश्यकता पर ग्रन्थ विशेष बल देता है।[45]

(ii) गृहस्थाश्रम :

गृहस्थ के लिए त्रिवर्ग की स्थापना हेतु प्रयत्नों को उचित माना गया है एवं इसके लिए उसके द्वारा धन-संचय, परिवार पालन को आवश्यक माना है।[46]

ब्राह्मण गृहस्थ हेतु किसी दूसरे जीवन को कष्ट पहुंचाए बिना जीवन-पालन हेतु धन संचय को उचित माना गया है। जीवन-याापन किए जाने वाले कर्मों के आधार को गृहस्थों के विभिन्न श्रेणियों में विभाजित किया गया है। षटकर्मा गृहस्थ जीवन यापन हेतु छ: कर्मो- अयाचित, भक्ष्य, खेती, व्यापार एवं सूद का प्रयोग करता है। इससे कम परिगृह वाला गृहस्थ तीन कर्मो-यज्ञ करना, पढ़ना एवं दान लेना, से परिवार पालन का कार्य करता है। इससे भी कम संचय करने वाला गृहस्थ दो कर्मो-यज्ञ एवं विद्या का अपने परिवार के पालन-पोषण हेतु प्रयोग करता है। चौथा गृहस्थ ब्रह्म सूत्र या वेदाध्ययन से अपने परिवार की जीविका चलाता है।[47] गृहस्थी के लिए गाने बजाने अथवा काम में अत्यधिक आसक्ति, धन-संचयन हेतु पतित कार्यो का आश्रय आदि का निषेध किया गया है।[48] स्त्रियों के प्रति अत्यधिक आसक्ति को गृहस्थ के लिए यश, सम्मान एवं कीर्ति का नाश करने वाला माना गया है।[49] इस प्रकार समस्त दायित्वों के उचित संवहन को यश एवं मोक्ष प्राप्ति हेतु गृहस्थों का उचित कर्म माना है।[50] ग्रन्थ में कहा गया है कि गृहस्थ को उच्च कुल की श्रेष्ठ गुणों से युक्त कन्या से शास्त्रानुसार विवाह कर गृहस्थाश्रम में निवास करना चाहिए।[51]

गृहस्थ की महत्ता का उल्लेख करते हुए मनु ने कहा है कि ब्रह्मचर्च, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं सन्यास चारों आश्रम गृहस्थ से उत्पन्न होते हैं।[52] गृहस्थ द्वारा तीनों आश्रमों में निवास करने वाले व्यक्तियों का पालन किया जाता है। इसी कारण मनुस्मृति में इसे सर्वश्रेष्ठ माना गया है।[53]

(iii) वानप्रस्थ :

गृहस्थ के उच्च आयु प्राप्त कर लेने एवं जीवन के सांसारिक लक्ष्यों की प्राप्ति के पश्चात् वानप्रस्थाश्रम का विधान किया गया है।[54] गृह, ग्राम्य, भोजन आदि को त्यागकर श्रोत एवं आवसाथ अग्नि आदि लेकर पत्नी के साथ अकेले वनगमन करना चाहिए।[55] वन में वेदाभ्यास करते हुए मान- अपमान, ठंडा-गर्म, सुख-दुख आदि द्वन्दों का सामना करना चाहिए एवं सबसे मित्रभाव एवं दया बनाए रखनी चाहिए।[56] वानप्रस्थी हेतु ग्रन्थ में इन्द्रिय नियंत्रण, अतिथि सत्कार, दानशीलता आदि का होना आवश्यक माना गया है।[57] मनुस्मृति में वानप्रस्थी हेतु जीवन यापन हेतु कन्द-मूल फलों को ही उचित माना गया है एवं कठोर तपस्या द्वारा शरीर को क्षीण कर देना, उचित माना गया है।[58] वानप्रस्थी को ब्रह्म प्राप्ति हेतु उपनिषदों एवं वेदों में कथित वचनों का अभ्यास करना चाहिए, ऐसा ग्रन्थ में स्वीकार किया गया है।[59]

(iv) सन्यासाश्रम :

मानव जीवन के अंतिम चतुर्थांश को सन्यासाश्रम के रुप में स्वीकार किया गया है। ग्रन्थ में अनिवार्य रुप से स्वीकार किया गया है कि सन्यासाश्रम में प्रवेश करने से पूर्व व्यक्ति को देव ऋण एवं पितृ ऋण से मुक्त हो जाना चाहिए, अन्यथा वह नरकगामी होता है।[60] वेदों के विधिपूर्वक अध्ययन एवं पुत्र प्राप्ति के पश्चात् ही सन्यासाश्रम के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति संभव हो सकती है।[61]

सन्यासी के लिए गृह, सांसारिक माया-मोह, शरीर आदि के मोह का निषेध किया गया है।[62] ग्रन्थ में निहित है कि सन्यासी को किसी के साथ वैर भाव नहीं रखना चाहिए, किसी का अपमान नहीं करना चाहिए एवं कटु वचनों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।[63] संन्यासी द्वारा इस प्रकार इन्द्रिय नियंत्रण, वेदानुकूल आचरण एवं कठोर तपस्या के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति की जा सकती है।[64] इस प्रकार मनुस्मृति में व्यक्ति के लिये प्रतिपादित जीवन के उच्चतम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति हेतु व्यक्ति के जीवन को विभिन्न आश्रमों में विभाजित करके उसे सम्पूर्ण समाज के प्रति उसे समस्त कर्तव्यों के प्रति समर्पित किया गया है।

(र) सामाजिक व्यवस्था में राज्य की भूमिका :

मनुस्मृति में सामाजिक व्यवस्था का नियमन राज्य का दायित्व माना गया है। राज्य से यह अपेक्षा की गई है कि वह समाज में सुनिश्चित करें कि प्रत्येक वर्ण एवं आश्रम के सदस्य द्वारा कर्तव्य पालन किया जा रहा है। मनुस्मृति में सम्पूर्ण सामाजिक व्यवस्था के आधार-रुप में धर्म को स्वीकार किया गया है एवं समाज में धर्म की स्थापना हेतु व्यक्तियों द्वारा सवधर्म पालन को आवश्यक माना गया है क्योंकि इसी माध्यम से समाज में वर्ण व्यवस्था कायम रह सकेगी। आचार्य मनु ने राज्य का यह प्रमुख दायित्व माना है कि दण्ड की बाध्यकारी शक्ति के माध्यम से समाज में समस्त व्यक्तियों को स्वधर्म पालन हेतु बाध्य करें, जिससे समाज की वर्णसंकरता से रक्षा की जा सके।[65]

इसी प्रकार राज्य द्वारा समस्त वर्णो एवं आश्रमों की रक्षा भी

आवश्यक रुप से स्वीकार की गई है। ग्रन्थ में कहा गया है कि ''समस्त वर्णो एवं आश्रमों की रक्षा करने वाले राजा की सहायता हेतु ब्रह्मा ने तेजोमय दण्ड की स्थापना की।''[66] मनुस्मृति में सामाजिक सम्बन्धों के नियमन के प्रसंग में राज्य से यह अपेक्षा तो की गई है कि वह अपनी ''कार्यपालिका शक्ति'' के समुचित संव्यवहार द्वारा सामाजिक संगठन की अक्षुण्णता का तथा सामाजिक सम्बन्धों के प्रारुप के रुप में प्रस्थापित आचरण के नियमों का प्रवर्तन करवाएं। किन्तु इन नियमों में किसी प्रकार का परिवर्तन व संशोधन करने की राज्य की शक्ति का निषेध करके ग्रन्थ सामाजिक व्यवस्था के संदर्भ में राज्य में विधायी शक्ति के संव्यवहार को मान्यता प्रदान नहीं करता।

याज्ञवल्क्य स्मृति में राज्य व समाज

याज्ञवल्क्य स्मृति में धर्म को सामाजिक व्यवस्था के आधार के रुप में चित्रित किया गया है। श्रुति, स्मृति तथा सज्जनों के व्यवहार को धर्म का आधार इंगित करते हुए ग्रंथ में स्वयं व्यक्ति के अंत:करण के स्वर को, तथा उचित संकल्प से उत्पन्न इच्छाओं को ही धर्म का स्त्रोत माना गया है।[67] यजन, सदाचार, इन्द्रिय संयम, अहिंसा, दान और वेदाध्ययन को याज्ञवल्क्य स्मृति में धर्म के वस्तुनिष्ठ लक्षणों के रुप में मान्यता दी गई है।[68] धर्म की व्याख्या के लिए याज्ञवल्क्य स्मृति में विद्वानों के अभिमत तथा स्वयं व्यक्ति के अन्त:करण के आग्रह को समान रुप से महत्व प्रदान किया गया है। याज्ञवल्क्य स्मृति में प्रतिपादित किया गया है कि धर्मशास्त्र या तीनों विद्वानों (ऋक् , यजु, साम) की व्याख्या में निपुण एक व्यक्ति भी धर्म की व्याख्या के संदर्भ में प्राधिकृत है।[69] सुयोग्य शिक्षक के लक्षणों को इंगित करते हुए याज्ञवल्क्य स्मृति में कृतज्ञता, द्रोहरहितता, सदाचरण, पवित्रता, द्वेष से विरक्त रहने की प्रवृत्ति, सदाचरण में प्रवृत्ति तथा छल-छदम-मुक्त व्यवहार को सुयोग्य शिष्य के लक्षणों में सम्मिलित किया गया है।[70]

शिक्षण संस्थानों, और अध्ययनरत छात्रों के जीवन-निर्वाह का दायित्व याज्ञवल्क्य स्मृति में समुदाय का माना गया है। शिक्षण की विषयवस्तु और परिधि के आधार पर याज्ञवल्क्य स्मृति में शिक्षकों का वर्गीकरण किया गया है। ब्रह्मचारी को ग्रंथाधान और उपनयन संस्कार कर वेद ज्ञान दें उसे आचार्य की संज्ञा दी गई है। वेद के एक भाग का ज्ञान देने वाले को उपाध्याय कहा गया है और केवल यज्ञ को सम्पन्न करवाने वाले को ऋत्विक की संज्ञा दी गई है। याज्ञवल्क्य स्मृति में यह निर्दिष्ट किया गया है कि गुरु, आचार्य, उपाध्याय, ऋत्विक क्रमानुसार पूज्य है। साथ ही यह भी स्पष्ट किया गया है कि माता इन सबसे अधिक पूज्य है।[71] याज्ञवल्क्य स्मृति में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य वर्ण सदस्यों के लिए उपनयन हेतु क्रमश: 16,11 और 14 वर्ष की आयु निर्धारित की गई है। याज्ञवल्क्य स्मृति में निर्दिष्ट किया गया है कि इन वर्णो के सदस्यों की द्विज संज्ञा उपनयन संस्कार के बाद ही सार्थक होगी।[72] ब्राह्मणों के लिए वेद को ही परम कल्याण का आधार घोषित किया गया है तथा उन्हें ही यज्ञों, तपों और अन्य शुभ कर्मो का अवबोधक माना गया है।[73] याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है कि वेदों का अध्ययन करने वाला ब्राह्मण पितरों और देवों को तृप्त करता है।[74] पारिवारिक जीवन में स्त्रियों के महत्व को, और उनकी प्रतिष्ठित स्थिति को चित्रित करते हुए भी याज्ञवल्क्य स्मृति में महिलाओं को सामाजिक व्यवहारों में भूमिका का स्वत्रंत समर्थन नहीं किया गया है।[75] स्त्री के लिए पति के प्रिय तथा हित में संलग्न रहने को मुख्य दायित्व बताया गया है।[76] बहुपत्नी प्रथा की अनुमति के कतिपय प्रसंग भी याज्ञवल्क्य स्मृति में उपलब्ध होते हैं।[77] याज्ञवल्क्य स्मृति में पत्नी की मृत्यु हो जाने पर पति को अविलम्ब दूसरे विवाह की अनुमति दी गई है।[78]

उपर्युक्त उदाहरणों से ऐसा प्रतीत होता है कि याज्ञवल्क्य स्मृति में स्त्रियों की स्थिति को पुरुषों की तुलना में हीनतर रखा गया है, किन्तु ग्रंथ में कतिपय प्रसंगों में स्त्रियों की प्रतिष्ठा व सुरक्षा के कतिपय स्टीक प्रावधान किए गए हैं। स्त्रियों की स्वाभाविक प्रवृतियों के विषय में याज्ञवल्क्य का दृष्टिकोण मनु की तुलना में भिन्न प्रतीत होता है। जहाँ मनु ने यह घोषित किया है कि स्त्रियों में कुछ प्रकृतिगत दुर्गुण है, वहीं याज्ञवल्क्य स्मृति में उन्हें स्वाभाविक रुप से पवित्र व सम्मानजनक बताया गया है। याज्ञवल्क्य स्मृति में कहा गया है सोम ने स्त्रियों को पवित्रता दी है, गंधर्व ने मधुर वाणी दी और अग्नि ने सभी प्रकार से पवित्रता दी है। अत: स्त्रियाँ स्वयं पवित्र है। याज्ञवल्क्य स्मृति में पति को त्यागकर दूसरा विवाह कर लेने के स्त्री के अधिकार को मान्यता प्रदान की गई है।[79] इसी प्रकार पत्नी का परित्याग कर देने वाले पुरुष से यह अपेक्षा की गई है कि वह पूर्व पत्नी का भरणपोषण करें।[80] याज्ञवल्क्य स्मृति में पति और पत्नि के मध्य मधुर संबंधों की आवश्यकता पर बल देते हुए कहा गया है कि जहाँ पति व पत्नि में परस्पर अनुकूलता रहती है, वहाँ त्रिवर्ग (**धर्म, अर्थ और काम**) की वृद्धि होती है।[81] याज्ञवल्क्य स्मृति में आश्रम व्यवस्था को सामाजिक व्यवस्था का संस्थागत आधार माना गया है, तथा विभिन्न आश्रमों के व्यक्तियों के   लिए कर्त्तव्यों की रुपरेखा प्रस्तुत की गई है।[82] ब्रह्मचर्य के अतिरिक्त अन्य आश्रमों के सदस्यों के दायित्वों के विषयों में, तथा ब्राह्मणों के अतिरिक्त अन्य वर्गो के सदस्यों के दायित्वों का विस्तृत विवेचन याज्ञवल्क्य स्मृति में उपलब्ध नहीं है।

सामाजिक व्यवस्था के संबंध में राज्य की भूमिका नियमनकारी मानी गई है। याज्ञवल्क्य स्मृति में राज्य से अपेक्षा की गई है कि वह धर्म के रुप में परिभाषित सामाजिक व्यवस्था के सूत्रों को व्यवहार में क्रियान्वित करें।

ISSN 2277-5587

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ''ध्रुवाम् भूमित् पृथ्वीम् धृताम्'', अथर्वेद, 11, 17.
2. ऋग्वेद, 4,3,9.
3. पूर्वोक्त, 7,11.
4. मनु 1-54.
5. मनु.
6. पूर्वोक्त, 4-239.
7. पूर्वोक्त, 4-241.
8. ''मनुस्मृति में राज्य सत्ता व धर्म'', मधुकर श्याम चतुर्वेदी, कुलदीप कुमार, प्राचीन भारतीय राज्य व्यवस्था, पृ. सं. 4.
9. पूर्वोक्त, 8/128.
10. पूर्वोक्त, 8/127.
11. पूर्वोक्त, 1/84.
12. पूर्वोक्त, 2/6.
13. पूर्वोक्त.
14. पूर्वोक्त, 2/12.
15. पूर्वोक्त, 7/15.
16. पूर्वोक्त, 4/170.
17. पूर्वोक्त, 8/83.
18. मनुस्मृति में राज्य व्यवस्था, पृ. सं. 11, मनुस्मृति, 4/204.
19. मनुस्मृति, 1/87.
20. पूर्वोक्त.
21. पूर्वोक्त, 1/103.
22. मनुस्मृति, 1/108.
23. मनुस्मृति, 2/88.
24. पूर्वोक्त, 1/88.
25. पूर्वोक्त, 1/90.
26. पूर्वोक्त, 7/3.
27. मनुस्मृति7/15-18
28. पूर्वोक्त, 1/90.
29. खण्डेलवाल, शम्मी, ''मनुस्मृति में राज. दर्शन'', अप्रकाशित शोध कार्य, पृ.स. 52.
30. पूर्वोक्त, 1/918.
31. पूर्वोक्त, 7/136.
32. पूर्वोक्त, 7/15-24,25.
33. पूर्वोक्त, 7/22 वर्णसंकरता.
34. पूर्वोक्त, द्वितीय अध्याय, श्लोक 29.
35. पूर्वोक्त, षष्ठम् अध्याय, श्लोक 88.
36. पूर्वोक्त, चतुर्थ अध्याय, श्लोक 1.
37. पूर्वोक्त, द्वितीय अध्याय, श्लोक 117.
38. पूर्वोक्त, 144,118,166,168.
39. पूर्वोक्त, 173.
40. पूर्वोक्त, 179,180.
41. पूर्वोक्त, 178,177.
42. पूर्वोक्त, 173,172.
43. पूर्वोक्त, 182.
44. पूर्वोक्त, 183-185.
45. पूर्वोक्त, 190-203.
46. पूर्वोक्त, 2,3.
47. पूर्वोक्त, 9
48. पूर्वोक्त, 13-16.
49. पूर्वोक्त, 40-44.
50. पूर्वोक्त, 258.
51. पूर्वोक्त, पंचम अध्याय,169.
52. पूर्वोक्त, षष्ठम् अध्याय 87.
53. पूर्वोक्त, 89.
54. पूर्वोक्त, 2.
55. पूर्वोक्त, 3-4.
56. पूर्वोक्त, 8.
57. पूर्वोक्त, 7-8.
58. पूर्वोक्त, 23,25,21.
59. पूर्वोक्त, 29,30.
60. पूर्वोक्त, 35.
61. पूर्वोक्त, 36.
62. पूर्वोक्त, 43.
63. पूर्वोक्त,47-48.
64. पूर्वोक्त, 75-85.
65. पूर्वोक्त, सप्तम अध्याय, 24.
66. पूर्वोक्त, 35.
67. आचार्य अध्याय-8.
68. उपर्युक्त आचार अध्याय-9.
69. उपर्युक्त आचार्य अध्याय-10.
70. आचार अध्याय-21.
71. आचार्य अध्याय-26,27,28.
72. आचार अध्याय-40.
73. आचार अध्याय-41-42.
74. आचार अध्याय-84.
75. आचार्य अध्याय-84.
76. आचार अध्याय-88.
77. आचार्य अध्याय-89.
78. आचार अध्याय-67.
79. आचार अध्याय-74.
80. आचार्य अध्याय-74.
81. आचार अध्याय ग्रहस्थ धर्म प्रकरण.
82. उपर्युक्त 107

ISSN 2277-5587

नरेंद्र कोहली का 'महासमर' एक जातीय गौरव गाथा

डॉ. बसन्त कुमार बंसल
प्राध्यापक, रा.व.मा.विद्यालय, बसई, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

सत्य है कि भारतीय समाज में जाति की दीवार 'चीन की दीवार' की भाँति इतनी मजबूत और ऊँची रही है कि उसे तोड़ना किसी के लिए भी आसान नहीं है। इतिहास साक्षी है, जाति-धर्म ने व्यक्ति की महानता की कभी कद्र नहीं की। युगों से अनेक महापुरुष जातिगत भावना का समय-समय पर शिकार होते रहे हैं। महाभारत कथा पर आधारित नरेंद्र कोहली के उपन्यास 'महासमर' में जातीय गौरव की अभिव्यक्ति हुई है। महासमरकार ने महाभारतीय अनेक पात्रों - सत्यवती, कर्ण, द्रोपदी, हिडिंबा तथा भील जाति के लोगों के जातीय उत्थान के प्रसंग को उठाया है। इस षोधपत्र में भी महासमर के पात्रों के आधार पर यही दर्षाने का प्रयत्न किया गया है कि कहीं भी अन्याय और अधर्म न हो, किसी का भी अधिकार न छीना जाए। किसी को भी कष्ट न दिया जाए और समता एवं न्याय तक सबकी पहुँच हो।

संकेताक्षर : *महासमर, जातीय गौरव, सूतपुत्र, प्रच्छन्न, निर्बंध।*

नरेंद्र कोहली आधुनिक हिंदी साहित्य में पौराणिक कथाकार के रुप में ख्याति प्राप्त हैं। यद्यपि उन्होंने पौराणिक कथावस्तु को अपने लेखन का आधार बनाया, परंतु वे भी अपने तत्कालीन युगीन परिवेश से प्रभावित रहे हैं, क्योंकि प्रत्येक साहित्यकार तत्कालीन विचारधारा एवं जीवन मूल्यों से अवश्य प्रभावित रहता है। यह सत्य है कि विशेष परिस्थितियों में अपने परिवेश से प्रभावित होकर ही लेखक पौराणिक कथावस्तु के लिए अपनी कलम उठाता है। आधुनिक परिवेश में जब मनुष्य हताश होता है तो अपने पौराणिक ग्रन्थों में झांकने का प्रयास करता है क्योंकि मैथिलीशरण गुप्त जी ने सही ही लिखा है -

''हम कौन थे, क्या हो गए हैं, और क्या होंगे अभी
आओं विचारें आज मिलकर, यह समस्याएँ सभी।

सत्य है हमारे प्राचीन ग्रन्थ हमें सत्य के मार्ग पर चलने का पाठ पढ़ाते हैं। हमें भारतीय संस्कृति की झलक दिखाकर धर्म का रास्ता दिखाते हैं। इसी कड़ी में 'रामायण' और 'महाभारत' जैसे ग्रंथ हमारा मार्ग प्रशस्त करते हैं। भारतीय वाड मय में 'महाभारत' को पंचम वेद की उपाधि मिली हुई है। इसके विशाल कथाफलक में वह सब है, जो भारत में है। इस पौराणिक महाकाव्य को पूरी तरह आत्मसात करके कथाकार नरेंद्र कोहली ने आधुनिक उपन्यास शिल्प में ढाला है।

नरेंद्र कोहली ने जीवन को जिस रुप में देखा, जाना और समझा है, उससे उनके व्यक्तित्व की रेखाएँ स्वत: उभरती चली गई है। उनका समग्र लेखन उनके संपूर्ण जीवन को स्पष्ट करता है। साहित्य की समृद्धि तथा समाज की प्रगति में उनका योगदान प्रत्यक्ष है। 'महासमर' (उपन्यास) नरेन्द्र कोहली की एक विराट कृति है, जो भारतीय जीवन, चिन्तन और दर्शन तथा व्यवहार को मूर्तमंत्र रुप में प्रस्तुत करती है। नरेन्द्र कोहली ने इस महाकाव्यात्मक उपन्यास को अपने युग में पूर्णत: जीवन्त कर दिया है। इस कृति में वह सब कुछ है जो कहीं बाहर नहीं। आप महाभारत पढ़ने बैठेंगे और अपना जीवन पढ़कर उठेंगे।

नरेन्द्र कोहली का महाभारत की कथा पर आधारित उपन्यास 'महासमर-आठ खंडों' की कड़ी में 'बंधन, अधिकार, कर्म, धर्म, अंतराल, प्रच्छन्न, प्रत्यक्ष और निर्बंध' आते हैं। प्रथम खंड 'बंधन' में शान्तनु, सत्यवती तथा भीष्म के मनोविज्ञान तथा जीवन मूल्यों की कथा है। घटनाओं की दृष्टि से यह सत्यवती के हस्तिनापुर में आने तथा हस्तिनापुर से चले जाने के मध्य की अवधि की कथा है। द्वितीय खंड 'अधिकार'

 ISSN 2277-5587

उपन्यास की कहानी, जो हस्तिनापुर में पाण्डवों के शैशव से आरम्भ होकर वारणावत के अग्निकाण्ड तक पहुँचती है। वास्तव में इस खंड में अधिकारों की व्याख्या, अधिकारों के लिए हस्तिनापुर में होने वाले षडयन्त्र, अधिकारों को प्राप्त करने की तैयारी और संघर्ष की कहानी है।

तृतीय खंड 'कर्म' में वारणावत अग्निकांड से लेकर, द्रौपदी के स्वयंवर के पश्चात् पांडवों के पुन: हस्तिनापुर आने तथा हस्तिनापुर राज्य के विभाजन की कथा है। चतुर्थ खंड 'धर्म' में धर्म को एक नए रुप में परिभाषित किया गया है। कोहली का मानना है कि बार-बार धर्म की बातें की जाती हैं और ऐसा लगता है कि प्रत्येक स्थान पर धर्म की पराजय ही दिखाई देती है।

पंचम खंड 'अन्तराल' में मूलरुप में द्यूत में हारने के बाद पांडवों के वनवास की कहानी है। 'महासमर' का छठा खंड 'प्रच्छन्न' शकुनि और गांधारी के वार्तालाप से आरम्भ होता है। दुर्योधन के सुख में प्रच्छन्न रुप में बैठा है दुख और युधिष्ठिर की अव्यावहारिकता में प्रच्छन्न रुप में बैठा है धर्म। पांडवों के अज्ञातवास की त्रासदी के बाद अंत में उत्तरा के विवाह का प्रकरण बहुत उल्लासमय बन गया है।

सप्तम खंड 'प्रत्यक्ष' में युद्ध के उद्योग तथा फिर युद्ध के प्रथम चरण अर्थात् भीष्म पर्व की कथा है। कृष्ण के व्यक्तित्व के सामने बाकी सभी पात्र गौण हो जाते हैं। इसी खंड में योगेश्वर श्रीकृष्ण की गीता है। इस खंड से पाठक श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व के बारे में काफी कुछ जानकारी प्राप्त करता है। आठवाँ और अंतिम खंड 'निर्बंध' है। इस उपन्यास का अधिकांश भाग तो युद्धक्षेत्र की यात्रा करता है। किन्तु यह युद्ध केवल शास्त्रों का युद्ध नहीं है, अपितु टकराहट मूल्यों और सिद्धान्तों का भी है। इस विराट उपन्यास शृंखला का पहला खंड था 'बंधन' जो कि भीष्म के प्रतिज्ञा बंधन से आरम्भ हुआ था और अंतिम खंड 'निर्बंध' अर्थात् भीष्म के जीवन बंधन से निर्बंध (महागमन) होने पर ही समाप्त होता है। अत: सिद्ध है कि यह 'महासमर' एक प्रतीकात्मक स्वरुप के साथ हमारी धरोहर है।

यहाँ यह कहना सही है कि इसी पौराणिक कथाफलक 'महासमर' में अनेक जातियों के गौरव की गाथा मिलती है। प्रस्तुत हमारा विषय भी यही है।

भारतीय समाज में जाति की चारदीवारी इतनी मजबूत और ऊँची रही है कि उसे तोड़ना कभी भी आसान नहीं रहा है। इतिहास गवाह है, जाति-धर्म ने व्यक्ति की महानता की कभी भी कद्र नहीं की है। जाति से बाहर जाकर कोई व्यक्ति कितना भी महान कर्म क्यों ना करे, उसे उतना महत्व नहीं मिलता, जितना कि उसे मिलना चाहिए। युगों से अनेक महापुरुष जातिगत भावना का समय-समय पर शिकार होते रहे हैं। महाभारत कथा पर आधारित इस 'महासमर' में भी जातिपरक तथ्यों की अभिव्यक्ति हुई है। उदाहरणार्थ -

'महासमर' में सबसे पहले केवट का प्रसंग आता है, जहाँ निषादराज ने सत्यवती का पालन-पोषण किया था। दासराज ने उस कन्या को अपनी पुत्री के समान पाला। सत्यवती के जीवन में यही एकमात्र अलौकिक घटना नहीं है। मत्स्य के पेट में रहने के कारण वह मत्स्य-गंधा थी। उसके शरीर में से मत्स्य की तीव्र गंध आती थी। महासमरकार के अनुसार केवट-पुरुष दासराज ने अपनी इस अत्यन्त सुन्दर पुत्री को धर्मार्थ नौका के लिए नियुक्त किया। वहीं नौका पर ही सत्यवती की भेंट पराशर ऋषि से हुई थी। पराशर सत्यवती के रुप को देखकर स्वयं को स्थिर नहीं रख पाए और उन्होंने उसके साथ समागम की इच्छा प्रकट की। उन्होंने कहा ''संयम असंभव हो गया है देवसुन्दरी! तुम अप्सरा होते हुए निषाद-कन्या का वेश बनाए क्यों बैठी हो।''[1] सत्यवती भी ऋषि की ओर आकृष्ट तो हुई थी, लेकिन लोकलाज के कारण उनके प्रस्ताव को स्वीकार नहीं कर पा रही थी। सत्यवती सोचती है - 'यह ठीक नहीं है। संभल जा। तू जानती भी है, तेरे माता-पिता क्या कहेंगे। तेरा समाज क्या कहेगा। तेरा यह शरीर तेरा अपना नहीं है। इस पर तेरे समाज का अधिकार है। उससे पूछे बिना न तू इससे सुख उठा सकती है, न किसी को इससे सुख दे सकती है।'[2] इस प्रसंग से यह तो स्पष्ट है कि जाति चाहे कितनी ही निम्न क्यों ना हो, लोक-लाज सबके लिए सर्वोपरि रही है। एक और प्रसंग में निषादराज अपनी पत्नी से कहता है -

'एक तपस्वी में अनुरक्त हुई थी सत्या। मुझ से इसने संकेतों में पूछा और मैंने अपना निर्णय संकेतों में दे दिया। तब से सत्या एक बार भी नहीं मिली उस तपस्वी से। बाबा की आँखों में स्नेह उमड़ आया, इसने लाज रख ली मेरी। अब मुझे इसकी लाज रखनी है।'[3] इस प्रकार निषादराज के विचारों से सिद्ध होता है कि वे अपनी पुत्री के उत्थान के लिए प्रयासरत हैं।

दूसरे, कर्ण सम्पूर्ण महाभारत में एक ऐसा पात्र है जिसे नियति ने चारों ओर से घेर रखा है। यह कटुसत्य है कि प्राचीन काल से ही व्यक्ति को उसकी जाति के आधार पर ही मूल्यांकित किया जाता है। कर्ण को भी इसी आधार पर मूल्यांकित किया गया। कर्ण का सबसे महान गुण है उदारता। उसे 'सूत-पुत्र' जैसे संबोधन बचपन से ही सुनना पड़ा। द्रौपदी-स्वयंवर के समय पर द्रौपदी कहती है - 'स्वयंवर की प्रतिज्ञा के अनुसार प्रतियोगी को उत्तम कुल, सुन्दर रुप तथा श्रेष्ठ बल से सम्पन्न होना चाहिए। ... मैं सूतपुत्र से विवाह नहीं करुँगी।'[4] द्रौपदी के ये शब्द सुनकर कर्ण ने चुपचाप अपना धनुष रख दिया। इस प्रकार का जातिवादी यह अपमान वह मौन रहकर सहन कर गया। किंतु जाति-भेद का यह शूल उस समय उभरकर आता है, जब द्रौपदी-चीरहरण के समय वह द्रौपदी को 'वेश्या' कहकर सम्बोधित करता है। नरेन्द्र कोहली का मानना है कि-'सूत' शब्द जातिसूचक अवश्य है, किन्तु अपमान-जनक नहीं है। वैसे तो 'ब्राह्मण' तथा 'ऋषि' को भी भिखमंगा और कंगला कहकर अपमानित किया जा सकता है, किन्तु अपने आप में वे शब्द अपमानजनक नहीं हैं। वैसे ही 'सूत' भी है। सूत सुमंत्र दशरथ के सारथी, मित्र तथा मंत्री थे। .... संजय भी सूत ही था, जिसने धृतराष्ट्र को गीता सुनाई थी। विराट की रानी सुदेष्णा

का मायका-परिवार सूत जाति का था और केकय देश का शासक था। कीचक सूत-पुत्र होकर विराट का सेनापति था।'[5]

इसी प्रकार वारणावत में लाक्षागृह अग्निकांड के समय 'महासमर' में भील जाति का उल्लेख भी मिलता है। शिव भवन में अग्निकांड से पहले पांडवों द्वारा एक भोज का आयोजन किया गया था। जिसमें अनेक ब्राह्मणों एवं सामान्यजनों ने भोजन किया था, उसमें एक भीलनी और उसके पाँच पुत्र भी सम्मिलित होते हैं। काफी समय से भूखे होने और अधिक खा लेने से वे सब बेसुध हो जाते हैं। उनके बेसुध होने पर भीम कहता है - 'लगता है, उन्होंने अपनी क्षमता से अधिक खाया है या उन्हें खिलाया गया है। उनके आस-पास अभी भी खाद्य-पदार्थ और मिष्ठान पड़े हैं। ..... उनके मुख से मदिरा की दुर्गंध आ रही है। इसी से हमने अनुमान लगाया कि वे मदिरा पीकर अचेत हुए हैं। पंक्ति में बैठकर खाते तो उन्हें मदिरा कौन देता, या वे मदिरा कैसे पीते। उन्हें किसी ने विशेष रुप इसे इस कक्ष में बैठाकर खूब मदिरा पिलायी है और जमकर भोजन कराया है।'[6] स्पष्ट है कि भील जाति का अस्तित्व आज भी है और महाभारत काल में भी था।

पौराणिक ग्रंथों में चाहे वह 'रामायण' हो या 'महाभारत', राक्षस-जाति की हिंसक प्रवृत्ति भी देखने को मिलती है। महाभारत में भी वारणावत घटनाक्रम के उपरांत जब पांडव हिडिंब-वन में पहुंचते हैं तो वहाँ उनका सामना हिडिंब नामक राक्षस से होता है। भीम द्वारा हिडिंब के वध के पश्चात् हिडिंबा भीम से कहती है - 'हमारे समाज में तो प्राय: प्रत्येक पुरुष अपने बल से ही अपने लिए स्त्री प्राप्त करता है। स्त्री के पिता तथा भाईयों को पराजित कर, उनका वध कर, स्त्री की इच्छा के विरुद्ध वह उसे बांधकर उठा ले जाता है। मैं तो स्वेच्छा से अपने पति के रुप में तुम्हारा वरण कर रही हूँ।'[7] राक्षसों की प्रकृति के संबंध में यहाँ भीम का कथन ध्यान देने योग्य है - 'राक्षस या तो समाज में रहता नहीं या समाज में रहकर भी केवल अपने अस्तित्व से ही प्रेम करता है और अपने स्वार्थ के लिए जीता है। किसी दूसरे व्यक्ति की सुख-सुविधा, आवश्यकता, मान तथा सम्मान, कोई अर्थ नहीं रखता।'[8] राक्षसों के क्रिया-क्लाप, उनकी मानसिकता तथा प्रवृत्तियाँ आम आदमी जैसी नहीं होती, अपितु उनसे अलग हिंसक होती है। आज हमारे देश एवं समाज में भी इस प्रकार के राक्षस विद्यमान हैं। जो नित्यप्रति हमारे देश को अंदर ही अंदर खाए जा रहे हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि नरेंद्र कोहली का 'महासमर' के माध्यम से पौराणिक कथा को ही चित्रित करना नहीं है, अपितु पौराणिक पात्रों के चरित्रों को भी उद्घाटित करके उन दबे कुचले लोगों की जातिगत गौरवगाथा भी प्रस्तुत करना है। इसके साथ ही 'महासमर' लेखन के पीछे लेखक की धारणा या उद्देश्य यह भी हो सकता है कि कहीं भी अन्याय और अधर्म न हो, किसी का भी अधिकार न छीना जाए। किसी को भी कष्ट न दिया जाए और समता एवं न्याय तक सबकी पहुँच हो। अंतत: कहा सकता है कि नरेंद्र कोहली ने 'महासमर' के द्वारा एक बार पुन: लोगों को पौराणिक ग्रंथों की ओर देखने के लिए प्रेरित किया है। उन्हें यह भी सोचने के लिए विवश किया है कि इतिहास मात्र इतिहास ही नहीं है, अपितु उसमें भी अनेक प्रकार की ऐसी कहानियाँ चित्रित हैं जो कि जातीय गौरवगाथा को स्पष्ट करती हैं। इन सब तथ्यों एवं प्रसंगों के कारण 'महाभारत' आज भी प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1 *नरेन्द्र कोहली, महासमर- बंधन, पृ. 47*

2 *महासमर-बंधन, पृ. 47*

3 *वही, पृ. 63*

4 *वही, महासमर कर्म, पृ. 297*

5 *नरेन्द्र कोहली, जहाँ है धर्म, वहीं है जय, पृ. 92*

6 *वही, महासमर-कर्म, पृ. 106*

7 *वही, महासमर-वही, पृ. 150*

8 *वही, पृ. 170*

ISSN 2277-5587

शासन में नैतिकता और नैतिक मूल्यों का सुदृढ़ीकरण

डॉ. जनक सिंह मीना
महासचिव, न्यू पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन सोसायटी ऑफ इण्डिया एवं सहायक प्रोफेसर,
जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय,जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

आम धारणा है कि कलयुग में मूल्यों पर चल पाना संभव नहीं, अक्सर जब मूल्यों की बात आती है, तो हम कहते हैं कि सच्चाई, वफादारी, ईमानदारी, माता-पिता का आदर आदि ही जीवन के मूल्य हैं। सबसे पहले तो यह जानना जरुरी है कि मूल्य क्या? जीवन मूल्यों पर चलकर ही किसी भी घर, कम्पनी, समाज एवं देश के चरित्र का निर्माण होता है, मूल्य यानि जीवन के रास्ते को तय करने के लिए कुछ मूलभूत आधार, अगर देखे तो सच बोलने को मूल्य इसलिए कहा गया है, क्योंकि सच बोलकर सदा अच्छा महसूस होता है। एक अन्दरुनी ताकत का अहसास होता है, पवित्रता का अनुभव होता है और सच बोलना सहज लगता है। नैतिकता विहिन समाज अराजकता है। सामाजिक जीवन का आधार हमेशा नैतिकता रही है, धर्म नहीं। भारत में महात्मा बुद्ध से लेकर महात्मा गाँधी तक जितने भी महापुरुष हुए यदि वे समाज को नई दिशा देने में सफल हो पाये, समाज का सर्वाधिक सम्मानित लोकप्रिय व्यक्ति होने का श्रेय प्राप्त कर सके तो इसका कारण रहा उनकी नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण सोच एवं कार्य संस्कृति।

संकेताक्षर :सत्यनिष्ठा, सहिष्णुता, सद्गुण, न्यायनिष्ठ, कर्त्तव्य बोध, समाजोन्मुखता, स्वतंत्रता, आचरण, प्रतिबद्धता।

मनुष्य जीवन में नैतिकता एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भाव है। मनुश्य को उदार, सह्रदयी, सरल, निष्ठावान, संवेदनशील एवं प्रेममय बनाने वाला जो आदर्श भाव है, वह नैतिकता है। नैतिकता भाव की महत्ता एवं उच्चता के आधार पर ही इसे सत्य, प्रेम एवं अहिंसा जैसे शाश्वत धार्मिक लक्षणों में सम्मिलित किया गया है। प्रत्येक राष्ट्र में अपने कुछ निश्चित मूल्य एवं नैतिक तत्वों का प्रभाव होता है, जैसे-सत्यनिष्ठा, निश्पक्षता, न्याय, सहिष्णुता, समतावाद आदि। शासन व प्रशासन से यह अपेक्षा की जाती है कि वह सार्थक विकास की प्राप्ति के लिए इन तत्वों को आत्मसात करें।

शासन शब्द यूनानी क्रिया Kubernan से व्युत्पन्न है, जिसका सामान्य अर्थ है - 'रास्ते पर लाना या चीजों को नियंत्रित करना' इसका सर्वप्रथम प्रयोग प्लेटो के द्वारा उपमा के तौर पर माना गया है। प्लेटो के अनुसार केवल आदर्श शासन (राज्य) में ही मनुष्य खुशहाल और सन्तुष्ट रह सकता है। इसके अनुसार कल्याणकारी राज्यों के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने अधिक से अधिक नागरिकों की इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करें। इसके लिए प्लेटो ने राज्य हेतु साहस, ज्ञान, सहिष्णुता और न्याय जैसे सद्गुणों की अनिवार्यताएं बताई हैं। यूनानियों के लिए शासन या राज्य मात्र राजनीतिक या प्रादेशिक इकाई न होकर विशिष्ट उद्‌देश्यों और लक्ष्यों की प्राप्ति की एक नैतिक इकाई है।

चीनी दार्शनिक कन्फ्यूशियस ने परिवार, समाज एवं शासन में सदाचार एवं नैतिकता पर अधिक बल दिया। उन्होंने राज्य के कार्यकलापों में नैतिकता के महत्व को प्रतिपादित किया और शांति, मानवता जैसे मूल्यों को साम्राज्य पर शासन करने की विचारधारा के रुप में शामिल किया। उनके अनुसार एक शासक को बल प्रयोग या हिंसा का सहारा लिए बिना खुद के द्वारा प्रस्तुत उदाहरण की शक्ति से शासन करने में सक्षम होना चाहिये। भारतीय धर्मशास्त्रों के अनुसार राजा को निश्चित रुप से सद्गुणों को प्रोत्साहित करना चाहिये और नैतिकता एवं नैतिक जीवन का मार्ग प्रशस्त करना चाहिये। अर्थशास्त्र में चाणक्य ने शासन की अवधारणा को बताते हुए कहा है कि :-

प्रजा सुखे सुखं राज्ञः, प्रजानां च हिते हितम्।
न आत्मं प्रियं हितम् राज्ञः, प्रजानां तु प्रियं हितम्।।

अर्थात् प्रजा के सुख में ही राजा का सुख है और प्रजा के हित में ही राजा को अपना हित समझना चाहिए। आत्मप्रियता में राजा का हित नहीं है, बल्कि प्रजा की प्रियता में ही राजा का हित है। चाणक्य के अनुसार राजत्व सबकी सहायता से ही संभव है, जिसके तहत किसी कलंकित व्यक्ति को पुन: शासन या सत्ता में सहभागी नहीं बनाया जाना चाहिए। उचित का सभी समर्थन करते हैं जबकि अनुचित की सभी जगह निंदा होती है। अत: पक्षपात रहित शासन ही कीर्ति प्रदान करने वाला शासन है। शासन की मंत्रणा को गुप्त रखा जाना चाहिए अन्यथा सिद्धि या क्रियान्विति में बाधाएं आती हैं।

बौद्धदर्शन में राज्य का मुख्य उद्देश्य सामाजिक व्यवस्था की रक्षा करना बताया गया है जिसे बेहतर तरीके से नैतिकता के संदर्भ में समझा जा सकता है। राजा को न्यायनिष्ठ सिद्धान्तों का पालन करना चाहिए अर्थात् उसे उचित दृष्टिकोण, उचित वाणी, उचित कर्म, उचित प्रवृत्ति, उचित अभिप्राय, उचित प्रयास आदि करने चाहिए।

व्यक्ति और समाज के सम्बन्ध अन्योन्याश्रित होते हैं। व्यक्ति से समाज का पोषण होता है। व्यक्ति और समाज का यह पोषण व्यक्ति और समाज के सभी विकासोन्मुख एवं सृजनात्मक बना पाता है, जब मूल्य पोषण की प्रक्रिया नैतिक मूल्यों पर आधारित हो। नैतिकता को समझने से पूर्व हमें नीति को समझना होगा। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है तथा उसके अपने-अपने गुण-दोष हैं। मनुष्य की स्वाभाविक गुणों से उसका एवं समाज का हित हो तथा किसी के अवगुण से किसी व्यक्ति या समाज का अहित न हो, उस रीति के नियामक शक्ति को नीति कहते हैं। साथ ही हम यों कहें कि जिस नियमन के द्वारा समाज में विधि व्यवस्था कायम हो, अनीति का अवसान हो, अनय का समापन हो एवं अनट का पतन हो, नीति है, जिसका अपना नीर होता है, निर्झरिणी होती है एवं नीरद होता है।

साधारण शब्दों में कहा जाये तो अपने और समाज के प्रति सही कर्त्तव्य बोध को नैतिकता कहते हैं, जो देश काल और पात्र के अनुरुप सम्यक् व्यवहार को सुनिश्चित कराता है। दूसरे शब्दों में कहें – नैतिकता उस परिधान सम्यक् आचरण का नाम है, जिसके द्वारा किसी भी भावना को आहत किये बिना किसी भी मर्यादा को विनिष्ट किये बिना अपने स्वप्रेरित या चारित्रिक अनुषासन में मनुष्य कायम रहता है, जब यम नियम के पालन में अपनी सौम्य मधुमयता को बिखेरने लगता है, अथवा यों कहें – परिवेश विशेष में वैसा नीति सम्मत निखार एवं सात्विक जीवनयापन नैतिकता है, जो सहज जीवन शक्ति की सार्वभौमिकता के प्रति समर्पित हो।

नैतिक मूल्य :- समाज एवं व्यवस्था की विकासोन्मुखी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए व्यक्ति से जिस आचार एवं विचार की अपेक्षा होती है उसे नैतिक मूल्य कहते हैं। जैसे-

सच्चाई – शालीनता – दायित्व बोध – कार्यकुशलता वफादारी -अनामता -कर्त्तव्यनिष्ठा - मानवता एवं दयालुता

समयपालन - कार्य के प्रति समर्पण - ईमानदारी

गोपनीयता - शोषणजनित आचरण -निष्पक्ष दृष्टिकोण

माता-पिता, गुरुजनों का आदर - मानवाधिकार के प्रति आस्था - तटस्थता एवं जनहित संबंधी सोच आदि।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के अनुसार - यह धर्म नहीं है कि जिसने समाज को व्यवस्थित एवं विकासोन्मुख बनाया अपितु नैतिक मूल्य हैं, जिसने समाज को व्यवस्थित एवं विकासोन्मुख बनाया। नैतिकता विहिन समाज अराजकता है। सामाजिक जीवन का आधार हमेशा नैतिकता रही है, धर्म नहीं। भारत में महात्मा बुद्ध से लेकर महात्मा गाँधी तक जितने भी महापुरुष हुए यदि वे समाज को नई दिशा देने में सफल हो पाये, समाज का सर्वाधिक सम्मानित लोकप्रिय व्यक्ति होने का श्रेय प्राप्त कर सके तो इसका कारण रहा उनकी नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण सोच एवं कार्य संस्कृति।

प्राचीन भारत के मनीषियों एवं राजनीतिक चिन्तकों ने भी धर्म आधारित राज्य की व्याख्या के क्रम में राजनीति को नैतिकता का पर्याय माना है, पश्चिम में प्लेटो एवं अरस्तु ने राज्य को एक नैतिक संस्था माना है। हिगेल, टी.एच.ग्रीन ने भी नैतिकतापूर्ण राजनीति की वकालत की। रुसो ने जिस सामान्य इच्छा को सम्प्रभु माना वह नैतिकता एवं जनहित की समन्वित अभिव्यक्ति रही। नैतिक मूल्य सार्वजनिक जीवन का प्राणतत्व है। उदाहरण :- अमेरीकी लोक सेवाओं में लूट प्रणाली (Spoil System) : चुनाव जीत कर राष्ट्रपति पद प्राप्त करने वाला व्यक्ति अपने चहेतों को शासन-प्रशासन में मनोवांचित पद प्रदान कर देता है अर्थात् योग्यता आधारित भर्ती के ठीक विपरीत। इस प्रणाली में माना जाता है कि 'विजेता को लूट का माल मिलना ही चाहिए।

आज भारत में आधुनिकीकरण, औद्योगीकरण एवं विश्व बाजार की स्थापना आर्थिक समानता के अस्तित्व को नकारते हुए हमारी दृष्टि को सबसे कमजोर व्यक्ति से हटाकर उसे अधिक ताकतवर के प्रभुत्व को बढ़ाने की ओर लगा रही है, जिसे नैतिक नहीं कहा जा सकता। आधुनिक विज्ञान और टेक्नोलॉजी को महत्व देने वाला विकास का पश्चिमी प्रारुप समाज व्यवस्था, अर्थव्यवस्था एवं राजनीतिक व्यवस्था के नैतिक आधार को नकारता है। इस पश्चिमी मॉडल विकास के कारण ही समृद्धि और सत्ता की होड़ में संस्कृति और नैतिकता के प्रश्न पीछे छूटते जा रहे हैं और जिसके परिणामस्वरुप तेजी से लगातार अपनी चपेट में लेता भ्रष्टाचार, अपराधीकरण और साम्प्रदायिक संघर्ष का दौर है।

वर्तमान में पार्टियों में दल-बदल की मुक्त शैली प्रारम्भ हो गयी, जनोन्मुखी राजनीति ने अवसरवादी राजनीति का स्वरुप ग्रहण कर लिया। नई पीढ़ी के नेताओं में न तो गांधीवादी राजनीति की समाजोन्मुखता रही, न ग्रामीण समाज की सहजता एवं निश्छलता। इन नेताओं में अधिकांश सामंतवादी एवं शोषणवादी प्रवृत्ति के थे।

ISSN 2277-5587

प्रधानमंत्री देवेगौड़ा द्वारा आपराधिक रिकार्ड वाले तस्लीमुद्दीन जैसे व्यक्ति को गृह राज्य मंत्री बनाकर अपराध के मंत्रीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ कर की। 22 जुलाई, 2008 को लोकसभा में विश्वास मत पर हो रहे बहस के दौरान तीन-तीन करोड़ रुपये भाजपा के तीन विधायकों को मतदान के समय अनुपस्थित रहने हेतु सदन में नोटों की गड्डी लहराते हुए पेश करना पूरी संसदीय राजनीति के अमर्यादित एवं अनैतिक रुप को उजागर ही नहीं करती अपितु सम्पूर्ण प्रजातांत्रिक व्यवस्था के अपराधपूर्ण एवं भ्रष्ट स्वरुप को भी आभासित करती है।

शिक्षा संस्थानों में राजनीतिक हस्तक्षेप के चलते अध्यापकों, प्राचार्यो एवं कुलपतियों की नियुक्ति में योग्यता, दक्षता एवं विशिष्ट शैक्षिक उपलब्धियों जैसे मानदण्ड गौण होने लगे हैं तथा राजनेताओं की संस्तुति/सिफारिशें महत्वपूर्ण होती जा रही हैं। प्रो. अशोक मुखोपाध्याय के अनुसार - उच्च शिक्षा के राजनीतिकरण के कारण भारत के अधिकांश विश्वविद्यालयों में आचार्य (प्रोफेसर) शब्द का अर्थ एवं स्वरुप बदल गया है। नकारात्मक राजनीतिक प्रभाव के कारण बहुत से ऐसे प्रोफेसरों (आचार्यो) की नियुक्ति की जाने लगी है, जो अपने पद के अनुरुप अपेक्षित योग्यताएं एवं शैक्षिक उपलब्धि नहीं रखते। ऐसी स्थिति में इन्होंने केवल विद्यार्थियों का ही नुकसान नहीं किया, अपितु महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों के शैक्षिक परिवेश को गैरशैक्षिक अनैतिक एवं राजनीतिक बनाना प्रारम्भ कर दिया।

राजनीतिक चिन्तक जॉन लॉक का मानना है कि बिना स्वतंत्रता के समझ निरर्थक है और बिना समझ के स्वतंत्रता निरर्थक है। यह शिक्षा है जो व्यक्ति की समझ को विकसित कर स्वतंत्रता को सार्थक बनाती है। यह देश का दुर्भाग्य है कि समाज और राज्य को सही दिशा देने वाली शिक्षा संस्थाएं छलपूर्ण राजनीति और भ्रष्टाचार की गिरफ्त में अपनी भूमिका को नैतिकता विरोधी, मूल्य विरोधी, समाज विरोधी एवं राज्य विरोधी बनाती जा रही है। अरस्तू, जिनोफोन (Xenphon) के इस विचार का समर्थक था कि मानव मात्र का यह शास्वत नियम है कि विजित राज्यों के निवासियों की देह तथा सम्पदा पर विजेताओं का अधिकार होता है।

कौटिल्य ने 'अर्थशास्त्र' के प्रथम अधिकरण में बताया है :

तस्मात् स्वधर्म भूतानां राजा न व्यभिचारयत्।
स्वधर्म सन्दधानो हि, प्रेत्य चेह च नन्दति।।

अर्थात् राजा प्रजा को अपने धर्म में च्युत न होने दे। राजा भी अपने धर्म का आचरण करे। जो राजा अपने धर्म का इस भांति आचरण करता है, वह इस लोक और परलोक में सुखी रहता है। कौटिल्य ने राजा को वृद्धों की संगत करने वाला, विद्या से विनम्र, जितेन्द्रिय और काम-क्रोध आदि शत्रु-षड्वर्ग का दमन करने वाला कहा है। राजा को प्रजा के लिए पितृतुल्य कहा गया है, जो अपनी प्रजा का पालन-पोषण संवर्धन, संरक्षण भरण, शिक्षण इत्यादि वैसा ही करता है जैसा वह अपनी संतान का करता है।

तालिका नं. 1

घटक	संबंधित अन्य घटक	अपेक्षित आचरण के तत्व	विकृत आचरण के तत्व
1. व्यक्ति	पत्नी/पति परिवार के सदस्य समुदायिक वर्ग राजनीतिक संघ/संस्थाएं प्रशासनिक एवं न्यायिक संस्थाएं	समानता की भावना पारिवारिक अधिकारों का सम्मान, धर्म निरपेक्ष दृष्टिकोण सहयोग अंशदान करना, अधिकारों का सही प्रयोग, नागरिक दायित्व का निर्वहन (ईमानदारी से टैक्स देना, लेन-देन में व्यापारिक नियमों का पालन, मत का सही प्रयोग इत्यादि राजनीतिक चेतना सार्वजनिक जीवन में सक्रियता)	भेदभाव का व्यवहार पारिवारिक अधिकारों की अवहेलना, धार्मिक कट्टरता पूर्ण रवैया, असहयोग/उदासीनतापूर्ण व्यवहार, उपभोगी/विध्वसंक, अनुशासनहीनतापूर्ण व्यवहार, नागरिक दायित्वों की अवहेलना, अधिकारों का दुरुपयोग
2. राजनीतिक	राष्ट्र/देश प्रशासनिक अधिकारी व्यवसायी/उद्यमी मतदाता समाज राजनीतिक सहयोगी विरोधी दल के सदस्य प्रभावक वर्ग न्यायालय	संविधान से प्रतिबद्धता, राष्ट्र के प्रति वफादारी, राष्ट्रीय एकता का संरक्षण करना आत्मअनुशासन जनसेवा, भाषायिक संयम, अहिंसावादी सद्व्यवहारी, विरोधी राजनीतिक विचारों का सम्मान, सहमतिपूर्ण व्यवहार	असंयमित भाषा का प्रयोग स्वार्थपरता, राष्ट्रीय एकता विरोधी रवैया, विरोधीमत की उपेक्षा अहिंसात्मक प्रवृत्ति गैर सांविधानिक व्यवहार भ्रष्टाचार साम्प्रदायिक व्यवहार जाति भेदभाव पूर्ण व्यवहार
3. प्रशासक	राजनीतिक सहयोगी प्रशासक नागरिक/समाज व्यापारिक/उद्यमी स्वयं सेवी संस्थाएं न्यायालय	सांविधानिक प्रतिबद्धता राजनीतिक तटस्थता, समयक दृष्टिकोण वस्तु निरपेक्षता ईमानदारी अनामिकता सार्वजनिक सेवा आत्मसंयम नियमबद्धता	राजनीतिज्ञों के प्रति वफादारी राजनीतिक प्रतिबद्धता विशिष्टवादी दृष्टिकोण, स्वार्थपरता, बेईमानी, घूसखोरी अनुशासनहीनता, पक्षपातपूर्ण व्यवहार, नियमों की अवहेलना, भाई-भतीजावाद, सत्ता लोलुपता, श्रेष्ठता की भावना, समाज का शोषण

4. स्वयंसेवा संस्थाएं/प्रभावक वर्ग (इनमें जाति, धर्म इत्यादि पर आधारित संगठित संघ/संस्थाएं)	अन्य घटक, प्रभावित व्यक्ति समूह, अन्य समूह, अन्य व्यक्ति समूह, अन्य संस्थाएं, राजनीतिक दल, राजनीतिज्ञ, प्रशासक, न्यायालय	विशिष्ट हित संरक्षण, व्यापक सार्वजनिक हित संरक्षण, वैकल्पिक नीति के अन्वेषक, राजनीतिज्ञों और प्रशासकों का प्रेरक/पथ प्रदर्शक सांविधानिक उपाय/साधनों का प्रयोग	व्यापक हितों की अवहेलना, धन ऐंठना, शासन पर अवांछित दबाव, गैर-सांविधानिक साधनों का प्रयोग
5. व्यावसायिक निगम- राष्ट्रीय एवं बहुराष्ट्रीय	ग्राहक, सरकार, अन्य सहायक उद्यम, श्रमिक/कर्मचारी वर्ग, समाज	उच्च कोटि के उत्पाद देना, ग्राहक संतुष्टि, ग्राहक को सही सूचना देना, कानूनी सीमाओं का अनुसरण, सहायक/पूर्ति उद्यमों का हितसंरक्षण, लाभ प्राप्ति, सामाजिक हितसंरक्षण, व्यावसायिक आचार-संहिता का पालन, संवैधानिक उपायो का प्रयोग, सामाजिक दायित्वां का निर्वहन	मात्र लाभप्राप्ति, उत्पाद की गुरुता गौण, ग्राहक हित की अवहेलना, ग्राहक को भ्रमित करना, शासन पर अवांछनीय दबाव, नियमों की अवहेलना, सहायक एवं पूर्ति उद्यमों का शोषण, श्रमिक या कर्मचारी वर्ग का शोषण, सामाजिक हित एवं दायित्वों की उपेक्षा
6. राजनीतिक दल	जनता, सरकार, अन्य राजनीतिक दल, हितवर्ग एवं स्वयंसेवी संस्थाएं	राजनीतिक चेतना उत्पन्न करना, पथ प्रदर्शन सरकार को सजग बनाना, राष्ट्रीय जनता को न गुमराह करना, एकता को सुदृढ़ करना, राष्ट्रीय एवं सामाजिक हित को बढ़ाना, सामाजिक सद्भाव को बढ़ाना, विरोधी दलों का सम्मान, संवैधानिक उपायों का प्रयोग	राजनीतिक लाभ से प्रेरित प्रशासनिक कार्यो में अवरोध उत्पन्न करना, समाज का जाति एवं धर्म के आधार पर विखंडन करना, सामाजिक हित की उपेक्षा, गैर संवैधानिक उपायों का प्रयोग
7. संचार माध्यम	जनता, राजनीतिज्ञ, प्रशासन अधिकारी, न्यायालय, एनजीओ, उद्योग, हितवर्ग	जनजागरुकता बढ़ाना, निष्पक्ष समाचार देना, वस्तुपरक की सूचना प्रदान करना, ईमानदारी, ज्ञानवर्धक सूचनाएं प्रदान करना, पथ प्रदर्शन, व्यावसायिक श्रेष्ठता पूर्ण व्यवहार, व्यावसायिक आचार संहिता का अभिपालन	अफवाहों का प्रसार, पक्षपातपूर्ण समाचार प्रस्तुति, गुमराह करना, बिकाऊ, समाचार छापने की कीमत ऐंठना।
8. न्यायपालिका	नागरिक, शासनाधिकारी, (राजनीतिक और प्रशासनिक) व्यवसायी वर्ग/हितवर्ग, एनजीओ	संविधान का संरक्षक और संविधान व्यवहार, सार्वजनिक न्याय, सार्वजनिक दृष्टिकोण, समयबद्ध न्याय, वस्तुनिरपेक्ष न्याय, संवेदनशीलता	स्वहित संरक्षक, विशिष्ट हितों के संरक्षक, विलम्बित न्याय, संदेहात्मक, संविधान की उपेक्षा

मूल्य : जीवन जीविका के विविध आयामों में किसी उत्पादन, संसाधन या विचार की उपयोगिता उपभोक्ताओं की माँग की कसौटी पर रेखांकित होना मूल्य है। मूल्य तीन तरह का होता है :-

- **बजार मूल्य** – जो समय की नब्ज और उपभोक्ता की आवष्यकता के अनुरुप बाजार में उत्पादित वस्तुओं अथवा उपलब्ध चीजों के दाम को रेखांकित करें, बाजार मूल्य है।
- **राष्ट्रीय मूल्य** – जिस मूल्य से राष्ट्र की विशेषता, पहचान अस्तित्व एवं अस्मिता का निखार हो, राष्ट्रीय मूल्य है। जिस कीमत से राष्ट्र की रक्षा एवं अभिवृद्धि हो, राष्ट्र की गरिमा एवं गौरव का निखार हो, राष्ट्रीयता की निरन्तर अभिवृद्धि हो, राष्ट्रीय मूल्य है। इससे देश विकास करता है, राष्ट्रीय एकता मजबूत होती है, राष्ट्रीय अखण्डता अक्षुण्ण रहती है एवं राष्ट्रीय अभ्युदय होता है।
- **वैश्विक मूल्य** – जिस मूल्य से विविध क्षेत्रों में अन्तर्राष्ट्रीय संबंध, राष्ट्र-राष्ट्र के बीच बढ़ता हुआ आयाम विश्वस्तरीय विनिमय एवं आदान प्रदान का ज्ञान हो, वैश्विक मूल्य है। जिस मानक से धरा पर विविध क्षेत्रों में विश्व के संबंध सूत्रों का जागरण हो, अन्तर्राष्ट्रीय मैत्रीवृद्धि हो, अन्तर्राष्ट्रीय मैत्रीवृद्धि की बढ़ोतरी हो, वैश्विक मूल्य है। इससे विश्व सद्भाव बढ़ता है, विश्वशांति प्रकट होती है एवं विश्वबंधुत्व बढ़ता जाता है।
- **शास्वत मूल्य** – जो मूल्य अजर एवं अक्षय हो, सनातन एवं सार्वकालिक हो, जहाँ इसकी नैसर्गिक उपादेयता स्वरुप स्वत: सिद्ध रुप में उजागर हो, एवं जिस मूल्य को कामयाब रखने हेतु किसी कृत्रिम मूल्य की आवश्यकता न हो, शाश्वत मूल्य है।
- **जीवन मूल्य** – जिस मानक से जीवन की रक्षा हो, जीवन का विकास हो एवं जिसकी उपादेयता से जीवन की जीवतंता कायम रहती है, जीवन की कार्ययोजना शांतिमान रहती है एवं जीवन का कर्म कौशल देदीप्यमान रहता है, वह जीवन मूल्य है।

आज अगर जीवन के मूल्यों के बारे में बात करें तो लगता है कि जैसे मजाक उड़ाया जा रहा है। आम धारणा है कि कलयुग में इन मूल्यों पर

ISSN 2277-5587

चल पाना संभव नहीं, अक्सर जब मूल्यों की बात आती है, तो हम कहते हैं कि सच्चाई, वफादारी, ईमानदारी, माता-पिता का आदर आदि ही जीवन के मूल्य हैं। सबसे पहले तो यह जानना जरुरी है कि मूल्य क्या? जीवन मूल्यों पर चलकर ही चरित्र का निर्माण होता है, मूल्य यानि जीवन के रास्ते को तय करने के लिए कुछ मूलभूत आधार। जब भी कोई धोखा या चोरी करता है, तो मन कचोटता है, मुंह सूखता है, शरीर कांपता है, क्योंकि वह सच से परे जा रहा होता है।

वर्तमान शासन व्यवस्था में नैतिकता और नैतिक मूल्यों की ओर ध्यान केन्द्रित करना होगा। भारतीय शासन व्यवस्था में सहभागी जन प्रतिनिधियों पर नजर डालते हैं, तो उनमें से अनेक संगीन अपराधों में फंसे हुए हैं। ऐसे में राजनीतिक दल भी ऐसे उम्मीदवारों को टिकट देने में नहीं हिचकिचा रहे हैं। वे केवल सत्ता हथियाना चाहते हैं, ऐसे सत्ता लोलुप, स्वार्थी संगठनों से कैसे नैतिकता और नैतिक मूल्यों की उम्मीद की जा सकती है?

मूल्य यानि वह वस्तु, जिसकी कुछ कीमत हो, इन सभी व्यवहारों की कीमत है। हम जितना अधिक से अधिक इस व्यवहार को इस्तेमाल करते जाते हैं, हर बार का इस्तेमाल किया गया यह व्यवहार अपनी कीमत अदा करता है और हमारे सत्कर्म के खाते में जमा हो जाता है।

कई बार सवाल उठता है कि आज के युग में जो सच के रास्ते पर चलता है, वह जल्दी सफल नहीं होता, लेकिन आप ध्यान से देखें, जो व्यक्ति अपने जीवन मूल्यों पर अडिग रहकर चलता है, वह कभी भी भय में नहीं जीता, उसका चेहरा हमेशा आत्मविश्वास से दमकता रहता है, वह निर्भय होकर अपनी बात कहता है और हर पल सुरक्षा का अनुभव करता है।

यही जीवन मूल्य हमारे लिए एक सुरक्षा कवच बन जाते हैं, इनसे हमें हर परिस्थिति का सामना करने की शक्ति मिलती है, हमें हर कोई सम्मान की दृष्टि से देखता है। अगर जीवन मूल्यों पर चलकर इतना कुछ मिलता है, तो हम सुख, शान्ति, प्रेम के लिए अन्यत्र कहीं क्यों भटकते है? जब भी हम इन मूल्यों को अपनाते हैं, जिम्मेदारी का अहसास होता है। अगर हम आध्यात्मिक हो जाएं, खुद को ईश्वर के साथ जोड़ लें और उसके दिखाए रास्ते पर चलते जाएं तो हमारे साथ हमेशा अच्छा ही होगा, सारा भय भी खत्म हो जाएगा। जिस चरित्रवान समाज-देश की चर्चा हम करते हैं, जिसकी इच्छा हमारे मन में है और जो हम कुछ हटकर अलग सा करना चाहते हैं, उसकी शुरुआत स्वयं से ही होगी। स्व परिवर्तन से ही जग परिवर्तन संभव है, आईये इन जीवन मूल्यों को समझे, इन पर चलकर सुदृढ़, सभ्य और स्वस्थ समाज की रचना का हिस्सा बनें।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *प्रो. इन्द्र, कौटिल्य का अर्थशास्त्र,राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली,2009*
2. *पृथ्वीनाथ सिंह एवं हरि भगवान, सामाजिक सौहार्द व विकास-अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना वैश्विक मैत्री, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, 2013*
3. *एम.पी.शर्मा व बी.एल. सडाना, किताब महल, इलाहाबाद, 2010*

बून्दी जिले में पर्यटन का स्थानिक प्रारुप : एक आर्थिक विश्लेषण

डॉ. तोता राम मीना
प्राध्यापक, रा.उ.मा.वि., खटकड़, बून्दी

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था की दृष्टि करने में कृषि, उद्योग व सूचना प्रौद्योगिकी के साथ-साथ एक और क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान होता है वो है पर्यटन। आर्थिक भूगोल के उपक्षेत्र में पर्यटन का मुख्य योगदान है। बून्दी जिले की ऐतिहासिक इमारतें, झीलें- जलप्रपात, अभयारण्य, रॉक-पेंटिंग्स व पक्षी चित्रशैली की सुन्दरता अतुलनीय है। बून्दी जिला भारत में देशी और विदेश पर्यटकों का मुख्य आकर्षण है। अभिकल्पित छः दिवसीय भ्रमण योजनानुसार जिले में पर्यटन सबसे बड़ा सेवा उद्योग बन सकता है।

संकेताक्षर : पर्यटन, पर्यटक, अभयारण्य, रॉक-पेन्टिंग्स, जलप्रपात, ऐतिहासिक व आध्यात्मिक पर्यटक केन्द्र।

एक अंतर्वैज्ञानिक विषय के रुप में भूगोल का मुख्य लक्ष्य प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक वातावरण का सामंजस्य, पृथ्वी तल के विभिन्न क्षेत्रों में निरन्तर परिवर्तनशील परिस्थितियों के साथ, मानवहित के संदर्भ में स्थापित करना है। भूगोल विषय के अन्तर्गत क्षेत्रीय सर्वेक्षण का महत्व प्राचीन भूगोलवेत्ताओं की भौगोलिक यात्राओं के आधार पर देखने को मिलता है। इब्न-ए-बतूता, अलबरुनी, हम्बोल्ट, रेटजेल और विडाल-डी-ला-ब्लाश तथा वर्तमान समय में कर्नल टॉड की यात्राऐं व उनका लिखित विवरण सभी विद्यार्थियों के लिए शोध का आधार है। बून्दी जिला ऐतिहासिक, धार्मिक, प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से भरपूर होने के कारण पर्यटन का प्रमुख केन्द्र बन रहा है, परन्तु हाड़ौती के अन्य जिलों की अपेक्षाकृत यहां कम ध्यान दिया जा रहा है।

उद्देश्य

- जिले में विद्यमान पर्यटन स्थलों का स्थानिक प्रारुप प्रस्तुत करना।
- जिले के पर्यटन स्थलों की भ्रमण योजना तैयार करना।
- आर्थिक दृष्टि से पर्यटन विकास से लाभ का विवेचन प्रस्तुत करना।

अध्ययन क्षेत्र

यह जिला राजस्थान के दक्षिण पूर्व में एक अनियमित समलंब जैसा आकार लिए 24°59'11'' व 25°53'11'' उत्तरी अक्षांश तथा 75°19'30'' व 76°19'30'' पूर्वी देषान्तर के मध्य स्थित है। इसका खेत्रफल 5850.5 वर्ग किलोमीटर है। इसकी लम्बाई पूर्व से पश्चिम तक अधिकतम 111 किलोमीटर तथा उत्तर से दक्षिण तक अधिकतम 104.6 किलोमीटर है। इस जिले के उत्तर में टोंक, सवाई माधोपुर, दक्षिण-पश्चिम में भीलवाड़ा जिले पड़ते हैं। इसके दक्षिण व पूर्व में कोटा जिला है और इन दोनों को चम्बल नदी विभाजित करती है।

 ISSN 2277-5587

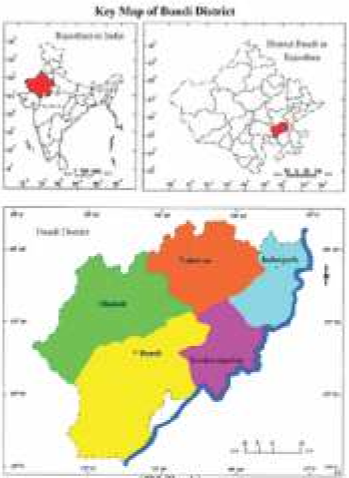

(FIG. 1)

आंकड़ों का संकलन एवं विधि तन्त्र:- अध्ययन क्षेत्र के पर्यटन स्थलों से संबंधित द्वितीयक आंकड़े ऐतिहासिक तथा धार्मिक ग्रन्थ गजेटियर, पर्यटन विभाग, बून्दी विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से प्राप्त किये गये हैं। प्राथमिक आंकड़े पर्यटन क्षेत्र में आने वाले पर्यटक, स्थानीय निवासी, पर्यटन उद्योग में सम्मिलित विभिन्न वर्गों से अनुसूची, प्रश्नावली एवं साक्षात्कार द्वारा महत्वपूर्ण सूचनाओं व सुझावों का संकलन किया है। क्षेत्रीय सर्वेक्षण के आधार पर शोधकर्ता द्वारा पर्यटन स्थलों की भ्रमण योजना तैयार की गयी है।

प्राप्त आंकड़ों का सारणीयन, वर्गीकरण व विश्लेषण हेतु आवश्यक सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग करते हुए शोध पत्र का निर्माण किया गया है।

पर्यटन स्थलों का भौगोलिक स्थानिक प्रारुप

पर्यटन मानचित्र (Fig.2) के अवलोकन से यह ज्ञात होता है कि बून्दी जिले में पर्यटन स्थलों का फैलाव चारों दिशाओं में है।

बून्दी जिले के उत्तरी-पश्चिमी भाग में पर्यटन स्थलों की सघनता है, जो रेखीय प्रारुप में राष्ट्रीय राजमार्ग 12 के दोनों ओर फेले हैं। इस पर्यटन क्षेत्र के अधिक विकसित होने का कारण जयपुर पर्यटन क्षेत्र का समीप होना है क्योंकि राष्ट्रीय राजमार्ग 12 द्वारा जयपुर-भोपाल से जुड़ा है। कोटा नगर मात्र 36 किमी दूर अवस्थित है, जो हवाईजहाज की सुविधा प्रदान करता है। साथ ही बून्दी रेलमार्ग द्वारा कोटा, चित्तौड़गढ़, दिल्ली, आगरा, उदयपुर जैसे पर्यटन नगरों से जुड़ा है।

बून्दी शहर व हिण्डोली तहसील बून्दी पर्यटन का बड़ा भाग अपने में समेटे हुए हैं। इसके बाद सबसे ज्यादा पर्यटन स्थल बून्दी शहर से पूर्व दिशा में राजकीय राज्य राजमार्ग 29 के सहारे-सहारे इन्द्रगढ़ तहसील तक फेले हैं। उत्तरी भाग नैनवां तहसील में भी बिखरे हुए पर्यटन स्थल पाये जाते हैं। दक्षिणी-पश्चिमी भाग अत्यन्त बिखरे रुप में पुरातत्व अवशेष नमाना, गरड़दा, लोईचा तथा गोलपुर में पाये जाते हैं। पश्चिमी भाग में एकमात्र पर्यटन स्थल भीमलत जलप्रपात व मंदिर है। दक्षिणी भाग में केशवरायपाटन व चम्बल नदी के तट पर प्रमुख दर्शनीय स्थल अवस्थित है।

बून्दी जिले के पर्यटन स्थलों को भौगोलिक स्थानिक प्रारुप की दृष्टि से निम्न विभागों में विभाजित किया जा सकता है :-

1. मध्यवर्ती पर्यटन क्षेत्र- बून्दी शहर
2. उत्तरी पश्चिमी क्षेत्र - हिण्डोली तहसील
3. दक्षिणी पश्चिमी क्षेत्र - बून्दी तहसील
4. उत्तरी पर्यटन क्षेत्र - नैनवां तहसील
5. उत्तरी पूर्वी पर्यटन क्षेत्र - इन्द्रगढ़ तहसील
6. दक्षिण पूर्वी पर्यटन क्षेत्र - केशवरायपाटन तहसील

पर्यटन स्थलों की भ्रमण योजना :

बून्दी जिला मुख्यालय से पर्यटन स्थलों का अवलोकन करना प्रारम्भ करें तो लगभग 6 दिनों के अन्तर्गत सम्पूर्ण जिले के तहसीलवादर पर्यटन स्थलों का भ्रमण किया जा सकता है, जो तालिका से स्पष्ट है। (तालिका 1.1)

तालिका 1.1 - बून्दी जिला पर्यटन स्थलों की भ्रमण योजना

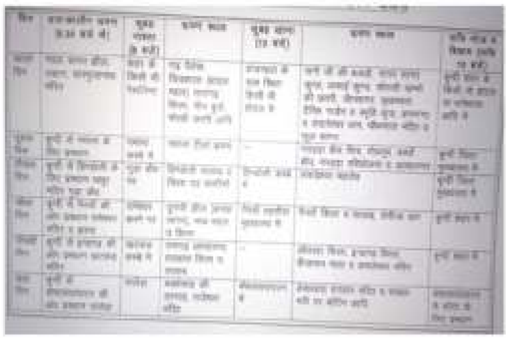

देशी-विदेशी पर्यटकों की संख्या एवं प्रवृत्ति

बून्दी के सन्दर्भ में देखें तो लिये गये आँकड़ों से ज्ञात होता है कि सन् 1998 में देशी पर्यटक का आगमन विदेशी पर्यटक से अधिक है क्योंकि विदेशी पर्यटक पर्यटन स्थल पर आने से पहले उसके बारे में

पूरी जानकारी प्राप्त करते हैं, साथ ही गन्तव्य स्थान पर उनके लिए पूर्ण सुविधा व सुरक्षा है या नहीं, उसके बारे में जानकारी रखकर ही पर्यटन स्थल पर आते हैं। बून्दी जिले में देशी पर्यटकों की तुलना में विदेशी पर्यटक एक-चौथाई से भी कम आते हैं। सन् 1999 में 1998 की अपेक्षा देशी-विदेशी पर्यटकों में ढाई गुना बढ़ोत्तरी हुई जबकि सन् 2000 की अपेक्षा तुलना में 2002 में भीषण अकाल के कारण देशी-विदेशी पर्यटकों में कमी आयी है। 2003 में पर्यटकों की संख्या में वृद्धि हुई जिसमें 6916 विदेशी व 17041 देशी पर्यटक थे। पर्यटन विकास के कार्यक्रमों से पर्यटकों की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। 2006 से 2011 तक विदेशी पर्यटकों में लगातार वृद्धि हुई है। इसके बाद के वर्षों में संख्या घटती-बढ़ती रही है। स्वदेशी पर्यटकों की अगस्त, 2016 तक 8946 विदेशी व 35939 देशी पर्यटक भ्रमण हेतु आये हैं। (तालिका 1.2)

Table 1.2 : **Bundi District**
Tourists Arrival **(Year 1998-2016)**

Year	Foreign Tourist	Indian Tourist	Total
1998	3715	11333	15048
1999	10342	29293	39635
2000	10538	30267	40805
2001	4334	20911	25245
2002	4000	11811	15811
2003	6916	17041	23957
2004	5516	14296	19812
2005	7866	21582	29448
2006	9072	24332	33404
2007	10665	34781	45446
2008	13244	50406	63650
2009	13695	55150	68845
2010	16188	53867	70055
2011	17148	58001	75149
2012	16524	57013	73537
2013	15740	50539	66279
2014	15085	50521	65606
2015	15370	54899	70269
2016	8946	35939 (upto Aug.14)	44885
Source : Tourism Receition Centre, Bundi			

आर्थिक दृष्टि से पर्यटन विकास से लाभ

तात्कालिक सरकार ने 2003 से 2007 तक केन्द्रीय प्रवर्तित योजना, राज्य योजना, जिला योजना व अन्य सड़क निर्माण योजनाओं द्वारा पर्यटन विकास में कुल 48.29 करोड़ रुपये खर्च किए हैं जिसमें नगर स्वच्छता, पर्यटन स्थलों के सौन्दर्यकरण व विद्युतीकरण, पर्यटक स्वागत केन्द्र निर्माण एवं उद्यान व वृक्षारोपण आदि में 2.63 करोड़ रुपये खर्च हुए, जबकि सड़क निर्माण व सुदृढ़ीकरण कार्यों में लगभग 45.63 करोड़ रुपये खर्च हुए हैं।

सर्वे के अनुसार पाया गया है कि प्रत्येक विदेशी पर्यटक एक दिन के औसतन 700 रु. तथा स्वदेशी पर्यटक एक दिन के औसतन 250-300 रु. खर्च करता है। यदि प्रत्येक पर्यटक को एक दिन ही ठहरा माना जाए तो 2003-16 तक कुल 171969 पर्यटक विदेशी व 5,78,367 पर्यटक स्वदेशी बून्दी भ्रमण पर आए तो एक दिन की पर्यटन से प्राप्त आय तालिका 1.3 से स्पष्ट है। इसी प्रकार पर्यटन विकास में कुल व्यय 48.29 करोड है जबकि प्राप्त आय 29.38 करोड़ रुपये ही है लेकिन पर्यटकों से प्राप्त आय के आँकड़ों में वृद्धि हो सकती है क्योंकि कुछ पर्यटक 2-3 दिन या इससे भी ज्यादा दिन तक ठहरते हैं। इस दृष्टि से पर्यटन से अभी उतना लाभ नहीं हुआ जितना होना चाहिए।

इन आँकड़ों से यह निष्कर्ष निकलता है कि 2003 से 2016 तक पर्यटन विकास में किए गए खर्च से विकसित पर्यटन उद्योग वर्तमान समय में प्रमुख आय का साधन बन पड़ा है जिससे भविष्य में पर्यटन उद्योग से अधिक लाभ होगा। (तालिका 1.3)

Table 1.3 : **Bundi District**
Income From Tourists
(2003 To Aug. 2016)

Tourist (2003-2016)	No.	Avg. exp./ day (Rs.)	Total Income (Crore Rs.)
Foreign	171969	700	12.03
Indian	578367	300	17.35
Total	750336	1000	29.38

Source : Calculation By Author

Income From Tourist (2003-2016)

ISSN 2277-5587

निष्कर्ष एवं समीक्षा

- टच स्क्रीन कियोस्क की स्थापना।
- वर्षा महोत्सव का आयोजन।
- रामगढ़ अभयारण्य का नवीनीकरण करना।
- केशोराय पाटन में आध्यात्मिक पर्यटन केन्द्र बनाना।
- जैत सागर पर रोप-वे का निर्माण।
- थीम वाटिकाओं का निर्माण।
- रॉक पेन्टिंग्स का संरक्षण - गरड़दा व गोलपुर क्षेत्र में।
- बून्दी शहर में चिड़ियाघर की स्थापना।
- भ्रमण-योजना के अनुसार देशी व विदेशी पर्यटकों को 6 दिन तक जिले का भ्रमण करवाकर अधिक से अधिक रोजगार प्राप्त किया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *राजस्थान जिला गजेटियर, बून्दी- 1999*
2. *बून्दी जिला ''एक दृष्टि में'' वर्ष-2016 आर्थिक एवं सांख्यिकी विभाग, बून्दी (राज.)*
3. *डॉ. मीना, तोता राम (2008) : बून्दी जिले में पर्यटन का स्थानिक प्रारूप : एक भौगोलिक विश्लेषण, एम.एल. वर्मा, श्रमजीवी महाविद्यालय, J.R.N. राज. विद्यापीठ, उदयपुर (राज.)*
4. *राजस्थान पत्रिका- 'बून्दी पत्रिका', 27 सितम्बर, 2016*

डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा के चित्रों में किशनगढ़ शैली का वर्तमान स्वरुप

शिवानी गुप्ता
शोधार्थी, दयालबाग एजूकेशनल इन्स्टीट्यूट (डीम्ड यूनिवर्सिटी), आगरा (उत्तर प्रदेश)

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

कलाकारों द्वारा निर्मित कलाकृति पर कलाकार की अस्पष्ट या स्पष्ट छवि होती है। प्राथमिक रुप से विषयवस्तु तथा उसके सुंदरीकरण हेतु यह आवश्यक होता है। कला और कलाकारों को आकर्षित करने हेतु सांस्कृकि परिप्रेक्ष्य की अहम भूमिका होती है। चित्रकारों की चित्र निर्मिति का प्रेरणा स्त्रोत सामाजिक, सांस्कृतिक वातावरण रहता है। डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा भी ऐसे ही चित्रकार हैं जिन्होंने अपनी धरोहर, सांस्कृतिक तत्त्वों और रुप, रंग से प्रभावित होकर काम करते हुये विश्व के अधिकतर कला आन्दोलनों ने आकृति के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति की है। विषय-वस्तु वैविध्य एवं मनमोहक रुप, कृतियों का चित्र के अन्तराल में सुखद एवं सामन्जस्यपूर्ण संस्थापन आदि की अनेक विशिष्टताओं के कारण डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा के चित्र अपना महत्व स्थापित कर चुके हैं और इसके साथ ही इनकी कृतियाँ एक आधुनिक आविष्कार है जो परम्परा के प्रति प्रचलित हमारे अनेक पूर्वाग्रहों को तोड़ने में सक्षम है।

***संकेताक्षर :** चित्रकला, किशनगढ़ लघु चित्रशैली, नारी सौन्दर्यात्मक दृष्टिकोण, मुखाकृति, सात्विक भाव, सौंन्दर्य, लावण्य व लयात्मक युक्त रेखांकन, तूलिका घात।*

कलाकारों द्वारा निर्मित कलाकृति पर कलाकार की अस्पष्ट या स्पष्ट छवि होती है। प्राथमिक रुप से विषयवस्तु तथा उसके सुंदरीकरण हेतु यह आवश्यक होता है। मेरे समझ में इसका एक कारण कला और कलाकार के संस्कार और संस्कृति हो सकती है कला और कलाकारों को आकर्षित करने हेतु सांस्कृकि परिप्रेक्ष्य की अहम भूमिका होती है, चित्रकारों की चित्रनिर्मिति का प्रेरणा स्त्रोत सामाजिक, सांस्कृतिक वातावरण रहता है। कला क्षेत्र में इनका वर्गीकरण रुप, रंग, आकार, निराकार के पृष्ठ तल से होता ऐसा विचारों से ओत-प्रोत ही चित्रकार अपना चिंतन, मंथन एवं अंकन करते हैं। डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा भी ऐसे ही चित्रकार हैं जिन्होंने अपनी धरोहर, सांस्कृतिक तत्त्वों और रुप, रंग से प्रभावित होकर काम करते हुये विश्व के अधिकतर कला आन्दोलनों ने आकृति के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति की है।

आकृति मूलक चित्रण परम्परा की श्रेणी में स्व. डॉ. एम.के. शर्मा 'सुमहेन्द्र' का नाम सम्मान से लिया जाता है आपने अपनी चित्रकला के माध्मय से राजस्थान को गौरवान्वित किया है।

राजस्थान के गुलाबी नगर जयपुर निवासी डॉ. सुमहेन्द्र चित्रकला के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त व देश के प्रतिष्ठित कलाकारों के बीच 'सुमहेन्द्र' के उपनाम से प्रसिद्ध हैं। डॉ. सुमहेन्द्र का जन्म 10 जुलाई 1943 ई. जयपुर, अमरसार जिले के नायन नामक गाँव के एक मध्यमवर्गी परिवार में हुआ था। अपने समय का प्रतिष्ठित महावीर दिगम्बर जैन उच्च माध्यमिक विद्यालय, जयपुर से प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण की, राजस्थान विश्वविद्यालय से सन् '1970' में चित्रकला में मास्टर डिग्री और योग्यताक्रम में प्रथम स्थान पाने का गौरव प्राप्त कर स्वर्णपदक जीता।

डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा के कला संसार में आधुनिकता एवं परम्परा का अद्भुत संगम दिखलाई देता है। गाँव के पेड़, पौधे, फूल, पहाड़ी और नदी, तट-तालाबों की ओर संवेदनशील चित्रकार का आकर्षित हाना स्वाभाविक था क्योंकि प्रेरणा स्त्रोत सामाजिक, सांस्कृतिक वातावरण रहा है।

ISSN 2277-5587

Laxmi

सन् 1977 से 1980 तक राजस्थान ललित कला अकादमी के सचिव व राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट, जयपुर के प्रधानाध्यापक पद से 31 जुलाई 2001 को सेवानिवृत हुए, तथा पूर्व में आप 'दृश्य कला केन्द्र' के निदेशक पद पर थे एंव **Visiting Professor** के रुप में पंजाब विश्वविद्यालय पटियाला (पंजाब) में भी सेवाऐं दे रहें थे।

डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा राजस्थान के उन चित्रकारों में से हैं जिन्होने एक लम्बी अवधि के दौरान अपनी कला साधना में लीन रहकर पारम्परिक चित्र शैली में विविध प्रयोग कर उसे एक नया आयाम दिया है। इनके नाम के साथ जुड़ा है, राजस्थान का जनजीवन, प्रकृति की रंगमयी छवि और पुरातन परम्परा का संवाहन सूत्र। जिस कारण सुमहेन्द्र की कृतियों में परंपरावादी किशनगढ़ लघु चित्रशैली का विशेष रुप से प्रभाव पड़ा, जिसे हम इनके चित्रों में स्पष्ट रुप से देख सकते हैं, चित्रित लक्ष्मी नामक कृति में कलाकार ने नायिका को लक्ष्मी के रुप में चित्रित किया है। इस चित्र में सौन्दर्यात्मक दृष्टिकोण से कलाकार ने अपनी विशेषता को प्रमुखता देते हुये नारी की मुखाकृति बनीठणीं (किशनगढ़ शैली) से प्रभावित होकर मुख पर सौम्यता व शांत रस युक्त, चित्र प्रभावशाली बन पड़ा है, सात्विक भाव मुखमण्डल, मृगी के समान नेत्र, सुगठित शरीर आदि का लालित्य ही है जो उक्त कृति संरचना को भावनात्मक आयाम प्रदान कर रही है।

Lady with Dagger

सौंदर्य से उत्पन्न आनन्द ही रस कहा जाता है, सौंदर्य भावना, मन में कोमलता, माधुर्य और रस का उद्रेक करती है जैसा कि इस कृति को देखने पर रसास्वादन हो रहा है, लावण्य व लयात्मक युक्त रेखांकन रुप तत्त्व के आधार पर नारी के शारीरिक सौंदर्य को कोमलता, उभार, लोच व लावण्य युक्त, इस प्रकार कलाकृति का सौंदर्य एक विशिष्ट सौंदर्यमय चित्रित है।

Lady with Deer

डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा का चित्रण कार्य करने का तरीका भी कुछ अलग ही है। अपने विषयों को चित्रित करने से पूर्व वे उसका गहराई तक अध्ययन कर फिर चित्र रचना आरम्भ करते हैं। स्व. कलाविद् पद्मश्री रामगोपाल विजयवर्गीय से लघुचित्रण शैली में प्रशिक्षण लिया जिसको गम्भीरतापूर्वक व गहन अध्ययन कर परम्परागत शैली में आधुनिक शैली का समावेश करके परम्परा में नवीनीकरण का एक अनूठा रुप प्रस्तुत किया है, अगर हम इन कलाकृतियों को प्रयोग के नजरिये से देखें तो **Lady with Dagger** नामक प्रति में अवला नारी की जंजीर, रुढ़िवादिता को तोड़ते हुये शक्ति रुप में चित्रित किया है। कलाकार ने किशनगढ़ शैली की नायिका को नवीन विषय के अन्तर्गत समाज से जोड़कर नये रुप में संयोजित किया है।

इसी प्रकार **Lady with Deer** नामक कृति के अंतर्गत कलाकार ने नायिका के इर्द-गिर्द उल्लास एवं प्रसन्नता की भावना का प्रभाव दिये गये चित्र में चित्रित है।

मुख्यत: सौंदर्यात्मक दृष्टिकोण से श्रृंगार रस से परिपूर्ण नायिका को हिरण (जो कि विशेषत: प्रेम, ऊर्जा, विनम्रता, महत्त्वकांक्षाओं आदि के रुप को प्रतिनिधित्व करता है) के निकट चित्रित किया है साथ ही वस्त्रों की पतली पट्टी से अर्धखुली अवस्था, नारी की महत्त्वांकाक्षाओं तथा स्वतन्त्रता को प्रदर्शित कर रहीं हैं विशेषत: शारीरिक सौष्ठव एवं दीर्घ अल्कावलियाँ तीखे नैन नक्ष, मुख पर सौम्यता जो कि नारी के सौंदर्य को बखूबी प्रदर्शित कर रहे हैं।

दिये गये चित्र में आकाश को हल्के नीले और सूरज की लालिमा का प्रतिबिम्ब दर्शन के लिये तूलिका घात द्वारा नारंगी रंग का उचित ढंग

से नारी के चरणों में आल्ता के रुप में प्रयोग किया है यह वर्ण गर्व, प्रेरणा आदि की ओर इंगित करता है कलात्मक दृष्टिकोंण से कलाकार ने लयात्मक रेखाओं के द्वारा नारी के रुप को संयोजित किया है नारी का शारीरिक आकार अंग्रेजी की वर्णमाला s के आकार में प्रतिभासित हो रहा है।

Eve

ठीक इसी प्रकार **Eve Sati, Houseless** आदि कृतियों के अन्तर्गत डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा ने राजस्थानी लघुचित्रण शैली से प्रभावित होकर कलाकृतियों की नायिका की मुखाकृति पर किशनगढ़ शैली का बिम्ब परिलक्षित होता है।

डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा ने माल्विकाग्निमित्रम् आदि के श्लोकों के आधार पर नायिकाओं की विभिन्न क्रियाकलापों को अपने चित्रों में जीवन्त किया है। बारहमासा चित्रों में प्रकृति के विविध रुपों को नायिका को आधार बनाकर चित्रों का सृजन किया है।

मूलत: 'सुमहेन्द्र जी दार्शनिक, कवि, कहानीकार, शिक्षक और प्रयोगात्मक कार्यो के अतिरिक्त एक अच्छे लेखक भी थे। आपके द्वारा लिखित पुस्तकों 'राजस्थानी रागमाला चित्र परम्परा' 1990, मिनियेचर पेन्टिंग टेक्नीक 1987 और किशनगढ़ पेन्टिंग '1991' के अलावा कलाकृति शोध पत्रिका का भी नियमित प्रकाशन किया।

इन चित्रों में मानव मन के समस्त भाव परिलक्षित होते हैं- चित्ताकर्षक, रुपसज्जा, सौंदर्यपूर्ण मानवाकृति अंकन, अलंकारिकता, कलात्मक तकनीक, सुन्दर वर्ण योजना रेखा विषय-वस्तु वैविध्य एवं मनमोहक रुप, कृतियों का चित्र के अन्तराल में सुखद एवं सामन्जस्यपूर्ण संस्थापन आदि की अनेक विशिष्टताओं के कारण डॉ. सुमहेन्द्र शर्मा के चित्र अपना महत्व स्थापित कर चुके हैं और इसके साथ ही इनकी कृतियाँ एक आधुनिक आविष्कार है जो परम्पर के प्रति प्रचलित हमारे अनेक पूर्वाग्रहों को तोड़ने में सक्षम है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली 19 अक्टूबर, 1970, पृ.सं. 3*
2. *नव भारत टाइम्स, मुम्बई, 18 सितम्बर, 1976, पृ.सं. 9*
3. *राष्ट्रदूत, सुमहेन्द्र की एक और कला यात्रा, जयपुर, 6 फरवरी, 1972, पृ.सं. 7*
4. *दैनिक नवज्योति, सुमहेन्द्र की शिल्प-आत्मा, संश्लेषण का काल, जयपुर 21दिसम्बर, पृ.सं. 8*
5. *राव कनक सिंह, धरोहर, जयपुर, 2008, पृ.सं. 176*

ISSN 2277-5587

बीकानेर रियासत में भूमि का विभाजन (18वीं शताब्दी के विशेष सन्दर्भ में)

डॉ. कैलाश चन्द गुर्जर
पोस्ट डॉक्टरल फैलो
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

किसी भी राज्य की अर्थव्यवस्था व समाज व्यवस्था की जानकारी प्राप्त करने हेतु ग्रामीण अर्थव्यवस्था का अध्ययन आवश्यक है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार भूमि एवं कृषि कार्य है। जिस राज्य या राष्ट्र का कृषक आर्थिक रुप से समृद्ध है वह राज्य व राष्ट्र भी समृद्ध एवं विकसित अवस्था में देखने को मिलते हैं। इसी कड़ी में बीकानेर रियासत जो कि राजस्थान के पश्चिमी भाग में स्थित है, वहाँ तुलनात्मक रुप से भूमि अधिक उपजाऊ नहीं है तथा कृषक की दशा बहुत अच्छी नहीं मिलती है। इन परिस्थितियों में शासक वर्ग एवं प्रशासनिक व्यवस्था का दृष्टिकोण अधिक महत्वपूर्ण माना जाता है। कृषक की स्थिति, भूमि का प्रकार, प्रशासनिक अधिकारी व कर्मचारियों की भूमिका, लगान व्यवस्था आदि महत्वपूर्ण तत्व हैं। राजाओं तथा ब्रिटिश शासकों के बीच के करार आदि ने कृषि व्यवस्था व कृषक की अवस्था को प्रभावित किया।

***संकेताक्षर:** लगान, जागीरदार, कृषक, जोत, थार का मरुस्थल।*

किसी भी राज्य की अर्थव्यवस्था का अध्ययन करने हेतु ग्रामीण अर्थव्यवस्था का अध्ययन आवश्यक होता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था मुख्य रुप से भू-राजस्व, कृषि उत्पादन पर निर्भर होती है तथा भूमि का स्वरुप उत्पादन की मात्रा व गुणवत्ता का मूल आधार होता है। भूमि की भौगोलिक संरचना, उपजाऊपन, सिंचाई के साधनों की उपलब्धता, कृषकों की बसावट आदि तथ्यों को नजर रखते हुए भूमि को कई भागों में विभक्त किया जाता था।

18वीं शताब्दी में भारत के विभिन्न भागों में भूमि का स्वरुप भिन्न-भिन्न था। राजस्थान का पश्चिमी भाग भारत के महान मरुस्थल थार का एक अहम हिस्सा था। इस समय की भूमि का स्वरुप एवं स्वामित्व अभिलेखागार में सुरक्षित साक्ष्यों से स्पष्ट होता है। राजस्थान के पश्चिमी क्षेत्र में मुख्यत: बीकानेर, बाड़मेर व जैसलमेर रियासतें सम्मिलित थी।

विभिन्न रियासतों के राजा स्वतन्त्र रुप से अपनी रियासतों में अधिकारियों के साथ मिलकर शासन का संचालन करते थे परन्तु पद्धतियाँ मुगल शासन पर आधारित होती थी। राजा रियासत की सर्वोच्च शक्ति होता था तथा समस्त भूमि को खालसा व गैर-खालसा क्षेत्रों में बाँटकर शासन संचालित किया जाता था।

खालसा भूमि सीधे राजा के नियन्त्रण एवं देख-रेख में होती थी तथा गैर-खालसा में राजा अपने परिवारजनों एवं कुल से सम्बन्धित अन्य लोगों को जागीर प्रदान करता था। जागीर का धारक जगीरदार होता था जो अपने क्षेत्र की समस्त भूमि का मालिक होता था। जागीदार जागीर के बदले राजा को सैनिक सेवाएँ या नकद के रुप में वार्षिक नजराना भेंट करते थे।

हासल व सावा बहियों का गहन अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि पश्चिमी राजस्थान के भूस्वामित्व को चार वर्गों में विभाजित किया गया।[1] खालसा, जागीर, भोम व शासन। खालसा भूमि राज्य के सीधे स्वामित्व में रहती थी जिसमें लगान लगाने, वसूली करने और लगान में छूट प्रदान करने का काम सीधे राज्य के अधिकारी करते थे।[2] जागीर वह भूमि थी जो राज्य की ओर सैनिक सेवा या अन्य सेवाओं के उपलक्ष्य में सामन्तों या कर्मचारियों को दी जाती थी। ऐसी भूमि को बदलना या बेचना राज्य की आज्ञा के बिना संभव नहीं था। जागीरदारों को सतर्क बनाये रखने के लिये उनकी जागीरें अदल-बदल की जाती थी और इसमें कम या ज्यादा भी किया जा सकता था। ''भोम'' ऐसी जागीर थी जोकि

राज्य की कई तरह से सेवा करने वाले भोमियों को प्रदान की जाती थी। इन भोमियों में कोई कर नहीं लिया जाता था और इनसे जमीन भी नहीं छीनी जाती थी। इन भोमियों से सरकारी सहायता के लिये सेवाऐं अवश्य ली जाती थी। भूमि का चौथा भाग ''शासन'' कहलाता था यह भाग राज्य के अधीन था और इसकी व्यवस्था पटवारी, पंचायत आदि के माध्यम से होती थी। शासन भूमि एक प्रकार से पुण्यार्थ भूमि होती थी। उसे न तो अपहरण किया जा सकता और न ही उसे बेचने का अधिकार था। कुछ भूमि गाँवों के पशुओं के लिये चरने के लिये खाली रखी जाती थी, ऐसी भूमि को ''चर्णोट''[3] कहते थे।

जिस प्रकार से भूमि के स्वामित्व के विचार से वर्गीकरण किया गया है उसी प्रकार खेती की क्षमता की दृष्टि से भी भूमि का विभाजन किया गया था।[4] ऐसा विभाजन उसकी भौगोलिक व प्राकृतिक विशेषताओं के कारण किया गया था। इस कारण पश्चिमी राजस्थान की रेतीली भूमि कई वर्गों में बँटी हुई थी।[5] जिनमें ''धोरा''[6], ''मगरा''[7], ''खारी पट्टी''[8], ''ताल''[9] व ''सुई''[10] की भूमि का नाम उल्लेखनीय है। इनके अलावा चमड़े के पात्र से सींची जाने वाली भूमि को ''कोशवाहक'' कहते थे। तालाब की भूमि को तलाई, नदी के किनारे वाली भूमि को ''कच्छ'' और कुऐं या गड्डे के पास वाली ''डीमडु'' और गाँव के पास वाली जमीन को ''गोरमो'' कहते थे।

इस वर्गीकरण के अतिरिक्त 18वीं सदी में भूमि का उपज के आधार पर भी वर्गीकरण किया गया था। जैसे सिंचाई की सुविधा वाली जमीन ''पीवल'', पानी से भरी हुई ''गलत हांस'' जोती जाने वाली ''हकत बहत'', काली उपजाऊ जमीन ''माल'', पहाड़ी जमीन ''मागरो'' और कंकर वाली जंगल की जमीन ''कांकड़'' आदि कहलाती थी। इन सभी प्रकार की भूमि को ''कारी'' और ''बटा'' या ''कटका'' में बाँटा जाता था और इस भूमि को कुंऐं, नदी, तालाब व नहर आदि से सींचा जाता था।[11]

इस प्रकार राज्य की भूमि, राजस्व प्रशासन नीति के अन्तर्गत भूमि की उत्पादन क्षमता के अनुरुप, राजकीय हितों के संवर्धन के लिये, उक्त वर्गीकरण लागू किया गया था।

इसी आधार पर राज्य के चीरे व परगने भी, अपनी भूमि की उर्वर शक्ति के आधार पर कई क्षेत्रों में बाँट दिये गय थे।[12] उदाहरणार्थ बीकानेर राज्य में उत्तरी पूर्वी क्षेत्र के चीरे-नोहरे, रीणी, परगना राजगढ़ व भटनेर में अवश्य ''सुंई'' भूमि की प्रधानता होने के कारण, इस प्रकार के भूवर्गीकरण से प्रभावित नहीं थे। इसके विपरीत राज्य के मध्यवर्ती दक्षिण व पश्चिम क्षेत्र के चीरो-शेखसर, गुसोईसर, जसरासर, मगरा, खारीपट्टी, पूगल और सदर की भूमि, उत्पादन क्षमता के आधार पर विभाजित की गई थी।[13]

यह भूमि पुन: अपनी विभिन्न किस्मों में बाँटी गई थी। प्रथम वर्ग में जोत की भूमि आती थी। जो ''मजरुआ'' के नाम से जानी जाती थी व जिसकी उत्पादन क्षमता साधारण रेगिस्तानी भूमि के स्तर की थी।[14] ''मजरुआ'' में ''ताल'' की भूमि उत्तम होती थी। ''मजरुआ'' भूमि बरसात के पानी से नीचे जाने पर ''बारानी'' के नाम से पुकारी जाती थी।

द्वितीय श्रेणी की भूमि ''पड़त'' व ''बंजर'' कहलाती थी। पड़त भूमि वह थी, जो साधारणतया तीन वर्षो के जोत के पश्चात् कुछ समय के लिये छोड दी जाती थी। बंजर भूमि अधिक वर्षा होने पर ही काम आ सकती थी। मध्यवर्ती व दक्षिणी क्षेत्र के चीरों के कुछ गाँव में एक उत्तम किस्म की भूमि भी विद्यमान थी, जिसे ''बेरी'', ''चाही'' व ''बाड़ी'' आदि के नामों से पुकारा जाता था।[15] इसे कुँओं, बावड़ियों व तालाबों के पानी से सींचा जाता था। यहां की भूमि में उत्युत्तम भूमि का लाभ ''उन्नाव'' की भूमि में था।[16] जहाँ बरसाती नाले का पानी आकर भर जाता था। ''बेरी'' भूमि की एक किस्म भी थी, जिसमें सामान्यतया बेरी की छोटी-छोटी झाड़ियाँ उगी होती थी।[17]

उत्तर पूर्व की भूमि सुंई जमीन थी जो कि समतल भूमि व चिकनी भी होती थी। उत्तर व उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र तीन प्रकार की भूमियों में बँटा हुआ था।[18] प्रथम टीबों की भूमि जो कि जमींधोरा कहलाती थी। द्वितीय समतल जमीन जो कि ''रोही'' कहलाती थी। तृतीय सिंचाई की जमीन थी जो कि नाली कहलाती थी।

उदाहरणार्थ कृषि भूमि की दृष्टि से अनूपगढ़ चीरा दो भागों में बँटा हुआ था। चीरे का दक्षिण भाग रेतीले टीबों से भरा था जहाँ की भूमि एक समान थी परन्तु उत्तरी भाग की भूमि अपेक्षाकृत अधिक उपजाऊ थी। इसकी तीन किस्तें थी प्रथम नाली की भूमि, जो कि उत्तम थी, जिसे पंजाब से बहकर आने वाला बाढ़ का पानी सींचता था। द्वितीय रोही की भूमि थी जो उपजाऊ व जोत योग्य थी तथा तृतीय धोरों व टीबों की भूमि थी जिसमें साधारण उपज ही पैदा होती थी। भूमि की उत्पादन क्षमता के आधार पर प्रत्येक श्रेणी की भूमि पर अलग-अलग दरों से लगान वसूल किया जाता था। उदाहरणत: ''बंजर'' से ''मजरुआ'' का लगान मामूली सा अधिक होता था। लेकिन ''नाली'', ''उन्नाव'' व ''चाही'' भूमि पर लगान की दर मजरुआ भूमि से डेढ़ गुनी अधिक थी।[20]

भौगोलिक व प्राकृतिक दृष्टि इस क्षेत्र की भूमि अधिक ''पड़त'' की भूमि थी। रेतीली अनुपजाऊ जमीन, सिंचाई के साधनों का अभाव, पीने के पानी की कमी, खाद्य फसलों का अधिक महत्व, प्राकृतिक विपदाओं की मार तथा जनसंख्या की कमी के कारण, राज्य में कृषि के उपयोग में आने वाली भूमि अत्यन्त ही सीमित थी।[21] यहाँ के निवासियों के सम्मुख, जोतने योग्य भूमि की उर्वरता को लेकर जोत के लिये प्राथमिकता का प्रश्न था। भूमि की स्थिति को ध्यान में रखकर ही राज्य में बस्तियाँ बसायी जाती थी।[22] अत: चीरों व परगनों में जो भूमि जोत योग्य व उपजाऊ होती थी उनमें जोती जाने वाली भूमि का अनुपात अलग-अलग था।[23]

ISSN 2277-5587

मध्यकालीन राजस्थान में आर्थिक जीवन का प्रमुख आधार भूमि ही थी जिसके द्वारा पश्चिमी राजस्थान की अधिकांश जनता जीवन का निर्वाह करती थी। वैसे तो राजा ही भूमि का मालिक होता था इसलिए वह भूमिपति कहलाता था।[24] उसे भूमि की खेती करने के लिये बाँटने व जब्त करने का अधिकार था। साधारण स्थिति में जब तक लगान नियमित रुप से दिया जाता था ताक पीढ़ी-दर-पीढ़ी वह भूमि मूल पुरुष के वंशजों के अधिकार में चली जाती थी और उन्हें बहुधा अपनी भूमि से वंचित नहीं किया जा सकता था।[25] किसानों के पास खेती की जो भूमि होती थी जो कि वंशानुक्रम से चली आ रही थी, उसे अपनी निजी सम्पत्ति समझते थे। कुल मिलाकर किसानों के पास जो भूमि होती थी, उस भूमि पर उत्पादन के लिये बहुत अधिक परिश्रम करना पड़ता था तथा उपज का अधिकांश हिस्सा लगान व अन्य लाग-बाग के रुप में राजा या जागीरदार हड़प लेते थे। किसाने अपने परिवार का पालन पोषण बड़ी मुश्किल से कर पाता था।

यह रेतीली भूमि पर्याप्त पानी मिलने पर अपनी उत्पादन शक्ति का परिचय दे सकती थी लेकिन इस रेगिस्तानी क्षेत्र में वर्षा बहुत अनिश्चित व अस्थिर थी। अच्छी वर्षा के काल में भी कुल औसत वर्षा 25 से.मी. से अधिक नहीं रही। इस क्षेत्र में यह आम बात थी कि चार वर्ष में प्रजा को एक बार ही अच्छी वर्षा का सुख भोगने को मिलता। वैसे मध्य युग से ही इस बात पर गम्भीरता से विचार किया जा रहा था कि इस भूमि की उपज शक्ति को बढ़ाने के लिये सिंचाई की व्यवस्था की जाऐ परन्तु यहाँ नियमित बहाव की नदी के न होने से किसी प्रकार की प्रगति संभव नहीं थी।

अनुपजाऊ भूमि, वर्षा की कमी, सिंचाई के साधनों का अभाव तथा सीमित फसलों के उत्पादन के फलस्वरुप यह ज्ञात होता है कि राज्य में जोती गई भूमि बहुत कम थी। राज्य की जोती गई भूमि अधिक से अधिक उत्तरी और पूर्वी समतल भागों में तथा पश्चिमी रेतीले टीबों में बहुत कम थी।

जहाँ तक खालसा गाँव की भूमि का प्रश्न है उसमें कृषि योग्य भूमि, जोती गई भूमि बंजर भूमि के विस्तृत विवरण उपलब्ध होते है।[26] चूँकि खालसा के गाँव प्रत्येक राज्य के हर भाग में स्थिति थी इसलिये भूमि की अलग-अलग बनावट, उपजाऊ शक्ति, उपलब्ध सिंचाई के साधन, यातायात के साधन व अन्य आर्थिक सुविधाओं के परिणाम स्वरुप उनमें कृषि योग्य भूमि, जोती गई भूमि तथा बंजर भूमि के आँकड़े अलग-अलग प्राप्त होते हैं। बीकानेर राज्य की खालसा भूमि की स्थिति निम्न तालिका[27] से स्पष्ट होती है :-

निजामत का नाम	कुल भूमि (एकड़)	जोती गई भूमि (एकड़)	प्रतिशत
बीकानेर	5,13,131	55,928	10.87
सुजानगढ़	1,44,626	50,771	35.10
रीणी	7,46,407	3,50,318	47.00
गंगानगर	10,52,446	4,53,785	43.10
सूरतगढ़	18,14,955	4,70,834	25.90
बीकानेर राज्य	42,71,656	14,21,636	33.28

बीकानेर निजामत के क्षेत्र जहाँ भूमि रेतीली व कंकरीली होने के कारण खेती केवल 10.87 प्रतिशत पर ही हो पाती थी। यह मुख्यत: शहरी क्षेत्र था तथा लोग अन्य व्यवसायों में जुटे हुए थे तथा इस क्षेत्र में भूमि की बनावट तथा वर्षा का अनुपात कम व सिंचाई के साधनों का अभाव था।

भूमि पर अधिकार के विषय में तत्कालीन साक्ष्यों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि सिद्धान्त: सम्पूर्ण भूमि का राजा का आधिपत्य होता था परन्तु व्यवहारिक रुप से भूमि पर कृषि करने वाले कृषक (काश्तकार) का अधिकार होता था। जब तक कृषक राजा या जागीरदार को निर्धारित भू-राजस्व का भुगतान करता रहता था तब तक उसका अपने अधीन भूमि का अधिकार बना रहता था। सम्पूर्ण भूमि खालसा (राजा के नियन्त्रण में) तथा गैर खालसा (जागीर, भोम, शासन आदि) में विभक्त थी।

राज्य की नीतियों के कारण ग्रामीण समुदाय का बहुसंख्यक वर्ग-रैय्यती (आम कृषक) अधिक शोषण का शिकार था तथा निम्न तबके की हालत और अधिक शोचनीय थी। रियायती वर्ग (उच्च कृषक) तो आराम की स्थिति में था क्योंकि राज्य की ओर से भू-राजस्व में छूट तथा लाग-बाग एवं बेगार से मुक्त होते थे अर्थात् उच्च वर्ग की आर्थिक स्थिति अच्छी होने के कारण उनका जीवन स्तर उच्च था। साधारण कृषक एवं निम्न वर्ग की आर्थिक स्थिति अत्यन्त खराब थी। अंग्रेजों द्वारा भूमि बन्दोबस्त के बाद हद तक इस असमानता को अपने लाभ के लिए समाप्त करने का प्रयास किया गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *जी.एस.एल. देवड़ा-रेगिस्तान क्षेत्र में कृषि भूमि व उसका वर्गीकरण, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसिडिंग, 1976*
2. *बही परगना री. वि.सं. 1749-57/1692-1700 ई.। बीकानेर बहियात, रा.रा.अ., बीकानेर*

3. चर्णाट-गाँव के पशुओं को चरने के लिये खाली छोड़ी गई भूमि
4. जी.एस.एल. देवड़ा-रेगिस्तान क्षेत्र में कृषि भूमि व उसका वर्गीकरण, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसिंडिंग, 1976
5. फेगन-सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, पृ. 4
6. धोरा-वह भूमि जो छोटे-बड़े रेतीले टीबों की बनी रहती थी।
7. मगरा-कंकरीली, सख्त भूमि जो कि पश्चिमी राजस्थान के दक्षिणी भाग में होती थी।
8. खारी पट्टी-वह भूमि जिसमें क्षारीय तत्व होता था।
9. ताल-समतल व सख्त भूमि यहां पानी एकत्रित हो जाता था।
10. सुंई-समतल भूमि जो कि चिकनी भी होती थी। ये सभी स्थानीय भाषा को शब्द हैं।
11. फेगन-सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, पृ. 3-4
12. भोग री बही, वि.सं. 1749/1692 ई. नं. 65, चीरा जसरासर बीदाहद।
13. जी.एस.एल. देवड़ा-रेगिस्तान क्षेत्र (बीकानेर राज्य) में कृषि भूमि व उसका वर्गीकरण, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसिंडिंग, 1976
14. (i) फेगन-सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, पृ. 4

    (ii) रजिस्टर देहात रियासत, बीकानेर, पृ. 15-20
15. जी.एस.एल. देवड़ा-रेगिस्तान क्षेत्र में कृषि भूमि व उसका वर्गीकरण, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोसिंडिंग, 1976
16. -वहीं-
17. खालसे रे गाँवा री बही, वि.सं. 1753/1696, नं. 1, पृ. 30-35.
18. फेगन-सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, पृ. 3-5
19. (i) अनूपगढ़ रा खेत व गाँव री बही, वि.सं. 1750/1693 ई. नं. 69.

    (ii) अनूपपूरे हासल री बही, वि.सं. 1804/1747 ई. नं. 25, बीकानेर, बहियात, राजस्थान राज्य अभिलेखागार, बीकानेर।
20. भोग री बही, वि.सं. 1749/1692 ई. नं. 65, चीरा जसरासर, बीदाहद,
21. फेगन-सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, बीकानेर, पृ. 35
22. कागदों की बही, नं. 11, वि.सं. 1757/1800, रामपुरिया रिकॉर्ड्स, रा.रा.अ. बीकानेर।
23. अनूपगढ़ रा खेत व गाँव री बही, वि.सं. 1750/1693 ई. नं. 69.
24. खालसे रे गाँवा री बही, वि.सं. 1753/1696, ई, रा.रा.अ. बीकानेर।
25. (i) जी.एस.एल. देवड़ा- राजस्थान की प्रशासनिक व्यवस्था, पृ. 188-190.

    (ii) फेगन-सेटिलमेन्ट रिपोर्ट, बीकानेर, पृ. 8-9
26. खालसे रे गाँवा री बही, वि.सं. 1753/1696, नं. 1, पृ. 30-35.
27. उपरोक्त सारणी खालसा बही से ली गई है।

ISSN 2277-5587

बीकानेर रियासत में छात्र आन्दोलन : छात्रों में राजनैतिक चेतना

डॉ. महेन्द्र राजपुरोहित
सहायक आचार्य, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान बीकानेर रियासत में भी विद्यार्थी वर्ग में राजनीतिक चेतना की जागृति तथा उसका विकास हुआ। इस चेतना को जागृत करने का श्रेय विद्यालय एवं महाविद्यालय के शिक्षकों को ही हैं। महात्मा गांधी के असहयोग आन्दालेन के साथ शुरु हुआ यह क्रम देश की आजादी तक चलता रहा। इसके अर्न्तगत राष्ट्रवादी गतिविधियाँ, सरकारी नीतियाँ का विरोध, राष्ट्रीय आन्दोलन को समर्थन देना विद्यार्थी संघो का गठन आदि था। रियासत के छोटे-2 कस्बों में भी इसका प्रभाव द्रुष्टिगोचर होता है। रियासत के बाहर भी यहां के छात्र आन्दोलन को समर्थन किया था। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के अभिवादन 'जय हिन्द' ने भी रियासत में तहलका मचाया। आजाद हिन्द सैनिको की सहायता हेतु भी बहुत कुछ किया गया छात्रों में राजनीतिक चेतना का विकास इस हद तक हुआ कि स्वयं महाराजा को हस्तक्षेप करना पड़ा। कांग्रेस द्वारा 15 अगस्त 1947 को मनाये गये प्रथम स्वतन्त्रता दिवस को भी छात्रों ने रियासती सरकार के खिलाफ जाकर समर्थन किया साथ ही 2 अक्टूबर 1947 को गांधी जयन्ती मनाकर ऐसा ही किया।

संकेताक्षर : *देशभक्ति, राष्ट्रीय विचारधारा, राजनैतिक चेतना, छात्र आन्दोलन।*

महात्मा गांधी के 1920 के असहयोग आन्दोलन से भारतीय जनता के अन्तर्मन में जागृति आई। राजपूतानें (वर्तमान राजस्थान) में भी इसका प्रभाव दृष्टिगोचर हुआ। राजपूतानें की बीकानेर रियासत में भी चाहे अत्यल्प प्रभाव ही पड़ा लेकिन पड़ा जरुर। न केवल आम जनता बल्कि शिक्षा से जुड़ी संस्थाओं और व्यक्तियों पर भी पड़ा। तत्कालीन समय में बीकानेर में डूंगर कॉलेज के प्रिंसीपल डॉ. सम्पूर्णानन्द, जो उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री एवं राजस्थान के दूसरें राज्यपाल 16.04.62 से 15.04.67 तक रहे, थे। उस समय डूंगर कॉलेज का भवन स्टेशन रोड पर वर्तमान राजकीय फोर्ट उच्च माध्यमिक विद्यालय ही था। रियासत के महाराजा गंगासिंह दिल्ली से लौटे, स्टेशन से लालगढ़ जाते समय रास्तें में उन्होनें सड़क से ही डूंगर कॉलेज हॉस्टल के वार्डन प्रो. शिवमूर्ति सिंह के कमरे में महात्मा गांधी की तस्वीर देखी। उनकी रियासत में और महात्मा गांधी की फोटो, यह महाराजा गंगासिंह को कैसे बर्दाश्त होता, अत: उन्होंने तुरन्त वार्डन को आदेश देकर गांधीजी की तस्वीर हटवा दी, लेकिन इतने से ही उन्हें संतोष नही हुआ। लालगढ़ पहुँचकर उन्होनें कॉलेज प्रिंसिपल डॉ. सम्पूर्णानन्द जी को टेलीफोन पर सारी घटनाकी जानकारी देकर वार्डन को तत्काल नौकरी से हटाने का आदेश दिया। श्री सम्पूर्णानन्दजी ने प्रत्युत्तर में टेलिफोन पर ही कहा कि- ''मैंनें भी अपने कार्यालय में महात्मा गांधी की तस्वीर लगाई हुई है। वार्डन ने तो आपके कहने पर हटा ली लेकिन मैं नहीं हटाता। मैं अपना त्याग पत्र देता हूँ।[1] इस प्रकार इस वीर स्वतंत्रता सेनानी ने टेलिफोन पर ही अपने पद से त्याग पत्र दे दिया।

इस प्रकार के राष्ट्रवादी नेता से ही कॉलेज के छात्रों ने देशभक्ति के पाठ पढ़े। उनमें से एक थे बाबू रघुवरदयाल गोयल। श्री गोयल ने कॉलेज जीवन में खादी वस्त्र और खादी की टोपी का परिधान धारण कर लिया। फलस्वरुप प्रिंस ऑफ वेल्स के बीकानेर आगमन पर उनके स्वागतार्थ खड़े छात्रों की पंक्ति में श्री गोयल को खड़ा नही किया गया क्योंकि श्री गोयल अपनी खादी टोपी उतारने को तैयार नहीं थे।[2] महाराजा गंगासिंह के शासनकाल में स्कूल कॉलेज में कोई छात्र खादी की टोपी पहन कर नही जा सकता था। सन् 1935 में भादरा के स्कूल के आठवीं कक्षा का छात्र चंपालाल खादी की कमीज और टोपी पहनकर स्कूल आ गया। इस पर सरकार ने इसकी पूरी जांच पड़ताल की तथा प्रधानाध्यापक को भविष्य में ऐसी घटना न होने की हिदायत दी।[3]

तीस तथा चालीस के दशक में गांधीजी के आन्दोलनों से छात्र वर्ग भी प्रभावित हो रहा था। चूंकि उस समय बीकानेर रियासत में उच्च अध्ययन की व्यवस्था नहीं होने के कारण यहाँ के छात्र देश के विभिन्न भागों में अध्ययन हेतु जाते थे विशेषकर ब्रिटिश भारत में यथा आगरा, बनारस आदि। जब ये लौटकर आते तो देखकर हैरानी होती थी। इनमें से कुछ छात्र थे रामचन्द्र जैन, सत्यप्रकाश गुप्ता, कन्हैयालाल गोस्वामी, सत्यनारायण हर्ष आदि।[4] रियासत के ही एक छात्र श्री मोहन लाल कोचर जो किंग एडवर्ड मेमोरियल हॉस्पीटल मेडीकल स्कूल, इन्दौर का छात्र था उसकी राष्ट्रवादी गतिविधियों पर नजर रखी गई।[5]

विद्यार्थी किसी प्रकार का संगठन नहीं बना सकते थे। स्कूलों या कॉलेज में यदि कोई राष्ट्रीय विचारधारा का शिक्षक आ जाता तो तुरंत उसे रियासत से निर्वासित या राज्य सेवा से पृथक् कर दिया जाता था। यथा डॉ. सम्पूर्णानन्द, राधाकृष्ण, पं. रुपराम आदि। न केवल राष्ट्रीय नारे अपितु महात्मा गांधी की जय नारा लगाना भी अपराध की श्रेणी में था। राजनीतिक जुलूस तो दूर धार्मिक जुलूस के लिए भी रियासती सरकार से आज्ञा प्राप्ति अनिवार्य थी। 22.04.1940 को रतनगढ़ में हनुमान जयंती के अवसर पर आयोजकों ने बिना राजकीय आज्ञा प्राप्ति के जुलूस निकाल लिया, प्रकरण रियासत के गृहमंत्री तक पहुँच गया और रतनगढ़ निवासी हनुमानप्रसाद पोद्धार, सम्पादक कल्याण, गीता प्रेस, गोरखपुर को दोषी माना गया।[6] छात्रों तथा अध्यापकों द्वारा प्रकाशित साहित्यिक पत्रिकाओं और आयोजित साहित्यिक गोष्ठियों पर सी.आई.डी. की बड़ी चौकसी बरती जाती थी।[7] ऐसी स्थिति में ऊर्जावान वर्ग अर्थात् छात्र वर्ग में चेतना विकसित होना अवश्यम्भावी था।

31 दिसम्बर, 1936 से 2 जनवरी, 1937 तक ब्यावर में आयोजित राजपूताना मध्य भारत छात्र कांफ्रेस, जिनका उद्देश्य राजपूताना की रियासतों के छात्रों में चेतना जागृत करने हेतु उन्हें संगठित करना था, आयोजित की गई।[8] इसमें राजपूताना की रियासतों के कुछ छात्र सम्मिलित हुए थे।[9] इसी से प्रभावित होकर 1940 में सुभाषचन्द्र बोस के जोधपुर आगमन पर डूंगर कॉलेज का प्रथम वर्ष का विद्यार्थी युगराज जोधपुर चला गया था।[10] इसी तरह 1940 में फिर से किंग एडवर्ड हॉस्पीटल मेडिकल स्कूल, इन्दौर के छात्रों की राष्ट्रवादी गतिविधियों पर निगरानी रखी गई।[11]

जून 1941 में बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में अध्ययरनत दो विद्यार्थियों श्री सत्यनाराण हर्ष एवं श्री कन्हैयालाल गोस्वामी ने अपने एक और साथी श्री छोटूलाल व्यास के साथ मिलकर छात्र साहित्य मंडल नामक संस्था की स्थापना की। इस संस्था का न तो कोई अध्यक्ष और न ही कोई सचिव बनाया गया, अत: यह सही ढंग से कार्य नहीं कर पाई। 18 जून, 1941 को इस संथा ने बीकानेर नगर में एक सभा का आयोजन किया।[12] जिसमें रियासत में विद्यार्थियों के संगठन की आवश्यकता बताई गई। इससे रियासती सरकार चौकन्नी हुई। सरकार कोई कदम उठाती इससे पूर्व ये दोनों छात्र भी 22 जून, 1941 को अपनी गर्मी की छुट्टियाँ बिताकर पुन: बनारस चले गये।[13]

महात्मा गांधी के 8 अगस्त, 1942 से शुरु हुए भारत छोड़ो आन्दोलन का प्रभाव बीकानेर रियासत के चूरू नगर में भी दिखाई पड़ा। सर्वहितकारिणी सभा द्वारा संचालित चूरू हाई स्कूल के कक्षा VIII, IX तथा X के विद्यार्थियों ने 10 तथा 11 अगस्त दो दिन हड़ताल रखी। प्रशासन द्वारा कठोर कदम उठाने स्वाभाविक थे। परिणामस्वरुप वहाँ के अध्यापकों को नौकरी से हटा दिया गया।[14] चूरू के ही सरदार हाई स्कूल के कुछ विद्यार्थियों ने विद्यालय में मनाये जा रहे महाराजा के जन्मदिन समारोह का बहिष्कार किया।[15]

भारत छोड़ों आन्दोलन 1942 में भाग लेने के कारण बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय अध्ययनरत बीकानेर के दो छात्रों श्री सत्यनारायण हर्ष पुत्र वैद्य गोपाललालजी तथा श्री सत्यप्रकाश गुप्ता पुत्र वकील बनारसीदास को बनारस के कमिश्नर ने विश्वविद्यालय से निष्कासित करते हुए बनानस से ही निर्वासित कर दिया।[16] इसी दौरान सितम्बर 1942 में रियासत के कस्बे देशनोक में श्री करणी मंडल पुस्तकालय के सचिव के यहां हिन्दी में 'स्वतंत्रता के युद्ध की घोषणा' तथा 'प्रत्येक भारतीय का फर्ज' शीर्षक से छपे पर्चे बरामद हुए।[17]

डूंगर कॉलेज में 1943 से स्नातकोतर अध्यापन शुरु हुआ। इसी वर्ष छात्र संगठन की स्थापना हुई जिसे सरकार ने मान्यता भी दे दी। प्रारम्भ में इसकी गतिविधियाँ चुनाव तथा सांस्कृतिक कार्यक्रत तक ही सीमित थी, लेकिन जब जोधपुर और बूंदी की घटनाओं का विवरण यहाँ पहंचा तब प्रशासन सावधान हो गया।[18] 1945 में ही डूंगर कॉलेज के कुछ विद्यार्थियों ने श्री दामोदर सिंघल, अध्यक्ष छात्रसंघ के नेतृत्व में कांग्रेस के आह्वान पर 26 जनवरी को हॉस्टल में स्वतंत्रता दिवस मनाया। परिणामस्वरुप उसे कॉलेज से 2 फरवरी, 1945 को निष्कासित कर दिया।[19] प्रिंसीपल डॉ. एम.एन. तोलानी निषकासन का कोई कारण नहीं बतासके। प्रिंसीपल डॉ. तोलानी ने 5 मार्च, 1945 को कॉलेज हॉल में विद्यार्थियों और कॉलेज स्टॉफ को बुलाकर उसमें यह निर्णय सुनाया कि 2 फरवरी का श्री सिंघल का कॉलेज से निष्कासन का आदेश महाराजा साहब द्वारा यथावत रखा गया है। 18 मार्च, 1945 को बी.डी. शर्मा ने एक पुस्तिका प्रकाशित की जिसका शीर्षक था ''बिना किसी आरोप के विद्यार्थी दंडित'' जिसमें श्री दामोदर सिंघल से संबंधित निर्णय था।[20] श्री सिंघल के अभिभावकों को इस निर्णय के तीन कारण बतलाये गये[21] –

1. 1944 में दामोदर सिंघल द्वारा कॉलेज के विद्यार्थी यूनियन के अध्यक्ष पद (रघुवरदयाल गोयल की नजरबंदी की आज्ञा के विरोध स्वरुप) से इस्तीफा देना।

2. 26 जनवरी 1945 को हॉस्टल में स्वतंत्रता दिवस मनाना।

3. दिल्ली में देवदास गांधी, गांधीजी के पुत्र तथा हिन्दुस्तान टाइम्स के सम्पादक से मिलना।

ISSN 2277-5587

इसी के साथ एक अन्य छात्र नेता श्री बुद्धदेव पर भी प्रिंसिपल की आज्ञा से बिना हॉस्टल से बाहर जाने पर प्रतिबन्ध लगा दिया।[22] जोधपुर से प्रकाशित अखबार प्रजा सेवक ने भी श्री सिंघल के निष्कासन एवं निर्वासन को अपने दिनांक 11 अप्रैल, 1945 के अंक में प्रकाशित किया।[23]

श्री दामोदर सिंघल के बीकानेर रियासत से निर्वासन का जयपुर रियासत विद्यार्थी संघ ने रामनिवास बाग, जयपुर में 20 फरवरी, 1945 को सभा करके बीकानेर सरकार की नीति की आलोचना की। एक प्रस्ताव पारित करके बीकानेर सरकार को भेजा गया, जिसमें ये निवेदन किया गया कि उसे परीक्षा में उपस्थित होने दिया जाये।[24] 24 जुलाई, 1945 को राजगढ़ कस्बे में राजगढ़ हाई स्कूल के छात्रों ने टिहरी रियासत की जेल में एक छात्र श्री देव सुमन की जेल में हुई मृत्यु पर ''देव सुमन दिवस'' मनाया जिसके अन्तर्गत कक्षाओं का बहिष्कार किया और देशभक्ति के गीत गाये।[25] 1945 में ही जब आजाद हिन्द फौज केस की सुनवाई चल रही थी, कॉलेज के छात्रों के छात्रों ने आर्थिक मदद हेतु एक समिति बनाकर चंदा एकत्रित करने का कार्य करना चाहा। सरकार को इसका पता चलते ही इस पर प्रतिबंध लगाकर इसे रोक दिया, लेकिन हॉस्टल में मारपीट की घटना हो गई।[26]

आजाद हिन्द फौज मुकदमें का छात्रों पर अच्छा खासा प्रभाव यह पड़ा कि रियासत के विद्यार्थियों ने 'जय हिन्द' का नारा अपना लिया। छात्र वर्ग आपस में अभिवादन के लिए जयहिंद का प्रयोग करने लगे। इतना ही नहीं बीकानेर में रामपुरिया इण्टर कॉलेज छात्र श्री द्वारका प्रसाद कौशिक जो कक्षा VI का छात्र तथा गंगादास कौशिक प्रजा परिषद् के कार्यकर्ता का पुत्र था, ने 21 दिसम्बर, 1945 को अपनी उपस्थिति में भी 'यस सर' न बोलकर 'जय हिन्द' का उद्बोधन किया। इससे अध्यापक चौंक गया और आगे से ऐसा नहीं बोलने की चेतावनी देते हुए कहा कि अगर भविष्य में जयहिन्द कहोगे तो विद्यालय से निकाल दिये जाओगे। एसी ही घटना रियासत के उत्तरी इलाके के शहर नौहर में भी हुई। जब स्कूल में छात्रों ने 'जयहिन्द' कहा तो अध्यापक ने छात्रों को बेंत से मारकर स्कूल से बाहर निकाल दिये जाने की धमकी दी।[27] 27 दिसम्बर 1945 को फिर श्री द्वारका प्रसाद कौशिक ने उपस्थिति में जयहिन्द बोला तो कॉलेज प्रशासन ने उसे निष्कासित करदिया। श्री कौशिक ने इसे लिखित में मांगे तो मौके पर पहुंचे प्रो. घोष ने श्री कौशिक को अपने पिता से लिखवा कर लाने का कहकर मामले को शांत किया। अगले दिन फिर जब श्री कौशिक ने उपस्थिति में जय हिन्द सम्बोधन किया तो बिना किसी लिखित आदेश दिये उसे कॉलेज से निष्कासित कर दिया।[28] डूंगर कॉलेज के छात्रों में आजाद हिन्द सैनिक सहायता कोष के लिए रुपया जमा करने का काफी उत्साह था परन्तु इन्हें इसके लिए अवसर नहीं दिया जा रहा था। अधिकारी उनकी इस प्रवृति को सशंत वृति से देखते थे। कप्तान सहगल, शाहनवाज और लेफ्टिनेंट ढिल्लो की रिहाई के समाचार पर छात्रों ने 'जय हिन्द' और वन्देमातरम् के नारे लगाये।[29]

इसी प्रकार नापासर के मीडिल स्कूल के भी छात्रों में भी जयहिन्द का काफी बोलबाला हुआ। छात्रों ने न केवल कस्बे में जगह-जगह जयहिन्द जिन्दाबाद लिखकर अपने जोश का परिचय दिया बल्कि स्कूल की चार दीवारी पर भी लिख दिया। ऐसा देखकर प्रधानाध्यापक अपने को खतरे में समझने लगे और छात्रों को जयहिन्द न बोलने के लिए समझाने लगे पर इससे कोई फायदा न निकला। फिर सब मास्टरों और छात्रों की एक सभा की जिसमें उन्होंने कहा अगर स्कूल में किसी ने जयहिन्द कहा और लिखा तो उसको बाहर निकाल दिया जायेगा। इस पर कुछ छात्रों ने जयहिन्द से सारा हाल भर दिया। उनको स्कूल से निकालने की धमकी दी गई। यह सब होते हुये भी हैडमास्टर की धमकी का छात्रों पर कोई खास प्रभाव नहीं था। स्कूल की दीवार पर जो जयहिन्द लिख दिये गये थे उन्हें हैडमास्टर ने खतरा समझ कर मिटा दिये।[30] गांव हमीरवास (राजगढ़) में भी पुलिस हैड कांस्टेबल और चार सिपाहियों ने मिलकर उमरावसिंह नामक 15 वर्षीय छात्र को 'जयहिन्द', 'महात्मा गांधी की जय' और 'पं. जवाहरलाल नेहरु की जय' के नारे लगाने पर थाने में ले जाकर खूब मारा।[31] राजगढ़ कस्बे में भी घरों की दीवारों पर कोयले तथा चाक से 'जयहिन्द' के नारे लिखे पाये जा रहे थे। जांच में कोई पकड़ा नहीं जा रहा था।[32]

होम डिपार्टमेन्ट की गोपनीय पत्रावली की पहली रिपोर्ट रामपुरिया जैन कॉलेज के बारे में है कि वहां के विद्यार्थियों ने प्रो. घोष के पास जाकर कहा कि कॉलेज के विद्यार्थियों से सामाजिक समारोह के लिए करीब 400/- का कोष जमा हुआ पड़ा है उसे आजाद हिन्द फौज के सैनिकों के मुकदमें में उनके बचाव के लिए बने कोष को प्रेषित कर दिया जाये। प्रो. घोष ने उनकी मांग स्वीकार नहीं की। विद्यार्थीगण अब भी इसके लिए दबाव डालने के लिए प्रयत्नशील है। दूसरी रिपोर्ट डूंगर कॉलेज के छात्रों सें संबंधित है जिसमें कहा गया है कि इस कॉलेज के छात्रों ने शिवलाल डागा और कंवरसिंह चतुर्थ वर्ष के छात्रों के नेतृत्व में प्रिंसीपल से इजाजत चाही है कि वे कॉलेज के विद्यार्थियों से आजाद हिन्द फौज के सैनिकों के बचाव कोष के लिए चंदा इकठ्ठा करना चाहे हैं जिसकी इजाजत दी जाये। इनकी मांग ठुकरा दी गई पर अगले ही दिन उन्होंने लक्ष्मीचन्द गोयल की अध्यक्षता में विद्यार्थियों की सभा बुलाकर उसमेंचंदा इकठ्ठा करने का निर्णय लेना घोषित कर दिया। सरकार विद्यार्थी समाज की इस प्रवृति से चिंतित है, पर इसे रोकने का कोई मार्ग नहीं मिल रहा है।[33]

1946 में महाराजा सादुल सिंह ने प्रजा को उतरदायी शासन देने की घोषणा की तब अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद के अध्यक्ष पं. जवाहरलाल नेहरु ने बीकानेर में नागरिक अधिकारों की जांच करने हेतु गोकुल भाई भट्ट व पं. हीरालाल शास्त्री को 19 अगस्त, 1946 को बीकानेर भेजा। जब ये दोनों बीकानेर आये तो डूंगर

कॉलेज के छात्रसंघ ने इन दोनों को कॉलेज में भाषण देने के लिए बुलाना चाहा। लेकिन प्रिंसिपल तोलानी सरकारी नीति के अनुसार आज्ञा नहीं दे रहा था लेकिन छात्र दबाव और हड़ताल के डर के मारे उसने आज्ञा दे दी। पं. हीरालाल शास्त्री ने भाषण देते हुए अन्य बातों के अलावा इसबात पर क्षोभ व्यक्त किया कि प्रिंसिपल तोलानी अपने ही कॉलेज के छात्रों के सामने राष्ट्रीय भाषा हिन्दी में भाषण तक नहीं दे सकते।[34]

इस समय में बीकानेर में भी राष्ट्रीय भावना और राजनीतिक चेतना जागृत हो रही थी। डूंगर कॉलेज तथा रामपुरिया कॉलेज में कुछ छात्रों ने मिलकर अगस्त 1946 में 'छात्र संघ' नामक एक नये संगठन की स्थापना की।[35] अल्पकाल में ही रियासत के विद्यार्थियों पर इसकी मजबूत पकड़ हो गई। इस संगठन के छात्रों पर समाजवादी विचार धारा प्रभावी थी तथा उनका विचार था कि जन आन्दोलन की सहायता से विद्यार्थी समाज तत्कालीन समय में समाज में व्याप्त असामनता को दूर करे गये युग का निर्माण करे।[36]

स्वामी माधवानन्द 12 सितम्बर 1946 को महाराजा के बुलाने पर बीकानेर आये। उन्होने जनता में धार्मिक उद्देश्य के साथ ही प्रजातांत्रिक विचार भी रखे। डूंगर कॉलेज के छात्रों ने भी उन्हें कॉलेज में संबोधन देने हेतु आमंत्रित किया। पहले दिन तो उन्होने छात्रों को संबोधित किया लेकिन दूसरे दिन सरकार ने उन्हें ऐसा करने से रोक लिया। छात्रों ने हड़ताल कर दी। इसी के मध्य तीन छात्रों चिरंजीलाल, हरिशचन्द्र तथा गुरुदेव ने कॉलेज के बाहर धरना दिया तथा 'इन्कलाब जिन्दाबाद' तथा 'छात्रसंघ जिंदाबाद' की नारेबाजी की। इसी समय रामपुरिया कॉलेज के विद्यार्थी एक अन्य मुद्दे पर उत्तेजित होकर इस हड़ताल में सम्मिलित हो गये। सरकारी अधिकारियों के इस आश्वासन पर कि स्वामीजी को समय मिलते ही उनका कॉलेज में पुन: भाषण करवा दिया जायेगा, हड़ताल समाप्त कर दी गई।[37] लेकिन रियासती सरकारी ने चालाकी के साथ स्वामीजी को मोटर से देशनोक भेजकर गाड़ी में बैठाकर रियासत से बाहर भेज दिया। सरकार इस कार्यक्रम को अपने विरुद्ध मानती थी।[38]

दिसम्बर 1946 में डूंगर कॉलेज में दीक्षान्त समारोह का आयोजन रखा गया, जिसमें रियासत के महाराजा सादुलसिंह आने वाले थे, अत: व्यवस्थानुरुप ठाकुरों एवं अधिकारियों की बैठक व्यवस्था की गई तथा डिग्री प्राप्त करने वाले छात्रों को पण्डाल कोने में बैठाने की व्यवस्था की गई। छात्रों ने वहां बैठने से मना कर दिया। प्रधानमंत्री के.एम. पन्नीकर ने भी समझाया लेकिन छात्र नहीं माने।[39] प्रधानमंत्री ने छात्र नेता शिवदयाल डागा, जो उनके बात करने आया था, उसको कॉलेज से निष्कासित करने का आदेश दे दिया।[40] दूसरे छात्रों को चेतावनी दी गई कि या तो आठ घंटे में अपने व्यवहार के लिए माफी मांग लें नहीं तो वे भी अपने आपको कॉलेज से निष्कासित समझें। माफी न मांगने के कारण 17 छात्रों को निष्कासित कर दिया, जिनमें प्रमुख थे मोहनलाल कोचर, मोहनलाल माहेश्वरी, सुरेन्द्र गोस्वामी, मनमोहन बरड़िया, शिवशंकर पुरोहित तथा वीरवान राजवंशी।[41] महाराज जो जब इस घटना का ज्ञान हुआ तो उन्होने भी आना रद्द कर दिया और दीक्षान्त समारोह अत्यल्प समय में ही समाप्त कर दिया गया। तत्पश्चात् छात्रों पर भीषण दमन चक्र शुरु हो गया। दीक्षान्त समारोह में शामिल न होने वाले सेवारत छात्रों को राजकीय सेवा से पृथक् तथा दूसरों को राजकीय सेवा में लेने पर प्रतिबंध लगा दिया। इस पर छात्रों ने 23 दिसम्बर, 1946 को सरकार को नोटिस देकर हड़ताल प्रारंभ कर दी। सरकार ने दमनात्मक कार्यवाही की तथा छात्र संगठन पर ट्रेड यूनियन प्रणाली अपनाने का आरोप लगाते हुए छात्र संगठन को भंग कर दिया। साथ ही छात्रों को हिदायत दी कि 2 जनवरी 1947 को कॉलेज में उपस्थित नहीं होने पर उनके नाम पृथक् कर दिये जायेंगे। लेकिन विद्यार्थी अडिग रहे। इस घटना की सर्वत्र आलोचना हुई। आगरा विश्वविद्यालय ने उन छात्रों को अपने दीक्षांत समारोह में सम्मिलित होकर डिग्री लेने के लिए आमंत्रित किया।[42]

महाराजा के हस्तक्षेप करने पर छात्र नेताओं की 31 दिसम्बर 1946 को बातचीत हुई जिसमें शिवलाल डागा के अलावा छ: छात्रों का निष्कासन रद्द करते हुए संगठन को पुनर्संगठित करने का आश्वासन दिया। इस पर छात्रों ने अपनी हड़ताल पुन: ले ली लेकिन सरकारी दमन बदस्तूर जारी रहा।

10 जून से 12 जून 1947 तक रियासत के विभिन्न भागों से छात्र बीकानेर में एकत्र हुए। संगठन का नया संविधान सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया। मानिकचंद सुराणा, जिन पर सरकार ने 121डी के तहत मुकदमा दायर किया हुआ था, छात्रसंघ के स्थायी अध्यक्ष चुने गये। उन पर से दायर मुकदमा हटाने का प्रस्ताव पारित किया गया।[43]

बीकानेर राज्य संघ की 26-28 जून, 1947 की प्रतिनिधि संभा में संघ का घोषणा पत्र स्वीकृत किया गया, जिसमें अन्य बातों के अतिरिक्त विद्यार्थियों के क्रांतिकारी उत्साह को एक विचारयुक्त एवं क्रियात्मक नेतृत्व देना ही उद्देश्य तय किया गया जिससे विद्यार्थी चिर संचित आदर्शो, स्वतंत्रता एवं प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हो सके।[44] 10 अगस्त 1947 को इस संघ ने कार्यकारिणी की बैठक में 15 अगस्त को प्रांतों में बनने वाली स्वतंत्र जनप्रिय पहली भारतीय सरकारों के स्वागत का प्रस्ताव पारित किया। विद्यार्थियों की एकता पर अखिल भारतीय विद्यार्थी कांग्रेस और अखिल भारतीय विद्यार्थी संघ द्वारा पारित प्रस्तावों का स्वागत करते हुए यह विश्वास किया गया कि राष्ट्र के इतिहास की इस नाजुक घड़ी में विद्यार्थियों के संयुक्त आंदोलन की पहले से भी ज्यादा आवश्यकता है।[45]

जब कांग्रेस ने 15 अगस्त 1947 को पूरे प्रांत में स्वतंत्रता दिवस मनाने का आह्वान किया तब डूंगर कॉलेज के छात्रसंघ ने भी कॉलेज में तिरंगा झंडा फहराने की सरकारी से अनुमति मांगी। इस पर सरकार

ने छात्रों को धमकी दी कि यदि उन्होने कॉलेज परिसर में तिरंगे झंडे को फहराया तो उनके विरुद्ध कड़ी कार्यवाही की जायेगी।[46] फिर भी छात्रों ने इस धमकी की परवाह किये बिना ही कॉलेज में तिरंगा झंडा फहराकर उसका अभिवादन किया।[47]

2 अक्टूबर 1947 को गांधी जयंती के अवसर पर छात्रों की ओर से छात्र संघ ने जिला मजिस्ट्रेट को इसे मनाने की अनुमति प्राप्ति हेतु प्रार्थना पत्र दिया। जिला मजिस्ट्रेट ने इस शर्त के साथ अनुमति दी कि इस अवसर पर रियासत का झंडा और तिरंगा झंडा साथ-साथ फहराये जायें। छात्रों ने इस आदेश को मानने से मना कर दिया। वे केवल तिरंगा झंडा ही फहराना चाहते थे। अंत में सरकार ने इस रवैये से छात्रों ने गांधी जयंती मनाने से ही मना कर दिया।[48] इस प्रकार बीकानेर रियासत में शिक्षण संस्थाओं में डॉ. सम्पूर्णाननन्दजी के त्याग पत्र से प्रारम्भ हुआ चेतना का दौर अनवरत 2 अक्टूबर, 1947 तक जारी रहा।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. शिविरा पत्रिका, प्रकाशक निदेशालय शिक्षा, राजस्थान, बीकानेर, दिसम्बर, 1970 वर्ष 11 अंक 6 पृ. 221
2. दाऊदयाल आचार्य (स्वतन्त्रता सेनानी), भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में बीकानेर का योगदान पृ. 57
3. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XIII सन् 1939 पृ. 2-3 (रा.रा.अ.बी.)
4. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XXX सन् 1939 पृ. 3-4 (रा.रा.अ.बी.)
5. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XXVIII सन् 1939 पृ. 6 (रा.रा.अ.बी.)
6. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-IX सन् 1933 पृ. 1-55 (रा.रा.अ.बी.)
7. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XX सन् 1941 पृ. 1-10 (रा.रा.अ.बी.)
8. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XL सन् 1933 पृ. 1-55 (रा.रा.अ.बी.)
9. फर्स्ट राजपूताना सैण्ट्रल इंडिया कांफ्रेस ब्यावर, रिसेप्शल कमेटी चेयरमेन कुमारानंद एड्रेस प्रिंटेड बाई धीमन सिंह लोढ़ा एट महावीर प्रेस, ब्यावर, 1937 (रा.रा.अ.बी.)
10. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XIV सन् 1936 पृ. 95 (रा.रा.अ.बी.)
11. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XIV सन् 1940 पृ. 5 (रा.रा.अ.बी.)
12. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XXXVII सन् 1933 पृ. 1-13 (रा.रा.अ.बी.)
13. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XII सन् 1941 पृ. 53 (रा.रा.अ.बी.)
14. वही: पृ. 54 (रा.रा.अ.बी.)
15. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. LVIII सन् 1942 पृ. 1 (रा.रा.अ.बी.)
16. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XCVIII सन् 1941 पृ. 5-6 (रा.रा.अ.बी.)
17. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XXIX सन् 1943 पृ. 1-6 (रा.रा.अ.बी.)
18. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-LXXXV सन् 1942 पृ. 1-6 (रा.रा.अ.बी.)
19. होम डिपार्टमेन्ट, बीकानेर फा. सं. C-XXVI सन् 1945 पृ. 73 (रा.रा.अ.बी.)
20. होम डिपार्टमेंट बीकानेर फा.सं. C-XXVI सन् 1945 (रा.रा.अ.बी)
21. Student Punished Without Charge A Summary of Facts
22. दाउदयाल आचार्य (स्वतन्त्रता सेनानी), भारत के स्वतन्त्रता संग्राम में बीकानेर का योगदान पृ. 216-19
23. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. C-XXVI सन् 1945 पृ.8 (रा.रा.अ.बी.) प्रेसटिंग विश्वामित्र दि. 15.03.1945 पृ. 2 तथा दि. 21.4.1945 पृ.2 (रा.रा.अ.बी.)
24. होम डिपार्टमेंट बीकानेर फा.सं. C-18 सन् 1945 प्रेस कटिंग प्रजा सेवक, पृ. 3 तथा प्रेस कटिंग विश्वमित्र दिनांक 21.04.1945 पृ. 2 (रा.रा.अ.बी.)
25. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 19 सन् 1945 पृ.3 (रा.रा.अ.बी.), पैम्पलेट की प्रति, दैनिक विश्वामित्र, दिल्ली पृ. 5, 23 फरवरी 1945।
26. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 34 सन् 1945 पृ. 1-3 (रा.रा.अ.बी.)
27. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 76 सन् 1945 पृ. 1-3 (रा.रा.अ.बी.)
28. प्रेस कटिंग दैनिक विश्वामित्र नई दिल्ली 22 दिसम्बर 1945 पृ.3 होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 19 सन् 1945 पृ. 85 (रा.रा'अ.बी.)
29. प्रेस कटिंग दैनिक विश्वामित्र नई दिल्ली 1 जनवरी 1946 होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 19 सन् 1945 पृ. 93 (रा.रा.अ.बी.)
30. प्रेस कटिंग दैनिक विश्वामित्र नई दिल्ली 12 जनवरी 1946 पृ.4
31. प्रेस कटिंग दैनिक विश्वामित्र नई दिल्ली 22 मार्च 1946 पृ. 4 होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 19 सन् 1945 पृ. 115 (रा.रा.अ.बी.)
32. प्रेस कटिंग दैनिक विश्वामित्र नई दिल्ली 29 अप्रैल 1946 पृ.3 होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 19 सन् 1945 पृ. 126 (रा.रा.अ.बी.)
33. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 76 सन् 1945 पृ.11 (रा.रा.अ.बी.)
34. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 76 सन् 1945 पृ. 3-4 (रा.रा.अ.बी.)

35. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. C-72 सन् 1946 पृ. 33-34 (रा.रा.अ.बी.)

36. मीरां, अजमेर 16 अगस्त 1946, होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. 32 सन् 1946 पृ.6 (रा.रा.अ.बी.)

37. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. C-32 सन् 1946 पृ.6 (रा.रा.अ.बी.)

38. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. C-59 सन् 1946 पृ. 1-12 (रा.रा.अ.बी.)

39. होम डिपार्टमेंट,बीकानेर फा.सं. C-59 सन् 1946 पृ. 12-13 (रा.रा.अ.बी.)

40. दैनिक हिन्दुस्तान दिनांक 24.12.1946 पृ. 3 प्रेस कटिंग फा.सं. C-20 सन् 1945 (रा.रा.अ.बी.)

41. दैनिक हिन्दुस्तान दिनांक 24.12.1946 पृ. 3 प्रेस कटिंग फा.सं. C-20 सन् 1945 (रा.रा.अ.बी.)

42. दैनिक हिन्दुस्तान दिनांक 27 फरवरी पृ. 4 1946 प्रेस कटिंग फा.सं. C-20 सन् 1945 (रा.रा.अ.बी.)

43. मीरां, अजमेर 23 जून 1947 फा.सं. C-32 सन् 1945: दैनिक हिन्दुस्तान दिनांक 22 जुलाई 1947 पृ. 3 प्रेस कटिंग फा.सं. ह.20 सन् 1945 (रा.रा.अ.बी.)

44. बीकानेर राज्य छात्रसंघ का घोषणा पत्र, बीकानेर राजय छात्र संघ का प्रतिनिधि सभा द्वारा स्वीकृत, प्रकाशक एजूकेशनल प्रेस, बीकानेर फा.सं. C-39 सन् 1947 (रा.रा.अ.बी.)

45. बीकानेर राज्य छात्र संघ की 10.08.1947 की बैठक में स्वीकृत प्रस्ताव-हैण्डबिल प्रकाश एजूकेशनल प्रेस, बीकानेर फा.सं. 39 सन् 1947 (रा.रा.अ.बी.)

46. होम डिपार्टमेंट, बीकानेर फा.सं. ह.31 सन् 1946 पृ.31 (रा.रा.अ.बी.)

47. दैनिक हिन्दुस्तान दिनांक 22 अगस्त 1947 पृ.3 प्रेस कटिंग फा.सं. C-20 सन् 1945 (रा.रा.अ.बी.)

48. दैनिक हिन्दुस्तान दिनांक 17 अक्टूबर 1947 पृ. 4 प्रेस कटिंग फा.सं. C-20 सन् 1945 (रा.रा.अ.बी.)

 ISSN 2277-5587

कश्मीर समस्या एवं भारत-पाक संबंध

देशराज यादव
व्याख्याता, ला.ब.शा. राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटपूतली

shodhshree@gmail.com

शोध सारांश

सन् 1947 में विभाजन के बाद, भारत-पाकिस्तान विश्व मानचित्र पर दो अलग-अलग राष्ट्र भले ही बन गये हो परन्तु ऐतिहासिक, भौगोलिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से दोनों देशों की साझा विरासत रही है। इस साझा विरासत के बावजूद दोनों के संबंध विभाजन के बाद से लेकर अब तक कभी सामान्य नहीं रहे है। दोनों के मध्य परस्पर अविश्वास, कटुता, घृणा, असहयोग एवं शीत युद्ध का वातावरण सदैव विद्यमान रहा है। भारत-पाकिस्तान के मध्य तनाव का मुख्य मुद्दा कश्मीर है। कश्मीर को लेकर भारत पाक के मध्य युद्ध हो चुके है और हजारों की संख्या में लोग आतंकवाद के रुप में जारी छद्म युद्ध में मारे जा चुके है। कश्मीर समस्या ने दोनों देशों के मध्य संबंधों में कड़वाहट, संदेह, अविश्वास, भय, तनाव एवं शत्रुता के वातावरण को जन्म दिया है जिसके कारण दोनों देशों के मध्य अमन चैन, व्यापार एवं विकास बुरी तरह प्रभावित हुआ है।

संकेताक्षर: *आतंकवाद, छद्म युद्ध, शीत युद्ध, परमाणु युद्ध, बोआ कंस्ट्रिक्टर।*

भारत-पाक संबंधों को गहराई से जानने के लिए हमें पिछली शताब्दी के इतिहास के उन निर्णायक पलों को देखना, जानना, समझना पड़ेगा जिनके चलते भारतीय उप महाद्वीप का विभाजन और पाकिस्तान का जन्म हुआ।[1] भारत पाक संबंधों की कड़वाहट का तानाबाना अंग्रेजों की फूट डालो और राज करो की नीति के समय बन चुका था, जब उन्होंने अपने निहित स्वार्थों के लिए भारत के दो बड़े सम्प्रदायों के मध्य साम्प्रदायिकता का जहर घोल दिया था। तत्कालीन परिस्थितियों में अंग्रेजों ने मुस्लिम लीग और लीग के नेताओं को काँग्रेस और हिन्दुओं के विरुद्ध शस्त्र के रुप में प्रयोग किया।[2] अंग्रेजों ने फूट डालो और राज करो की नीति के तहत सन् 1909 में मार्ले- मिन्टों सुधारों के द्वारा मुसलमानों के लिए पृथक् निर्वाचन मण्डल एवं निर्वाचित संस्थाओं में उनके लिए संख्या के अनुपात से अधिक आरक्षण की व्यवस्था की। इससे दोनों सम्प्रदायों के मध्य द्वेष में वृद्धि हुयी और अलगाववादी प्रवृतियों को बढ़ावा मिला एवं राष्ट्रीय एकता की भावना का लोप हुआ।[3] अंग्रेजों की साम्प्रदायिक नीति ने मुहम्मद अली जिन्ना के द्विराष्ट्र सिद्धान्त का आधार तैयार किया। जिन्ना ने मार्च 1940 में मुस्लिम लीग के लाहौर अधिवेशन में कहा कि'' हिन्दू और मुसलमान दो अलग-अलग राष्ट्र है।''[4] पाकिस्तान का विचार सबसे पहले कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में अध्ययनरत एक विद्यार्थी रहमत अली के मन में आया, उसके अनुसार '' पंजाब, उत्तर पश्चिमी सीमा प्रान्त, कश्मीर, सिंध और बलुचिस्तान को मिलाकर भारतीय मुसलमानों का राष्ट्रीय देश होना चाहिए, जिसे पाकिस्तान कहा जाना चाहिए।''[5] मुस्लिम लीग ने 16 अगस्त 1946 को' सीधी कार्यवाही दिवस की घोषणा की जिसमें उन्होंने स्पष्ट कहा कि'' या तो भारत का विभाजन होगा या भारत वीरान'।[6] इस दिवस पर मुस्लिम लीग ने सम्पूर्ण भारत को साम्प्रदायिक हिंसा की आग में झोंक दिया। पाकिस्तान का जन्म साम्प्रदायिकता की उन्माद का परिणाम था जिसे अंग्रेजों ने अपने साम्राज्य के हितों की सुरक्षा के लिए भारत में पैदा किया था। साम्प्रदायिकता का यह उन्माद आज तक शांत नहीं हुआ है। कश्मीर समस्या के रुप में यह दिन-प्रतिदिन उग्र होता जा रहा है। भारत में अलगाववादी एवं आतंकवादी अपने नापाक इरादों को साम्प्रदायिकता की विष बेल के सहारे पूरा करने में कामयाब होते है। पाकिस्तान की राजनीति का संचालन बहुत कुछ भारत विरोधी मानसिकता के आधार पर किया जाता है। पाकिस्तान में कश्मीर कार्ड राजनीति की सीढ़ियाँ चढनें के लिए लांचिग पैड का कार्य करता है।

कश्मीर समस्या

विभाजन के समय से ही कश्मीर के प्राकृतिक सौन्दर्य, सामरिक भौगोलिक स्थिति, मुस्लिम आबादी की बहुलता के कारण पाकिस्तान की नीति कश्मीर हड़पने की रही है। विभाजन के समय कश्मीर में महाराजा हरि सिंह का शासन था जो स्वयं हिन्दू था परन्तु घाटी की अधिकांश आबादी मुस्लिम थी। यदि महाराजा कश्मीर ने 15 अगस्त के पूर्व कश्मीर के विलय को लेकर कोई निर्णय ले लिया होता तो यह समस्या पैदा नहीं होती। पाकिस्तान का जन्म द्विराष्ट्र के सिद्धान्त पर हुआ था वह इस मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र को किसी भी कीमत पर हासिल करना चाहता था। पाकिस्तान के मुसलमानों को यह कभी भी स्वीकार नहीं था कि कश्मीर रियासत जिसकी जनसंख्या के 80 प्रतिशत मुसलमान है, दिल्ली के हिन्दुओं द्वारा शासित हों।[7] परन्तु महाराजा और कश्मीर की जनता का प्रतिनिधित्व करने वाला सबसे शक्तिशाली संगठन नेशनल कांफ्रेन्स मुस्लिम लीग के द्विराष्ट्र सिद्धान्त के विरोधी थे। दोनों किसी भी परिस्थिति में पाक के साथ विलय के पक्ष में नहीं थे।

भारत पाकिस्तान के विभाजन के साक्षी एवं स्वतंन्त्र भारत के प्रथम गवर्नर जनरल लॉर्ड माउण्टबेटन से किए गए साक्षात्कारों पर आधारित पुस्तक 'माउण्टबेटन एण्ड इन्डिपेनडेन्ट इण्डिया' से यह तथ्य प्रकट होता है कि माउण्टबेटन ने कश्मीर में जनमत संग्रह कराये जाने का परामर्श दिया था। परन्तु कश्मीर महाराजा को यह प्रस्ताव स्वीकार नहीं था अत: उन्होने 15 अगस्त, 1947 तक कोई निर्णय नहीं लिया। इधर नेशनल कॉन्फ्रेंस के नेता शेख अब्दुल्ला ने कश्मीर में अपनी राजनीतिक जड़े जमाने के लिए तत्काली हिन्दू महाराजा हरिसिंह के विरुद्ध मुस्लिम नवयुवकों को भड़काना एवं संगठित करना प्रारम्भ कर दिया। उधर पाकिस्तान भी कश्मीर को हड़पनें की फिराक में था उसने सीमान्त प्रदेश के कबायलियों के साथ मिलकर 22 अक्टूबर, 1947 को जम्मू-कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। 24 अक्टूबर को कश्मीर के महाराजा ने भारत सरकार से सहायता की मांग की। 26 अक्टूबर 1947 को कश्मीर का विलय भारत में हो गया।

कष्मीर महाराजा द्वारा विलय पत्र पर हस्ताक्षर करने एवं भारत सरकार ने अपनी सेना कश्मीर में भेजने के बाद पाकिस्तान ने खुलकर युद्ध में भाग लेना शुरु कर किया। भारतीय सेना ने आक्रमणकारियों को खदेड़ना प्रारम्भ कर दिया। भारतीय सेना ने सर्वप्रथम हमलावरों से घिरे श्रीनगर को मुक्त कराया, 8 नवम्बर को बारामूला, 11 नवम्बर को उडी.पर भारतीय झण्डा फहराया। इस मुक्ति संग्राम में भारत के अनेक सैनिकों ने शहादत दी।[8]

कश्मीर समस्या और संयुक्त राष्ट्र संघ:

भारत ने तत्कालीन अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की यर्थाथता को समझे बगैर शक्ति राजनीति के खेल में कश्मीर समस्या को उलझा दिया। भारत की अदूरदर्शिता के परिणामस्वरुप कश्मीर समस्या 31 दिसम्बर, 1947 को संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद् के सामने प्रस्तुत हुई। सुरक्षा परिषद् के हस्तक्षेप से 1 जनवरी, 1949 को युद्ध विराम की घोषणा कर दी गई परन्तु इस युद्ध में पाकिस्तान ने कश्मीर का लगभग 83,294 वर्ग किमी भू-भाग जीत लिया जो आज भी उसके कब्जे में है।

सुरक्षा परिषद् ने एक ऐसा प्रस्ताव पारित किया जो पाकिस्तान के मन माफिक था। सुरक्षा परिषद् ने यह निर्णय लिया कि तत्काल युद्ध बंद हो और कश्मीर के भविष्य का निर्णय जनमत संग्रह द्वारा हो । पाकिस्तान इसी प्रस्ताव को लेकर भारत को घेरता रहता है जबकि असल में मुद्दा जनमत संग्रह का बनता ही नहीं है क्योंकि :

- कश्मीर के महाराजा ने कश्मीर के विलय का प्रस्ताव भारत के दबाव या शक्ति के भय के कारण नहीं किया अपितु पाकिस्तानी आक्रमण के कारण अपनी रियासत की रक्षा के लिए स्वेच्छा से किया था। अत: यह विलय पूर्ण वैधानिक एवं देशी रियासतों के लिए घोषित नीति के अनुकूल था।
- कश्मीर की जनता ने स्वतंन्त्र रुप से निर्वाचित अपनी संविधान सभा के माध्यम से कश्मीर को भारतीय संघ का अभिन्न अंग घोषित कर दिया था। अत: जनमत संग्रह की बात अपने आप पूर्ण हो गयी।
- पाकिस्तान कश्मीर में आक्रमणकारी राष्ट्र है जिसने आज भी कश्मीर के बड़े भाग पर अवैध रुप से कब्जा कर रखा है तथा उसका एक हिस्सा अवैध रुप से चीन को सौंप दिया है।
- कश्मीर में जनमत संग्रह के साथ यह शर्त जुडी हुई थी कि पाकिस्तान अपनी सेना वहाँ से हटा लेगा । सेना हटाना तो दूर पाकिस्तान ने वहा आतंकवादियों के लिए ट्रेंनिग सेन्टर खोल रखे है।
- पाकिस्तान द्वारा जिस प्रकार से घाटी के लोगों को गुमराह किया है और वहां के नवयुवकों में आतंक के बीज बोये है उन्हे देखते हुए कश्मीर में जनमत संग्रह की बात करना बेईमानी है। सवाल भारत के हिस्से वाले कश्मीर का नहीं है सवाल तो पाकिस्तान के कब्जें वाले कश्मीर का है।
- आज भारत के हिस्से वाले भाग में बीजेपी-पीडीपी की गठबंधन सरकार है जो सही मायनें में वहाँ दोनों समुदायों की मिली-जुली सेक्यूलर सरकार है।

कष्मीर मुद्दे को लेकर पाकिस्तान अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत को घेरने का प्रयास करता रहता है। भारत ने 1957 में ही स्पष्ट कर दिया

है कि अब परिवर्तित परिस्थितियों में जनमत संग्रह कराना संभव नहीं है। कश्मीर में संवैधानिक सरकार की स्थापना क्या कश्मीरियों के जनमत संग्रह का प्रमाण नहीं है? कश्मीर समस्या को लेकर भारत पाकिस्तान के मध्य अब तक चार युद्ध हो चुके है। 1971 में भारत पाकिस्तान के मध्य युद्ध के बाद कश्मीर समस्या के समाधान के लिए 2 जुलाई, 1972 को दोनों देशों के मध्य शिमला समझौता हुआ जिसमें युद्ध विराम रेखा को ही नियंत्रण रेखा स्वीकार कर लिया गया। शिमला समझौता से दूरियाँ कुछ कम अवश्य हुई परन्तु प्रकारान्तर पाकिस्तान ने आतंकवादी गतिविधियों को सह व संरक्षण प्रदान कर शिमला समझौते की मूल भावना को ही खत्म कर दिया है। सन् 1990 के दशक के बाद से लेकर अब तक पाकिस्तान ने पृथकतावादी आन्दोलन एवं आतंक के आकाओं को हर तरह की मदद देकर रिश्तों को दागदार बनाने में कोई कोर कसर नहीं छोड़ी है। हिजबुल मुजाहिद्दीन, हरकत उल अंसार, लश्कर ए तोएबा, जैश-ए-मुहम्मद आदि उग्रवादी संगठनों के तार किसी न किसी रुप में पाकिस्तान से जुडे हुए है।

कश्मीर समस्या व आतंकवाद

वैसे तो पाक प्रायोजित आतंकवाद भारत के लिए नई बात नहीं है। पाकिस्तान सीधे तौर पर कश्मीर को हथियाने में नाकाम रहा तो आतंकवाद के रुप में से छद्म युद्ध जारी रखे हुए है। 1971 के युद्ध में शर्मनाक हार के बाद पाकिस्तान को यह बात समझ में आ गई कि अब भारत को आमने-सामने की लड़ाई में हरा पाना संभव नहीं है तो उसने बदला लेने एवं कश्मीर समस्या को जिन्दा बनाये रखने के लिए अपनी रणनीति में बदलाव किया। पहले उसने पंजाब में सिखों को खालिस्तान का सपना दिखाया और वहाँ आतंकवाद को पैदा किया। पंजाब में आतंकवाद फैलाने के बाद पाकिस्तान ने मुस्लिम बाहुल्य कश्मीर में आतंकवाद के बीज बोये। पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल जिया उल हक ने सन् 1988 में भारत के विरुद्ध' ऑपरेशन टोपाक' नाम से 'वार विद् लो इंटेंसिटी' की योजना बनाई। इस योजना के तहत भारतीय कश्मीर के लोगों के मन में अलगाववाद और भारत के प्रति नफरत के बीज बोने थे और फिर उन्ही हाथों में हथियार थमाने थे।[9] सन् 1990 में आतंकवाद के रुप में शुरु हुआ 'ऑपरेशन टोपाक' नाम से वार विद् लो इंटेंसिटी' की योजना निरन्तर जारी है। पाकिस्तान का खुफिया तंत्र, सेना व आतंकवादी संगठन मिलकर यह कार्यक्रम चला रहे है। हाल ही में पाकिस्तान में शीर्ष सैन्य एवं राजनीतिक पद संभाल चुके राष्ट्रपति जनरल परवेज मुशर्रफ पहले ऐसे शख्स है जिन्होने राजनीति उद्देश्य के लिए आतंकवाद को हथियार के तौर पर इस्तेमाल करने की पाकिस्तानी की आधिकारीक नीति कबूल की है।[10]

आज पाकिस्तान आतंकवाद के माध्यम से कश्मीर समस्या को जिन्दा बनाये रखे हुए है। भारत ने संसद एवं ताज होटल पर हुए हमलों के दर्द को भूलकर पाकिस्तान की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाया परन्तु बदले में उसने पठानकोट एवं उडी हमले के रुप में पीठ पर छुरा घोंपने का कार्य किया। पाकिस्तान की नीयत समस्या को हल करने की नहीं बल्कि उसे लम्बा खीचनें की है। 2013 में जम्मू-कश्मीर में पुन: फियादीन हमलों की वापसी हुई। 26 सितंबर, 2013 को पुलिस स्टेशन और सांबा में सैन्य ठिकाने पर फियादीन हमला हुआ, जिसमें सेना के चार जवानों सहित दस लोगों को अपनी जान गवांनी पडी। 27 जुलाई, 2015 को गुरदासपुर जिले के दीनानगर पुलिस स्टेशन पर हमला किया गया जिसमें सात लोग मारे गये। 1 जनवरी, 2016 को जेईएम के आतंकवादियों ने पठानकोट ऐयर बेस पर हमला किया गया। 18 सितम्बर, 2016 को जेईएम के चार आतंकवादियों ने सेना के बेस कैंप पर हमला करके 19 जवानों को मार डाला। भारतीय सैन्य ठिकानों पर आतंकी हमले पाकिस्तान की एक व्यापक साजिश का हिस्सा है। पाकिस्तानी फौज ने भारत के खिलाफ अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति को आगे बढ़ाने के लिए दोहरा तरीका अपनाया है:- **प्रथम** आतंकवादियों को प्रशिक्षित करके भारत के सैन्य ठिकानों पर आतंकवादी हमला करवाना, **दूसरा** परमाणु हथियारों को एक ऐसी ढाल के रुप में इस्तेमाल करना जो भारत की ओर से होने वाली सैन्य प्रतिक्रिया को रोक सके। एक वरिष्ठ सैन्य अधिकारी के अनुसार ''पाकिस्तान ने भारत की ओर से किसी भी सैन्य पहल को बोंथरा करने के लिए रणनीतिक परमाणु हथियार तैनात कर डाले है। इस योजना का सबसे अहम हिस्सा अप्रैल, 2011 में कम दूरी की नई बैलिस्टिक मिसाइल का परीक्षण था।[11] इसे भारत के कोल्ड स्टार्ट वाले सैन्य सिद्धान्त का सामना करने के लिए तैयार किया गया है।

भारत-पाकिस्तान के संबंधों के मार्ग में बाधाएं

भारत पाक संबंधों को सामान्य बनानें में विभाजन से उत्पन्न कश्मीर समस्या एवं उसे जिन्दा बनाये रखने के लिए आतंकवाद का पालन एवं पोषण करने की पाकिस्तान की नीति के अतिरिक्त, निम्न कारण दोनों देशो के संबंध सामान्य बनाने में बाधक बने हुए है-

- पाकिस्तान की बदतर होती अर्थव्यवस्था एवं घरेलू परिस्थितियाँ।
- पाकिस्तान सेना की राजनीति में दखल एवं सेना का भारत विरोधी दृष्टिकोण।
- पाकिस्तान में कट्टर पंथियों का राजनीति एवं सेना में दबदबा।
- हथियारों के सौदागर भी अमन चैन के खिलाफ है।
- महाशक्तियों का हित भी भारत पाक संबंधों को सामान्य नहीं होने दे रहा है।

पाकिस्तान के प्रति भारत की नीति में परिवर्तन-

अब तक पाकिस्तान के प्रति भारत की नीति रक्षात्मक-अनुगामिता की रही है। जबकि पाकिस्तान का रुख हर बार आक्रामक रहा है।

पाकिस्तान के पूर्व राष्ट्रपति एवं तानशाह परवेज मुशर्रफ ने कहा था कि 'कश्मीर हमारे रक्त में बहता है। हम कश्मीर को अपना नैतिक, राजनीतिक एवं राजनयिक समर्थन जारी रखेगें'[12] नरेन्द्र मोदी के प्रधानमंत्री बनने के बाद जिस तरह पाकिस्तान ने कश्मीर घाटी में हालात पैदा किये, पठानकोट एवं हाल ही में उडी में भारतीय सैन्य ठिकानों पर आतंकवादियों ने हमला किया उससे यह साफ जाहिर हो गया है कि पाकिस्तान का इरादा विश्व बिरादरी के सामने कश्मीर की समस्या को पुरजोर उठाना था। संभवत वह इस गफलत में था कि भारत की मौजूदा सरकार पर हिन्दुत्व का ठप्पा लगा होने के कारण भारत के मुसलमानों से उसे व्यापक समर्थन मिलेगा और भारत में साम्प्रदायिक सद्भावना को समाप्त कर अस्थिरता का वातवरण पैदा किया जा सकेगा। परन्तु हुआ इसका उल्टा। अब, भारत ने पाकिस्तान के प्रति जो रक्षात्मक रणनीतिक उदासीनता की नीति चली आ रही थी उसे अलविदा कह दिया है। भारत ने पाकिस्तान के प्रति आक्रामक कूटनीति, सैन्यविकल्प खुले रखने एवं पर्याप्त दूरदर्शिता की नीति को अपनाया है।

पाकिस्तान के प्रति रणनीतिक आक्रामकता की नीति

अभी तक कश्मीर को लेकर एक अजीब सी भ्रामक स्थिति बनी हुई थी जिसे वर्तमान में भारत सरकार ने पूरी तरह स्पष्ट कर दिया है। भारत ने स्पष्ट रुप से कहा है कि पाकिस्तान कश्मीर पर कब्जाधारी है और उसे वहाँ से हटना होगा। अभी तक कश्मीर का अर्थ केवल घाटी के उस भाग से लगाया जाता रहा है जो भारत के पास है। उसमें जम्मू और लद्दाख का जिक्र नहीं आता है एवं न ही पाकिस्तान के कैंजे वाले हिस्से का जिक्र किया जाता है। साथ ही भारत के अलगाववादी जो कश्मीरीयत की बात करते है कि उसे आजादी चाहिए और पाकिस्तान भी उन्हें समर्थन और सहायता देता है। मूल बात यह है कि यदि कश्मीर का सवाल होता तो अलगाववादी पाकिस्तान की ओर कभी रुख नहीं करते बल्कि जम्मू के हिन्दुओं व लद्दाख के बौद्ध लोगों के साथ मिलकर अलग राष्ट्र की मांग करते और पाकिस्तान से अपने कश्मीर का वो हिस्सा मांगते जो उसने जबरन अपने अधिकार में कर रखा है। कश्मीर का मुद्दा कश्मीरीयत का नहीं है एवं न हीं अलग राष्ट्र की मांग से जुड़ा हुआ मुद्दा है बल्कि यह भारत पाकिस्तान के विभाजन से उपजी हिन्दु और मुसलमानों के बीच साम्प्रदायिकता की भावना से जुडा हुआ मसला है जिसे पाकिस्तान भुनाना चाहता है। इसी के तहत वहाँ के पाक परस्त मुसलमानों ने हिन्दुओं को आतंकित करके घाटी छोड़ने के लिए विवश कर दिया ताकि घाटी को पूरी तरह मुसलमान आबादी में कनवर्ट किया जा सके। अब भारत सरकार ने यह तय किया है कि वहाँ से आतंकित करके भगाई गई हिन्दू आबादी को पुन: वहा बसाया जाना चाहिए।

बोआ कंस्ट्रिक्टर की नीति:

प्रधानमंत्री श्री नरेंन्द्र मोदी ने 15 अगस्त, 1916 को स्वाधीनता दिवस के अवसर पर अपने संबोधन में बलूच, गिलगिट और बाल्टिस्तान के लोगों के प्रति चिंता और समर्थन व्यक्त करते हुए पाकिस्तान के प्रति भारत की विदेश नीति में परिवर्तन के साफ संकेत दिया है। भारत ने अब पाकिस्तान के प्रति रक्षात्मक नीति का परित्याग करके आक्रामक नीति अपनाने का संकेत दिया है।

भारत ने आक्रामकता का परिचय देते हुए पहले बलुचिस्तान में मानवाधिकारों का मुद्दा उठाया और उसके बाद चीन में ग्रुप-20 की बैठक में आतंकवाद के मसले पर पाकिस्तान को नीचा देखने पर मजबूर कर दिया। इसके बाद भारत ने अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर पाकिस्तान को अलग-थलग करने का कार्य किया । 18 सितंबर को उरी हमले के बाद भारत को आक्रामक नीति अपनाने का सही समय और अवसर मिल गया। भारत ने उरी हमले के बाद पाकिस्तान के प्रति **'बोआ कंस्ट्रिक्टर'**[13] की नीति को अपनया है। कश्मीर में पाकिस्तान की लगातार उकसावे की नीति एवं उडी हमले के जबाब में भारत ने जब कूटनीतिक, आर्थिक एवं सैन्य कार्यवाही जैसी ठोस रणनीतियों के माध्यम से पाकिस्तान को अपने शिकंजे में जकड़ना चालू किया, तब पाकिस्तान के राजनीतिक नेतृत्व को वैसी ही घुटन का एहसास हुआ होगा कि वे किसी बोआ अजगर की जकड़न में हों। 28-29 सितम्बर की रात को आतंकवादी ठिकानों को नष्ट करने के लिए नियंत्रण रेखा के पार भारतीय सैनिकों की साहसिक कार्यवाही ने इस एहसास को पुख्ता किया होगा।

भारत ने स्पष्ट रुप से पाकिस्तान को संकेत दिया है कि यदि वह कश्मीर में अपना पुराना राग अलापना जारी रखेगा और भारत में आतंकवाद के माध्यम से छद्म युद्ध जारी रखेगा तो भारत चुप बैठने वाला नहीं है। भारत ने अपनी इस नीति को आगे बढाते हुए संयुक्त राष्ट्र महासभा के अधिवेशन में भारत की विदेश मंत्री श्रीमती सुषमा स्वराज ने भी बलूचिस्तान, गिलगिट और बाल्टिस्तान का मसला उठाया। साथ ही पाकिस्तान को चेतावनी भरे लहजे में कहा कि वह कश्मीर को पाने का ख्वाब देखना बंद कर दे। श्रीमती स्वराज ने पाकिस्तान के इन आरोपों को सीरे से खारीज किया कि पाकिस्तान के साथ बातचीत करने के लिए भारत शर्ते लगा रहा है। उन्होनें विश्व बिरादरी के सामने भारत के प्रयासों का जिक्र करते हुए कहा कि ''हमने शपथ ग्रहण समारोह में शरीफ को न्यौता देते समय कौनसी शर्त रखी थी। मै स्वयं इस्लामाबाद गई थी और समग्र बातचीत के लिए क्या कोई शर्त रखी थी। प्रधानमंत्री श्री मोदी भी काबुल से लौटते हुए लाहौर उतर गये थे, क्या वह कोई शर्त लगाकर वहाँ गए थे। उन्होंने कहा कि सच्चाई तो यह है कि भारत ने मित्रता के आधार पर सभी विवाद सुलझाने की पहल की किन्तु हमें मिला क्या, कभी बहादुर अली तो कभी पठानकोट और कभी उरी।'' उन्होने कहा कि ऐसे देशों को चिति करने एवं अलग थलग करने की आवश्यकता है जो आतंकवाद को प्रश्रय देते है। भारत ने इस अन्तर्राष्ट्रीय मंच के माध्यम से विश्व समुदाय को यह संदेश दिया है कि पाकिस्तान आतंक का पोषक राष्ट्र बन चुका है जो मानवता के लिए सबसे बड़ा

ISSN 2277-5587

खतरा है। भारत ने सभी देशों से एकजुट होकर आतंकवाद को जड़ से मिटाने के लिए पुराने मतभेद भुलाकर, पुराने समीकरण तोड़कर और एहसानों को भूलाकर कारगर रणनीति बनाये जाने की आवश्यकता पर बल दिया।

भारत ने बलुचिस्तान के साथ-साथ सिंधु जल समझौते पर पुन: विचार का संकेत देकर पाकिस्तान पर दबाव बनाने का सही तरीका निकाला है। सितम्बर 1960 को भारत और पाकिस्तान के बीच पंजाब और कश्मीर की नदियों के जल बंटवारे पर विश्व बैंक की मध्यस्ता से समझौता किया गया था। अब जबकि पाकिस्तान की सिंध विधानसभा ने यह प्रस्ताव पारित किया है कि सिंधु नदी समझौते पर पुन: विचार हो। एक अच्छा अवसर समझकर भारत ने जल कूटनीति का प्रयोग करते हुए कहा कि भारत और पाकिस्तान के बीच सम्पूर्ण नदी समझौते की समीक्षा होगी। भारत इसे रद्द करने के बजाय दूरगामी नीति के तहत नदी के पानी का इस्तेमाल एक हथियार के तौर पर कर सकता है। भारत यह जानता है कि पाकिस्तान की जनता को यह मसला प्रभावित कर सकता है। भारत ने इसका एक राजनीतिक हथियार के तौर पर इस्तेमाल करने का साफ संकेत पाकिस्तान को दिया है। भारत ने पाकिस्तान को आईना दिखाते हुए एवं लगभग उसी की भाषा में जवाब देते हुए न केवल बलुचिस्तान एवं सिंधु नदी समझौते मसला उठाया बल्कि एक कदम आगे बढ़ते हुए पाकिस्तान की अवाम और आतंक को पनाह देने वाले उसके हुक्मरानों के बीच एक लकीर खींचते हुए वहाँ की जनता का आह्वान किया कि ''वह गरीबी और बेरोजगारी की जंग में'' उसके साथ आये।

भारत ने सर्जिकल स्ट्राइक के माध्यम से पाकिस्तान को करारा संदेश दिया है कि यदि उसने आतंकवादियों को शरण एवं सहायता देना बंद नहीं किया तो वह पाकिस्तान के अन्दर जाकर भी कार्यवाही करने से नहीं डरेगा। अफगानिस्तान, यूएई, ईरान और सऊदी अरब के करीब जाकर भारत दरअसल बोआ अजगर की तरह पाकिस्तान को हमले से पहले घेर रहा है। भारत ने पाकिस्तान के साथ व्यापारिक संबंधों की समीक्षा की बात भी कही है जिसमें सबसे पंसदीदा देश का दर्जा भी शामिल है। भारत ने पाकिस्तान को जमीन दिखाने के लिए न केवल सार्क सम्मेलन में भाग न लेने का निर्णय लिया अपितु दूसरे सदस्य राष्ट्रों को भी ऐसा करने के लिए राजी कर लिया जिसके कारण मजबूर होकर यह सम्मेलन रद्द करना पड़ा। भारत की यह कूटनीतिक जीत है। यह भारत की आक्रामक, यथार्थवादी एवं समयानुकूल नीति है जिसके आगे चलकर दूरगामी परिणाम दिखाई देगें।

पाकिस्तान को कड़ा सन्देश देने के साथ अपनी रणनीति में व्यावहारिक बदलावों का संकेत देने के बाद भी भारत ने पाकिस्तान के साथ रिश्ते सामान्य बनाने के दरवाजे खुले रखे है। बशर्ते वह भारत को उकसाना बंद कर देवे। जैसाकि एक वरिष्ठ अधिकारी ने कहा है कि, ''हमने संयम की नहीं, रणनीतिक उदासीनता की नीति को त्यागा है। हमने पाकिस्तान में कड़ा सन्देश भेजा है कि हम कडे तरीके से और सकारात्मक रुख से अपनी शर्तो को रख रहे है। अगर वे और आगे आते है तो हम और ज्यादा खुलने को तैयार हैं- सम्पर्क, संचार यहाँ तक कि हम उन्हे बिजली भी बेच सकते हैं। अगर वे सोचते है कि वे आतंकवाद की नीति को कायम रख पायेंगे, तब तो उसकी कीमत चुकानी होगी।''[14]

मजबूत ढाल का निर्माण

पाकिस्तान के फौजी खुफिया तंत्र के भारत में सैन्य ठिकानों पर हमले की नई रणनीति को ध्यान में रखते हुए भारत ने अपने सैन्य ठिकानों को सुरक्षित रखने के लिए मजबूत ढाल के निर्माण पर ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके लिए भारत को अपनी आन्तरिक सुरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाना होगा ताकि नागरिक एवं सैन्य ठिकानों पर फियादीन हमलों को रोका जा सके। भारत ने इस दिशा में ठोस कदम उठाने भी शुरु कर दिये है। जनवरी, 2016 में दीर्घकालीन समाधानों को सुझानें के लिए सेना के पूर्व उप-प्रमुख लेफ्टिनेंट जनरल फिलिप कैंपोस की अध्यक्षता में एक कमेटी का गठन किया है।[15] समिति ने मानव सुरक्षा, बुनियादी ढ़ाचा और परिसर सुरक्षा और प्रतिक्रिया का तंत्र मजबूत करने के लिए उपयोगी सुझाव प्रस्तुत किये है।[16]

उपसंहार

आजादी से पूर्व भारतीय उपमहाद्वीप का अभिन्न अंग रहा पाकिस्तान आज भारत की शान्ति एवं सुरक्षा के लिए प्रमुख चुनौती बन गया है। कश्मीर में जारी आतंकवाद को पालने एवं पोसने में पाकिस्तान की अहम भूमिका है। अंग्रेजो द्वारा पैदा की गयी साम्प्रदायिकता की जिस विष बेल ने भारत का विभाजन कर वाया उसी के सहारे वह कश्मीर को पाने का खवाब देख रहा है।

इसमें कोई दो राय नहीं है कि कश्मीर का मुद्दा भारत के लिए बहुत अहम और नाजुक है। कश्मीर को भारत भले ही अपना आन्तरिक मामला मानता हो परन्तु न तो पाकिस्तान एवं न ही महाशक्तियां ऐसा मानती है। कश्मीर समस्या का हल भारत और पाकिस्तान को साथ मिलकर निकालना होगा। भारत को उन कारणों को ढूढ़ना और मिटाना होगा जिनके चलते कश्मीरी नवयुवक भ्रमित होकर आतंक का दामन पकड़े हुऐ है। कश्मीरियों को राष्ट्र की मुख्य धारा में जोड़ने के लिए तथा आतंक को जड़ से मिटाने के लिए भारत को अपनी आर्थिक, सैनिक एवं कूटनीति के मोर्चों पर एक साथ मिलकर काम करना होगा। भारत सरकार ने कश्मीर के विकास के लिए विशेष आर्थिक पैकेज की घोषणा की है। अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी का आतंक से सीधा संबंध होता है। भारत सरकार का यह प्रयास है कि कश्मीरी युवकों को शिक्षा एवं रोजगार के पर्याप्त अवसर मिले ताकि अज्ञानता एवं बेरोजगारी से दो चार होकर वे आतंक का दामन नहीं

पकडे। भारत को अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर पाकिस्तान को बेनकाब करना होगा। साथ ही पाकिस्तान चीन एवं रुस की बढ़ती हुई नजदीकियों से सतर्क रहना होगा। चीन भारत के विरुद्ध पाकिस्तान को मोहरे के रुप में इस्तेमाल कर सकता है। भारत को अपनी कूटनीति एवं सैन्य शक्ति के बल पर पाकिस्तान जैसे दुराग्रही राष्ट्र से निपटने के लिए मजबूत ढाल का निर्माण करना होगा।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *त्यागी, अनुपम (डॉ.) : भारत पाकिस्तान संबंध, पृ. 1-2*
2. *टाइम्स ऑफ इण्डिया : जनवरी, 10, 1994*
3. *त्यागी, अनुपम (डॉ.) : भारत पाकिस्तान संबंध, पृ. 1-2*
4. *गहलोत, एन. एस. एण्ड सत्संगी, अनु : इण्डो-पाक रिलेशन, पृ. 13*
5. *टाइम्स ऑफ इंडिया : जनवरी, 10, 1994*
6. *रासेल ब्राइन : द इण्डो-पाक कान्फ्लिक्ट, पृ. 44*
7. *चौधरी, जी. डब्लू.: पाकिस्तान रिलेशन विद इंडिया, पृ. 54-55*
8. *उर्मिलेश : कश्मीर विरासत और रियासत, पृ. 28*
9. https://hi.wikipedia.org/wiki
10. https://epaper.Jansatta.com.
11. *इंडिया टूडे : 19 अक्टूबर, 2016 पृ. 18*
12. *मिश्रा, आशुतोष : इंडिया पाकिस्तान कमिंग टू टर्म्ज, पृ.43*
13. *इंडिया टूडे : 19 अक्टूबर, 2016 पृ. 13 (बोआ कंस्ट्रिक्टर दक्षिण अमेरिका में पाया जाने वाला एक विशाल अजगर है, जो अपनी गुंजलक में अपनी शिकार को चौतरफा जकड़कर उसका दम निकाल देता है।)*
14. *इंडिया टूडे : 19 अक्टूबर, 2016 पृ. 14*
15. *दीक्षित, जे. एन.: इंडियाज फॉरेन पॉलिसी एंड इट्स नेबर, ज्ञान पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।*
16. *गुप्ता के. आर.: इंडिया पाकिस्तान रिलेशन विद स्पेशल रेफरेंस टू कश्मीर, अटलांटिक पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली।*

ISSN 2277-5587

Renewable Energy is Sustainable?

Shubhra Tiwari
Lecturer, S.M.B. Govt. P.G. College, Nathdwara (Rajsamand)

shodhshree@gmail.com

Abstract

All things available on the face of the earth cannot be placed in the class of resources. But the things which are helpful in the supply of man's endless need are included in resource list. Renewable technology produces sustainable, clean energy from resources such as sun, the wind, plants and water. The primary form of solar energy are heat and light. In multiple ways, sun light and heat are transformed and absorbed by the environment. Some of these transformation result in renewable energy flows such as biomass and wind. Renewable energy has the potential to reduce pollution, slow global warming, create new industries and jobs. But it is important to understand the environmental impacts associated with producing power from renewable sources such as wind, solar, geothermal, biomass etc. The environmental impacts depend on the specific technology used, the geographic location and a number of other factors. By understanding the current environmental issues associated with renewable energy sources, we can take steps to effectively minimize these impacts.

Key Words: *Environment, Renewable Energy, Solar Energy, Sustainable Energy, Biomass Energy.*

The term 'Environment' etymologically means surroundings. It includes abiotic (land, air and water) and biotic (plant and animals including man) compounds. Environment is the source of life on earth and is not only directs but also determines the existence, growth and development of mankind and its activities. As society developed, man's impact on environment grew in scope and strength. There was the age when man lived in forests and caves but today the scenario is completely changed. The revolution in science and technology along with economic progress has increased man's ability to use natural resources more efficiently and due to all this nature has been increasingly damaged and restorative. Capabilities have progressively weakened which has affected not only the quality of human life but even the very existence of life.

Resources :– All things available on the face of the earth cannot be placed in the class of resources. But the things which are helpful in the supply of man's endless needs are included in resource list. All resources are environmental gifts to mankind. Accessibility and adequate supply of resources are two important points to be considered. Resources or sources can be classified on the following basis –

(1) On the basis of continuity-

(i) Renewable sources

(ii) Non-renewable sources

(iii) Recyclable sources

(2) On the basis of origin-

(I) Biotic sources

(ii) Abiotic sources

(3) On the basis of objective-

(i) Energy sources

(ii) Raw material

(iii) Food stuff

Renewable energy sources - Renewable energy sources or conventional energy sources are continuously replenished by natural processes. These are sources which can use as much as desires without fearing that the supply will be exhausted. They may be called as Inexhaustible energy sources for example solar, wind, geothermal, biomass and hydropower. Moreover, the most important thing associated with these energy resources are that they create much less pollution than non-renewable sources.

Solar Energy – Solar energy is the energy is in sunlight. It has been used for thousands of yars in many different ways by people all over the world. As well as its traditional human uses in heating, cooking and drying, it is used today to make electricity where other power supplies are absent, such as in remote places and in space. It is becoming cheaper to make electricity from solar energy and in many situations it is now competitive with energy from coal or oil. Solar energy is also called "Heat Trapper" as it is automatic, non-mechanical sun ray trapper. This Sun Trapper like devices was used by soldiers during WWII for heat requirements in the army and enemy directions. Solar energy is used today in a number of ways-

(I) As heat for making hot water, heating buildings and cooking.

(ii) To generate electricity with solar cells or heat engines.

(iii) To take the salt away from salt water.

(iv) To use sun rays for drying clothes.

The main benefit of solar energy is that it does not produce any pollutants and is one of the cleanest source of energy. It is a renewable source of energy, requires low maintenance and are easy to install. The only limitation that solar energy posses is that it cannot be used at night and amount of sunlight that is received on earth depends on location, time of day, time of year and weather conditions. Solar energy refers to energy from the sun. The sun has produced energy for billions of years. It is the most important source of energy for life forms. It is a renewable source of energy unlike non-renewable sources such as fossil fuels.

Solar energy is the most readily available and free source of energy. Solar energy can be utilised through two different paths – solar thermal route and solar electric (solar photovoltaic) routes. Solar thermal route uses the sun's heat to produce hot water or air, cook food, drying materials etc. Solar photovoltaic uses sun's heat to produce electricity for lighting home and building, running motors, pumps, electric appliances and lightening.

Solar energy does not create any pollution and is widely used by many countries. It is renewable source of power since sun will continue to produce sunlight all the years. Solar panels which are required to harness this energy can be used for long time and require little or no maintenance. Solar energy proves to be insufficient in colder regions which do not receive good sunlight. It cannot be used during night. Solar energy advantages are much more than its disadvantages which make it as a viable source of producing alternative energy.

Wind energy – Another alternate energy natural resource that is renewable and has the potential to solve the energy crisis is wind energy.

Wind energy is basically harnessing of wind power to produce electricity. The kinetic energy of the wind is converted to electrical energy. When solar radiation enters the earth's atmosphere, different regions of the atmosphere heated to different degrees because of earth curvature. This heating is higher at the equator and lowest at the poles. Since air tends to flow from warmer to cooler regions, this causes what

we call winds and it is these airflows that are harnesses in wind mills and wind turbines to produce power. Unlike solar energy, this cannot be transported or used directly. However, it has bought us one step closer to closing the gap between demand and supply, it is clean and produces no pollution.

Wind energy can only be used in areas which experience high winds which mean that it cannot be used as a source to extract energy anywhere on earth. They sometimes create noise disturbances and cannot be used near residential areas. These disadvantages have made the use of wind energy to particular regions only.

Biomass Energy – Biomass energy is the alternative energy that is contained within plants and animals. Biomass energy is the energy that is derived from organic matter of plants and animals. Biomass in the form of dead plants, trees, grass, leaves, crops, manure, garbage, animals waste can be a great source of alternative fuels that can be used to replace fossil fuels. Plants make use of process called photosynthesis that converts energy from the sun into chemical energy. This energy gets transferred to animals when they eat plants. When plants and animals waste are burned, the carbon dioxide and waste stored inside them is released back into the atmosphere. This is why biomass energy is said to be renewable.

Biomass energy is widely available all over the world. Organic waste in the form of dead leaves, grass and trees, animal carcasses are available in abundance and can be used to produce biomass energy. As long as organic matter from plants and animals are going to exist, we are never going to run out of biomass energy.

Bio mass is a renewable energy resource derived from the carbonaceous waste of various human and natural activities. It is derived from numerous sources, including the by-products from the wood industry, agricultural crops, raw material from the forest, household wastes etc.

Biomass does not add carbon dioxide to the atmosphere as it absorbs the same amount of carbon in growing as it releases when consumed as a fuel. Its advantage is that it can be used to generate electricity with the same equipment that is now used for burning fossil fuels. Biomass is an important source of energy and the most important fuel worldwide after coal, oil and natural gas. Bio-energy in the form of bio gas, which is derived from bio mass, is expected to become one of the energy resources for global sustainable development.

Hydro Energy – Hydrogen is the most common element on earth as it is available with water and 70% of earth is covered with water. Once hydrogen is separated from water, it can be used to generate electricity. Hydrogen is completely renewable as it is extracted from water and is available in abundant supply. The potential energy of falling water captured and converted to mechanical energy by water wheels, powered the start of industrial revolution. Wherever sufficient head or change in elevation, could be found, rivers and streams were dammed and mills were built. Water under pressure flows through a turbine causing it to spin. The turbine is connected to a generator, which produces electricity.

Hydrogen energy when burnt does not leave any toxic gases in the atmosphere. There are no harmful emissions and is environment friendly. It is completely renewable and can be produced over and over again.

Ocean Energy – Ocean energy possess massive potential as around 70% of the earth's surface is covered with water. This is the reason energy produced by this source of energy can be used on much wider scale than any other source of energy. Ocean energy draws on the surface of ocean waves, tides or on the thermal energy (heat) stored in the ocean. The sun warms the surface water a lot more than the deep ocean water and this temperature difference stores thermal energy. The ocean contains two types of energy, thermal energy from the sun's heat and mechanical energy from the tides and waves. Ocean thermal energy is used for many applications, including electricity generation.

Sustainable Energy – Sustainable energy is one which is able to meet the growing demand of today's people without compromising the demand of the people that would require it in future. All renewable energy sources like solar, wind, geothermal, hydropower, wave and tidal power are forms of sustainable energy. Renewable energy sources have low environmental impact, widely available and are naturally replenished.

An effective protection and improvement of environment requires a planned as well as rational utilisation of natural resources. Therefore thorough study of environment and its component is necessary not only for the knowledge and utilisation of resources but also for the planning better utilization and conservation and mainly for the sustainable development.

Rising prices, increasing air pollution and scarcity of fuels have forced scientists to look for alternative fuel sources. All energy sources which can be naturally replenished are considered to be renewable energy sources. Most of the times these two terms are used inter changeably. There is some sort of common belief that all renewable energy sources are sustainable and there is no difference between the two terms. But this is not true. Renewable energy includes all those sources that do not cause any harm to environment and have minimal impact on the surrounding environment.

Sustainable is much wider term and includes all type of energy sources. Sources such as solar, wind geothermal, hydropower, wave tidal and hydrogen are renewable as well as sustainable since they have minimum impact on the environment whereas nuclear energy or nuclear power is not considered as renewable but it is sustainable as it pollutes the environment. This is the only reason that it is said that all renewable energy sources are sustainable but all sustainable energy sources are not renewable.

There is an urgent need of using renewable energy resources at both domestic and industrial level to protect environment and sustainable development.

References

1. *Balat, M., Review of modern wind turbine technology, Energy Sources, P Recovery, Utilization and Environmental Effects, 2009, 31(17), 1561-72.*
2. *Caglar, A., Ozmen, H., Hydrogen : as an attractive fuel in future, Energy Educational Science and Technology, 2000, 6, 1-18.*
3. *Fahmy, F.H.,Abdel, Rehim, Z.S., Hydrogen gas production and utilization as electricity using a renewable energy source, Energy Source, Part A, Recovery, utilizationand environmental effects, 1999, 21(7), 629-41.*
4. *Goswami, D.Y., Vijayaraghavan, S., Lu, S., Tamm, G., New and Emeging developments in solar energy, Solar Energy 2004 , 76,33-43.*
5. *Pathak, B.S., Patel, S.R., Bhave, A.G., Bhoi, P.R., Sharma, A.M., Shah, N.P., Performance evalution of an agricultural residue based modular throat type gasifier for thermal application, Biomass and Energy, 2008,32, 72-79.*
6. *Pryor, S.C., Barthelmie, R.J., Climate change impacts on wind energy - a review, Renewable and sustainable energy reviews 2010, 14, 430.*
7. *Rathore, N.S., Panwar N.L., Renewable energy sources for sustainable development, INDIA New India Publishing Agency 2007.*
8. *Singh, S., Bhatti, T.S., Kothari, D.P., Indian scenario of wind energy, problems and solutions, energy sources part A, Recovery, utilization and environmental effects 2004, 20(9), 811-819.*

Economic Impact of Mgnrega : A Case Study of Nine Villages of Ajmer District

Dr. Shiv Dayal Singh
Professor, Maharshi Dayanand Saraswati University, Ajmer
Anant Phagna
Research Scholar, Maharshi Dayanand Saraswati University, Ajmer

shodhshree@gmail.com

Abstract

Years of deprivation, discrimination and lack of opportunity has put Schedule Caste(SCs) and Schedule Tribe(STs) at the bottom of Indian society. All the poverty alleviation and employment generation programmes failed to improve their economic condition. Though MGNREGA has no specific provision for SCs/STs but their overwhelming participation in the programme shows that it is beneficial to them. The study focuses on economic impact of MGNREGA in terms of income, employment, expenditure pattern and migration on them by collecting primary data from Ajmer district and tries to find out the impact of MGNREGA on their economic condition.

Key Words : *MGNREGA , Schedule Castes, Schedule Tribes.*

Rural economy is the backbone of the country by providing employment to half of the country labour force in agriculture and it's allied sectors. The share of agriculture in country Gross Domestic Product is continuously decreasing but the percentage of labour force dependent on it is not decreasing in same proportion resulting in large scale unemployment or disguised unemployment in rural areas. Moreover, growing rural population, inadequate expansion of irrigation facilities, slow downing of capital formation in agriculture sector, fragmentation of holdings, improper marketing of agriculture products, lack of diversification in agriculture and lack of skills for alternative employment has endanger livelihood security in rural areas. Poverty alleviation and employment generation in rural areas has been the focus area of Indian planners. From 70's onwards specific programmes were started to achieve the above two objectives since then thousand and crores of rupees has been spent but all have met with little success.

About MGNREGA

MGNREGA is India's first employment guarantee programme with assured minimum 100 days of unskilled work per person per family or unemployment allowance in case if the above condition is not fulfilled. The act came into force on February 2,2006 and was implemented in three phases. In phase I, it was implemented in 200 most backward districts of the country. In phase II, (2007-08), 130 additional districts were covered. In phase III (april 2008 onwards) remaining rural districts were covered. The act has the following objectives :

- Providing not less than hundred days work as guaranteed wage employment in a financial year to every household in rural areas per demand resulting in creation of productive assets of prescribed quality and durability.
- Strengthening the livelihood resource base of the poor.

- Proactive ensuring social inclusion and
- Strengthening Panchayat Raj Institution.

The programme is unique of it's kind because of guarantee attached to it. It was believed that programme will make a dent on rural poverty by improving the economic condition through generation of additional income.

Objectives of The Study

Schedule Caste(SCs) and Schedule Tribes(STs) are the most disadvantageous section of the Indian society. Poor asset base, lower level of literacy and caste discrimination in matter of employment has further aggravated their problem. The present study tries to find out the economic impact of MGNREGA ON SCs/STs.

About Ajmer

Ajmer is situated in the centre of Rajasthan and has a total population of 25,83,052 out of which 15,47,642(59.9%) is rural population (census 2011). The SCs/STs population is 18.5/2.5 percent respectively. In Ajmer district among the workers the percentage of cultivators, agriculture labourers, workers in household industry and Other workers (category of workers) are 28.4,13.8,3.4 and 54.5 percent respectively. Ajmer was selected in the third phase of the MGNREGA programme and was among the top districts to implement NREGA (economic times april 20,2008) in Rajasthan.

Methodology

There are nine blocks in Ajmer district and each block has more than twenty villages. The secondary data regarding employment share of SCs/STs were obtained from MNREGA website. Primary data were obtained through field survey. From each block one village was surved on the condition that SCs/STs has registered them for work under MGNREGA. After selection of villages the list of job card holders was obtained and twenty SCs/STs MGNREGA workers were randomly selected. Thus sample size consist of 180 MGNREGA workers. The following table shows blocks and villages under study :

Block	Village
Silora	Bandar sindri
Srinagar	Rusulpoora
Masuda	Devmali
Bhinay	Kumhariya
Pisangan	Mangliawas
Jawaja	Barakhera
Kekri	Sawar
Aria	Aria
Sarwad	Ajgara

Socio – Economic Condition of Workers

Social and economic condition of the person surveyed were sought to assess the impact of **MGNREGA** .

Table 1 : Social – Economic Condition of MGNREGA Workers

Category	Number of MNREGA Workers
Dependence on Agriculture	117
Casual workers	134
Literate	42
Migration	66
Caste Discrimination	158

*Source : Field Survey

65 percent of the total responded that in absence of MGNREGA their primary source of occupation is agriculture and it's allied activities. 74 percent denied of having any permanent source of income and work as casual labour. 23 person responded that they are literate in the sense that they are able to read and write. 37 percent migrates to nearby urban area on daily basis in search of employment and 88 percent said that they face caste discrimination in matters of employment at village level.

Impact of MGNREGA

Table 2 : Employment Generated During The Financial Year 2016-17 till last Reporting Month

S.No	Block	SCs	STs	Total
1	Silora	202159(20.26%)	8911(0.89%)	997692
2	Srinagar	168224(14.43%)	16355(1.40%)	1165451
3	Masuda	52454(8.48%)	15835(2.56%)	618012
4	Bhinay	157366(19.26%)	30525(3.73%)	816650
5	Pisangan	235963(13.74)	11028(0.64%)	1716509
6	Jawaja	45119(7.34%)	1359(0.22%)	614475
7	Kekri	198786(25.75%)	99669(12.91%)	771690
8	Aria	148759(21.00%)	17074(2.41%)	708064
9	Sarwad	181329(19.41%)	35058(3.75%)	933848
10	Total	1390159(16.66%)	235814(2.82%)	8342391

*Source : www.nrega.nic.in

The data shows that SCs share in total employment generation is 16.66 percent which is slightly less than their percent population in Ajmer whereas STs share is 2.82 percent together their share is 19.48 percent.

Main source of livelihood in survey area is agriculture and casual works. MGNREGA has augmented the income of workers.

Table 3 : Share of MGNREGA Income in Total Annual Income

Annual Income from MGNREGA \ Total Yearly Income	Upto Rs 25000	More than 25000
0 – 5000	50(27.77%)	2(1.11%)
5000 – 10000	92(51.11%)	18(10.00%)
More than 10000	14(7.77%)	0(0.00%)
Not Responded	4(2.22%)	0(0.00%)
Total	160(88.88%)	20(11.11%)

*Source : Field Survey.

The above data reveals that MGNREGA has been more beneficial to persons having income upto rupees 25000 per annum. 51 percent of the said that MGNREGA is generating income between five to ten thousand. 28 percent said share of MGNREGA income in their total income upto five thousand whereas only eight percent said MGNREGA is generating income more than ten thousand. The reason behind low percent of person getting income above ten thousand is that not all the workers complete hundred workdays. As far as workers having income greater than 25000 per annum are least interested in MGNREGA. Only 11 percent of them are working in MGNREGA and getting income upto ten thousand rupees. The persons of this category have alternative source of income, besides agriculture, which limits their participation in MGNREGA.

Table 4 : Expenditure of Income Generated through MGNREGA

S.No.	Item	Expenditure
1	Food	90(50.00%)
2	Clothing	37(20.55%)
3	Medicine	23(12.77%)
4	Education	12(6.67%)
5	Shelter	8(4.44%)
6	Transport	5(2.77%)
7	Others	5(2.77%)
8	Total	180(100.00%)

*Source : Field Survey

The findings reflects that 50 percent of MGNREGA earnings were spent on food, then second comes clothing with 20.55 percent of income spent on it, third comes medicine with a share of 12.77 percent. Together these three items cover 83.32 percent of total expenditure which clearly reflect that MGNREGA income is used in satisfying basic wants of workers like food, cloth and medicine. Education, shelter and transport has 6.67,4.44,and 2.77 percent share in expenditure respectively.

Workers migrate in search of employment. Present study finds out the impact of MGNREGA on migration. Of the total persons migrating from survey areas to nearby urban areas(66/180) responded that 80 percent of them have stop as they are able to find work in MGNREGA. On the question that why not MGNREGA has been 100 percent effective in stopping migration, workers responded that MGNREGA offer employment only for 100 days and the workers with no asset base has to migrate nearby urban areas.

Conclusion

SCs/STs are at bottom of economic ladder of the country. Constitutional provision like reservation policy has economically helped only fraction of their total population, large rural masses continues to lag behind. Though MGNREGA has no specific provision for SCs/STs but their large participation reflect the need of such programme for them. The income received is largely used in satisfying basic human wants like food and clothing. Migration is not totally stopped but MGNREGA has defiantly helped in curbing the problem. Moreover MGNREGA has found to be very effective in eliminating caste discrimination in matters of employment at village level.

Refrences

1. *www.nrega.nic.in*
2. *MGNREGA Sameeksha II (2012-14) An Anthology of Research Studies. UNDP.*
3. *Indumathi, S. and P. M. Srikantha (2011), 'Economic Analysis of MGNREGA in the Drought–prone States of Karnataka, Rajasthan', Agricultural Economics Research Review (24): 531-36.*
4. *Klonner, S. and C. Oldiges (2014), 'Employment Guarantee and its Welfare Effects in India', MGNREGA;- Taking Stock and Looking Ahead Proceedings of the International Conference on MGNREGA, 26-28 March.*
5. *Chopra, Deepta (2014), 'They don't want to work' versus'They don't want to provide work': Seeking explanations for the decline of MGNREGA in Rajasthan. Manchester, UK :Effective States and Inclusive Development Research Centre (ESID).*
6. *Sen, Kunal (2014), Success and failure in MGNREGA implementation in India. Manchester, UK: Effective States and Inclusive Development (ESID).*
7. *John, Papp and Imbert Clément (2014), Short-term migration and India's Employment Guarantee Scheme. Mumbai: Indira Gandhi Institute of Development Research*

Life Skills Education: A Way to Prepare Teachers for Holistic Education and More Hopeful Future

shodhshree@gmail.com

Bhawna
Research Scholar, Hemwati Nandan Bahuguna Garhwal (Central) University, Srinagar (Uttrakhand)

Dr. P. K. Joshi
Professor, Hemwati Nandan Bahuguna Garhwal (Central) University, Srinagar (Uttrakhand)

Abstract

Education is the means by which individuals are equipped with knowledge, skills and values that enable them to become productive citizens. Education is the most important key for the development of the individual and the nation. Among the new challenges for preparing teachers at secondary level, there is a great need of kind of education, which can integrate new and innovative method of learning and which can help adolescents to prepare themselves to face the challenges and difficulties of life. Holistic education is made up of values and ethics, creativity, health and nutrition, exposure, leadership qualities, and research abilities, and life skills education is definitely a way towards quality and holistic education, which is actually the need of an hour. With the help of life skills education, teachers can develop personality of their students and prepare future citizens to face the storm and stress of this difficult world. Life skills education is a kind of education, which not only develops students holistically but it makes students employable, by which they can sustain and maintain their jobs.

***Key words :** Holistic education, Life skills education.*

Education in its general sense is a form of learning in which the knowledge, skills, and habits of a group of people are transferred from one generation to the next through teaching, training, or research. Everywhere, education is seen as the main way of enabling individuals and nations alike to meet the ever increasing economic, technological, social and personal challenges. We expect education to prepare young people for the world of work and for economic independence; to enable them to live constructively in responsible communities; and to enable them to live in a tolerant, culturally diverse and rapidly changing society. Perhaps above all, we expect education to help young people to build lives that have meaning and purpose in a future we can scarcely predict.

This has led to re-organizing of the education systems all over the world so that they provide not only high standards of academic qualifications, including literacy and in numeracy but also inculcate skills such as creativity, communication, empathy, adaptability, and social skills, all of which are being increasingly emphasized by employers and others in the global society. More so, in this age of information explosion education systems face the ever increasing challenge of providing skills to acquire and process information as it is neither possible to provide children with all the information available, nor is it possible to predict what knowledge would be required 20 years from now, hence the focus on skills.

Definitions of Life Skills

The World Health Organization (1993) has defined life skills as "the abilities for adaptive and positive behavior that enable individuals to deal effectively with the demands and challenges of everyday life".

United Nations International Children's Emergency Fund (UNICEF) (2002) Defines life skills as "a behavior change or behavior development approach designed to address a balance of three areas: knowledge, attitude and skills".

Life skills are the complete means of our social, personal and self-managementbehaviours. These are the skills that enable us to live life effectively and "fit in" at the each and every step of human life. Life skills fulfill an important role in shaping individual personality. A good personality is nothing but just a perfect combination of hard skills and life skills.

Life skills are the kind of skills that every person need to win the race of life. Life skills help every person to know and understand themselves better, they help to live life more consciously and deliberately, attain personal satisfaction and fulfillment, and achieve their goal personally and academically.

What are The Most Important Life Skills?

Important life skills as mentioned by WHO (1997) are:

(a) **Decision-Making-** To help us make constructive decisions in our lives without ill effects on health.

(b) **Creative Thinking -** To enable us to explore the available alternatives and various consequences of our action and non-action- to respond adaptively and with flexibility to the situations of our daily lives.

(c) **Critical Thinking** - to enable us to analyze information and experiences in an objective manner.

(d) **Effective Communication** - To enable us to express our opinions, desires, needs, fears and asks for advice and help in times of need.

(e) **Inter-Personal Relationships -** To relate positively with people, keep friendly relationships for social support and for mental and social well-being and also to end relationships constructively.

(f) **Self-Awareness -** to recognize ourselves, our weaknesses and strengths, desires and dislikes.

(g) **Empathy** - to imagine what life is like for another person even in a situation that we may not be familiar with.

(h) **Coping with Emotions -** to recognize them in ourselves and others, how they affect our behaviour - to control intense ones like anger or sorrow.

(i) **Coping With Stress -** to recognize sources of stress in our lives and how they affect us.

Concept of Holistic Education

Holistic education is a discipline of education based on the premise that each person finds, meaning, identity and purpose in life through connections to the natural world, to the community, and to humanitarian values such as peace and compassion.

Everyone today is concern about the issue that how to prepare children for better future. How to provide them with the learning that they can develop in a better citizenship. Holistic education and knowledge of life skills is definitely the answer of the problem.

Figure 1. Becoming a Brilliant Star Framework

The domains might be considered as points on a star with the self and self-views central to the image and the concept of local-global-cosmic citizenship used as the amalgamation of the adult roles in which individuals engage in the modern world (see Figure 1). It shows that the domains are developed within a multi-level sociocultural

context where family, school, religious organizations, and friends, as well as the connections among them, provide the most direct influence on one's development, but that development is also influenced by larger social and cultural forces.

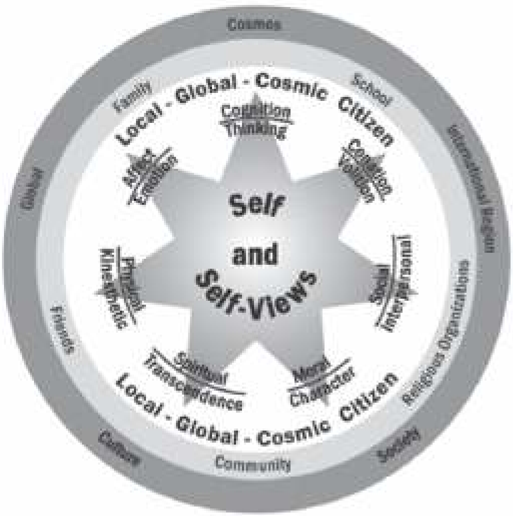

Source : Huitt, W. (2006a, June 26). Becoming a Brilliant Star: A framework for discussing formative holistic education.

Life Skills Education: Holistic Education

An education should involve learning life skills that a person will carry with them after college in order to navigate relationships and careers and be a well-rounded successful person. Aim of life skills education and holistic education is same, to make a complete individual, who knows how to survive and succeed in life and how to apply abilities in the real life scenario. Both focusses on learning through experience. Children or students literally do what they learn and learn what they do. So education through experience is the main motto of life skills education and holistic education.

Harmonization of life skills and holistic education will definitely is the foundation of a better world.

Holistic education ensures that what is studied is relevant and meaningful. Teachers in holistic schools must be creative and responsive to the individuality of students .They should teach everything in a manner that creates great joy and inspiration to others. Same is the case with life skills education.

Importance of life skills Education Programme in the Present Scenario

A person having life skills can be well adjusted to the society. An education should involve learning life skills that a person will carry with them after college in order to navigate relationship and careers & be a well-rounded, successful person. Life skills are necessary to succeeding and thriving in life. They teach us how to think logically, retaining information and not merely temporarily memorizing information, and how to apply such abilities to real world scenarios which are bound to occur.

"This skill element has to be integrated with the higher education system toensure maximum mobility"

- Krishna Kumar

Life skill education allows the youth get along with other people, able to adjust with their environment and making responsible decision.

 ISSN 2277-5587

Which also incorporate to build up their values and to communicate effectively. Life skill education is a basic learning need for all young people. It will help the young people to empower in challenging situations. By applying basic life skills in our life they becomes our strengths and these skills makes us unique as an individual. We grow personally through the practice of life skills. Practicing life skills simply means personal growth and personal empowerment.

The real object of education is to give children the resources that will endure as well as the life endures.

- Sydney smith

Educational Benefits of life Skills

- Strengthens teacher pupil relationship
- Leads to desirable behavior change
- Improves disciplines in schools
- Reduces learners problems like truancy, absenteeism, drug and substance abuse and teenage pregnancy
- Helps in character building
- Develop creative, expressive and innovative individuals
- Guide learners to make informed and responsible decisions about their health and environment

It is the responsibility of the educators as well as parents, to help the individual go through systematic guidance and training so that the individual becomes all round personality and also successful in life. Here life skills play an important role in molding of an individual.

Relevance of Life Skills Education Program for Teachers

Educational institutions especially teacher education institutes are the nurseries of values and ideals of life in every country. Without values and ideals, hundreds of classrooms and well-furnished infrastructure is of no use. Teachers are creators of futures, if teachers are having good amount of knowledge and awareness about life skills, only then, they can prepare globally competitive teachers and future citizens. Life skills are very important for teachers because effective communication, having and maintaining good relationships with students, to handle classroom problems effectively, to show organized behaviour in front of students, only life skills can help a teacher.

Life skills provide teachers with the content that is interesting, relevant and useful. Which allow them to teach things that are relevant to their students, their present lives, immediate future and the long term too.

Working in a school is very much different than other professions. Generally people give their opinion about the teaching profession that teaching is easier than other profession but in my personal opinion teaching is a kind of profession which you can take on the basis of your academics or professional qualification ,but as a teacher daily you have to face and deal with lots of students who are different in not only their habits and background but also in their abilities and problems. as a teacher it's your duty to teach them how to do well in the classroom and of course outside the classroom. so we can say that life skills programs are compulsory for continuous professional development of teachers. If training modules are properly develop for teacher education to provide proper training to teachers then we can prepare our learners or students to cope with the challenges and difficulties of life properly.

Good teaching has many components and skills and knowledge is essential part of these components. Personality and presence in the classroom makes a great impact on students and on their learning. Our personality, our life skills are key to teaching mastery because it helps us to bring our best in the classroom in front of the students. In the words of Palker Palmer-

"You teach who you are"

Life Skills Based Teaching

The best way to develop life skills is to learn from own and other's experiences by observing others behaviors and its consequences (WHO 1994). The role of a teacher here is to provide ample

opportunities and situations to the students so that they can acquire, process and structure these experiences actively (Bandura, 1977), which is discussed explicitly in his social learning theory. Allow the children to actively participate in the teaching learning process. Teacher should provide some situations where any of the life skill can be discussed. Encourage the children to discuss about it. Brain storming sessions or group activities can be used for this. Once they have a conceptual clarity, allow them to practice the skill in different real life situations, which is the more significant component of life skill education (WHO, 1994). Teacher can encourage children to continue the practice in other situations too. This is the ideal way to teach life skills to adolescent children. (George, 2013)

Importance of Teacher as Life Skills Educator

As a teacher you play an important role for the student, not only in the classroom but beyond the classroom in the daily life also. You can have even greater impact on their lives by looking and keeping an eye on the students beyond the classroom. As a teacher you teach young ones every kind of skill useful to lead a healthy and prosperous life. Teaching is not only about teaching rules, techniques and tactics but it is teaching about life skills. Skills that are important both inside the classroom and outside the classroom are Life skills. As a teacher you can teach them how to face problems and difficulties of daily life how to make decisions, how to cope with stress and about all the ways which are necessary to lead a happy and prosperous life.

Why should a teacher care about life skills?

Life skills as recommended by WHO are actually the backbone of the strong personality of teachers. It is necessary for the present teachers, that they should be perfect blend of technical and life skills. Life skills make teachers a complete individual .They not only make and shapes their personality bot they actually make them more employable and sustainable in present competitive era. Teacher should update themselves with life skills to impart their student's knowledge about life skills. It will make future generation's life effective and meaningful and with good power of understanding of complexities of life and powerfully dealing with them.

As a Teacher

As a teacher you lead the class, you are the highest authority. Every student follow your behavior and activities. so as a teacher you should be take care of your behavior in the class should be according to the life skills. As a teacher you are in a special position .You have a bond with students. Students share their daily life problems with you, so you are the person, who can teach them the right behaviour. There is need to make changes in oneself by using life skills and it is the responsibility of teacher educators to develop life skills among teacher trainees.

As a Life Skills Trainer

As a teacher and as a life skills trainer you can make a difference in students life. You can teach them and educate them about the problems of their life like hiv/aids, drug abuse, sexual harassment, alcohol use etc. If as a teacher you teach them properly about life skills and their use you can make students life better and reduce the stress and strains they face in their lives.

How Can a Teacher Contribute to Life Skills Training?

A teacher by sticking to the following rules makes life of student's better:

1. **By Combining Teaching and Life Skills Training**

As a teacher you can integrate life skills in your teaching. By integrating decision making, problem solving. Coping with stress and emotions. You can teach them to enjoy teaching and learning by your daily class behaviour. You can teach them indirectly, how to handle difficult situations, how to say no, how to handle peer pressure etc. By embedding the training of life skills into academic knowledge you can teach anything to your students in an effective and efficient way.

ISSN 2277-5587

2. Be a Role Model

As a teacher you should not only teach students about life skills but you should show in your behaviour these skills. In communication, in relationships, in difficult situations you should behave in a way, in which you are teaching them.

3. Student is The Main Focus

Teaching is not possible without students. A teacher should always try to know their students, their problems, and their issues. Just teaching academic material is not sufficient, you should always try to make teaching- learning process enjoyable. As a teacher you should keep regular contact with your students, off the classroom also. As a teacher you can play several roles, role of life skills educator, mentor, referrer, counselor or trainer.

Conclusion

Life skills are very important to enhance the productivity of life. They prepare individual to face the challenges and demands of life .When person possess these skills then it becomes easier for him to face the changing situations. With the help of life skills individual becomes more competitive to face the day by day increasing competition of this world. Simply we can say that life skills provide us a competitive edge. Life skills makes a person different.

So we can say that there is need to make changes in oneself by using life skills and it is the responsibility of teacher educators to develop life skills among teacher trainees, for which they need knowledge of life skills and giving knowledge of life skills with the help of technologies. So teacher education programs have to make a conscious effort in designing such courses those have a proper inclusion of life skills in different kind of subjects along with greater understanding of lesson planning with proper symbiosis of life skills.

Informally and formally teachers should try to develop the life skills in their student's behaviour along with this they should continuously try to impart knowledge about life skills to their students. So we can say that if we are giving our teacher trainees knowledge of life skills and making them aware towards the importance of life skills education in present scenario, it is sure that we are moving towards the holistic education and this will be definitely a way towards more hopeful future.

References

1. *Basic manual life skills,(world coaches beyond football) retrieved on 12 Sep2015.*
2. *Bernd Schulz, The importance of soft skills: Education beyond academic knowledge, NAWA,Journal of language and communication, June 2008.*
3. *Deshpande,V.(2014) Issues and perspectives in combining career skills and life skills in education, 21st century academic forum conference proceedings, Harvard.*
4. *George, R.C. (2013) Avenues of life skills development in higher education,GESJ : education science and psychology,no4,(26),pp3-7.*
5. *Huitt, W. (2006a, June 26). Becoming a Brilliant Star: A framework for discussing formative holistic education. Paper presented at the International Networking for Educational Transformation (iNet) Conference, Augusta, GA. Retrieved June 2010, from http://www.edpsycinteractive.org/brilstar/brilstarintro-s.pdf*
6. *Huitt, W. (2011). A holistic view of education and schooling: Guiding students to develop capacities, acquire virtues, and provide service. Revision of paper presented at the 12th Annual International Conference sponsored by the Athens Institute for Education and Research (ATINER), May 24-27, Athens, Greece. Retrieved from http://www.edpsycinteractive.org/papers/holistic-view-of-schooling-rev.pdf*
7. *Kumar,S. (2015) Role of school and life skills, Recent educational and psychological researches, issue 3 year 4, pp52-54.*
8. *Nagina,M.S.,Chawan,R.L. (2013)Relationship between yoga and life skills of education, a paper presented in national conference, retrieved on 21 Jan 2016 at 10p.m.*
9. *Pachouri,D., Yadav, A. (2014) Importance of soft skills in teacher education programme, vol 5 (1), pp22-25.*
10. *Padhi,K.P.(2014) soft skills:education beyond academics, IOSR journal of humanities and social science, vol 19 (5), pp 01-03.*

11. Reilly,P. (2014)Soft skills and personal development are key to teaching mastery, retrieved on 11 Nov 2015
12. Sanyal,S.S. (2013) Improving soft skills for making them employable, SIT journal of management, vol 3(2), and pp419-428.
13. Seema,M.(2010) life skills education –the need of the hour ,paper presented in ninth annual convention & international seminar of council for teacher education ,Kerala state centre.
14. Sunagar, G.M. (2014) Soft skills in professional development for effective teaching, global online electronic international interdisciplinaryresearch journal vol 3, pp-326-331.
15. The guardian, retreived on 12 dec 2015 at 10:15 p.m.
16. The Hindu, April 2 2013, retrieved on 12 Dec 2015 at 10:15 p.m.
17. Vijaya, S.N. (2014) Soft skills and teacher accountability in the context of quality education, International Journal of Educational and psychological research vol3 (1), pp78-81.

Internet resources/webliography

- www.professional development of teachers
- http://www.skillsyouneed.com/general/life-skills.html#ixzz2oikFZzuk
- http://www.cbse.nic.in/c ce/life_skills_cce.pdf
  http://www.indiaeducationreview.com/article/current-educational-system-imparting-life-skillseducation
- http://en.wikipedia.org/wiki/Life_skills-based_education
- http://www.education.com/reference/article/Ref_Life_Career_Skills/
- http://www.preservearticles.com/2011111517239/ essay-on-the-concept-and-importance-oflife-Skill-education.Html
- http://www.preservearticles.com/2011111517266/free-essay-on-the-concept-of-life-skilleducation.html
- http://www.icrier.org/pdf/ICRIER_WP180__Higher_Education_in_India_.pdf

 ISSN 2277-5587

Cultural Fairs Can Boost The Tourism Traffic in Marwar

Dilip Panwar
Lecturer, S.B.R.M. P.G.Govt. College, Nagaur

shodhshree@gmail.com

Abstract

A big number of Cultural fairs are organisedat many villages and towns of Marwar on the festivals of Teej, Shivratri, Gangaur, Holi, Sheetla Ashtami, Dashahara, Nagpancami etc. Most of the fairs of land are linked with religious and social causes, these fairs may be termed as Cultural fairs. All cattle fairs are also associated with religious heroes or deities, so they are also a kind of Cultural Fairs. Cultural Fairs may be an effective media of attracting Indian and foreign tourists to this region. Various departments and agencies of Rajasthan Government should come forward to avail this opportunity. Government may frame a separate policy for the development of Cultural fairs.

Keywords: *Cultural Tourism, Cultural Fairs, Cattle Fairs, Commercial Fairs etc.*

Marwar is situated in the Great desert of Thar and have a great history with it. Marwar don't possess Casinos of Las Vegas, the Joyrides of Disneyland, the Samba Dances of Rio De Janeiro, the Skyline of London and Paris or even the Nightlife of Bangkok. But Marwar has great potential of cultural tourism. Most of the foreigners come here to see and know about the culture of this ancient land, which means visiting monuments, palaces, forts, temples, fairs, festivals, experiencing the cuisine, colours, customs, traditions, rituals, folk art, dance, music, handicrafts, artefacts, or simply to experience the mystic land.Unfortunately, very small work has been done to explore the cultural beauty and destinations in Marwar. Cultural fairs of Marwar can help to boost the tourist traffic in Marwar region.

Human beings are by their nature fond of festivals and as social beings they are also fond of congregating, gathering together and celebrating occasions jointly. Festivals thus culminate in fairs. Some fairs and festivals are mythological and are based on ancient traditional stories of gods and goddesses, while others commemorate the memories of some illustrious persons of distinguished bravery or persons with super-human powers. Fairs and festivals have always been important parts of our social fabric and culture.

Although since the beginning of history, foreign travellers and historians have recorded the principal marts and entrepots of commerce in India and have even mentioned important festivals and fairs, and articles of special excellence available here, no systematic regional inventory was attempted until the time of Dr. Francis Buchanan Hamilton in the beginning of the 19th century. One of the tasks set before him by a resolution of the Governor-General-in-Council in 1807 A.D. was "to examine with as much accuracy as local circumstances will admit", "an account of the various kinds and amount of goods

manufactured in each district... the ability of the country to produce the raw materials used in them... how the necessary capital is procured, the situation of the artists and manufacturers, the mode of providing their goods... commerce, the quantity of goods exported and imported in each district; the manner of conducting sales, especially at fairs and markets."[1]

Most of the fairs are linked with religious and social causes, on the ground of this association, these fairs may be termed as Cultural fairs. The fairs in which cattle are sold and purchased may be termed as cattle fairs. On the behalf of this demarcation, fairs may be classified in two groups- Cultural fairs and Cattle fairs but this demarcation may not be taken as perfect as most of cattle fairs are also associated with religious heroes or deities. Geendaram Verma has described that Cultural fairs are those, in which folk dances and folk songs are organised[2] but according to Mohanlal Gupta there is no fair organised in Rajasthan in which programmes of folk dances and folk songs are not organised. So every fair in Marwar, is a Cultural fair including the cattle fairs also. Most of the cattle fairs are started in the memory of deities like Tejaji, Mallinathji or Parshvnathji. Even cattle fairs like Raniwara, Sanchore, Merta City and Nagaur, which are not associated with any particular deity, women-folks come singing in groups to visit these fairs. Tourism department and other organisations also conduct the cultural programmes of folk dances and folk songs. So the cattle fairs are also cultural fairs. A chili fair is held in Manasar village of Nagaur district, when the Cattle fair of Nagaur is over. This fair may also termed as commercial fair. These fairs are held at many villages and towns of Marwar on the festivals of Teej, Shivratri, Gangaur, Holi, SheetlaAshtami, Dashahara, Nagpancami etc. These fairs are normally held for one day or for a few hours only. People gather at one fix place to enjoy the fair and disburse till the evening. Women, children and youngsters enjoy swinging, purchasing, eating, chatting and playing. Many fairs of local nature are organised in Marwar since very old time, like- Veer puri Fair (Mandore, Jodhpur), Sheetala Mata Fair (Kaga, Jodhpur) and BhataGair (Ahore, Jalore district).

Nagpanchmi Fair is held in Sire temple of Jalore on 5th day of dark half of Bhadawa. A fair of Nagpanchami is organised in Mandore garden, most probaly since the time of Nag rulers.[3] Kajali Fair is held in Jalore on fourth day of bright half of Bhadawa. People of Salawi (Julaha) cast pass through the market and streets, singing and dancing. They go to door to door, holding the pots of Jawaras in their hands and take Sagun. Mataji Ka Mela is held in Modaran Village of Jalore district on 8th day of bright half of Chaitra. Dadhimati mata ka mela is organised in Chaitra and Asoj Navratris near Mataji's temple of Goth-Manglod village of Nagaur district. 4Somawatiamavasya fair is organised in Chohatan, 32kms away from Barmer. A big fair is organised at BadaliBheru temple Jodhpur from 13th to 15th day of Shuklapaksha of bhadawa. Bhaugishailparikrama fair is organised every third year in Purushottam month and the procession also stays here for a night.[5]

Dheenga Gawar fair is held on 3rd day of bright half of the Vaishakh. It is celebrated in night by women of Sunar, Brahmin and Maheshwari casts in Jodhpur city. Women wear different type of fancy dresses and they look like Lord shiva, Parvati, Indra, Narada, Rawana and other mythological figures.

Narsingh Chaturdashi fairs are held on 14th of bright half of Vaishakh in Banshi wale ka Mandir Nagaur, Gangshyam ji kamandir Jodhpur and other small towns like Pali and Merata City. This fair is held for 2 to 3 hours, and known as Malukaka Mela.A flower festival or Phool Mandali is also organised at Kala-Gora Bheronji in Mandore garden by all the florists on Amavasya (fifteenth dark day) of bhadawa and Posh months.

Baba Ramdev Fair is held every year for ten days from the second day of the bright half of bhadawa to eleventh day of the bright half of bhadawa.[6] Ramdeoji is worshipped by all Hindu communities but by the Scheduled Castes whom

ISSN 2277-5587

he specially patronised, he is worshipped more ardently. Mostly the Bhambis, the Meghwals, the Chamars and the Banjaras worship him apart from other Muslims and Hindus.

ParshvnathjikaMelais dedicated to Jain TeerthankarParshvnathji but followers of all religions participate in it. It is organised from 10th day of bright half of Bhadawa to 11th bright half of Bhadawa at Merta Road. Nakora Parshvanath Fair is held on 10th of dark half of Posh month. Muhammadan Fairs are normally known as Urs.PeeronkaMela is held inPahadpura Village of Jalore district in Phagun on the occassion of Urs at a dargah situated under a Jal tree. Yearly Urse of Sufi saint Tarekin is held on JamadiAwwal.

These cultural fairs have tremendous potential to boost tourist traffic in Marwar. These fairs allow foreigners to experience and witness unique cultural traits as expressed therein. The very presence of thousands of camels alongside the rural folks dressed in their traditional attire in animal fair at Nagaur is enough to keep the foreign tourists busy with their cameras. Their curiosity and thrust for witnessing local cultural traits can best be doused through these cultural fairs. They are willing to reduce even their wants for comfort and luxury accommodation in favour of more intensive contact with indigenous people.

However, very few fairs like that of Pushkar fair in Rajasthan attract foreign tourists. Most of the fairs cater to the domestic economic need of the trade in animals or at best draw strength from local religious persuasions of the folks. Therefore, the need is to bring these major fairs into the fold of international tourism. Brand selling, advertising, campaigning and above all including them into the itineraries of various tourist destinations is required. For this, various players engaged in tourism industry must come forward to expand the terrain of tourist destinations. To reap this potential a very innovative and novel policy designs regarding tourism is needed.

Many more other Cultural fairs are also organised in whole Marwar region which may attract Indian and foreign tourists in big number. Various departments and agencies of Rajasthan Government should come forward to avail this opportunity. Government may frame a separate policy for the development of Cultural fairs.

References

1. *Ashok Mitra, Registrar General, India, Fairs & Festivals, Census Publications, Government of Rajasthan, p. i.*
2. *GeendaramVerma, RajasthaniLokotsav, p. 31.*
3. *Mohanlal Gupta and Madhubala Gupta, Op.Cit., p. 112.*
4. *Mohanlal Gupta, Nagaurka Rajnitik Evam Sanskritik Itihas, p. 258.*
5. *Mohanlal Gupta and ShiriAhuja, Discover Jodhpur, pp. 52.*
6. *H. Bhishampal, Kalatmak Rajasthan, p. 103.*

Rise and Growth of Life Insurance Industries in India & Effects on Indian Economy

Abhishek Lodha
Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur

shodhshree@gmail.com

Abstract

Insurance is not a recent origin. It has been enforce in India dated back to the Vedic period. Establishment of Oriental Life Insurance Corporation by Anita Bhavsar in 1818 forms the basis of present life insurance industry in India. Insurance sector constitutes as one of the important pillar of the financial market. In 2000, Government reopens the Indian insurance industry to private companies which leads to the remarkable growth (increasing trends) in life insurance business. The sector witnesses a multi-fold growth in terms of insurance density (4 fold), amount of investment (5 fold), total premium (4 fold), number of new policy issued (doubled), number of offices opened (4 times) etc. Even a tremendous growth in life insurance industry, there are still a large portion of population who are remain uninsured. It demonstrates the lot of opportunities. But in last few years, the performance of life insurance industry has been shown a downfall (decreasing trends) because of slow economic growth rate, higher inflation, global crises, low saving etc. So, life insurers required to change their strategies and offered customized product so that the untapped market can be served effectively. This paper is an attempt to study the trends and pattern of Indian life insurance industry.

***Keywords**: Insurance, Life Insurance, IRDA, LIC, Policy, Trends and Pattern, Nationalisation, Economic Development.*

There is a universal phenomenon about the life is that it is uncertain. No one can predict exactly about it. So people try to secure them against any unpleasant possibilities or events and devoted major of their time for these activities. Basically, insurance can be defined as risk management technique used for the purpose of hedging against the risk of a contingent, uncertain loss or unexpected events occurred in the life. It is a protection against the physical and financial loss arising on the happening of an unexpected event or conditions. It is a collective bearing of risk. It is the tools of equitable transfer of the risk of loss from one entity to another, in exchange for payment called premium. Insurance can be considered as an arrangement where the losses suffered by a few persons are extended among many persons who are exposed similar risks. In other words insurance can be defined as contract wherein one party (insurer) agrees to pay the other party (insured), a certain sum of money upon the happening of contingency against which insurance is required.[1]

The Indian economy is in transition over the last few years leading to the initiation of major economic reforms affecting almost all sectors. The paradigm shift in organization structure has exposed all sectors to an intense competition. Insurance is one of them. In India insurance is a booming industry, with numerous national and foreign players competing to each other to get the competitive advantage. Over

 ISSN 2277-5587

the last few years, the Indian insurance industry has witnessed remarkable growth. Indian insurance business can be classified into two parts i.e., General Insurance and Life Insurance. General insurance deals with exposure of risks to goods and property whereas life insurance deals with the contingencies of physical death and economic death.[2]

History of life insurance

The story of insurance is probably as old as the story of the mankind. The same instinct that prompts modern businessman today to secure themselves against loss and disaster existed in primitive men also. They too sought to avert the evil consequences of fire and flood and loss of life and were willing to make some sort of sacrifice in order to achieve security. Though the concept of insurance is largely a development of the recent past, particularly after the industrial era-past few centuries-yet its beginnings date back almost 6000 years.[3]

Life Insurance in its modern form came to India from England in the year 1818.Oriental Life Insurance Company started by Europeans in Calcutta was the first Life Insurance Company on Indian soil. All the insurance companies established during that period were brought up with the purpose of looking after the needs of European community and Indian natives were not being insured by these companies. However, later with the efforts of eminent people like BabuMuttylal Seal, the foreign life insurance companies started insuring Indian lives. But Indian lives were being treated as sub standard lives and heavy extra premiums were being charged on them. Bombay Mutual Life Assurance Society heralded the birth of first Indian life insurance companies in the year 1870, and covered Indian lives at normal rates. Starting as Indian Enterprise with highly patriotic motives, insurance companies came into existence to carry the message of insurance and social security through insurance to various sectors of society.

Bharat Insurance Capital Company (1896) was also one of such companies inspired by nationalism. The Swadeshi Movement of 1905-1907 gave rise to more insurance companies. The United India in Madras, National Indian and National Insurance in Calcutta and the Co-Operative Insurance Company took its birth in one of the rooms of the Jorasanko, house of the great poet RabindraNath Tagore, in Calcutta. The Indian Mercantile, General Assurance and Swadeshi Life (later Bombay Life) were some of the companies established during the same period. Prior to 1912; India had no legislation to regulate insurance business. In the year 1912, the Life Insurance Companies Act 1912 made it necessary that the premium rate tables and periodical valuations of companies should be certified by an actuary. But the Act discriminated between foreign and Indian companies on many accounts, putting the Indian Companies at a disadvantage.[4]

The first two decades of the 20th Century saw lot of growth in insurance in business. From 44 companies with total business-in-force as Rs.22.44 crores it rose to 176 companies with total business-in-force as Rs. 298 crores in 1938. During the mushrooming of insurance companies many financially unsound corner were also floated which failed miserably. The insurance Act 1938 was the first legislation governing not only life insurance but also non-life insurance to provide strict state control over insurance business.

The demand for nationalization of life insurance industry was made repeatedly in the past but it gathered momentum 1944 when a bill to amend the Life Insurance Act 1938 was introduced in the legislative assembly. However , it was much later on the 19th of January , 1956, that life insurance in India was nationalized .About 154 Indian insurance companies, 16 non-Indian companies and 75 provident were operating in India at the time of nationalization. Nationalization was accomplished in two stages; initially the management of the companies was taken over by means of an Ordinance, and later, the ownership too by means of a comprehensive bill. The Parliament of India passed the Life Insurance Corporation of India was created on 1September, 1956, with the objective of spreading life

insurance much more widely and in particular to the rural areas with a view to reach all insurable persons in the country, providing them adequate financial cover at a reasonable cost.[5]

In 19th January, 1956, the finance minister C. D. Deshmukh announced the nationalization of life insurance by passing an ordinance in the Parliament. As the result of ordinance, Life Insurance Corporation of India (LIC) came into an existence on September 1, 1956 by absorbing 154 Indian insurer, 16 foreign insurer and 75 provident societies (total 245 companies) which were engaged in life insurance business in India. The LIC had the monopoly in insurance businesses till the insurance sector was reopened to the private players in 2000.

In 1993, the Government of India constituted a Malhotra Committee under the chairmanship of Mr. R N Malhotra, former Finance Secretary and Governor of RBI, with the objective of insurance sector reforms which were compatible with new economic reforms. The committee submitted its report in 1994 which make a recommendation of the establishment of special regulatory agency and privatisation of insurance sector. Accepting the recommendation of Malhotra committee, Government of India, passed the Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA) Bill in Parliament in December 1999 and established Insurance Regulatory and Development Authority (IRDA) as a statutory and autonomous body in April 2000, to regulate the insurance industry in India. With the establishment of IRDA, the door of Indian insurance industry has been opened for the private companies.[6]

Effects of Insurance Sector on Indian Economy

For economic development investments are necessary. Investments are made out of savings. Life Insurance Company is a major instrument for the mobilization of savings of people, particularly from the middle and lower group. All good life insurance companies have huge funds accumulated through the payments of small amounts of premium of individuals. These funds are invested in ways that contribute substantially for the economic development of the countries in which they do business The system of insurance provides numerous direct and indirect benefits to the individuals and his family as well as to industry and commerce and to the community and the nation as a whole. Present day organization of industry, commerce and trade depend entirely on insurance for their operation, banks, and financial institutions lend money to industrial and commercial undertakings only on the basis of the collateral security of insurance.

India became the 10th largest insurance market in the world in 2013, rising from 15th rank in 2011. At a total market size of US$66.4 billion in 2013, it remains small compared to world's major economies, and Indian insurance market accounts for 2% of world's annual insurance business. India's life and non-life insurance industry has been growing at double digit growth rates and this growth is expected to continue through 2021. Life insurance: Indian economy retains about 360 million active life insurance policies, the largest in the world. Of the 52 insurance companies in India, 24 are active in life insurance business. The life insurance industry in the country is projected to increase at double digit compounded annual growth rates through 2019, with targets to reach US$1 trillion annual notional values by 2021. Other insurance: The industry which reported a growth rate of around 10 percent during the period 1996–97 to 2000–10 has, post opening up the sector, reported average annual growth of 15.85% over the period 2001–02 to 2010–11. In addition, the specialized insurers Export Credit Guarantee Corporation and Agriculture Insurance Company (AIC) are offering credit guarantee and corp insurance respectively. AIC, which has initially offering coverage under the National Agriculture Insurance Company (NAIS), has now started providing crop insurance cover on commercial line as well. It has introduced several innovative products such as weather insurance and specific crop related products. The premium underwritten by the non-life insurers during 2010–11 was Rs 42,576 crore as against Rs 34,620 crore in 2009– 10. The growth was

ISSN 2277-5587

satisfactory, particularly in the view of the across the broad cuts in the tariff rates. The private insurers underwrote premium of Rs 17,424 crore as against Rs 13,977 crore in 2009–10. The public sector insurers on the other hand, underwrote a premium of Rs 25,151.8 in 2010–11 as against Rs 20,643.5 crore in 2009–10, i.e. a growth of 21.8% as against 14.5% in 2009–10. Indian Insurance Industry is one of the booming Industries of the economy and is growing at the rate of 15-20 % per annum. Along with banking services, it contributes to about 7% to the country's GDP. The economic reform of 1991 played a pivotal role in the economic development of India. Reaping its benefit the growth of the country reached around 7.5% in the late 2000s.Insurance is a risk transfer mechanism whereby the individuals or the business enterprise can shift some of the uncertainties of life on the shoulder of other. In case the insurance providers of trade industry which ultimately contribution towards human progress. Thus, insurance is the most lending force contribution towards economic, social and technological progress of man. The Indian insurance market is the 19th largest globally and ranks 5th in Asia, after Japan, South Korea china and twain.7Studies indicate that there is a positive correlation between the per capita GDP and total insurance penetration in an economy. Life insurance penetration in India is about 4.0 per cent of gross domestic product in terms of total premiums underwritten in a year, much lower than 11.5 per cent in Japan and 19.7 per cent in UK. A low and uneven development of insurance, especially in the non-life insurance business, hampers economic activities. There is a need to speed up the growth of the insurance sector to make it competitive at a global level. The government should act as a promoter and facilitator of insurance services, and bring the insurance sector up to the standards of the global market.

Conclusion

The insurance sector plays a fundamental role in the economy. A world without insurance would be much less developed economically and much less stable. The risk transfer function of the insurance sector contributes, on the one hand, to the creation of a more stable operating environment for companies and, on the other hand, to a reduction in the level of capital required by undertakings to protect themselves against risk. This allows companies to concentrate their attention and resources on their core business. Insurance provides an efficient way to support the State in the provision of pensions, healthcare and social security. Through products designed to complement State provision, the insurance sector contributes significantly to guaranteeing a stable and lifelong level of revenue (pension, education leave, maternity leave) and to limiting the impact of demographic change on states 'budgets. Insurers have also demonstrated their ability to manage other fields of social security such as compensation and rehabilitation accidents at work. These products have a double economic impact, protecting workers from the economic consequences of accidents, and encouraging a healthy working population. Insurance not only provides a stable operating environment, but it also improves companies 'awareness of risk management, and influences their investment decisions. Differences in price and policy conditions are key factors that influence undertakings 'andhouseholds 'decisions, and contribute to sustainable and responsible use of available resources. For instance, insurance contributes to the reduction of risks linked to climate change by supporting Government policies designed to limit climate change and to reduce its impact.

The growth of the Indian economy has been diminishing due to various reasons, but the Indian growth story is still alive as Indians has a habit of moving slowly but steadily and in the end we win the race. Currently the situations are not in our favour but as soon the above problems settles down, we may back on track. At the same time many sectors are supporting to the growth of the Indian economy, among that insurance sectors contribution is very high. The growth performance of the insurance industry has increased tremendously since the establishment of IRDA in India, which supervise and controlled

the entire insurance industry. The increase in number of insurer both in life and non-life, growth in insurance penetration and density, increase in number of policies issued and increase in the speed of claims settlement and the in many more aspects the IRDA is playing a prominent role in the Indian insurance sector. It might be argued that if the insurance and pension fund industries are liberalised, and if the fund managers of all these companies indulge in active portfolio management, the liquidity of the bond market will increase significantly. Such increase in liquidity across the board would enable the fund managers to invest in investment grade bonds of lower rating and thereby add to the average yield of their investment without adding significantly to their portfolio risk. The problem, however, is that till the imperfect character of the bond market is removed to a significant extent, the insurance companies might either have to operate with thinner margins or remain exposed to unacceptably high levels of liquidity risk. It might, therefore, be prudent for the policymakers to impose stringent capital and reserve norms on the insurance companies, in order to ensure their viability in the short to medium run. Subsequent to liberalisation, the Indian insurance industry might also be at the receiving end of regulations governing insurance prices/premia. Specifically, there might be highly politicised interventions in the markets for workers' compensation and medical insurance. The government might also be under pressure to —regulate the prices of infrastructure related lines like freight and marine insurance. In principle, the risks associated with such liability insurance policies may be hedged by way of Reinsurance. But if the reinsurers price the risks accurately and the Indian insurance companies are forced to under-price the risks, the margins of the insurance companies will be affected adversely, thereby reducing their long-term viability. In view of these political and financial realities, it might be better to subsidise the policyholders of politically sensitive lines directly or indirectly through tax benefits, if at all, rather than distort the pricing of the risks themselves.

At the end of the day, it has to be realised that while competition enhances the efficiency of market participants, the process of—creative destruction, which ensures the sustenance and enhancement of efficiency, is not strictly applicable to the financial markets. Hence, while exit is perhaps the most efficient option for insolvent firms in many markets, insolvency of financial intermediaries' calls for government action and usually affects the governments' budgetary positions adversely. At the same time, other things remaining the same, the risk of insolvency is perhaps higher for insurance companies than for other financial intermediaries because of the option-like nature of their liabilities. Therefore, competition in the insurance industry has to be tempered with appropriate prudential norms, regular monitoring and other regulations, thereby making the robustness of the industry (in India) critically dependent on theorganisation (and efficiency) of and regulatory powers accorded to the proposed Insurance Regulatory Authority. Preventing a malady, as conventional wisdom goes, is better than trying to cure it once the disease has set in.

References

1. *Agarwal Abhishek, Distribution of life Insurance products in India, Insurance Chronicle: 2002.*
2. *Basavanthappa C and Rajanalkar L, Performance of Life Insurance Companies: A Comparative Study, Southern Economist, October 15, 2009.*
3. *Bhole L M &MahakhudJitender, Financial Institutions and Markets, Tata McGrawhill, New Delhi: 2009.*
4. *Gupta P K, Fundamentals of Insurance, Himalaya Publishing House, Mumbai: 2005.*
5. *IRDA, Annual Report, Insurance Regulatory and Development Authority, India: 2012, 13*
6. *Nanda Ritu, Being an Insurance Agent: The pride and the prejudice, Journal of the Insurance Regulatory and Development Authority, February Issue: 2007.*
7. *M Venkatesh, A Study Of "Trend Analysis In Insurance Sector In India, The International Journal Of Engineering And Science (IJES), Volume 2, Issue 6: 2013*

 ISSN 2277-5587

Child Labour in India: Issues and Concerns

Dr. Bhavana Rani Agrawal
Vice Principal, IPSR Law College, Niwali (Ramgarh) Alwar
Anand Vardhan Agrawal
Lecturer, IPSR Law College, Niwali (Ramgarh) Alwar.

shodhshree@gmail.com

Abstract

Child labour is called as work done by those small children who are yet under-aged as per by law. By 'Work Done', we mean that work which is done by the under-aged children in factories or showrooms or any other place to earn money to sustain their livelihood or of their families. Child labour refers to those children who are doing paid or unpaid work in factories, workshops, establishments, mines and also in the service sector like domestic workers. There are legislations which regulated the child workers and in conformity with the constitutional provision employment of the children below the age of 14 years are prohibited. Article 21A of the constitution of India provides fundamental right to free and compulsory education for the children below 14 years of age. The Child Labour (Prohibition and Regulation) Act, 1986 is a comprehensive Act which deals exclusively with the evil of child labour. It will also examine the issues and concerns regarding the child labour from both national and international perspectives.

Keyword: *Prohibition, Exploitation, Inefficient, Abandonment, Disablement, Eradicate, Prominent, Emphasized, Rehabiliation, Exploit.*

Child labour is a universal problem concerning. The widespread poverty and ignorance made the children work at an early age, causing denial of opportunity for education, sound health and overall personality development.[1] The state has been put under the Constitutional obligation to do away with the exploitation of children, maintain them decently where their parents fail to look after them properly, educate them, protect their health and provide them nutritious food. The Directive Principles of State Policy states that the tender age of children is not abused and that citizens are not forced by economic necessity to enter a vocations unsuited to their age or strength and capabilities[2]. It also provides that the children are given enough opportunities and facilities to develop in a healthy manner with conditions of freedom and dignity and that childhood and youth are protected against exploitation, moral and material abandonment. Apart from this a comprehensive legislation on child labour is also enacted in India.[3]

The child labour has various far reaching socio-economic implications affecting the health of the children and inefficient utilization of labour power resulting in economic loss to the society.[4] According to J.C. Kulsherestra the factors responsible for child labour are "(1) poverty; (2) low wages of the adult; (3) unemployment; (4) absence of scheme for family allowance; (5) migration to urban areas; (6) large families; (7) children being cheaply available; (8) non-existence of provisions for compulsory education, and (9) illiteracy and ignorance of parents; (10) traditional attitudes".[5] At present, some of these problems identified have been taken care by the Government for instance by making Compulsory

Education for the children below 14 years of age, but still domestic help etc. Nonetheless, it is necessary to examine the different perspectives of child labour in India.

Child Labour in India: Constitutional Perspectives:

The laws relating the child labour are enacted keeping in tune with the provisions enshrined in Article 39(e) of the Constitution of India.[6] As observed by the Apex Court in People's Union for Democratic Rights vs. Union of India, Article 42 must operate propriovigore. There is no use enacting a law if it is to remain on paper. It is essential to make the people aware that children should not be exploited.

Constitutional safeguards for the welfare of the children are as follows:

1. Article 15(3) empowers the stat to make special provisions for the welfare of the children.
2. Article 21-A provides for free and compulsory education to all the children of the six to fourteen years by the State.
3. Article 23(1) prohibits traffic in human beings, beggar and all other forms of forced labour. Violation of this provision is an offence punishable under the law.
4. Article 24 prohibits the employment of children below the age of 14 years in factories, mines and hazardous employments.
5. Article 39(e) stipulates that the health and strength of workers, men and women, and the tender age of children are not abused and citizens are not forced by economic necessity to enter into avocations unsuited to their age or strength.
6. Article 39 (f) mandates the children are given opportunities and facilities to develop in a healthy manner and in conditions of freedom and dignity and that the childhood and youth are protected against exploitation and against moral and material abandonment.
7. Article 41 enjoins upon the state, within the limits of its economic capacity and development to make effective provision for securing the right to work, to education and to public assistance in cases of unemployment, old-age, sickness and disablement and in other cases of undeserved want, etc.
8. Article 45 provided for early childhood care and education to children below the age of six years.[7]
9. Article 51A provides for a duty on a parent or guardian to provide opportunities for education to his child, or as the case may be, ward between the age of six and fourteen years.[8]

These being the Constitutional provisions to protect the interest of the children and eradicate the child labour system from country, it can be seen when it comes to the implementation stage, everything remain in theory.

Role of Judiciary

The Apex Court also observed that the prevailing socio economic conditions, it is not possible to prohibit child labour altogether and that any such move may not be socially or economically acceptable to large masses of people that may be the reason why Article 23 limits the prohibition against employment of child labour only to factories, mines or other hazardous employments. Apart from this the judiciary tried to protect the interests of children through various judicial precedents like, Bandhuva Mukti Morahca Vs. Union of India,[9] M.C. Mehta Vs. State of Tamilnadu,[10] Peoples Union for Democratic rights and Other Vs. Union of India, Bachpan Bachao Andolan Vs. Union of India[11] & others.[12] The Supreme Court of India invoked the directive principles of state policies and fundamental rights to issue elaborate guidelines and directions to the government to eliminate child labour.

National Policy on Child Labour in India

The main step was to take legal action plan

focusing on general welfare of child labour and their families through effective enforcement of the provisions of the Child Labour (Prohibition and Regulation) Act, 1986, the Factories Act, 1948 and the Mines Act, 1952.

The Children's Programme finds a prominent place in our national plans for the development of human resources, so that our children grow up to become citizens, physically fit, mentally alert and morally healthy, endowed with the skills and motivations needed by society.[13]

The Government of India, formulated policy bearing in mind the need to extend particular care to the child, that has been stated in Geneva Declaration of the Rights of the Child of 1924 and in the Declaration of the Rights of the Child adopted by the General Assembly on 20th November, 1959 and recognized in the Universal Declaration of Human Rights, in the International Covenant on Civil and Political Rights, 1966,[14] in the International Covenant on Economic, Social and Cultural Rights, 1966[15] and also in the statutes and relevant instrument of specialized agencies and international organization connected with the welfare of the children.

The focus of General Development Programmes for Benefiting Child Labour, pointed out that poverty is the root cause of child labour and the action plan emphasized the need to cover these children and their families under various poverty alleviation and employment generation scheme of the Government. Project Based Plan of Action envisages starting of projects in areas of high concentration of child labour. Pursuant to this, in 1988, the National Child Labour Project (NCLP) Scheme was launched in the country. The Scheme envisaged running of special schools for child labour withdrawn from work. In the special schools, these children were to be provided with formal/non-formal education along with vocational training, a stipend of Rs. 150 per month, supplementary nutrition and regular health checkups so as to prepare them to join regular mainstream schools. Under the Scheme, funds are given to the District Collectors for running special schools for child labour. Most of these schools are run by the NGOs in the district.

Conclusion

As a positive steps from the part of corporate world, as part of corporate social responsibilities many corporate firms have initiated measures to curb the child labour[16] For instance, Nike, a multinational corporation, has adopted a code of conduct that the child labour (contractor) will certify that he had not employed and person under the minimum age established by local law, or the age at which compulsory schooling his ended, whichever is greater, but in no case under the age of 14.[17] Later on the Code was revised in 2007, 2010 which also focused on the positive rehabilitation of the child labourers. It shows that they focused on the non-employment of child labour by its contractors. Moreover, joint efforts from the parts of all stake holders like civil society, state governments and corporations is required to curb this evil from our society though it is said that poverty is the root cause of this problem. Child is said to be a national asset and therefore it is the primary duty of the State and 'We the People' to look after the child, with a view to ensure their full development and personality and not to exploit their childhood by employing them as workers in the name of poverty.

Such steps like providing such poor children free education, educating people, especially villagers about the ill-effects of child labour and creating awareness through education must be taken. Such families who do not have any child should come forward to adopt such homeless children so that they must have home.

Children (Coming Generation) are the future of any nation and we must give their small eyes big dreams; so that they can spread their wings and can fly away in open sky and bring India up to that level where developed nations are.

References

1. P.L. Mehta and S. /s. Jaswal, "Constitutional Philosophy of Child Labour Welfare: A case study with special reference to tea-stalls, sweet shops and Dhabha in Shimla town", 34 Civil and Military Law Journal 204 (1998).
2. The Constitution of India, Article 39
3. The Child Labour (Prohibition and Regulation) Act, 1986, (Act 61 of 1986)
4. C.L. Patel, "Child Labour: Problems and Suggestions", 4 Central India Law Quarterly 125 (1991)
5. Dr. J.C. Kulsherestra, Indian Child Labour, Chapter-II quoted in M.C. Mehta Vs. State of Tamil Nadu, A.I.R. 1997 S.C. 699 at 798-799.
6. People's Union for Democratic Rights vs. Union of India A.I.R. 1882 S.C. 1473
7. This provision is inserted after 86th Constitution Amendment Act, 2002.
8. BandhuvaMuktiMorahca Vs. Union of India
9. A.I.R. 1984 SC 802
10. M.C. Mehta Vs. State of Tamilnadu A.I.R. 1997 SC 699.
11. Peoples Union for Democratic rights and Other Vs. Union of India A.I.R. 1982 SC 1473
12. BachpanBachaoAndolan Vs. Union of India & others A.I.R. 1984 SC 802 (2011) 5 Sc1.
13 M. AfzalWani, "Abolition of Child Labour: International and National Perspectives", NyayaKiran 29 (2007).
14. Article 23 and 24.
15. See Article 10
16. Surya Deva, "Child Labour: Should Companies 'Stand at Bay' or 'enter the water'?" 56 JILI 144(2014).
17. Nike's Code of Conduct, March 1997, available at httpp://actrav.itcilo.org/actravEnglish/telearn/global/ilo/code/nike2.htm (last visited on 20.03.2015).

ISSN 2277-5587

An Insight of Goods and Service Tax (GST) in India

Dr. Hanuman Sahai Kumawat
Lecturer, S.P.C. Govt. College, Ajmer
Dr. Rajkumar Nagarwal
Lecturer, Govt. Girls College, Ajmer

shodhshree@gmail.com

Abstract

Goods and Service Tax (GST) is a comprehensive tax levy on manufacture, sale and consumption of goods and services at a national level. GST is a tax on goods and services with value addition at each stage having comprehensive and continuous chain of set-off benefits from the producer's/service provider's point up to the retailer's level where only the final consumer should bear the tax. At present the multiplicity of taxes at the State and Central levels has resulted in a complex indirect tax structure in India. Further, no credit of State taxes paid in one State can be availed in other States. Hence, the prices of goods and services get artificially inflated to the extent of this "tax on tax".

There will only be a national-level central GST (CGST) and a state-level GST (SGST) spanning the entire value chain for all goods and services, with some exemptions. It is expected to reduce cost of production and inflation in the economy. Under GST, importer-distributors as well as domestic resellers should be able to claim credit of GST paid on all business procurements of goods and services, as opposed to the current scenario. It is also expected to make exports from India competitive and India a preferred destination for foreign investment since GST is a globally accepted tax.

Keywords : *Cascading of Taxes, Goods and Service Tax, Supply chain, Tax Credit.*

Goods and Service Tax (GST) is a comprehensive tax levy on manufacture, sale and consumption of goods and service at a national level. GST is a tax on goods and services with value addition at each stage having comprehensive and continuous chain of set-off benefits from the producer's/service provider's point up to the retailer's level where only the final consumer should bear the tax. This paper is an outcome of an exploratory research to understand the concept of Goods and Service Tax (GST), to be implemented in India. Descriptive statistical tools are used to analyse and interpret the data collected through secondary sources such as official web sites of Government. The new GST regime will trigger a transformational shift from a complex multi-layered indirect taxation system to a unified indirect taxation system. Introduction of GST is a welcome change for the manufacturing sector in terms of lower effective rate of tax, reduction in indirect taxes to be dealt with, no cascading of taxes and reduced credit leakages on inter-state movement of goods. GST will also address the challenge of tax leakages in supply chain when procured products through contract manufacturing. Under GST, importer-distributors as well as domestic resellers should be able to claim credit of GST paid on all business procurements of goods and services, as opposed to the current scenario, where they cannot claim a credit for the duties/ taxes paid on capital assets and input services

availed. In India, there are different indirect taxes applied on goods and services by central and state government. GST is intended to include all these taxes into one tax with seamless ITC and charged on both goods and services. Thus excise duty, special additional duty, service tax, VAT to name a few will get repealed and will be added into GST. For this, GST will have 3 parts –CGST, SGST and IGST. The central taxes like excise duty will be subsumed into CGST and state taxes like VAT into SGST. Thus going forward on all transactions of both goods and services, only one tax will apply which is GST comprising of CGST and SGST. IGST would be applied instead of SGST for interstate transactions. Input credit of all these taxes will be available against all the respective outputs. It is expected to generate revenue for the country as the tax base will increase as the GST rate will be somewhere around 27% with both goods and services covered. It is also expected to make exports from India competitive and India a preferred destination for foreign investment since GST is a globally accepted tax.

The Finance Minister in his budget speech of Budget 2015 has announced time and again that the tax will be introduced on 1 April, 2016. GST will have 3 parts – CGST, SGST and IGST. The central taxes like excise duty will be subsumed into CGST and state taxes like VAT into SGST. Even in the Budget of 2016, the Government has shown its intention of moving towards GST by increasing the excise rate to flat 12.5% and service tax rate to flat 14% and removing the applicable cesses. As per Finance Minister, the new indirect taxation regime (GST) could be introduced from July, 2017 and the four tax slabs will remain the same at 5%, 12%, 18% and 28%.

Objectives of the Study

The Main Objective of the Study is to examine the fact of GST in Indian scenario. as follows:

- To understand the concept and evolution of GST in India.
- To compare the present scheme of indirect taxation and proposed GST in India.
- To understand the benefits of GST for consumers and manufacturing sector.
- To highlight key issues of Goods and Services Tax Act, 2016
- To give suggestion for the GST in Indian context.

Methodology

The research is an exploratory research and the data collection is done mainly from the secondary data sources such as statistical data available on the official web site of Finance Ministry of India, the books published on GST and various contemporary news articles, journals and papers. The data so collected is used for understanding the present tax structure and for calculating the tax structure in the GST regime along with credit provisions. The basic statistical concept such as forecasting etc is used for determining the tax liability in of GST at different proposed rates of tax.

Present Indirect Tax Structure

The taxable event varies from the point of manufacture or sale or provision of services or imports/exports. The existing indirect tax laws are origin-based tax, structured to levy and collect at the point of happening of the prescribed taxable even.

The major components/constituents of Indirect Taxes are as follows:

- Excise Duty:- Entry No. 84, List I, Schedule VII Taxable Event - Manufacture
- Service Tax:- Residuary Entry No. 97, List I, Schedule VII Taxable Event -Provision of Service
- Sales Tax /VAT:- Entry No. 54 of List II (VAT) and 92A of List I (CST) Taxable Event -Sale within the State
- Customs Duty:- Entry No. 83, List I, Schedule VII Taxable Event - Import & Export
- Central Sales Tax (CST):- Entry No. 92A of List I of Schedule VII Taxable Event - Inter-State Sale
- Local Body Tax (Entry Tax/Octroi):- Entry No.52 of List II of Schedule VII Taxable Event Entry of goods to a State from a place outside the State

ISSN 2277-5587

Salient features of Proposed GST

1. **Taxes that will be subsumed in GST:-** GST would be levied on all the transactions of goods and services made for a consideration. This new levy would replace almost all of the indirect taxes. In particular, it would replace the following indirect taxes:

At Central level:- (i) Central Excise Duty, (ii) Additional Excise Duty, (iii) The Excise Duty levied under the medical and Toiletries Preparation Act, (iv) Service Tax, (v) Additional Customs Duty, commonly known as countervailing Duty (CVD), (vi) Special Additional duty of customs- (SAD), (vii) Surcharges, (viii) Cesses

The above taxes dissolve under GST; instead only CGST & SGST exists.

At State level:- (i) VAT/Sales tax, (ii) Central Sales Tax (levied by the Centre and collected by the States) (iii) Entertainment Tax (unless it is levied by local bodies), (iii) Luxury tax, (iv) Taxes on lottery, betting and gambling, (v) State cesses and surcharges in so far as they relate to supply of goods and services, (vi) Entry tax not on in lieu of octroi (vii) Purchase tax (This is not sure still under discussion)

2. **Dual GST:-** Both Centre and States will simultaneously levy GST across the value chain. Tax will be levied on every supply of goods and services. Centre would levy and collect Central Goods and Services Tax (CGST), and States would levy and collect the State Goods and Services Tax (SGST) on all transactions within a State. The input tax credit of CGST would be available for discharging the CGST liability on the output at each stage. Similarly, the credit of SGST paid on inputs would be allowed for paying the SGST on output. Cross utilization of ITC between the Central GST and the State GST would not be permitted except in the case of inter-State supply of goods and services.

3. **Inter-State Transactions and the IGST Mechanism:-** The Centre would levy and collect the Integrated Goods and Services Tax (IGST) on all inter-State supply of goods and services. The IGST mechanism has been designed to ensure seamless flow of input tax credit from one State to another. The inter-State seller would pay IGST on the sale of his goods to the Central Government after adjusting credit of IGST, CGST and SGST on his purchases (in that order). The exporting State will transfer to the Centre the credit of SGST used in payment of IGST. The importing dealer will claim credit of IGST while discharging his output tax liability (both CGST and SGST) in his own State. The Centre will transfer to the importing State the credit of IGST used in payment of SGST.

4. **Destination-Based Consumption Tax:-** GST will be a destination-based tax. This implies that all SGST collected will ordinarily accrue to the State where the consumer of the goods or services sold resides.

5. **Composition Scheme:-** The States are also of the view that Composition/Compounding Scheme for the purpose of GST should have an upper ceiling on gross annual turnover and a floor tax rate with respect to gross annual turnover. There would be option available to tax payers having turnover less than Rs. 50 lacs can opt for Composition scheme wherein they need to discharge tax at a floor rate of 1%.

6. **PAN-linked Taxpayer Identification number:-** Each taxpayer would be allotted a PAN-linked taxpayer identification number with a total of 14/15 digits. This would bring the GST PAN-linked system in line with the prevailing PAN-based system for Income tax, facilitating data exchange and taxpayer compliance.

7. **Mechanism of Input Tax Credit in GST:-** Input tax credit of CGST would be available for payment of CGST and input tax credit of SGST would be available for payment of SGST. However, cross utilization of tax credit between the Central GST and the State GST would be allowed in the case of inter-State supply of goods and services under the IGST model.

8. **GST Rate:-** 12% 17%-18% 40%, Further, it appears that the Government may review the existing exemptions so that the list of goods exempt from CGST is aligned to the SGST list and most of items currently exempt from VAT may be

exempt from both components of GST. It is worth noting that the proposed cumulative rate of GST is much higher than the Revenue Neutral Rate suggested by the Thirteenth Finance Commission (TFC). TFC had suggested a rate of 5% CGST and 7% SGST.

Limitations and Problems in current Indirect Tax System

Currently there are many limitations and problems in the indirect tax system and structure. These are:

- At present excise duty paid on the raw material consumed is being allowed as input credit only. For other taxes and duties paid for post-manufacturing expenses, there is no mechanism for input credit under the Central Excise Duty Act.
- Credit for service tax paid is being allowed manufacturer/service provider to a limited extent.
- At present, the service tax is levied on restricted items only. Many other large number of services could not be taxed. It is to reduce the effect of cascading of taxes, which means levying tax on taxes.
- A major defect under the State VAT is that the State is charging VAT on the excise duty paid, which goes against the principle of not levying tax on taxes.
- In the present State level VAT scheme, Cenvat allowed on the goods remains included in the value of goods to be taxed, which is a cascading effect on account of Cenvat element.
- Double taxation: There are many cases when two or more tax is charged on same amount. e.g. On software designing, development of software both VAT as well as Service Tax is charged.
- Trade barriers such as entry tax, local body tax, Octroi at various check-post and toll plazas leads to higher transportation cost. And due to check-post and toll plazas trucks idle for 30-40 % of the day that leads to huge man-hour and fuel losses.
- Multiple Registration: If any entity is providing goods and services both then it needs to get registered in both department.

Analysis and Discussion

The illustration shown below indicates, in terms of a hypothetical example with a manufacturer, wholeseller and retailer, Let us suppose that GST rate is 10%, with the manufacturer making value addition of Rs.60 on his purchases worth Rs.100 of input of goods and services used in the manufacturing process. The manufacturer will then pay net GST of Rs. 6 after setting-off Rs. 10 as GST paid on his inputs (i.e. Input Tax Credit) from gross GST of Rs. 16. The manufacturer sells the goods to the wholeseller. When the wholeseller sells the same goods after making value addition of (say), Rs. 40, he pays net GST of only Rs. 4, after setting-off of Input Tax Credit of Rs. 16 from the gross GST of Rs. 20 to the manufacturer. Similarly, when a retailer sells the same goods after a value addition of (say) Rs. 20, he pays net GST of only Re.2, after setting-off Rs.20 from his gross GST of Rs. 22 paid to wholeseller. Thus, the manufacturer, wholeseller and retailer have to pay only Rs. 12 = Rs. 6+ 4+2 as GST on the value addition. This is shown in the table below:

Table

Stage of supply chain	Purchase value of Input	Value addition	Value at which supply of goo ds & services made to next stage	GST on output (assume GST rate is 10%)	Input tax credit	Net GST= GST on output – Input tax credit
Manufacturer	100	60	160	16	10	16–10 = 6
Whole seller	160	40	200	20	16	20–16 = 4
Retailer	200	20	220	22	20	22–20 = 2

ISSN 2277-5587

Manufacturer: Manufacturer makes value addition of Rs. 60 on his purchases worth Rs. 100 of input of goods and services used in the manufacturing process. The manufacturer will then pay net GST of Rs. 6 after setting-off Rs. 10 as GST paid on his inputs (i.e. Input Tax Credit) from gross GST of Rs. 16. The manufacturer sells the goods to the wholesaler.

Wholesaler: When the wholesaler sells the same goods after making value addition of Rs. 40, he pays net GST of only Rs. 4, after setting off of Input Tax Credit of Rs. 16 from the gross GST of Rs. 20 to the manufacturer.

Retailer: When a retailer sells the same goods after a value addition of Rs. 16, he pays net GST of only Rs. 2, after setting-off Rs. 20 from his gross GST of Rs. 22 paid to wholesaler.

Thus, the manufacturer, wholesaler and retailer have to pay only Rs. 12 (i.e. 6 + 4 + 2) as GST on the value addition along the entire value chain from the producer to the retailer, after setting-off GST paid at the earlier stages. That is to say final price paid by consumer is Rs. 220 + 10% x 220 = 242.

Benefits of GST:

i. **Abolition of various taxes:** Central Govt. indirect taxes like Excise duty, Service Tax, CST and State level indirect taxes like VAT on sales, Entertainment tax, Luxury tax and Octroi and Entry taxes levied by municipalities would be abolished. A simple tax system will be created, leading to smooth flow of goods and services across the country.

ii. **Lower Tax Evasion:-** After GST they will be paying tax only on the value addition. Thus the tax evasion would be lowered that leads to more companies paying tax.

iii. **Enhancing the Overall Productivity:-** By introducing GST, the idle time of trucks at check-post and toll plazas will reduce and that will boost the travelling distance of truck, which will result in improvement in productivity and bringing down logistics costs.

iv. **Decrease in Taxation Rate:** The present taxation rate peaks at 26.5% (Cenvat of 14%, and VAT of 12.5%) apart from the state level tax of 2% for transferring inter-state goods. The current combined Centre and state statutory rates for the most goods works out to be 26.5% but GST is expected to bring it down to 18-20%.

v. **Reduced Cost of Production & Prices:** The proposed GST will reduce the cascading of taxes and will lead to a lower cost of production. Also, the current tax system does not permit tax credit of central/union taxes over state taxes and vice versa. The GST will remove this clause as unrestrictive tax credit will be permitted.

vi. **Higher Revenue:** By lowering tax evasion and enabling small business and companies to pay tax will increase the revenue of the Government. This will lead to more export and more employment opportunities.

vii. **Increased Working Capital:** In the current system of taxation, stock transfers are not subjected to taxes. However, once the GST is implemented, stock transfers will be considered as supplies and will have an applied GST. This is likely to result in cash flow and therefore, manufacturing companies may have to strategize their supply management strategies in a manner that minimizes cash flow impact.

viii. **Supply Chain Issues:** GST will resolve many supply chain issues and the increase in efficiency will lead to quicker deliveries. Shipment and returns across the country will be done more efficiently and with lesser paperwork. GST will help make India's manufacturing competitive by cutting high logistics and warehousing costs. Also, tax credit on inter-state sale of goods and services will ask for warehouse re-engineering and that can eliminate an extra layer of warehousing in the supply chain.

ix. **GST Exemption for Startups and Small Businesses:** Once GST is implemented, businesses with a turnover of less than Rs.10 lakhs (after amendment in March, 2017 Rs. 20 lakhs) per annum would not have to register for GST nor collect GST. Further, businesses with an

annual sales turnover of Rs.10 lakhs to Rs.50 lakhs may have to pay GST only at a lower rate. Therefore, once GST is rolled out, thousands of startups and small businesses currently having an annual sales turnover of Rs.5 lakh – Rs.10 lakh would be out of the tax net providing relief to them from collection and filing of GST returns.

Conclusion

All the shortcomings of the present taxation regime lead us to develop a new system of Taxation for the ease of doing business and for the seamless flow of credit across the whole supply chain. We can see that total tax outflow & price to customer in Current Tax System is much higher than propose GST model because of Un-utilization of Credit & Cascading effect in present system. Benefit to the Consumer, Benefit to the Taxpayer, Benefit to the Government. Benefits of economies of scale will pass on from manufacturers/service providers to the ultimate consumer. Lower price means more consumption which leads to more production, thereby helping in the growth of the company. Savings in Cash Flow due to full utilization of all input taxes (except Additional Tax). Reduction in cascading effect of tax on tax. Growth in the individual company leads to growth in the Industry which creates more employment opportunities & increase GDP at a large.

Recommendations

1. The proposed GST model does not subsume all taxes and commodities such as petroleum products, liquor, stamp duty, property tax, toll tax, passenger tax, various commodity cesses, motor vehicle tax, airport tax, electricity duty, royalty on mining, pollution cess, petroleum products including natural gas, etc. All the above taxes should be necessarily subsumed in the GST regime to avoid multiple tax levies.

2. Whether sale of immovable property attracts state VAT or no has been a matter of substantial litigation under works contracts category. Further, there are registration and stamp duties applicable on sale of immovable property. In this background, taxability of real estate transactions should be dearly spelt out and the availability of input credits should be clearly spelt out to avoid litigation.

3. It is recommended that from the First year onward rate of Goods & Services should be same. Multiplicity of rates in goods or services in GST may lead to complexity of interpretation as well as implementation.

References

1. *The Empowered Committee of State Finance Ministers (2009), First Discussion Paper on Goods and Services Tax In India, November 10, 2009.*
2. *Datey, V.S..,2008, Central Excise Ready Reckoner, New Delhi, Taxmann.*
3. *Khan, M., & Shadab, N., Goods and Services Tax (GST) in India: prospect for states. Budgetary Research Review, 4(1), 38–64.*
4. *Rastogi,Abhishek.A & Kumar,Aditya., 2009, Good And Service Tax, New Delhi, Taxmann Publication.Pvt.Ltd.*
5. *Bare Act of Central Excise, Customs and Service Tax, New Delhi, Taxmann.*
6. *Chatterjee, Timir .Baran.,2008, An Introductory Study on Goods and Service Tax, New Delhi, Nabhi Publication.*
7. *Nishita Gupta, Goods and Services Tax: "Its implementation on Indian economy", CASIRJ Volume 5 Issue 3 [Year - 2014] ISSN 2319–9202, Pg. No.126-133.*
8. http://www.indiataxes.com/Information/VAT/Introduction.htm
9. http://www.taxmanagementindia.com/wnew/detail_rss_feed.asp?ID=1226
10. www.Ministry of Finance- http://finmin.nic.in/

ISSN 2277-5587

Issues & Challenges of Financial Inclusion: Scenario in Public Private Sector Banks

shodhshree@gmail.com

Latika Adaniya
Research Scholar, Jai Narain Vyas University, Jodhpur

Abstract

The article explores the geographical distribution of private sector banks in India and its impact on financial inclusion and Challenges. To achieve the ambitious average GDP growth of 9 per cent per annum target set in the Eleventh Plan, it is important to revitalise and revamp not only the agricultural sector but also rural financial institutions. The directed lending norms that require commercial banks to allocate 40 per cent of their lending to the `priority sector' have not generated the intended results, since most of the banks get around this requirement by subscribing to other eligible instruments. Large farmers and agri-businesses seem to be able to obtain financial services from modern financial institutions but small and marginal farmers continue to depend, largely, on indigenous money-lenders. As the scenario is not expected to change without some focused intervention, it needs to become a focal point for both Government and financial sector.

Keywords: *Financial Inclusion, Banking Sector, Scheduled Commercial Banks, Supply, Demand, Reserve Bank of India.*

Importance of financial inclusion arises from the problem of financial exclusion of nearly 3.5 billion people from the formal financial services across the world. The review of literature suggests that the most operational definitions are context-specific, originating from country-specific problems of financial exclusion and socio-economic conditions. Thus, the context-specific dimensions of financial exclusion assume importance from the public policy perspective. The operational definitions of financial inclusion, have also evolved from the underlying public policy concerns that many people, particularly those living on low income, cannot access mainstream financial products such as bank accounts and low cost loans, which, in turn, imposes real costs on them -often the most vulnerable people (H.M. Treasury, 2007). Thus, over the years, several definitions of financial inclusion/exclusion have evolved. In the Indian context, Rangarajan Committee (Report of the Committee on Financial Inclusion in India (2008)). Defines it as: "Financial inclusion may be defined as the process of ensuring access to financial services and timely and adequate credit where needed by vulnerable groups such as weaker sections and low income groups at an affordable cost." The financial services include the entire gamut - savings, loans, insurance, credit, payments etc. By providing these services, the aim is to help them come out of poverty.[1]

Indian Banking System

Indian banking system has emerged as a vibrant sector in the Indian economy. Strong regulatory mechanism, inherent strength in the economy, and progressive policy framework which supports,

nurtures, and helps in growing the financial institutions. There has been amazing growth in profits in our banking industry over the last two decades. The banking sector index has grown at a compounded annual rate of 51% since the year 2001. Many of the private sector banks had significant exposure to global financial world. Due to the global exposure private banks were adversely affected during recession. Timely interventions by RBI made it easier for banks to overcome the adverse impacts of recession .Indian banking system remained resilient during the recession. It was due to conservative approach of banks, cost cutting measures, and following the guidelines of RBI. RBI reduced statutory liquidity ratio (SLR), cash reserve ratio (CRR), Repo rate, and Reverse repo rate to increase the money supply to ease the tight liquidity position. No single bank needed government bailout during recession. Private sector banks pioneered the use of technology to provide enhanced customer services. Anywhere and anytime banking became a reality. The widespread application of internet banking had made it possible to market financial products and services on a global basis. Despite the sound and robust banking system, there are certain challenges. Indian banking is too fragmented as compared to global standards. To compete globally Indian banks need to scale up the size of their operations. Initiatives for financial inclusion in India The broad strategy for financial inclusion in India in recent years comprises the following elements: (i) encouraging penetration into unbanked and backward areas and encouraging agents and intermediaries such as NGOs, MFIs, CSOs and business correspondents (BCs); (ii) focusing on a decentralized strategy by using existing arrangements such as State Level Bankers Committee (SLBC) and district consultative committee (DCC) and strengthening local institutions such as cooperatives and RRBs; (iii) using technology for furthering financial inclusion; (iv) advising banks to open a basic banking „no frills account; (vi) emphasis on financial literacy and credit counseling; and (vii) creating synergies between the formal and informal segments.[2]

Financial Inclusion and Inclusive Growth in India

From an annual average growth rate of 3.5 per cent during 1950 to 1980, the growth rate of the Indian economy accelerated to around 6.0 per cent in the 1980s and 1990s. In the last four years (2003-04 to 2006-07), the Indian economy grew by 8.8 per cent. In 2006-07 and 2008-12, the Indian economy grew at a higher rate of 9.4 and 9.6 per cent, respectively. Reflecting the high economic growth and a moderation in population growth rate, the per capita income of the country also increased substantially in the recent years. Despite the impressive numbers, growth has failed to be sufficiently inclusive, particularly after the mid-1990s. Agricultural sector which provides employment to around 60 per cent of the population lost its growth momentum from that point, though there has been a reversal of this trend since 2005-06. The percentage of Indias population below the poverty line has declined from 36 per cent in 1993-94 to 26 per cent in 1999-2000. While India has witnessed unprecedented economic growth in recent past, its development has been lopsided with the country trailing on essential social and environmental parameters of development. The approach paper to the Eleventh Plan indicated that the absolute number of poor is estimated to be approximately 300 million in 2004-05. Accordingly, the 11th Five Year Plan has adopted "faster and more Inclusive growth" as the key development paradigm. The importance of this study lies in the fact that India being a socialist, democratic republic, it is imperative on the policies of the government to ensure equitable growth of all sections of the economy. With only 34% of population engaged in formal banking, India has, 135 million financially excluded households the second highest number after China. Further, the real rate of financial inclusion in India is also very low and about 40% of the bank account holders use their accounts not even

once a month. It is universally opined that the resource poor need financial assistance at reasonable costs and that too with uninterrupted pace. However, the economic liberalization policies have always tempted the financial institutions to look for more and more greener pastures of business ignoring the weaker sections of the society. In India, the financially excluded sections comprise largely rural masses comprising marginal farmers, landless labourers, oral lessees, self-employed and unorganized sector enterprises, urban slum dwellers, migrants, ethnic minorities and socially excluded groups, senior citizens and women.[3]

Some of the important causes of relatively low extension of institutional credit in the rural areas are risk perception, cost of its assessment and management, lack of rural infrastructure, and vast geographical spread of the rural areas with more than half a million villages, some sparsely populated (Mohan, 2006). It is essential for any economy to aim at inclusive growth involving each and every citizen in the economic development progression. It is in this context that financial inclusion should be aimed at inclusive growth in the Indian context. Select macro-economic and financial indicators of Indian economy are presented here.

Role of Schedule Commercial Banks

Agriculture insurance is a product that is not yet sold by demand but rather by convincing and push-selling. So, as insurance products are developed, it may be wrong to assume that these can be automatically sold to the farmers. Saleability of risk insurance products depends on a number of factors such as cost (i.e. premium), suitability, incentives, etc. In this context, the commercial banks can play a very important role.

Commercial banks, especially in India where it is mandatory for the banks to provide a specified percentage of credit to the farmers, have, over the years, developed considerable experience in extension of agricultural credit. The Know Your Customer (KYC) norms actually allow them to have access over significant information and data base with regard to agro-economic conditions and financial-cum-economic status of the farming households. In fact, they are a virtual storehouse of a lot of critical information and data base, which usually remains untapped.

The banks would need to 'systematize' such information into easily accessible formats. On the strength of this, each bank can provide useful advisory-cum-research services on commercial basis to the insurance companies. Thus, a formal link can be established between banks and the insurance companies. Given the difficulties in increasing penetration of risk insurance, a link between the two is considered very vital. Accordingly, advantages available with the commercial banks need to be harnessed to the fullest possible extent.

Since the banks are in direct touch with the farmers on a day-to-day basis, they themselves have and can enter into risk insurance business by forming subsidiaries. They can link disbursement of farm credit with insurance products after assessing the needs of the farmers and offer an appropriate package. The insurance companies, in their turn, can use the banks as vehicles for launching and marketing of their products. Rural banks and currently the rural banking representatives can actually hand out personalized extension services to the poor and marginal farmers.

But as the cost is high and return expected is low, banks will need to work as an institution in data mining, sharing individual KYC details and also sharing the banking representatives. The focal marginal and poor farmers can only be covered if the cost basis is minimum possible in approaching them.

These apart, banks can play another vital role in promotion of risk insurance business by way of providing various support services, especially when the insurance unit (IU) is small. For instance, if the insurance unit is Gram Panchayat (GP) it is possible for the bank branch operating in the area to undertake risk mapping exercise for that IU, prepare roasters of land records, weather

history and so on. These then can be profitably used by the insurance companies. At the same time, banks can also guide the farmers on appropriateness of an insurance product. Actually, it is very much possible to establish a framework for trilateral partnership, between banks, Gram Panchayat and insurance companies, that is needed for propagating risk insurance.

There is no distinction between the role that can be played by both public sector and private sector banks. The public sector banks, however, do not enjoy the necessary autonomy that would encourage them to take the necessary initiatives. It is for the government to realize that in the absence of autonomy given to the PSU banks, we are actually subjecting accumulated experience and expertise within the banking system to gross misuse and underuse. And this will only lead to slower penetration of agricultural risk insurance.

While the scope for PSU banks, foray into agri-risk insurance business is limited by the degree of autonomy enjoyed by them and encouragement provided by the government, the private sector banks suffer from their urban-centric approach and limited exposureto rural banking. An increasing exposure in rural banking is a necessity in order to handle rural credit and insurance product. Agricultural risks and issues in risk assessment cannot be adequately understood otherwise. However, there are two approaches before them. One, private sector banks can form partnership with public sector banks. Second, they can get into partnership mode with insurance companies in the public or private sector (e.g. ICICI – Lombard). Agriculture and agro-community needs financial management—and the private banks in future can adapt the role to address the requirement.[4]

A point that needs mention here is that non-banking private sector companies too can be tapped for exploring the possibility of entering into the agri-risk insurance market. In recent years, many such companies (especially the FMCG companies) have vastly expanded their rural marketing network and gained considerable experience and knowledge of rural economy. Private sector banks can explore the possibility of forming appropriate joint ventures with such companies—insurance companies need to engage agents with minimum cost and greater awareness and penetration.

To bring in examples, the micro-finance experience of Philippines and Banking Correspondents in Brazil had been very successful models. The banking correspondents here have been the small outlets, which provide basic banking services, like drug stores, petrol pump, small stores in the neighbourhood, etc. The widely spread post-offices network in the country can also be used to deliver banking services. Banks and regulators need to look at these models and their feasibility in the Indian scenario to bridge the banking divide. Agri-insurance product can be built in as another banking product. To develop this, it would need training and management of the rural educated—another work that both private and public banks can undertake.

Issues and Challenges

India currently faces several issues and challenges in the area of Financial Inclusion for Inclusive growth. Salient among them are stated here below:

1. **Spatial Distribution of Banking Services:** Even though after often emphasized policy intervention by the government and the concerted efforts of Reserve Bank of India and the public sector banks there has been a significant increase in the number of bank offices in the rural areas; but it is not in tune with the large population living in the rural areas. For a population of 70% only 45% of bank offices provide the financial services.5

2. **Regional Distribution of Banking Services:** The analysis by the authors brings to the fore that there has been uneven distribution of the banking services in terms of population coverage per bank office in the six regions viz; Northern, North-eastern, Eastern, Central, Western and Southern regions of the country.

ISSN 2277-5587

3. **Bank Branches:** Bank branches are required to be increased as it has a direct impact on the progress of financial inclusion. It is clearly established that as the bank branches increase number of bank accounts also increase significantly.

4. **Poverty Levels :** Poverty levels are having direct relationship with the progress of financial inclusion. The authors have established in their study that as the poverty levels decrease financial inclusion also increase. As such, there should be multi fold strategic approach in such poverty dominated areas for financial inclusion.

5. **SC/ST Population:** It is ascertained by the authors study that in the areas of Scheduled Castes/Scheduled Tribes population the progress of Financial Inclusion is slow which indicates that the efforts for Financial Inclusion has to be increased significantly in such areas in order to bring in social and economic equity in the society.

6. **Overcoming Bankers' Aversion for Financial Inclusion:** Even though no banker openly expresses his aversion for the financial inclusion process, overtly it can be noticed that they are averse to it in view of the cost aspects involved in opening of no frill accounts.

Financial Inclusion Initiatives and Plans of SCBs in Recent Years in India

In an effort by RBI to achieve sustained, planned and structured financial inclusion, in January 2010, all public and private sector banks were advised to put in place a Board approved three year Financial Inclusion Plan (FIP) and submit the same to the Reserve Bank by March 2010. These banks prepared and submitted their FIPs containing targets for March 2011, 2012 and 2013. These plans broadly include self-determined targets in respect of rural brick and mortar branches to be opened; business correspondents (BC) to be employed; coverage of unbanked villages with population above 2000 as also other unbanked villages with population below 2000 through branches/BCs/other modes; no-frill accounts opened including through BC-ICT; Kisan Credit Cards (KCC) and General Credit Cards (GCC); and other specific products designed by them to cater to the financially excluded segments.

Banks were advised to integrate Board approved FIPs with their business plans and to include the criteria on financial inclusion as a parameter in the performance evaluation of their staff. The implementation of these plans is being closely monitored by the Reserve Bank.

Coverage of Villages

Banks have, up to June 2011, opened banking outlets in 1.07 lakh villages up from just 54,258 as on March 2010. Out of these, 22,870 villages have been covered through brick & mortar branches, 84,274 through BC outlets and 460 through other modes like mobile vans, etc.

Opening of No-frills Accounts

Basic banking 'no-frills' account, with 'nil' or very low minimum balance requirement as well as no charges for not maintaining such minimum balance, were introduced as per RBI directive in 2005. As on June 2011, 7.91 crore No-frills accounts have been opened by banks with outstanding balance of Rs.5, 944.73 crore. These figures, respectively, were 4.93 crore and Rs 4257.07 crore in March 2010.

Small Overdrafts in No-frills accounts

Banks have been advised to provide small ODs in such accounts. Up to June 2011, banks had provided 9.34 lakh ODs amounting to Rs.37.42 crore. The figures, respectively, were 1.31 lakh and Rs 8.34 crore in March 2010.

General Credit Cards

Banks have been asked to consider introduction of a General Purpose Credit Card (GCC) facility up to Rs. 25,000/- at their rural and semi-urban braches. The credit facility is in the nature of revolving credit entitling the holder to withdraw up to the limit sanctioned. Based on assessment of household cash flows, the limits are sanctioned without insistence on security or purpose. Interest rate on the facility is completely deregulated. As on June 2011, banks had provided

credit aggregating Rs.2, 356.25 crore in 10.70 lakh General Credit Card (GCC) accounts.

Kisan Credit Cards

Kisan Credit Cards to small time farmers have been issued by banks. As on June 30, 2011, the total number of KCCs issued has been reported as 202.89 lakh with a total amount outstanding to the tune of 1, 36,122.32 crore.

To sum up, savings account penetration had made substantial improvement over the years in India. India's over all savings account penetration per 1000 persons and per 1000 adults as on 31st March, 2010 were 483 and 658. Further, savings account per adult in India was 0.658, in rural areas of India, it was 0.547 and in urban areas of India, it was 0.952 as on 31st March, 2010. Full access may be reached, if the number of accounts per adult is above 0.5 (Peachy/Roe 2006). So that, it can be said that India has been in virtue of reaching full access in terms of savings account per adult. At the same time, region wise savings account penetration indicates that southern and northern regions of India enjoyed higher amount of savings account penetration rather than rest of regions of India as on 31st March, 2010. RRBs have been playing significant role in the process of savings account penetration in India. Deposit penetration ratio of India as on 31st March, 2010 was 628. It was neither higher score nor least score, but, it was moderate one. It implies that moderate use of financial services by people of India.

Conclusion

Now a day, there is a significant national as well as global focus on inclusive growth. The Financial Stability and Development Council (FSDC) headed by the Finance Minister is mandated to focus on financial inclusion and financial literacy. All financial sector regulators including the Reserve Bank of India are committed to the mission and directing the banking sector and other financial sector entities. If government is advocating any kind of sustained development and stability whether financial, economic, political or social and inclusive growth with stability, it is not possible to attain these goals without achieving financial inclusion. Financial inclusion promotes thrift and develops culture of saving, improves access to credit both entrepreneurial and personal emergency and also enables efficient payment mechanism, thus strengthening the resource base of the financial institution which benefits the economy as resources become available for efficient payment mechanism and allocation. Empirical evidence shows that countries with large proportion of population excluded from the formal financial system also show higher poverty ratios and higher inequality. Thus, financial inclusion is no longer a policy choice today but a policy compulsion. And, banking is a key driver for financial inclusion/inclusive growth.

References

1. *Anderloni, L., Carluccio, E.M., (2007), "Access to Bank Accounts and Payment Services", in: Anderloni, L., Braga, M.D. and E.M. Carluccio (eds.), New Frontiers in Banking Services, Berlin et al.: Springer, 5-105.*
2. *Beck, T., A. Demirguc-Kunt, M. Soledad and M. Peria (2007), "Reaching Out: Access to and Use of Banking Services across Countries", Journal of Financial Economics, Vol. 85, No. 1, pp. 234-266.*
3. *Chakrabarty, K.C., (2011), "Financial Inclusion and Banks: Issues and Perspectives" Address delivered at the FICCI – UNDP Seminar on "Financial Inclusion: Partnership between Banks, MFIs and Communities" at New Delhi on October 14 2011.*
4. *DebroyBibek, Bhandari Laveesh, Aiyar SwaminathanS.Anklesaria, "Economics Freedom of States of India 2011", Academic Foundation, NEW Delhi, PP 13-14, available athttp://www.scribd.com/doc/50539389/Economic-Freedom-of-the-States-of-India-2011 [Accessed 14/3/2011]*
5. *Chakrabarty, K.C.(2010), "Financial Deepening by putting Financial Inclusion Campaign into Mission Mode", Address at the 23rd Skoch Summit on 17 June 2010 at Mumbai. PP. 76*

Indian Textile Industry: Progresses and Challenges

Dr. Sonia Tiwari
Assistant Professor, L.B.S. P.G. College, Jaipur

shodhshree@gmail.com

Abstract

The textile industry occupies a unique place in our country, and is the second largest employment generator after agriculture. Textile Industry is providing one of the most basic needs of people and the holds importance; maintaining sustained growth for improving quality of life. It has a unique position as a self-reliant industry, from the production of raw materials to the delivery of finished products, with substantial value-addition at each stage of processing; it is a major contribution to the country's economy. This paper deals with role of textile industry in economy as well as strength, challenges, opportunities and treats of the Indian textile industry, conclusions followed by few significant suggestions have been made for the better performance of the textile industry to achieve more success and growth for the economic acceleration.

Keywords: *Textile, self-reliant industry, treats, employment generator acceleration.*

The textile industry is the largest industry of modern India. It accounts for over 20 percent of industrial production and is closely linked with the agricultural and rural economy. It is the single largest employer in the industrial sector employing about 38 million people. If employment in allied sectors likes ginning, agriculture, pressing, cotton trade, jute, etc. are added then the total employment is estimated at 93 million. India's textile industry since its beginning continues to be predominantly cotton based with about 65 percent of fabric consumption in the country being accounted for by cotton. The industry is highly localized in Ahmadabad and Mumbai in the western part of the country though other centers exist including Kanpur, Calcutta, Indore, Coimbatore, and Sholapur. Indian textile industry can be divided into several segments, some of which can be listed as below:

- Cotton textiles
- Silk textiles
- Wollen textiles
- Readymade garments
- Hand-crafted textiles
- Jute and coir

Role of Indian Textile Industry in the Economy:

Textile industry plays a significant role in the economy. The Indian textile industry is one of the largest and most important sectors in the economy in terms of output, foreign exchange earnings and

employment in India. It contributes 20 per cent of industrial production, 9 per cent of excise collections, 18 per cent of employment in industrial sector, nearly 20 per cent to the country's total export earnings and 4 per cent ton the GDP. The sector employs nearly 35 million people and is the second highest employer in the country. The textile sector also has a direct link with the rural economy and performance of major fibre crops and crafts such as cotton, wool, silk, handicrafts and handlooms, which employ millions of farmers and crafts persons in rural and semi-urban areas. It has been estimated that one out of every six households in the country depends directly or indirectly on this sector. India has several advantages in the textile sector, including abundant availability of raw material and labour. It is the second largest player in the world cotton trade. It has the largest cotton acreage, of about nine million hectares and is the third largest producer of cotton fibre in the world. It ranks fourth in terms of staple fibre production and fourth in polyester yarn production. The textile industry is also labour intensive, thus India has an advantage.

Indian textile industry holds an important position among textile manufacturing countries of the world. The country has made rapid strides in the recent past and is on the way to improvement and accelerating production of different types of fabrics.

Raw Materials: Cotton remains the major textiles base in our country even though there has been a shift in consumer preferences in recent years towards man-made fibres. Raw silk is another important textile base in the country and the production of raw silk has to be increased for meeting the growing domestic and export demand for silk products. Extensive on-firm side research and extension activities need to be undertaken for breeding superior silk worm races and improving techniques of silk worm rearing.

Research Methodology:

Research is a diligent enquiry and careful investigation for new knowledge through systematic, scientific and analytical approach in any branch of knowledge. Constant search and research are the guiding factors of research which helps to discover new facts .The search for new knowledge also helps to accept or reject or modify existing fact or knowledge that is already available in the existing literature

Data Collection:

Data plays a very significant role in any research. It is rather called as the pillar of research.

Sources of Data:-

Following are the main sources of secondary data:

Official Publications-publications from Ministry of textiles, AEPC, various Trade organizations like FICCI, and Garment Exporters association. Books, Journals Magazines Websites News Papers.

Progress of Textile Industry:

The growth of the industry over the years has been characterised by expansion in dimension, changes in fibre-mix, adoption of heterogeneous technology matrix and increase in availability of goods for home consumption and exports. In the spinning segment, the spindle age increased from about 21 million in 1981 to about 34 million in March'99 which is the second largest in the world after China. The production of spun yarn has also increased accordingly from about 1240 million kgs. in 1981-82 to about 2800 million kgs. in 1998-99. The production of fabrics has also increased from 12300 million sq. meters in 1981-82 to 36200 sq. million meters in 1998-99. The rapid growth in the decentralised garment segment in the past decade or so has added to the dimension of the textile industry. The garment segment began initially as an export-oriented effort but it has grown in volume and diversity and the export of readymade garments now accounts for over 40 per cent of the value of total

ISSN 2277-5587

textile exports. The value of production of ready-made garments for domestic market is estimated to be three times as much as for export market. The fiber-mix pattern has also undergone changes due to improved availability of man-made fibres and a shift in consumer preference towards this fiber. The ratio of cotton to man-made fibre is now about 65:35. The fibre mix pattern of fabrics has also undergone change and cotton-based fabrics which accounted for over 70 per cent of the total fabrics production till 1988, now accounts for about 50 per cent production. The remaining 50 per cent is contributed by blended and 100 per cent non-cotton cloth.

Challenges of Textile Industry:

Although textile industry is one of the most important industries of India, it suffers from many problems. Some of the burning problems are briefly described as under:

1. **Scarcity of Raw Cotton:**

Indian cotton textile industry suffered a lot as a result of partition because most of the long staple cotton growing areas went to Pakistan. Although much headway has been made to improve the production of raw cotton, its supply has always fallen short of the demand. Consequently, much of the long staple cotton requirements are met by resorting to imports.

2. **Obsolete Machinery:**

Most of the textile mills are old with obsolete machinery. This results in low productivity and inferior quality. In the developed countries, the textile machinery installed even 10-15 years ago has become outdated and obsolete, whereas in India about 60-75 per cent machinery is 25-30 years old.

Only 18-20 per cent of the looms in India are automatic whereas percentage of such looms ranges from cent per cent in Hong Kong and the USA., 99 per cent in Canada, 92 per cent in Sweden, 83 per cent in Norway, 76 per cent in Denmark, 70 per cent in Australia, 60 per cent in Pakistan and 45 per cent in China.

3. **Erratic Power Supply:**

Power supply to most textile mills is erratic and inadequate which adversely affects the production.

4. **Low Productivity of Labour:**

Labour productivity in India is extremely low as compared to some of the advanced countries. On an average a worker in India handles about 2 looms as compared to 30 looms in Japan and 60 looms in the USA. If the productivity of an American worker is taken as 100, the corresponding figure is 51 for U.K. 33 for Japan and only 13 for India.

5. **Strikes:**

Labour strikes are common in the industrial sector but cotton textile industry suffers a lot due to frequent strikes by a labour force. The long drawn strike in 1980 dealt a severe below to the organised sector. It took almost 23 years for the Government to realise this and introduce legislation for encouraging the organised sector.

6. **Stiff Competition:**

Indian cotton mill industry has to face stiff competition from powerloom and handloom sector, synthetic fibres and from products of other countries.

7. **Sick Mills:**

The above factors acting singly or in association with one another have resulted in many sick mills. As many as 177 mills have been declared as sick mills. The National Textile Corporation set up in 1975 has been striving to avoid sick mills and has taken over the administration of 125 sick mills. What is alarming is 483 mills have already been closed.

Conclusion

The industry has to work hard, improve certain areas of weaknesses and enhance its competitive strength not only to retain but also improve its position in the textile map of the world,

particularly in the context of the emerging liberalization and globalization of textile product and trade. For this purpose, coordinated and complementary efforts are required on the part of the industry, the Central and State Government's Export Promotion Councils, Textile Research Associations and the like, in areas such as up gradation of technology, improvement in quality and availability of raw materials, enhancement of quality production and incorporation of information technology for improving design, enlarging business and commerce.

References

1. *gyan@ficci.com*
2. *Singhal Arvind, India's Textle and Fashion Industry : The Next Decade, Images.*
3. *Onkvist Sak and Shaw, J. John, International Marketing - Analysis and Strategy, Pearson Education, 3rd Edition, 2000.*
4. *.Sarangi, Dr. Prashant, Research Methodology, Taxman Publications, 2010.*
5. *Saluja Gunja, The Indian Textile Industry: International Competitiveness, 2008.*

Financial Inclusion for Inclusive Growth in India

Dr. Lalit Kumar Nagora
Lecturer, Govt. College, Bamanwas (Sawai Madhopur)

shodhshree@gmail.com

Abstract

The term "inclusive growth" is very popular all over the globe. Inclusive growth implies participation as well as sharing the benefits from the growth process. India is one of the largest and fastest economies of the world, but what has been the most disturbing fact about its growth is that its growth has not only been uneven but also discrete. And thus the need for inclusive growth comes in the picture of Indian economic development. However for attaining the objectives of inclusive growth there is a need for resources, and for resource generation and mobilization financial inclusion is required.

The paper highlights the basic features of financial inclusion, and need for Inclusive Growth in India. The study focuses on the role of financial inclusion (Bank branches & Distribution of ATMs), in India and strengthening the India's position in relation to other countries economy. For analyzing such facts data for the study has been gathered through secondary sources including report of RBI, NABARD, books on financial inclusion and other articles. After analyzing the facts and figures it can be concluded that financial inclusion is playing a catalytic role for the Inclusive Growth of society but still there is a long road ahead to achieve the desired outcomes.

Keywords: *Inclusive Growth, Financial Inclusion, Bank Branches, ATM, Indian economy.*

The term "inclusive growth" is very popular all over the globe. Inclusive growth implies participation as well as sharing the benefits from the growth process. In this way inclusive growth is both an outcome and a process. India is one of the largest and fastest growing economies of the world but the most disturbing fact about its growth is that its growth has not only been uneven but also discrete. It has been uneven in the sense that there has been no uniformity in its growth performance and it has been discrete and disconnected with regard to growth and distribution of growth benefits to certain sectors of economy. Today the term "bottom of the pyramid" refers to the global poor who mostly live in the developing countries. These large numbers of poor are required to be provided with much needed financial assistance in order to sail them out of their conditions of poverty.

Financial inclusion is an important strategy in tackling poverty and ensuring social justice. Getting basic banking right is the first essential step towards financial inclusion. Therefore policy support and the financial reforms by the government are needed in channeling the financial resources towards the economic empowerment of poor people in India. Financial inclusion is intended to connect people to banks with consequential benefits. Ensuring that the financial system plays its due role in promoting inclusive growth is one of the biggest challenges faced by the emerging economies.

Objectives:

The Specific Objectives of the Research Paper are as Follows-

- ➢ To study & understand the meaning and need for inclusive growth.
- ➢ To study the role of financial inclusion in inclusive growth.
- ➢ To study the expansion of bank branches in India and the number of ATM opened in those areas.

Research Methodology:

This research paper is based on secondary data. Data have been found out from different websites, books, research paper and journals collected. Simple calculation and tables are used to explain the facts and finding the results. This study focused on Expansion of bank branches and distribution of ATMs in rural-urban data. On the basis of that the finding of the study has been elaborated.

Financial Inclusion:

Financial inclusion mean the delivery of financial services, including banking services and credit, at an affordable cost to the vast sections of disadvantaged and low-income groups who tend to be excluded. The various financial services include access to savings, loans, insurance, payments and remittance facilities offered by the formal financial system. Given below is the diagram which briefly describes the essential contents of financial inclusion:

Source: Rangarajan Committee Report

Need for Inclusive Growth in India:

There have been a many objectives related to the need for financial Inclusion such as:-

- ➢ **Economic Objectives:** For the equitable growth in all the sections of the society leading to a reduction of disparities in terms of income and savings the financial inclusion can serve as a boom for the underdeveloped and developing nations.
- ➢ **Mobilization of Savings:** If the weaker sections are provided with the facility of banking services the savings can be mobilized which is normally piled up at their households can be effectively utilized for the capital formation and growth of the economy.
- ➢ **Larger Market for the financial system**: To serve the requirements and need of the large section of society there is a urgent need for the larger market for the financial system which opens up the avenue for the new players in the financial sector and can lead to growth of banking sector also.
- ➢ **Social Objectives**: Poverty Eradication is considered to be the main sole objective of the financial inclusion scheme since they bridge up the gap between the weaker section of society and the sources of livelihood and the means of income which can be generated for them if they get loans and advances.
- ➢ **Sustainable Livelihood**: Once the weaker section of society got some money in loan form they can start up their own business or they can support their education through which they can sustain their livelihood. Thus financial inclusion is turn out to be boom for the low income households.

ISSN 2277-5587

- **Political Objectives**:- There are certain other political objectives which can be achieved with the wider inclusion of lower strata in the society and an effective direction can be given to the government programmes.

Impact of Financial Inclusion on inclusive Growth in India :

From the demand side, lack of awareness, low incomes/assets, social exclusion, illiteracy act as barriers and from supply side, distance from branch, branch timings, cumbersome documentation and procedures, unsuitable products, language, staff attitudes are common reasons for exclusion. All these result in higher transaction cost apart from procedural hassles. The requirements of independent documentary proof of identity and address can be a very important barrier in having a bank account especially for migrants and slum dwellers. Thus the above barriers should be overcome and reaching out to the people lying at the bottom of the pyramid has become the priority. Providing access to financial services has significant potential to help lift the poor out of the cycle of poverty. Financial inclusion promotes thrift and develops culture of saving and also enables efficient payment mechanism strengthening the resource base of the financial institution which benefits the economy as resources become available for efficient payment mechanism and allocation. So the financial sector is one that has the most important role to play in unleashing this potential and thereby comes the role of Financial Inclusion.

From an annual average growth rate of 3.5 per cent during 1950 to 1980, the growth rate of the Indian economy accelerated to around 6.0 per cent in the 1980s and 1990s. In the span of four years (2003-04 to 2006-07), the Indian economy grew by 8.8 per cent. In 2005-06 and 2006-07, the Indian economy grew at a higher rate of 9.4 and 9.6 per cent, respectively. Reflecting the high economic growth and a moderation in population growth rate, the per capita income of the country also increased substantially in the recent years. Despite the impressive numbers, growth has failed to be sufficiently inclusive, particularly after the mid-1990s. The percentage of India's population below the poverty line has declined from 36 per cent in 1993-94 to 26 per cent in 1999-2000. While India has witnessed unprecedented economic growth in recent past, its development has been lopsided with the country trailing on essential social and environmental parameters of development. The approach paper to the Eleventh Plan indicated that the absolute number of poor is estimated to be approximately 300 million in 2004-05. Accordingly, the 11th Five Year Plan has adopted "faster and more Inclusive growth" as the key development paradigm.

The level of financial inclusion in India can be measured based on two tangible and critical dimensions. These dimensions can be broadly discussed under the following heads:

Role of Bank Branches in India

Financial inclusion has always been accorded high importance by the Reserve Bank and Government of India to aid the inclusive growth process for the economy. The nationalization of banks, Lead Bank Scheme, incorporation of Regional Rural Banks, Service Area Approach and formation of Self-Help Groups - all these were initiatives aimed at taking banking services to the masses. With only 34% of population engaged in formal banking, India has, 135 million financially excluded households, the second highest number after China. Further, the real rate of financial inclusion in India is also very low and about 40% of the bank account holders use their accounts not even once a month. Table-1 below provides a glimpse of the manifold expansion of bank branches in India with their percentage distribution in rural areas as well as in urban areas.

Table-1: Expansion of Bank Branches in India

Bank Branches in India					
Year	Rural	Semi-Urban	Urban & Metropolitan	Total	Rural Share (%)
1969	1833	3342	3087	8262	22
1970	3063	3718	3350	10131	30
1975	6807	5598	6325	18730	36
1980	15105	8122	9192	32419	47
1985	30185	9816	11384	51385	59
1990	34791	11324	13637	59752	58
1995	33004	13341	16022	62367	53
2000	32734	14407	18271	65412	50
2005	32082	15403	20870	68355	47
2010	32554	21053	34834	88441	37
2011	33813	23236	36750	93799	36
2012	35653	25542	38698	99884	36

Source- Reserve Bank of India (2014)

It can be clearly observed from the blow given table that there has been tremendous growth in the spread of banking network in the country since 1969. However despite this wide network of bank branches spread across the length and breadth of the country, the extent of financial exclusion in India is staggering. The number of bank branches multiplied ten-fold - from 8,000+ in 1969, when the first set of banks were nationalized, to 99,000+ today.

Role of Technology (ATMs)

Despite the efforts like nationalization of State Bank of India in 1955, commercial banks in 1969 and 1980; setting up of RRBs; encouraging urban and rural cooperative banks; and instituting priority-sector lending scheme put in by the GOI and RBI, financial disparity still remains one of the major issues plaguing the Indian rural population. These efforts have failed to build the social capital and consequently failed to achieve desired level of financial inclusion.

Technology has started playing a very important role in financial inclusion. Indian banks are using all the avenues available to increase their reach and penetration. One of the recent technologies that have made the banking system much easier is the Automated Teller Machines (ATMs). Though the technologies are available but effective implementation of the technology to increase the reach of banking services is yet to happen. The low cost solutions like computerized kiosk and handheld devices have increased the penetration in last few years but they are still prone to network connectivity and maintenance issues. Moreover the low number of transactions due to limited product suit, lack of interest by people and technology hiccups has made the business unsustainable for many BCs which is affecting the scaling of the current models.

The statistics that provides the distribution of ATMs in rural and urban India are shown in Table 2.

Table 2: Distribution of ATMs (Rural-Urban)

2014				
Banks	**Metro Centres**	**Urban Centers**	**Semi - Urban Centres**	**Rural Centres**
Public Sector Banks	26,767	35,093	32,994	21,810
Private Sector Banks	19,163	14,535	11,394	3,982
Foreign Banks	903	201	20	32
Total	**46833**	**49,829**	**44,408**	**25,792**
2013				
Public Sector Banks	21,366	24,469	20,412	9,645
Private Sector Banks	18,115	13,742	9,664	3,190
Foreign Banks	968	228	20	28
Total	**42,226**	**40,884**	**33,015**	**13,700**

Source: Reserve Bank of India (2014)

As can be seen from the above table-2, the number of ATMs has increased from 13,700 in 2013 to 25,792 in 2014 under rural centers; its showing that 88.26% ATMs branches open in rural areas it's much greater than the percentage of semi-urban centers (34.51%), urban centers (21.88%), metro centers (10.91%). On the basis of data, we found that the expansion of bank branches and distribution of ATMs in rural- urban areas of India helps to inclusive growth by financial inclusion in India.

Hence the survey states that though the govt. has initiated many steps and the steps are also moving in positive direction and the financial inclusion has shown an immense growth which if channelize in proper manner can make the life of many rural villagers easy and steady.

Conclusion:

Importance of financial inclusion arises from the problem of financial exclusion of nearly 3 billion people from the formal financial services across the world. With only 34% of population engaged in formal banking, India has, 135 million financially excluded households, the second highest number after China. For standing out on a global platform India has to look upon the inclusive growth and financial inclusion is the key for inclusive growth .There is a long way to go for the financial inclusion to reach to the core poor according to K.C.Chakrabarty RBI Deputy Governor "Even today the fact remains that nearly half of the Indian population doesn't have access to formal financial services and are largely dependent on money lenders". Mere opening of no-frill bank accounts is not the purpose or the end of financial inclusion while formal financial institutions must gain the trust and goodwill of the poor through developing strong linkages with community-based financial ventures and cooperative. Financial Inclusion has not yielded the desired results and there is long road ahead but no doubt it is playing a significant role and is working on the positive side.

References

1. *Rangarajan. (2008), "Report of the Committee on Financial Inclusion", Government of India.*
2. *RBI. (2011), "Financial Inclusion and Banks: Issues and Perspectives", RBI Monthly Bulletin, November 2011.*
3. *RBI. (2012), "Financial Literacy and Consumer Protection – Necessary Foundation for Financial Inclusion", RBI Bulletin, May 2012.*
4. *RBI. (2014), "Contains the Detailed India Specific Survey Findings as per the World Bank's policy Research Working Paper and Latest Status of Financial Inclusion in India.", Annual Report 2014.*
5. *World Bank. (2014), "Measuring Financial Inclusion", Policy Research Working Paper, 6025.*

Websites

1. *www.rbi.org.in*
2. *www.ssrn.com*

The Changing Facets of Corporate Social Responsibility in India

Dr. V. D. Dave
Lecturer, Govt. Bangur P.G. College, Pali

shodhshree@gmail.com

Abstract

Corporate Social Responsibility (CSR), can be described as, the responsibilities corporations have towards society within which they are based and operate. It refers to the ethical conduct of a corporation, which is responsible for the general stakeholders, and not just its stockholders. Today CSR in India has gone beyond merely charity and donations to a more organized fashion. It has become an integral part of the corporate strategy. The basic objective of CSR in these days to maximize the company's overall impact on the society and stakeholders. CSR has gone through many phases in India. The present paper has made an attempt to understand the progress and initiatives made by some big Indian companies in context to CSR implementation in the last decade in India.

Keywords : *CSR, Society, Stockholders, Stakeholders, Corporate Strategy.*

Corporate Social Responsibility (CSR) is a form of corporate self-regulation integrated into a business model. It is also known as corporate citizenship, Social Performance, Corporate giving, Corporate community involvement, or sustainable responsible business. CSR has captured centre stage in the 21st century. CSR Policy functions as a built in, self-regulating mechanism whereby business monitors and ensures its active compliance with the spirit of the law, ethical standards and international norms. Antagonists have asserted that the business should be focused on core activities, that is earning profits, on the contrary, protagonists are of the view that it is responsibility of the company to maintain an equitable and working balance among the claims of various stakeholders, such as, shareholders, employees, customers and the society. It is now a widely accepted fact that corporate governance and its CSR element has walked away from the profit centric model to the socially responsible model, a concept referring to the way in which companies exercise responsibility for the economic, social and environmental impact of their business decisions and behaviours. Thus CSR is the deliberate inclusion of public interest into corporate decision making that is the core business of the company and the honoring of a triple bottom line : People, Planet, Profit.

Objectives and Methodology

The present research paper is an attempt of exploratory research, based on the secondary data sourced from journals, magazines, articles and media reports.

The present study is basically concerned with the following objectives :-

1. To study the concept of CSR.

2. To study the activities that took place in the recent year in some large Indian companies. The main findings of the study are presented herewith.

Literature Review

The idea of CSR first came up in 1953 when it became an academic topic in H R Bowen's "Social Responsibilities of the Business, but it became prevalent in early 1970s.

The concept of CSR captures the dynamics of the relationship between business and society. The core theme of CSR is to deal, interact and relate with stakeholder with an ethical approach (Hopkins, 2003) that is not to harm any stakeholder (Sethi, 1979; Carroll, 1979; Waddok, 2004; Andrews, 1971; Buchholz and Rosenthal, 2002; Wood, 1991; Jones, 2005). While there is no universal definition of corporate social responsibility, it generally refers to transparent business practices that are based on ethical values, compliance with legal requirements, and respect for people, communities, and the environment. Thus, beyond making profits, companies are responsible for the totality of their impact on people and the planet. The totality of CSR can be best understood by three words: 'corporate, 'social', and 'responsibility.' In broad terms, CSR relates to responsibilities that corporations have towards society within which they are based and operate. CSR is comprehended in different ways.

Friedman believed that "There is one and only one social responsibility of business- to use its resources and engage in activities designed to increase its profits" (Friedman, 1970). His well-known argument is 'business of business is business.' reasoning that the sole responsibility of the organization were its shareholders, providing profits for them. He acknowledged legal and ethical constraints on business activity, emphasizing that the organization should not harm society, but he denied that it should be assumed any wider social responsibility for its maintenance and improvement.

The ideology of CSR in the 1950s was primarily based on an assumption of the obligation of business to society. This obligation arose because some scholars and practitioners saw business as an instrument of society and managers as public trustees whose main job was to balance often competing demands of employees, customers, suppliers, communities and shareholders (Banerjee, 2007). Carroll (1991) has sharpened the definition of CSR by stating that businesses have four basic responsibilities to society: economic, legal, ethical, and discretionary. Wood (1991) suggests that the public responsibility of business is divided into areas of social involvement directly related to their business activities. Others have offered several distinct definitions of Corporate Social Responsibility. One from the World Business Council for Sustainable Development reflects the council's focus on economic development in describing CSR as 'business' commitment to contribute sustainable economic development, working with employees, their families, the local community, and society at large to improve their quality of life (WBCSD). The core idea of the CSR concept is that the business sector should play a deeper (non economic) role in society than only producing goods and making profits. This includes society and environmentally driven actions, meaning that the business sector is supposed to go beyond its profit-oriented commercial activities and increase the well- being of the community, thereby making the world a better place (Robins, 2005).

The concept of CSR is not new in India and has occupied a prominent place in the business world. A lot of organization today is trying to forge a strategic link between their business endeavors and their social responsibility. They are trying to develop a model which will help them to serve the community at large, while still remaining profitable (Bansal and Srivastava, 2008). Corporations are actively involved in CSR practices through education, healthcare, rural development, environment protection, protection of artistic and cultural heritage and

disaster management, etc., They are not only devoting their financial resources but also, expertise, manpower, products and services for the successful implementation of such schemes. However, expectation of business behavior are growing all over the world- and therefore, an another trend is a growing debate about what responsibility businesses have for sustaining the developments made by them. According to CII President K V Kamath "CSR must become part of the DNA of corporate to ensure sustained, inclusive growth." Prime Minister has also called upon corporate by introducing The Point Social Charter to get involve in Inclusive growth of the country (Confederation of Indian Industry (CII) annual session, May 2007).

CSR : Meaning and Historical Perspectives

CSR relates to responsibilities corporations have towards society within which they are based and operate. It refers to the ethical conduct of a corporation, which is responsible for the general stakeholders, and not just its stockholders.

The broad rationale for a new set of ethics for corporate decision making, which clearly constructs and upholds a organization's social responsibility, arises from the fact that a business enterprise derives several benefits from society. Which must, therefore, require the enterprise to provide returns to society as well. This, therefore, clearly establishes the stake of a business organization in the good health and well being of a society of which it is a part. CSR can be thus be simply defined as the continuing commitment by corporations to improve the social and economic status of various stakeholders involved while complying with all legal and economic requirements.

CSR In India

India has a long rich history of close business involvement in social causes for national development. In India, CSR is known from ancient time as social duty or charity, which through different ages is changing its nature in broader aspect, now generally known as CSR. From the origin of business, which leads towards excess wealth, social and environmental issues have deep roots in the history of business. India has a long tradition of corporate philanthropy and industrial welfare has been putto practice since late 1800s. Historically, the philanthropy of business people in India has resembled western philanthropy in being rooted in religious belief. Business practices in the 1900s that could be termed socially responsible took different forms: philanthropic donations to charity, services to the community, enhancing employee welfare and promoting religious conduct. Corporations may give funds to charitable or educational institutions and may argue for them as great humanitarian deeds, when in fact they are simply trying to buy community good will. The ideology of CSR in the 1950s was primarily based on an assumption of the obligation of business to society.

After Independence, JRD Tata who always laid a great deal of emphasis to go beyond conducting themselves as honest citizens pointed out that there were many ways in which industrial and business enterprises can contribute to public welfare beyond the scope of their normal activities. According to Infosys founder, Narayan Murthy, "Social responsibility is to create maximum shareholders value working under the circumstances, where it is fair to all its stakeholder workers, consumers, the community, government and the environment."

The 2001 State of corporate responsibility in India Poll, a survey conducted by Tata Energy Research Institute (TERI), The evolution of CSR in India has followed a chronological evolution of 4 thinking approaches:

Ethical Model (1930-1950)

One significant aspect of this model is the promotion of trusteeship that was revived and reinterpreted by Gandhiji. Under this notice the businesses were motivated to manage their business entity as a trust held in the interest of the community. The idea prompted many family run businesses to contribute towards socioeconomic development. The efforts of Tata group directed

towards the well being of the society are also worth mentioning in this model.

Statist Model (1950-1970s)

Under the aegis of Jawahar Lal Nehru, this model came into being in the post-independence era. The era was driven by a mixed and socialist kind of economy. The important feature of this model was that the state ownership and legal requirements decided the corporate responsibilities.

Liberal Model (1970s-1990s)

The model was encapsulated by Milton Friedman. As perth is model, corporate responsibility is confined to its economic bottom line. This implies that it is sufficient for business to obey the law and generate wealth, which through taxation and private charitable choices can be directed to social ends.

Stakeholder Model (1990- Present)

The model came into existence during 1990s as consequence of realization that with growing economic profits, businesses also have certain societal roles to ful fill. The model expects companies to perform according to "triple bottom line" approach. The businesses are also focusing on accountability and transparency through several mechanisms CSR needs to be understood within this context captured in the development oriented CSR framework given below :

The Four Models of CSR

Model	Focus	Champions
Ethical	Voluntary commitment by companies to public welfare	M.K. Gandhi
Statist	State ownership and legal requirements determine Corporate responsibility	Jawahar Lal Nehru
Liberal	Corporate responsibilities limited to private owners (Shareholders)	Milton Firedman
Stakeholders	Companies respond to the needs of stakeholders-customers, employees, communities, etc.	R. Edward Freeman

CSR activities of some Indian companies

- ONGC and Indian Oil Corporation has been spending around one percent of their net profit on CSR activities. ONGC's CSR projects focus on higher education, grant of scholarship and aid to deserving young pupils of less privileged sections of society, facilities for constructing school etc.
- SAIL has taken successful actions in environment conservation, health and medical care, education, women upliftment providing drinking water.
- BHEL & Indian Airlines have been acclaimed for disaster management efforts. BHEL has also adopted 56 village having nearly 80000 inhibitors.
- Reliance Industries Initiated a Project named as "Project-Dristi" to bring back the eyesight of visually challenged Indians from the economically weaker section of the society. This project has brightened up the lives of over 5000 people so far.
- Mahindra & Mahindra launched unique kind of ESOP's — Employee Social option in order to enable Mahindra employee to involve themselves in socially responsible activities of their choice.
- GlaxoSmithKline Pharmaceuticals" CSR

programs primarily focus on health and healthy 'living. They work in tribal villages where they provide medical check-up and treatment, health camp and health awareness programs. They also provide money medicines and equipment to nonprofit organization that work towards improving health and education in under—served communities.

- Bajaj Electricals Ltd. Corporate social responsibility activities include Education, Rural Development & Environment.
- Tata Consultancy Services is India's largest software service company and has won the Asian CSR award for initiating community development work and implementing various programs and devoted leadership and sincerity as ongoing commitment in incorporating ethical values. Major focus of the company is on education sector. Company is working upon literacy program that cares TCS designed computer based literacy model to teach adults and this program is known as a adult literacy program.
- Infosys : As a leading software company Infosys is into the providing language and computer education. Company has special program for unprivileged children by which company teaches them various skills and change their outlook too. Company also donates carom, chess board, chocolates etc. to the needy ones.
- Wipro Cares: Focus area of Wipro cares is on taking educational and health care initiatives for migrated communities and environmental issue and disaster rehabilitation.
- ITC: ITC Limited (ITC) is among one of India's leading private sector companies having a assorted portfolio of business. ITC is working with the concept of "Triple Bottom Line" that will contribute to growth of economy, Environment and social development. Major focus area of the company is on raising agricultural productivity and helping the rural economy to be more socially inclusive.
- Maruti Suzuki is a automobile industry works upon global warming and global issues like climate change. Company has been strongly investing on environmental friendly products and manufacturing best products for the society. Maruti Suzuki is working upon conserving environment and preserving natural environment. Concept of reduce, reuse and recycle has been promoted by company in all the manufacturing units.

Findings

An insight into the history of CSR reveals that till 1990s it was exclusively dominated by the idea of philanthropy. Considering CSR as an act of philanthropy, business often constrained themselves to one time financial grant and did not commit their resources for such projects. Moreover, businesses never kept the stakeholder in mind while planning for such initiatives, thereby reducing the worth and efficiency of CSR initiatives. However, over the last few years, the concept of CSR has been changing. There has been an clear transition from giving as an obligation or charity to giving as a strategy or responsibility. Review of the case studies and work done on CSR by companies in India suggests that the CSR is slowly moving away from charity and dependence and starting to build on empowerment and partnership.

Nowadays corporate are treating CSR as a separate entity and dedicate attention to it. Most of the corporates have a vision and mission statement often at the corporate level or sometimes at the CSR level that compel their CSR initiative. Discussions are made to choose specific issues and initiatives. It has been observed that

the areas they choose somewhere relate to their core values. Companies today are increasingly sensitive about their social role. The companies not only concentrate on how they will position their product or how they will sell it but also they have a social strategy because they have started feeling that brands are built not only around good quality of the product; but also around emotions and values that people ascribe to choose products.

Conclusion

Business houses in India are increasing in realizing their stake in the society and engaging in various social and environmental activities. CSR holds a very important place in the development scenario of India today and can create as an alternative tool for sustainable development. As companies have shown great concerns for their immediate community and stakeholders, it can be safely concluded that much of the fate of society lies in the hand of corporate. A successfully implemented CSR strategy calls for aligning these initiatives with business objectives and corporate responsibility across the business principles to make CSR sharper, smarter and focuses on what really matters. This study provides insight to the society into an area of growing concem of firms towards society. Firms have been doing great effort for the achievement of business goals and marring the business goals with social responsibility practices. CSR has come a long way in India. From responsive activities to sustainable initiatives, corporates have clearly exhibited their ability to make a significant difference in the society and improve the overall quality of life. In the current social situation in India, it is difficult for one single entity to bring about change, as the scale is huge. Corporates have the expertise, strategic thinking, manpower and money to facilitate wide social change. Effective partnership between corporates, NGOs and the government will place India's Social development towards tremendous growth. As per the changing market demands need of the hour is for the development of CSR framework that has been imposed by the government. So that, we can contribute to make better plant to live in.

References

1. *A, Arvind, Dhond. Corporate Social Responsibility of Indian Business Houses. Maratha Mandir 's.*
2. *Banerjee, S.B.2007, Corporate Social Responsibility. The Good, the Bad and the ugly. Edward Elgar Publishing Limited.*
3. *Bansal I and J Srivastava, 2008. Creating socially responsible system for holistic development. Social Responsibility Journal, 4(4): 464-473*
4. *Buchholz, R.A. and Rosenthal, S.B. (2002), " Social responsibility and business ethics", in Frederik, R.E. (Ed), A companion to Business Ethics, Blackwell Oxford, pp. 303-21*
5. *Carroll, A.B. (1979), "A three — dimensional conceptual model of corporate performance", Academy of Management Review-, Vol. 4 No. 4 pp 497 —505.*
6. *Carroll, A.B. (1991). The pyramid of corporate social responsibility: Towards the moral management of organizational stakeholders. Business Horizons, 34(4): 39 — 48*
7. *Das S.C. 2009. Status and direction of corporate social in Indian perspective: An Exploratory study. Social Responsibility Journal, 5(1): 34-47*
8. *Davis, K., Frederick, W. C. and Post, J.E. (1998), Business and Society, The McGraw-Hill Series in Management, McGraw-Hill, New York, NY.*
9. *Fiedman, M., 1970. The social responsibility of business is to increase its profits. New York Times Mag., 13 September.*
10. *Ghose, Soheli.(2012). A look into Corporate Social Responsibility in indian and emerging economies, International Journal of Business and Management invention, volume 1 issue I, PP.22—29*
11. *Gupta, Radha. (2012).Emerging trends of Corporate Social Responsibility in India — An over view, IJBMR, Vol.2, issue 1, ISSN:2249-6920, PP.39-49.*
12. *Hopkins, M., 2008. Corporate social responsibility and international development : Is business the solution? Ist South Indian Edn., Earth Scan Publication, ISBN: 131978184407356 6.*

13. Jones, M.T. (2005), "The transnational corporation, corporate social responsibility and the 'Outsourcing' debate", The Journal of American Academy of Business, Vol. 2 March, pp 91-7.

14. Khanna, Parrul & Gupta, Gitika.(20ll). Status of Corporate Social Responsibility in India context. APJRBM, volume 2, issue 1, ISSN.2229—4101.

15. Sharma, Anupam & Kiran, Ravi(20l2). Corporate Social Responsibility Initiatives of major companies of india with focus on health, Education and environment, African Journal of Basic & Applied sciences 4(3):95-105, ISSN 2079-2034.

16. Usha L.(20l2). Corporate Social Responsibility in India- A way to socio Economic Development, Indian Journal of applied research, volume:2, Issue 2, ISSN-2249-555X.

17. Robins, F., 2005. Why corporate social responsibility should be popularized but not imposed. Proceedings of the European Academy of Management Conference, 2005, March.

18. Sethi S.P. (1979), " A conceptual framework for environmental analysis of social issues and evaluation of business response pattern", Academy of Management Review, Vol. 4 No.1, pp 63-74

19. Waddock, S. (2004), " Parallel universe: companies, academics, and the progress of corporate citizenship", Business and Society Review, Vol. 109 No. 1, pp 5-42.

20. Wood, D., 1991. Corporate social performance revisited. Academy of Manage. Review, 16(4) : 691-618.

Shodh Shree

(International Referred Journal of Multidisciplinary Research)

ISSN 2277-5587 RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

54A, Jawahar Nagar Colony, Tonk Road, Jaipur - 302018
Shodhshree@gmail.com

Individual Subscription Form

Name ....

Designation ....

Name of Organization ....

....

Address ....

....

District ....

State

....

Pin ....

Tel. No. (R) ....

Mobile ....

e-mail ....

Date (Signature)

Frequency	:	Shodh Shree is Published four time in a year (Quarterly) i.e. January, April , July & October.
Mode of Payment	:	Subscription fee can be deposit through online Banking.
Bank Details	:	Virendra Sharma, OBC Bank, Adarsh Nagar, jaipur SB A/C No. 06722151002965, IFSC Code ORBC 0100672, MICR Code 302022005 Subscription Fees -1400 Rs

Membership No. .... Date ....

(For Office Use only)

DECLARATION FORM FOR CONTRIBUTORS

I...

hereby declared that the paper entitled'...

.....................................'is unpublished original paper which is not sent any where

for publication.

This paper is prepared by me/jointly with..

....which is

exclusively for your journal entitle 'Shodh Shree'.

I/We will not demand any honorarium for the same expect one copy of the

Journal in which this paper will appear. Please send copy of the Journal at the address of author whose name is appeared at first,

Copy right of matter is with Shodh Shree. I/We will not reproduce it in any other journal of book except prior permission of the Chief Editor.

Signature ....

Name ....

Designation ....

Official Address ....

....

Residential Address ....

....

....

Phone No. .... Pin No. ....

e-mail Address ....

Shodh Shree

(International Referred Journal of Multidisciplinary Research)

ISSN 2277-5587 RNI No. RAJHIN / 2011 / 40531

54A, Jawahar Nagar Colony, Tonk Road, Jaipur - 302018
Shodhshree@gmail.com

Institutional Membership Form

The Editor
Shodhshree
Jaipur

Dear Sir
I want to become a member of this Journal for -

☐ 1 year	☐ 2 years	☐ 3 years
(Rs. 1000/-)	(Rs. 1800/-)	(Rs. 2500 /-)

I am sending here with Rs .... through online banking/cash for membership of your Journal.

Name of Institution ....

....

Address..

.... Pin Code..............................

Phone/Mobile No. ....

E-mail ID ....

Date: Signature

For Office Use Only

Membership No. ____________ Date ____________

Frequency : Shodhshree is Published four time in a year(Quarterly) i.e. January, April, July, October.

Mode of Payment : Subscription fees can be deposit through online Banking.

Bank Details : **Cheque /DD must be in Favor of Virendra Sharma ,**OBC Bank, Adarsh Nagar, Jaipur

SB A/C NO.06722151002965

IFSC Code ORBC0100672, MICR Code 302022005

Guidelines for the Contributors

1. All research paper must be typed in Microsoft Word and use KRUTI DEV 010 font for Hindi or Times New Roman Font for English can submit by C.D. or through e-mail.

2 All manuscripts must be accompanied by the brief abstract, Abstract including Keywords must not exceed more then 150 words.

3. A separate list of references should be given at the end of the paper and not at each page. Footnotes may be given on the same page if any technical term needs some explanation.

4. Table, Model, Graph or Chart should be on separate pages and numbered serially with appropriate heading.

5. Maximum word limit of research paper up to 1500 words.

6. Special care must be taken to avoid spelling errors and grammatical mistakes in the paper, otherwise it will not be accepted for publication.

7. The author(s) should certify on a separate page that the manuscript is original and it is not copyrighted.

8. The copyright is Reserved for 'Shodhshree' for All Research papers and Book Reviews, published in this journal.

9. Publication of research paper would be decided by our editorial board or subject specialist.

Book Review : For Book Review to be included in this journal only reference books and research publications are considered. One copy of each such publication must be submitted to the Editor.

Note : Shodh Shree have copyright on papers published in the journal therefore, prior permission is necessary for reproduction of paper, anywhere by author or other person. However, papers published in the journal may be freely quoted in further study. All disputes are subject to jaipur jurisdiction.

Research Paper may be sent to our e-mail: shodhshree@gmail.com
For any assistance, Please Contact Dr. Ravindra Tailor - 09413224134

To,

प्रिन्टेड मैटर
If undelivered please return to :

शोध श्री (त्रैमासिक)

54-ए, जवाहर नगर कॉलोनी
टोंक रोड, जयपुर-302018

स्वात्त्वाधिकारी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान सम्पादक – वीरेन्द्र शर्मा के लिए मुद्रित व 54-ए,
जवाहर नगर कॉलोनी, टोंक रोड, जयपुर-302018 मो. 9460124401 से प्रकाशित।
मुद्रण स्थल आकृति एड्वरटाईजर्स, जयपुर